

जीवन-व्यवस्था

बाकासाहब कालेकर

अनुवादक

नामेश्वर पुरोहित



नवजीवन प्रकाशन मन्दिर

अहमदाबाद - १४

मुद्रा जीर प्रगाण
जीरणजी डाहाभाजी देसाओ
नवजीवन मुणालय अहमदाबाद - १४

© नवजीवन ट्रस्ट, १९६७

पहला संस्करण २०००

अगस्त १९६७

जीवन-व्यवस्थामें विश्व-समन्वय

भरी गुजरानी पुस्तक 'जीवन-व्यवस्था' को अखिल भारतीय साहित्य अकादमीने सन १९६६ का प्रथम पुरस्कार न दिया होता तो बुसकी ओर हिंदीके प्रकाशकाका ध्यान गायद ही जाता, हालाकि मुझे यह कबू करना चाहिये कि हिंदी प्रकाशकाकी दृष्टि दिन-पर-दिन काफी अखिल भारतीय होनी जा रही है। अनेकाने 'जीवन-व्यवस्था' का हिंदी अनुवाद करा कर प्रकाशित करना चाहा किंतु मैं हमारे नवजीवन प्रकाशन मंदिरके साथ आत्मीयतासे बधा हू। जुमीने यह हिंदी संस्करण प्रकाशित करनेकी तत्परता बतायी।

भारतीय ससृति आज तक प्रधानतया धर्म प्रधान ही रही है। और भारत भाग्य विधानाने भी भारतका दुनियाके प्रधान धर्मोंका धाम बना रखा है। चीनक कानफ्युगियन और लाआत्मेकी धार्मिक परंपराआकी यदि हम बाजू पर रख दें तो हम कह सकते ह कि दुनियाके सबके सब धर्म भारतीय जनताका प्रेरित कर रहे ह और भारतीय चिन्तनसे पापण भी प्राप्त कर रह है।

जाज हम वनानिक दृष्टिसे समाज-व्यवस्थाका और मानवीय ससृतियाका स्वयं चिन्तन भर ही कर, मनुष्य जातिने जाज तक धार्मिक प्रेरणान ही सामाजिक जावनका विकास किया है। और मनुष्य जातिकी सब ससृतिया अभी अभी तक धर्म प्रधान ही रही ह। अथवा हम जसा भी कह सकते ह कि मानवी ससृतिका जिन जिन भावभौम विचारान और जीवन-दृष्टियान प्रेरणा दी है अजुन विचारा और दृष्टियाका धर्मके नामसे ही पहचानना चाहिये। हमारे मन पश्चिमके विनानके अुपानवाने जो जीवन दृष्टि समस्त जगतका दी है वह अेक नया धर्म ही है, और अ-व्यवस्थाका तथा राजनतिक सत्ताको प्रधानता देकर दुनियामें जो साम्यवाट प्रचलित हुआ है उस भी जेक आधुनिक अथवा अद्यतन जन्वादी धर्म ही कहना चाहिये। भारतकी गानो प्रणीत सर्वोदय-दर्पिट भी दुनियाका जेक सनापप्रद नया धर्म बन जाय ता तनिक भी आश्चय नहीं। भू ही धर्मोंने आज तक आमा परमात्मा अिह्वाक और परलाक जेवम् पूव-जम तथा पुनजम और माक्षता ही प्रधानतया चिन्तन किया हो और जीस्वरके अनताराका धर्म सस्थापन माना हा। सब धर्मोंका मूल अुद्देश्य मानवी जीवनका सुखवस्थित अुन्नत और कृताथ करना ही है। जिसीलिजे हम आस्तिक, नास्तिक, वैज्ञानिक तथा गूढवादी सत्र धर्मोंका जीवन-व्यवस्थाके रूपमें ही पहचानन है फिर वह जीवन व्यक्तिगत हा, पारिवारिक हा या विगाल रूपम

सामाजिक हो। और यदि हम गहराभीसे साच, ती परभाव और मोक्ष भी जीवनके क्षेत्रका ही काल्पनिक अथवा सच्चा गढ़ विस्तार है।

मनुष्यके लिए चिंतनका जोर पुरुषार्थकी साधनाका अकमात्र विषय अथवा क्षेत्र जीवन ही है। केवल मनुष्यगत जीवन नही। जीवमात्रके जीवनका चिंतन करके ही हम अपनी सारी प्रवृत्ति निवृत्ति और सुखकी साधना चलाते आये हैं।

संशुचित दृष्टिके कारण जिस हम जड़ सृष्टि कहते हैं उसकी उत्पत्ति स्थिति, लय और पुनरुत्पत्तिकी विचार किये बिना हमारा जीवन चिंतन पूरा और सतापप्रद हो ही नहीं सकता। इसीलिए जीवनको जुड़ीपित करनेवाले और जीवनके किसी भी अंगकी अपेक्षा न करनेवाले हमारे पुराण-साहित्यन सग और प्रतिसग के इतिहासमें ही प्रारंभ किया है। जिसलिए प्राचीन, मध्य कालीन और अद्यतन सब धर्मोंको जीवन व्यवस्थाक नामस ही पहचानना हमने उचित माना है।

इस व्यापक धारणा और दृष्टिसे अगर हम कानी केवल ग्रंथ लिखनकी हिम्मत करते तो वह हमारी हिमाकत ही हो जाती। हमने भारतीय जीवनके विकासका अध्ययन और चिंतन करते हुए समय समय पर जो जीवन व्यवस्था मूलक कुछ निबंध लिखे आहूँका यह अंक छोटासा सग्रह है। यहाँ किया हुआ चिंतन और प्रस्तुत की हुआ जीवन दृष्टि है तो पारमार्थिक किंतु हमारा यह दावा नहीं हो सकता कि हमने जीवनके सब पहलुओं पर प्रकाश डाला है। ये सारे निबंध किसी एक योजनाको लेकर भी लिखे हुए नहीं हैं। शिक्षण क्षेत्रमें और सामाजिक सुधार तथा विकासमें यथाशक्ति सेवा करने हुए प्रसंगगत जो कुछ हमने लिखा था उसका सग्रह यहाँ किया गया है। इन निबंधोंके वर्गीकरणकी तरफ पाठक ध्यान न दें। अंक अंक निबंधोंके अंक स्वतंत्र विचारके विवरणके रूपमें ही मान लें और सारे सग्रहको देशके मनीषियोंका अंक नम्र अनुनय ही समझ लें।

हमारे यहाँ धर्मका नाम लेकर बगड़े बहुत हुए हैं। यहाँ तक कि आजकल बहुतम लोग अब धर्मका नाम सुनते ही नाराज हो जाते हैं और सारी चर्चाका दकियानुमी कहकर बाजू पर रखना चाहते हैं।

लेकिन कौसी जसा न माने कि धर्मके झगड़ केवल भारतमें ही हुए हैं। दुनियामें अंक भी देश असा नहीं है, जिसने धर्मके नाम पर मनुष्यका रक्त न बहाया हो। पापद अधिक्से अतिक्रम धर्मचर्चा करनेवाले भारतमें ही मनुष्यका रक्त धर्मके कारण कमसे कम बहाया होगा। भारतमें झगड़ा टालनेकी वृत्ति है ही। यानी बगड़े खड़े हो ता मार काट चलाकर हिसाक द्वारा झगड़ा मिटानका प्रयत्न भारतमें कमसे कम होता है। झगड़े न तो मिटेंगे न मारामारी तक

पहुँचेंगे। 'जैसा भी चले बसा चलानेका' भारतीय मानम तयार होता है। जब-
रदमनके सामने झुक जाना किन्तु गुमकी भी पूरी चलने नहीं दना और जो भी
नताजे आयेँ अनका मजूर रखना—यह है भारतीय स्वभावकी नीति।

हिंदू शब्दकी निरुक्ति भी जिसी मनोवृत्तिको स्पष्ट करती है।

हिंदू शब्द अिदू परमे जाया होगा, अथवा सिंधू नदी परसे आया होगा,
अथवा किसी औरानी शब्दके रूपांतरसे बना हागा। निरुक्ति कभी भी व्युत्पत्तिके
वारम सोचनेके लिये बधी हुयी नहीं है। निरुक्ति कहती है हिंदू शब्दमें दो
अक्षर ह— हि और दू । अिन अक्षरार्थमें मे हम काशी अँसा अथ निकालेंगे
जिमम हिंदू शब्दका मसृष्टिक भाव सिद्ध हा सक। निरुक्तिने तय किया 'हि'
माने हिमा दू माने दु ल, और हिंदू शब्दका अथ किया हिंसास हिंसाको
दश्वर जिसके चित्तको दु म हाता है वह है हिंदू। (हिंसया दूयते चित्त यस्याऽ-
सी हिंदुरीरि।) हम लाग जहा तक हो सकेगा हिंसाको टाँगे। जबरुस्तकी
वान कुछ हद तक मान जायेंगे और जसा भी हो सग्गा निभायेंगे।

अिस मनोवृत्तिसे भारतका पुरुपाथ क्षीण हुआ ही है। किसी भी बातमें
अुत्तम स्थिति तक हम कभी पहुँचेंगे ही नहीं। जसा चलता है अुसीमे सताप
मानेंगे। फलत न तो हमार जीवनमें प्रमत्तता रहती है न दूमरे लागके प्रति
पूरा पूरा आत्मीयता। और दु खकी बात तो यह है कि जसी निष्प्राण शान्तिको ही
हम चलाते ह और जुसी हात्तको नीराग स्थिति मानने ह। जब रोगको रागके
तीर पर आदमी पहचाने तब गुमका जिलाज करनेका अुसे सूजेगा। रागी
हात्तकी ही मनुष्य जब स्वाभाविक स्थिति मान लता है तब ता सुधारकी काशी
आगा ही नहा रहती।

भारतमें अनेक उर्मी लाग अेकमाथ रहत है। अिमी देगके चद लोगाने
बाहरके धर्मोंका स्वीकार किया। क्या किया कमे किया अिसके अितिहासमें
जाना गय है। आज अुन लागका अपने अपने धममें मताप है अथवा कहिये
कि गुन गुन धर्मोंका अुह अभिमान है। अगो हात्तम गुन लोगका हम
विदगी नहीं कह सकत। बुद्धिमानी अिसमें है कि अपने ही स्वदेशी शगाने
जब बाहरके धर्मोंका स्वीकार किया तब व धम हमारे लिये विदेशी धम नहा
रह। जिम तरह हम बल्गव शब्, शक्त लिंगायत आदि लागको अपने ही
शक्त और अपनी ही मसृष्टिके लाग कहने ह और जिस तरह हम जैनाका
सिक्काको ब्राह्मणका और बौद्धका अपने ही धमके जोर मसृष्टिके स्वजन कहते
ह जसी तरह हमें जीमात्रियाका यहूतियाको पारसियाको और मुसलमानाना
भा अपने ही देगके और अपनी ही मसृष्टिके स्वजन मानना चाहिये।

और हिंदू धमका ता यह मिद्वान ही है (और स्वभाव भी है) कि किसी
भी धमके प्रति अनादर और अनास्था नहा रखनी चाहिये। चद लोग अपनेका

जाग्रहपूजक अलग मानते हैं जिसलिये हम भी उन्हें परामे मान, यह स्वाभाविक होते हुअे भी अिष्ट नहा है हितकर नही है।

जब भारतमे विदेशी लोगका राज्य था तब उनुके धमका स्वाकार करनेवाले हमारे लोग अपनेको श्रेष्ठ मानने लगे। सरकार दरबारमें उनुकी प्रतिष्ठा विक्षप थी। लेकिन अब तो स्वराज्य और प्रजाराज्य हा चुका है। जमी हात्तम किसी भी वगके अलग रहनेस किसीका काश्री खास लाभ नहा रहा। खास अधिकार तो सहानुभूतिके कारण पिछड लागका हो दिये जाते ह और व भी याड ही समयके लिअे ह।

अब ता हमें भेदभावका न बनाते हुअे उनुसे मजबूत न करते हुअे राष्ट्राय अेकनाकी ही मजबूत करना चाहिय। यह काम राजनीति त्गसे नहा हो सकेगा। राजनीति किसीको धमनायगी दबायगी अथवा धूम देकर खुगामन करेगी। अससे राष्ट्रीय अेकता मजबूत नही हाती। हमें तो वगभेद भाषानेद धमभेद आदि समस्त भेदाका गीण बनाकर सब भेदाका हजम करनेवाली और सबसे जूबी अुठनवाली भारतीय ससृति ही राष्ट्रीय अेकताका मजबूत करगी असा मानना है और हमारी ससृतिकी सवयापी सर्वोदया मानवताका परिपुष्ट करना है।

कहते ह कि जब काश्री सकट आता है तब उनुका अिगज न दूकर गुतुरमुग पक्षी अपनी आखें मूद लता है और मानता है कि सकट या कठि नाश्री कही है ही नहा। हम भी असा कहते लग ह धमभेदको ही भूत गभा फिर धमका अिलाज करना रहता ही नही। असल बात यह है कि धमके अच्छे जच्छे तख आजक तमानेम गीण या गायब हो गये ह किंतु धमकी वुराजिया वहा भी गायब नहा हुजी ह। मनुष्य अपने अपने धमका अभिमान और दूसराक धमके प्रति अनादर अविश्वाम और परमापन छाटता ही नहा। धमनिष्ठाके कारण अखिज भारतीय राष्ट्रनिष्ठा भारत निष्ठा (सब भारतीयका प्रति अेकसी आत्मीयता) सतरेमें आ जाती है।

ये सब दोष और यह कमजोरी दूर करती हो तो रणियाके डगस सब धमोंके प्रति अकना तिरस्कार रखकर हम जिसमें सफलता नहा मिठेगी। कबल सक्षयाका बल आजमा कर अथवा परदेगी सहायताके आधार पर धरके लोगको दबाकर हम भारतका मजबूत नही बना सकेंगे।

असका अेक ही अिलाज है। भारतमें जो भी धम आज प्रचलित ह उनुका सहानुभूति और आदरक साथ हम अध्ययन कर। हरअक धममें जा अच्छाजिया ह उनुका हम बढावा दें। सब धमोंके लोगक प्रति हम अपनी आत्मीयता बनायें।

असे सार शुभ प्रयत्न प्रारभमें अिकतरफा ही हा सकते ह। अगर तुम प्रेम करोगे ता म भी कछुना अस वाजाए प्रतियोगी सहकारमे असका प्रारभ

भा नहीं हा सकेगा। जिस किसीने हृदयमें प्रेमधमकी आवश्यकता और महत्ता अग्रे वह स्वयं अतिशय प्रयत्न करेगा ही। जिसका जवाब न मिला ता भी मायूस या निराश न होते हुये वह अपने प्रेमका प्रवाह बढ़ता ही सकेगा। प्रेमका सामर्थ्य आत्मोपनाका सामर्थ्य अवश्य जीतेगा। वह अमोघ हाता है अतना विश्राम जो सकेगा वही जास्तिक है।

केवल भारतके लिये ही नहा परन्तु गारी दुनियाके लिये आजका युगधम यही बहता है।

धम, समाज रचना सस्कृति और अध्यात्मक क्षेत्रमें भारतकी जीवन-व्यवस्थाका इतिहास कैसा है जाजकी हागत क्या है जोर भविष्यका स्थान किस स्थानमें होना चाहिये—यह जेव विराट और गभीर विषय है। जिसका व्यापक विवचन ता यहा है नहा जकिन अिस गभीर विषयका चिन्तन करनेमें कुछ न कुछ महायत्न ही सज असा घाडा चिन्तन यहा प्रस्तुत किया गया ह। जा-सात्मिक साधना, समाज सेवा और विश्वहित चिन्तनके परिष्कार रूप मेरी यह विचार प्रगाठी बनो हुआ है। भारतके हितके लिये मुझे जा आवश्यक और हितकर लगा वही यहा देनेका मेरा प्रयास है। जिसलिये पूण भक्तिभावसे आर नम्रतासे म देवतामियाक वर-कर्मणाम यह जपण करता हू और आगा रखता हू कि पाठक किसी पारमार्थिकतासे अिसका स्वीकार करेंगे।

श्रीका फालेलकर

नमः प्रथम दिन
१०-१-६७



जीवन-निष्ठ व्यवस्थाका स्वरूप

[मूळ गुजराती पुस्तककी प्रस्तावनासे]

जिस मनुष्यको सच्चे अर्थमें जीवन जीना है, उसे अपने और अपने आस-पासके लोगोंके जीवनका तथा अज्ञातिका विचार करना ही चाहिये। हमारी भक्ति-का मुख्य विषय ही जीवन है। पुरुषार्थके लिये हमारी पूजा भी हमारा अपना जीवन ही है। जिसे हम सेवा कहते हैं वह भी अपने जीवन द्वारा स्वजनाके जीवनका मुखी और समृद्ध बनानेका प्रयत्न ही होता है। जीवन बुद्धि, जीवन वृद्धि जीवन-समृद्धि जीवन विकास तथा जीवनकी वृत्तायता ही हमारे चिंतन और पुरुषार्थका विषय होता है। हमारे युगके महान कविने जो जा गाया है वह मय अपने द्वारा की गयी जीवन देवताकी अर्चना ही है जसा अन्हाने स्वयं अनेक बार कहा है।

प्राचीन सभ्यताकी भक्ति करनेवाले भारतके जीवन पर चढ़े हुए जगका दूर दूरके जूममें फिरसे जीवनका संचार करनेके लिये गांधीजीने जो कुछ लिखा, उसके लिये भी अन्हाने नवजीवन जमा व्यापक नाम ही अपनाया था। व भी अज्ञात जीवनके ही अर्चना थी। धर्म, राजनीति, समाज व्यवस्था, अर्थ व्यवस्था, स्वास्थ्य साहित्य, संगीत, कला—ये सब जीवनके सस्वारके लिये हैं। जब हम जीवन पूरा करके भगवानके सामने खड़े रहेंगे अत समय भी हमें किसी प्रश्नका उत्तर देना पड़ेगा 'अपने जीवनका हमने क्या अर्पण किया ?'

अस प्रकारके जीवन अर्पण वातावरणमें रहकर समय समय पर लिखे गये मरे लेखको प्रकाशित करनेका निणय जब नवजीवन ट्रस्टने किया तब मुझे यह बात सुनायी गयी कि यह एक जीवन माला है अिसलिये लेखके प्रत्येक सग्रह नामका जीवनके साथ कोयी सम्बन्ध होना चाहिये। यह बात मुझे पसन्द आयी और अिसीलिये मने 'जीवन-व्यवस्था' 'जीवन भारती', 'जीवनका आनन्द' 'जीवन चिंतन', 'जीवन प्रदीप' आदि नाम अिन सग्रहोंके स्वीकार किये। जसे नामोंमें अेकसेपनका दोष होता है, यह जानते हुए भी मैं मूल सफल्य पर दृढ़ रहा हूँ और धर्म चिंतन धर्म रहस्य, त्रिविध धर्मों और युगके लिये स्थापित मन्दिर तथा हमारे धर्मग्रन्थोंके बारेमें लिखे गये अिन लेखोंका 'जीवन व्यवस्था' का व्यापक नाम देकर अिस सग्रहका जनताके समक्ष रखता हूँ।

अिस अथ सग्रह मने जा धर्म चिंतन किया है वह हमारे अर्पण मुनिगा तथा मते महात्माओंके साहित्यके भक्तिमय अितु स्वतंत्र अर्थयनन ही अत्यन्त हुआ है। वह प्राचीन साहित्य पढ़ते पढ़ते और अतमें जेके पीडीअ दूसरी पीडीमें सभ्यता जो परम्परागत विकास होना गया उसका चिंतन करते करते

मुझे वनमान कालके हमारे पुरुषायकी दिशा प्राप्त हुयी और भविष्यकी भी योनी बहुत चाकी मिली।

परम्पराका अर्थ यह नहीं है कि केवल पुरानकी ही रक्षा की जाय जुसीसे चिपट कर रहा जाय और अमीको बार-बार दोहराया जाय, परम्पराका अर्थ है पुरानी अिभारत पर नयी नयी मजिले खडी करना और जुन नयी जुवाअियासे दूर दूर तक देखनकी सुविधा प्राप्त करना। परम्परारा अर्थ है सगाधन और परिवधनको स्वीकार करनवाला अखड प्रवाह। मुझे जा गरीर मिला है और जो सस्कार मने विरासतमें प्राप्त किये ह अनक लिअे म अपनी कुल परम्पराका जाभारी हू। यह कुल परम्परा क्या है? भेरे कुलक जितने पूवजाने विवाह किया व सब दूमरे ही जलग अलग कुलाकी लडकिया जुनके सस्काराक साथ अपने घरमें लाय। अिस प्रकार अुहाने भिन्न भिन्न कुलाक सस्काराका सम वष मिद्ध किया। अिन मम-वयमें नवीनताकी मात्रा काफी हाणी थी, अिसअिअ पूवजान यह नियम बना लिया था कि विवाह करना हा ता अपने कुलमें न किया जाय अपने गात्रमें भी न किया जाय अमुक अत्यत निरुटक सम्प्रदासे बचकर ही विवाह किया जाय। अिसमें अितना हा ध्यान रखा जाय कि (१) अपना रहन सहन अयात अपने सस्कार (२) अपना आचरण अयात अपने धर्मसे सम्बन्धित समस्त पुरुषाय और (३) अपनी विचारसरणी अयात अपनी सस्कारिकी पोवन अष्टि — अिन सबके अनुकूल किसी डगमें ही पुरुषका स्त्रीका और स्त्रीको पुरुषका चुनाव करना चाहिये। (भाजनम हम तर तरहक अनाजा दाला माग भाजिया मसाला तथा अन्न अचार मुरवाको जेकसाय खाते ह। पर तु आयुर्वेद कहता है कि अिस मिथणम विरुद्ध अगन न हानेका खास ध्यान रखना चाहिये बना हिवकिया आती ह पटमें वायु पग हाणी है और स्वास्थ्य विगडता है।)

कुल परम्पराम अिस प्रकार हम अनेक विवाहके साथ दूसरे कुलके सस्कार वाग्रहपुवक दाखिल करते ह अुसी प्रकार तीभयात्रा द्वारा हम विनाल सामाजिक जीवनकी विविधताको देखत ह और जुमम जा कुछ भी अल्ला मिलता है अुसे ग्रहण करते ह तथा आत्ममात कर लते ह। अिसके सिवा पीडी दर पीपी अिन सस्काराम सगाधन और परिवधन तो होने ही रहते ह।

हमारे पूवजाने मानव-स्वभावकी विनेपताअाका देखा और रचियाकी विचित्रताको स्वीकार करके अन्न प्रकारकी जुपासनायें बतायी। अिस प्रकार गव, बण्णव और गात्र जुपासनाक तीन प्रकार जीवन-सस्कारिके ही तीन प्रकार ह। पान कम और भक्ति य जीवन माधनाक अलग अलग प्रस्थान ह। चार वष जोअन निद्रि नरा ममाअ पेवाके चार अग हैं। चार आयम जीवन अिकानकी चार मजिलें ह। अिन सबका मिलाकर विराट जीवनका विकास होता है।

जैसी विविध व्यवस्थाएँ कारण जब जीवनमें अंकांगिता आने लगी तब हमारे सम्मति पुराणाने हमें अिन मवता ममपय करना मिलाया । पचासन पूजामें मनी दधारी पूजा जेसमाय करनी हाती है । अिसी परम्पराना यदि आगे बढ़ाया हो तो हम कहेंगे कि हमारी प्रायना तभी पूरा हागी जब अुममें हिन्दू मसृतिके सब अगारा ममावग ता हा ही परन्तु अुनर माय पारया यूनी, बीमात्री और अिस्यामी अुसमनाका भा र्यान िया जाय । परम्परामें पुराना जा कुछ टिकने योग्य हा अुमकी रक्षा करना और अुम नया रूप दना हाता है तथा अुममें जो कुछ नया नया मियाया जा गये अुस जात्वा और अेकदर बनाना हाता है । जिन प्रसार पीथा अुगदर यक्ष बनता है छटे बात्नरा पुदरपी यादादर ममें विकास हाता है अुमी प्रसार प्रत्येक समाज और प्रत्येक दगरी सम्मति पुरानेमें परिवतन करेे तथा नयेका आरमगात् करर नवजीवा मिद करनी है ।

साप नर अपना बँचुली अुनारना है तब यह अपने गरीरग प्रति वेवपा नहा हाता । परतु जा कुछ चीम हो गया है जा कुछ प्रगतिमें बाधा मिद हुआ है अुनकेका ही पाछे छात्कर वह तजीम आग बढ़ जाता है । अभा जमी बँचुली अुनार पर जवान बने हुअे मापका आपने काा दसा है ? क्या अुसरी कानि । क्या अुमका दानि । और क्या अुमकी स्मति हाता है । कुछ दर पदर जिमकी आमों निस्तेज ियाया दवी या ओर अुनारग कारण जा जैसे तम गारररा घनाटना पना या वही साप अिनने पाग दोाने लाता है माना हाररा स्पा भी अुन अनहा माअूम होना हो । जैसा दुय जब मने अपना आयास दगा तब मन यह ममग िया कि सम्मति निष्कारा अथ बँचुली निष्ठा नहा है ।

गव बलाव, गानन आदि अुपागनाआरी विविधनाका विकास हातेर बात् हमार ममें वीद और जन जीवन-दृष्टियारा विकास हुआ । अिस पुसायने कुछ सदिया तब माना मार राष्ट्रना व्याप्त कर लिया । अिसमें भी वाद धमके महायान मप्रनयन गानन और वीद दृष्टियाका मिलारर तरह तरहकी मिथ अुपागनाआका जम िया । अिसस जनाका भी गानि अुपागनाने माय सम झीना करनेकी जम्हरत भाअूम हुआ । हिन्दू समापने निगम आगम जीर तत्राका मिथग कर िया । लाकृचिका सतुष्ट करनेक लिये पागल धनकर हमने तरह तरहके न जाने कितने घना, अुमका और त्योहारको जम द डाला । हमार दव-वेविधानी सम्म्या भारतकी लावसम्म्यास कम ता नहा ही हागी ।

विविधना हमें जितनी प्रिय है कि हम नया नया ता जाडत हा जात हैं जीर पुराना कुछ छात्ते नही । सापकी बँचुली तो क्या, मरा हुआ साप भा कामना है अँसा मानकर अुसका सप्रह करनेमें हम विश्वास रखते ह ।

अपमाननाका यह सारा विस्तार आतिरमें सहन तो करना पड़ता था वचारे भगवानका ही। अिसल्लिजे भगवानने घबरा कर हमारे यहा अिस्लामको भजा—वह जिस्लाम जिसकी स्थापना ही तीन सौ साठ ताकामें से तान सौ साठ दवा नेवता-नाको नाचे गिराकर हुआ थी। अिस्लामकी मूर्ति भजक जेकेस्वरी पूजाम प्रभावित हाकर हमने सिक्ख पय ब्राह्म समाज, प्राथना समाज और आय समाज जैसे समाजाकी स्थापना की और अपने घरका जेकेस्वरा पूजाको आगे बढाया। परतु भारताय मानम असा है कि सुधारक हो या अुद्धारक—जा भा आये अुस वह नमस्कार करता है और अुसके लिअे अक नया ताक तयार कर दना है। वह कहता है 'आपने लिअे भा हमारे यहा आदरका स्थान होगा। लकिन आपका सवमें से अेक बनकर रहना होगा।' सवके स्थान पर जेक यह मूत्र हमारे यहा कभा चला हा नही, और आग भी कभा चलेगा असा नहा लगता। हमारी ससृति बक्षरपी ससृति है। अुसमें गाखाआ प्रगाखाआ डालिया और पत्ताका विस्तार बढता ही रहेगा। अिसलिअ यलि हम समझ दार हा तो सवको पोपण देनवाल् बक्षके ताके भा समय समय पर विचार करगे जोर यह तना बडा और विगाल बने अिसने लिअे हर बार कुतरता तीर पर फट जानेवाला अुसका छानका भी विचार करेगे, जोर जितना गाखायें नजा फूटें जोर बने अुन सवका हम स्वागत भी करेग।

हमारे मन्िराका जय है हमारे धार्मिक जावनके विकामने लिअे तथा अुसस जान प्राप्त करनेक लिअे सडा का गत्री अक समयका जीवत सस्थाय। अुत्साह जोर अुत्सवको बढानेक लिअे स्थापित किये गये जिन मदिराम भा दम घानेगाग हलिनिठान कारण हमारा अुत्साह समा न सवा। वह मदिराकी चारदावारीने बाहर निकल गया जोर अुसने नय नय रूप खान निकाल। हमारे मन्िरामे प्राप्त हानवाग मुरय बाध यही है कि धम धम विकाम और धमानाद मन्िराकी चारदावारीन भीतर समा नहा सकता क नहा र सवता। जीवनका यवम्याक साथ हमें अपने मन्िराका यवम्या भा बढाना चाहिये। अेर हा मन्िरमें अथवा अुमक प्राणमें अक दबी श्वताआका बठानरी ह तक ता हम गये हा ह।

अभा अभी अमने अपनी प्राथनामें सव धर्मोंकी अुगमनाका स्थाप लिया है। अुन वागना कदम तो यही हा सकता है कि अन अुत्मनामें हम सव धमके आगागा बुगयें जोर अुन अुत्मनामें हम परायाका तरह नहा परतु अुनक श्वजन बनकर मम्मिलिन हा। हम अमा कर सकेंगे जोर भारतम यह चाज मूत्र जमगा।

अग अम जीवनका विकाम हाता जाय बमे बमे अुगका यवम्या भा बढाना चाहिय विगाल और अुनर बननी चाहिय। अिस आगका मनमें रखकर

ही में आरम्भसे आज तक धर्मोंका चिन्तन करना आया है। गांधीजीकी प्रवृत्ति मरी अिम वृत्तिके अनुकूल थी, जिसीलिये मने अुनका आमन्त्रण स्वीकार कर लिया। आश्रम-जीवनमें मुझे अपने विकासके लिये पूरा पूरा मौका मिला। वहाँ रहते हुअे मने देखा कि गांधीजी अेक अम पुरुष ह जा जरूरत पडने पर आश्रमका व्यापक धनानेक लिये अुगकी दीवालें भी ताँ मक्ते हैं। गांधीजीकी जीवन-निष्ठाने किसी भी समय व्यक्तिक या समाजक विकासका राका नहीं। व मदा भविष्यक अुपासन रह। अुनकी अभिलाषा मह थी भूतकालकी विगमसतका वनमान काँक पुरुषायमें अिस प्रकार वाया जाय कि भविष्य कालका समष्टम समद्ध कम मिले। गांधीजीका धम भारतका भविष्य निमाण करनेवाला धम है। वह धम नित्य वधमान धम है। अुम प्रमगन अनुसार नया नयी व्यवस्था सूझनी है। वह जानता है कि व्यवस्थाका यदि समय समय पर बदल न जाय ता जावनमें अव्यवस्था ही बनेगी और फिर ता मारा जीवन विकास रुक जायगा। यह मच है कि व्यवस्थाक बिना जीवन टिक नहीं मक्ना अुसका विकास नहीं हा मरता। किंतु व्यवस्थाका सदा जीवनक प्रति वफादार रहकर ममया-धिन परिवतन स्वीकार करने चाहिये।

*

धम स्वभावन आदरणाय वस्तु है अिसलिये अुमक चितनके प्रति भा लेखकक मनमें आदरका भाव होना चाहिये। अत आदर और नम्रता दानाक मिश्रणक माय अिस अवसर पर म जावन-व्यवस्था का पाठकाके हायमें रखना चाहता हू।

आजके नये लागामें कभा कभी धमक प्रति अनास्था लिखायी पडना है। परंतु मैं दखा है कि अुनकी जीवन निष्ठा अिस अनास्थाका टिकने नहा दता। अिसलिये मरा यह विश्वास है कि नया जमाना भी अिस चिन्तनमें हाय बटानेका तयार हागा।

काका कालेलकर

गांधी सत्रिधि, नयी दिल्ली

गांधी जयती, १९६३

अनुक्रमणिका

जावन व्यवस्थामें विश्व-सम-वय	३
जावन निष्ठ व्यवस्थाका स्वरूप	९

पहला खण्ड धम और सस्कृति

१ भारतवपके धम	३
२ भारताय सस्कृति	८
३ धर्मोका धम	१२
४ मावभौम जीवन दगन	२३
५ धमाचाय अथवा साहित्याचाय	३५
६ गमीक्षा	४१
७ महाभारत	५२
८ महाभारतका आस्वा	५४
९ भगवद्गीता	६२
१० प्रस्थानत्रया किसलिअे ?	६४
११ अुपनिषदाकी गिक्षा	६७
१२ नये जावन गगन	६९
१३ मूलभूत मनन	७२
१४ ॐ - प्रणवोपासना	७४
१५ मतवाणीका वाय	७६
१६ मत्य नारायणका व्रत	७९
१७ गज द्र माश	८७
१८ स्वाद-भायम	९१
१९ सप्तषण्णा	९६
२० गाम्त्राका जपयगत	९९
२१ जवनारगान	१०२

दूसरा खण्ड विविध धम

२० हिन्दू धम बनाम हिन्दू समाजशास्त्र	१११
२३ आय सस्कृतिका आधार	११२
२४ हिन्दू धम मस्कार	११४

२५	बुद्धका समय और बुद्धका काम	११६
२६	जीता जागता सघ	११८
२७	प्राथना-समाजकी सेवा	१२८
२८	दोना धम अनादि	१३८
२९	सुधारक धममें सुधार	१३९
३०	धम-सम्बरण १	१४९
३१	धम-सम्बरण २	१५२
३२	जैन समाजके साथ मेरा परिचय	१५८
३३	प्रबुद्ध जन	१६४
३४	महावारका जीवन-संदा	१६६
३५	जनेतर	१६९
३६	गायत्री माथ मधुमक्खा	१७२
३७	जन धम और अहिंसा	१७४
३८	गायचन्द्र जयती	१७८

तीसरा खण्ड आस्तिक्य

३९	आश्वरकी कृपा	१८७
४०	आस्तिक कौन है ?	१८८
४१	आश्वरकी आस्तिकता	१८९
४२	नास्तिकता	१९१
४३	हमारे आश्वरका स्वरूप	१९६
४४	प्रभु जागत है तू सोवत है	२००
४५	जीवनका शास्त्र	२०२
४६	अधभक्ति	२०६
४७	अधविश्वास और धृष्टा	२०९
४८	चिटठाका निषय ?	२१२
४९	धम-मकटमें क्या किया जाय ?	२१६
५०	मरणात्तर जीवनका स्पष्ट कल्पना	२१८
५१	सप्टिकी सहार-नीलाका वाध	२२४
५२	बालका महिमा	२२९

चौथा खण्ड मन्दिर भावना

५३	हमारे मन्दिर	२३७
५४	दब मन्दिर सावजनिक जीवनका कद्र	२४५
५५	मूर्तिपूजा	२५०

जीवन-व्यवस्था

पहला खण्ड

धर्म और सस्कृति

भारतवर्षके धर्म*

कौन जाने किस तरह किन्तु दुनियाके सभी धर्म हमारे देशमें आ पहुँचे हैं और वे किसीका मुल्यमें रहते नहीं दत्त। अब जिन धर्मोंका हम करेंगे क्या? — यह प्रश्न अनेक लोगोंके मनमें समय समय पर बूढ़ता रहता है। कुछ लोग कहते हैं कि जिन प्रकार अरबस्तानमें सिर्फ ज़िम्लाहके अनुयायी ही रह सकते हैं, अमेरिकामें अंग्रेजी भाषा ही चल सकती है, उसी प्रकार यदि भारतमें धर्मका वारमें ही सत्ता हाता तो कितना अच्छा हाता? भारतमें केवलात्र हिन्दू धर्म ही हाता और दूसरे सब धर्मोंको यहाँ रहनेकी मनाही कर दी गयी हाती तो कितना अच्छा हाता? दूसरे कुछ लोग पूछते हैं कि धर्मकी बला ही क्या रहना चाहिये? सभी धर्म समान रूपसे फेंक देने जैसे हैं। जिनमें से केवको रखने और बाकी सबका निकाल देनेका क्या अर्थ है?

यह भी पूछा जा सकता है कि निम्नधर्मों लागते बाहरस आने पर आप सायद राह लग सकें किन्तु सनातन कालस ज़िसे देशमें रहनेवाल लोगोंमें से कुछ यदि अपनी धार्मिक भावनाका बदल डालें या बाहरस किसी धर्मको स्वाकार करें तो आप अन्हें किस राह सकेंगे? मनुष्य पर जबरन सत्ता भागनेका अधिकार किसी धर्मका ही ही किस सकता है? जिस प्रकार हमारे देशमें धर्म-विषयक चर्चा चलता रहती है। कुछ अक्षत रहनेवाल धर्मोंक कान तक अभी यह चर्चा पहुँची ही नहीं है। कुछ भाग्यवादी धर्म 'जा हाता होगा वह हाता, हमारे हाथमें क्या है? हम तो पढे रहेंगे और जो होगा उसे सहन करेंगे' अँसा कहकर जमुहाआ लेत रहत हैं। कुछ धर्म हक्के-बक्के हाकर अपनी याग्यता और अपना अधिकार गिड करनेके लिये प्रमाण और दलीलें अँकत्र करत हैं, और कुछ धर्मोंका लगता है कि रागसत्ताके बिना धर्म टिक ही नहीं सगता, ज़िर्मालिये राग्यसत्ताकी गरण हमें लनी ही पडेगी।'

केव जमाना अँगा था जब धर्म सर्वोच्च सत्ता भोगते थे। राजाको गद्दीस अँतार देनेका मत्ता भी धर्माचार्योंके हाथमें रहती थी। राजाभिषेकके समय धर्मगुरु ही राजाका राजत्व प्रदान करता था। अँग्रेजोंके केव राजाका अपना मुमुट पारस चरणामें रखकर अँसे साप्टा प्रणाम करना पडा था। और रोमका पाप अँरने गिष्य राजाअँके बीच सारी दुनियाका बटवारा कर सकता था।

* सन् १९९३क पपुपल-यव पर बम्बयीमें दिया हुआ भाषा।

जीवन-व्यवस्था

परन्तु आगे चलकर धर्मसंस्थाकी यह प्रतिष्ठा नष्ट रही। राजा सर्वोपरि बन गया और धर्म अतमें राजाका आश्रित हो गया। 'यन्त्रितयाक' जीवनमें भी धर्मकी सर्वोपरिता घट गयी और सत्ता तथा संपत्तिकी प्रतिष्ठा बनी।

धर्मका यह उद्य पतन किसलिय हुआ ? कारण स्पष्ट है। धर्मोंने राज्य-व्यवस्थाका अनुसरण और अनुकरण किया राज्यसंस्थाका आदर्श मानकर धर्म-संस्थाका तत्र रचा और सत्ता तथा अधिकारकी परम्परा खड़ी की। यूरोपमें पोपकी जो सत्ता थी इस्लामी दुनियाम खलीफाकी जो सत्ता थी वसी सत्ता हमारे देशमें धर्माचार्यों शंकराचार्यों तथा राज-पुरोहिताकी कभी नहीं रही। फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि हमारे यहां धर्मसंस्थाने राज्यसंस्थाका अनुकरण नहीं किया। जातियाका समूह गुरु गिप्य सम्बन्ध विषयक नियम मदि राकी व्यवस्था—जिन सबक पीछे राज्यतंत्रके जसी ही योजना है। नतीजा यह हुआ कि धर्मकी जड़म ही सडन पड गयी। लकिन जिस समय राज्यसत्ताका अनुकरण गुरु हुआ उस समय तो लागाकी यही लगता था कि अब धर्मकी विजय हुई है अब धर्मकी सच्ची स्थापना हुई है।

परन्तु धर्माचार्योंकी सत्ता बडी उसी समयस सच्चा धर्म क्षीण होन लगा और सच्ची धार्मिक प्रेरणा जाचार्योंक हाथसे निकल कर सत्ताके हाथमें चली गयी। भारतके सत अधिकतर तत्र विमुख ही रहे और जहा बुन्धान तत्र पडा गया वहा राज्यतंत्रके नमून पर नहीं परन्तु लीन जीवनक अनुकूल ही तत्र रचा। यूरोपम क्या और हमार देशमें क्या तत्र विमुख सत्ताकी वजहसे जितना धर्म टिन सवा अतना ही टिका है।

अब पुरानी कहावत है अब कबल पर बारह फकीर सौ सकते हैं लकिन अब बड साम्राज्यमें दो बाग्गाहाका निर्वाह नहीं हो सकता। जहा राज्यतंत्रका अनुकरण किया जायगा वहा अब स्थान पर अब ही धर्म निभ सकता है। भारतम सारी दुनियाके धर्म अिन्टठ हो गय ह क्नाकि भारत वास्तवमें बारह फकीराका कबल है—आज असा न हो तो भी वट फकीराका कबल बननक लिजे ही पदा किया गया है।

जो मनुष्य वाहरने भारतका दखन आता है असका पहला ही बुदगार यह होता है भारत अब बिगाल धर्म-परिवार है। यह बात सच है परन्तु यह परिवार मिल्-जुन्जर रहनवाला नहा है। अधिकतर हिन्दू परिवारामें जिस प्रकार भाभी भाभी अेक-दूसरेके अलग भी नहीं रहन और मिल्-जुन्जर भी नहीं रह पाते हमारा परस्पर हागडते रहने ह उसी प्रकार भारतक धर्मोंका है। गायद असा हो कि हिन्दू परिवारकी जब हम मुघार सक्के और आपसमें प्रेम तथा आन्तरकी भावना रखकर मेल-जालने रहना सालेग तभी धर्माना प्रश्न भी हल

होगा, और आज जहा धमके क्षेत्रमें केवल कागहल ही मुनाओ पढता है वहा समवयसा विद्वन्-समद्व सगीन गगन-मण्डलको भर देगा।

वात यह है कि राता और अनुकी सरकारें मनुष्यके बाहरी जीवन पर ही अधिकार भोग सकते हैं, और जिसीगिजे व दुनिषावी तत्र खडा करके बुसके द्वारा अपना ध्येय मिद्ध कर मनन हैं, जब कि धमका प्रभाव मूलत आतरिक होता है। धम जानता है कि भीतरका प्रभाव अपने आप बाहर आये यही गुम और वाछनीय है। राज्यसत्ताके वातावरणमें धमोंने जीवनकी अपेक्षा मायता पर अधिर भार दिया। मनुष्यका धार्मिक जीवन कसा भी हो, यदि वह धार्मिक मायतास सहमत हो ता अितना काफी है — असा वातावरण खडा करके हमने धार्मिकताका गला घाट दिया है। धमना रहस्य बुसके पालनमें बुसके आचारमें और धम-परायण चित्तवत्तिमें है। जिसके विपरीत धार्मिक मायता धमाभिमान और परमत-असहिष्णुताका जन्म दती है। धार्मिक जीवनसे धम-परायणता बुत्पन्न होती है और धम-परायणतामे ही सब धम-ममभावका विकास होना है।

धार्मिक मायताआमें मव-ममानना दनाये रखनेन लिजे मुरापमें जी-ताड प्रयत्न किये गये और भारी चगडे खडे किये गये। हमारे देगमें मायताआने विषयमें तो छूट धी परन्तु आचार धमके विषयमें सारे समाजको यात्रिक गिन्जेमें पकड कर रखा जाता था। जिसने फर्म्बरूप यहा बौद्धिक स्वतत्रताका ता विकास हुआ किन्तु बुद्धिके अनुमार कम करनेकी छूट न हानेसे — विचाराके अनुसार आचरणका विकास न होनेस — बुद्धिका तेज क्षीण हो गया और धर्माधम तथा द्वाताद्वतकी चचा केवल डिबेटिंग कम्ब' जैसी हो गयी। धम हमेशा पारमाथिक (Serious) वस्तु होना चाहिये। जसी मायता हा वसा जीवन बन आय तमी मनुष्यकी बुद्धि गुद्ध और गुम रहती है और बुसका आचार मानवतापूण, अविद्वत और सस्कार-सपन्न बनता है।

'Live what you believe' — यही वडेसे बडा धमसूत्र और जीवन-सूत्र है। जसा विश्वास हो वसा ही आचरण रखो।

परन्तु धार्मिक आदग मरौच्च कोटि तक पहुचा हुआ होनेके कारण बुसके आचरणमें ढीले और दद लीगाने वग ता पडेंगे ही — श्रावक और साधु, सयासी और गृहस्थ, श्रमण और श्रमणेतरेके भेद बुत्पन्न हानेके बाद मायताआसे पूरी तरह चिपटे रहो और आचरणकी गिथिलताकी बुपक्षा करो का वातावरण पैदा हुअे बिना रह ही नहीं सकता। और जिसमें — अितनेमें — दोष नहीं पैदा हाते। परन्तु जिसलडमें प्रोटेस्टेट व्यापारियाने अेक दूमरा सूत्र खोज निकाला। धम जीवनका केव जेक अग है। धमके स्थान पर ही धम गोभा देता है। व्यवहारमें हर जगह हम धमको ले आयेंगे तो व्यवहार भी विगडेगा और धम भी विगडेगा, असा बहुर अिन लीगाने धमको जीवनकी सामाय चीज बना डाला है।

अब लोग अतने गभीर भी नहीं रह गये हैं और धमकी कल्पना भी अतनी छिछली नहीं रही है। धमका जय है जीवनका परिष्करण, जीवनका परिवर्तन — अतनी बात लोगाने समझ ली है। अब यदि धार्मिकताकी रक्षा करनी हो तो धर्मोंके बीचके षगडाका भूल जाना चाहिये और सार धर्मोंमें जो लोग सच्चे धर्मानिष्ठ हैं उन्हें निरे सद्भावित भेदाना भूलकर तथा धर्मोंमें रही हार्दिक जेकताको पहचानकर आपसमें सगठित होना चाहिये। हर धर्ममें धर्म परायण लोग भी होते हैं और धर्माभिमानी लोग भी होते हैं। धर्म-परायण लोग धार्मिक जीवनमें गहरे अतुरते हैं अपने आपका सुधारनेका सतत प्रयत्न करते हैं और अिस प्रकार अपनी धार्मिकताकी सुगंध चारा तरफ फैलते हैं। लेकिन आजके जमानेमें समाजका नेतृत्व करते हैं धर्माभिमानी लोग ही। अुन्हें धार्मिक आचरणकी बिल्कुल परवाह नहीं होती। अन्हें तो धमके नाम पर जेक दुनियावी सगठन ही खडा करना होता है। जैसे लोग ही अपने धमक अनुयायियोंको अुत्तेजित करके धार्मिक झगडे गुरू करते हैं अथवा अुन्हें चलाते हैं।

और जब धम धमके बीच असे षगडे चलते हैं अुस समय धम-गुद्धिका काम गिथिल पड ही जाता है। धम-सुधारक यदि आत्म-गुद्धिके लिये अपने समाजके दोषाको प्रकट करते हैं तो 'गद्गुआने सामने हमारी पोल खुल जायगी' अिस भयसे असे सुधारकाकी आवाजको दबा दिया जाता है। जनताको यह बात समझानी चाहिये कि भिन्न भिन्न धर्मोंके लोग जेक दूसरेके शत्रु नहीं हैं, सच्चे गद्गु तो अघर्मों अर्थात् धम विरोधी लोग ही हैं।

अेक बात हमें स्पष्ट रूपसे समझ लनी चाहिये कि आजके सामाजिक जीवनक लिये प्रत्येक मनुष्यको सब धर्मोंका ज्ञान — समभावपूर्वक प्राप्त किया हुआ थोडा-बहुत ज्ञान — अवश्य होना चाहिये। प्रत्येक मानवको अिस बातका ज्ञान होना चाहिये कि हरअेक धमकी मायतामें क्या है अुसका समाजशास्त्र क्या है तथा अुसे कितनी जीवन सिद्धि मिली है और किस ढगसे मिला है।

म अपना सब कुछ सभाल कर वठा रूढ़गा दूसरासे भेरा क्या सबध ? असा कहनेसे अब काम नहीं चलेगा। म सबकी बातको समझूंगा, सबको अपनी बात समझाऊंगा सबकी बात सहन करूंगा सबको सहन करूंगा और सबके साथ जोतप्रोत हो जाऊंगा — यही अब धमका सुगंध है। अब आग सत्र मनुष्योंको अेक दूसरेका रग लयेगा और फिर भी प्रत्येक मनुष्य अपनी स्वतंत्रताकी रक्षा करेगा।

अब हमें अेक अत्यंत महत्त्वकी बात प्रचलित करनी होगी। आज तक हम यह मानते और कहते आये हैं कि प्रत्येक मनुष्यके लिये अुसका अपना धम अच्छा है। सभी धम अच्छे हैं अिसलिये न तो कोअी अपने धमका त्याग करे और न दूसरोके धमकी निन्दा करे।' यहां तक तो सब ठीक ही है। लेकिन

अननेसे ही अब हमार काम नही चलेगा। स्वधमका सूत्र अब अेवागी लगता है। सब धर्मोंके साथ परिचय बढाकर अुन्हें पहचान कर, अुम व्यवस्थामें दिखायी पडनेवाले अपने स्वधमका मैं पालन करुगा'—यही आजका पूण धम है। सब धर्मोंका अध्ययन करनेके बाद ही स्वधमका रहस्य पूणतया हमारी समझमें आवेगा और जसा करके ही हम सबक साथ जाति और मेलजोलने रह सकेंगे।

श्री शकराचायने अिस तत्त्वको समझ लिया था। अुहाने देखा कि भारतमें असख्य देवी-देवताआकी पूजा होती है। भारतक लोगाकी शायद गिनती हो सकती है, लेकिन भारतके देवी-देवताआकी नही हो सकती। जिमलिअे अुहाने पाच देवाका मुख्य मानकर बाकी सबको अिन पाच देवाके ही अवतार बना दिया। महादेव विष्णु गणपति देवी और सूर्य अिन पाच देवोको अुहाने हिन्दू धमके मुख्य देवाके रूपमें प्रस्तुत किया और कहा कि अिनमें से जो देव तुम्हारा अिष्ट हो अुसीकी पूजा करो, परन्तु अुसके आसपास बाकी चार देवाको अनि वाय रूपसे रखना चाहिये क्यकि अिनके साथ ही अिष्ट देवकी पूजा हो सकती है। पूजा जब भी की जाय तब पचायतनकी ही करनी चाहिये। असा करके श्री शकराचायने सब देवी-देवताओके सबधमें भक्ताके बीच चलनेवाले झगडाको खतम कर दिया। सभी धम अच्छे हैं सब धर्मोंके प्रति हमार सदभाव होना चाहिये सन धर्मोंकी अुपासना हमें समझ लेनी चाहिये—अुसमें किसी हद तक हम भाग भी ले सकते हैं परन्तु दूढ तो हमें अपने धम पर ही रहना चाहिये। जब सभी धम सच्चे ह तो धम-परिवर्तनके लिअे गुजाअिसा ही नही रह जाती। सभी धम सच्चे हैं और सभी धम किसी हद तक अेवागी और अपूण ह यह बात स्याद्वाद और सप्तभगी 'यायको समझनेवाल जैनाकी समझमें तुरन्त आ जानी चाहिये। सब धर्मोंका जान होने पर ही स्वधमका रहस्य समझमें आता है। वास्तवमें जितने धम ह अुतनी ही जीवन पद्धतिया ह। अिन सन पद्धतिया द्वारा मनुष्यको जीवनका दान होना चाहिये। अिसीलिअे अिन सब धर्मोंकी आवश्यकता है। कहा जाता है कि रामकृष्ण परमहंसने अलग अलग समय पर अिन सब धर्मोंकी साधना करके देख लिया और अुसके बाद वे अिसी निणय पर पहुचे कि ये सब माग अेक ही प्राप्तय—लक्ष्य—की ओर ले जाते हैं।

असे साक्षात्कार प्रत्यक्ष अनुभव के लिअे बौद्धिक अहिंसा यानी स्याद्वाद और तपकी आवश्यकता है।

प्रत्येक धमका आधार है आत्मा पर विश्वास। जिन लोगाका आत्मामें विश्वास नही है, अुन्हें गीताने आसुरी सपत्तिवाले कहा है। अिसलिअे सच पूछा जाय ता मनुष्य-जातिके दो ही विभाग किये जा सकते ह (१) दबी सपत्तिवाले, और (२) आसुरी सपत्तिवाले। और अिन दोनोंके बीच बोजी सम

शोना हो ही नहा सकता। प्रत्येक मनुष्यके हृदयमें कम या अधिक मात्राम दैवी और आगुरी बतिया हाती हैं जिसलिअंजिन दोनाक बीच सनातन सधप चलता ही रहता है। अिम युद्धम यन् हमारी जीत हुआी तो समाजमें धर्मोके बीच चरनवाला झगडा अपने आप गात हा जायगा।

प्रत्येक हृदयमें जब दवी और आगुरी सपत्तिके बीच झगडा चलता है तब अनर बार परवा बनी हुआी दवी बत्ति वाहरसे मददकी आगा रखती है। अिगीमें मे जीवर गरणकी वृत्ति दुपन्न हुआी है। सवधर्मान् परिरप्यज धार्णे गरण द्रज जमा जब भगवान थीरुप्पन कहा तब जुनकी नजरने सामने आ धम, अिस्लाम बौड अथवा जन धम सिनव या बीसाआ धम जैसे धम नह प पान, भक्ति कम और अुपासना जस मागभदावा भी जुन्हाने कोजी सकर नहा किया या विन्नु देगधम और कुधम जातिधम और बयोधम गुणधम और गरीर धम बलाधम और आपद् धम — जैसे अस जुस समयके चचित गवृचिन जोर जमागी धर्मोना विचार करव ही भगवानन जजुनमे कहा था नि अिन सत्र धर्मोना तू छा दे पूरी तरह छाड दे जोर अकमान आत्मतत्त्वकी ही गरणने जा। धुमक बा ही स्वधम और स्वधमवा रहस्य सुल्गा जोर अुगना माग मिग्गा।

भारतीय सस्कृति

भारतीय सस्कृति कय आग सस्कृति या कय हिन्दू सस्कृति ही नहीं है। भारतीय सस्कृति कय प्राचीन काका ही सया नहा करती। भारतीय सस्कृति कय है हिन्दुमान किन्तु अुमरा कय अथवा परिधि हिन्दुमानसे सीनित नहीं है।

भारतीय सस्कृति हिन्दुमानत अिनिगमग भी बडी है कयाति अिनिगम कय अुनकाका ही सवाल सता है। सस्कृतिना सवध भूत वनमान और मरिन्म है। अिनिगम अना भक्तिय नग जानता। सस्कृति अपन भविष्यक प्रदरने पर निगट सगर कता है।

हिन्दुमानम अनर धम ह अनर भापायें हैं अनर दगामे आकर बस हुअ का है। सस्कृति बडिअिजि कोअ अगारता और गारीनता हरअव दुष्पिअ चिन्न चिन्न कोअिअ कोअ सहा पर बमत्र है। ता भी हम कहते हैं कि हिन्दुमानका सस्कृति अक है अगना है और अविभाव है। बानम सगा अिन धादका नहीं सगा सता कि चिन्न धनाकम्मा माग मा अक सस्कृतिमें कय आ सक्ते ह।

अब अदाहरण लेकर हम इस बातको स्पष्ट करेंगे। वीसा मसीह यहूदी थे। उन्होंने यहूदी मतमें कुछ दोष और अप्रगता देखी। उसे दूर करनेके लिये उन्होंने अपना उपदेश अपने शिष्याको दिया। वीसाके शिष्य वीसाही हो गये, पर उनका यहूदीपन मिट नहीं गया। उसके बाद सेंट पॉल वीसाही बन गये। वे यहूदी न थे वे ग्रीक यवन थे। उन्होंने वीसाके उपदेशको तो ग्रहण किया किन्तु उनकी सस्कृति ग्रीक थी। उसमें वीसाका उपदेश मिलाकर उन्होंने अपनी ग्रीक सस्कृति परिष्कृत की। बादमें जो रोमन लोग वीसाही हुए वे धर्मसे तो वीसाही हो गये रामन धर्म उन्होंने छोड़ दिया, किन्तु रामन सस्कृतिसे वे पर न हो सके।

हिन्दुस्तानमें शक हूण आदि बाहरी कितने ही लोग आ गये। उन्होंने न केवल यहाका धर्म ही अपनाया किन्तु वे सस्कृतिस भी इसी दंगे हो गये। हिन्दुस्तानके बाहर उनके लिये कोई स्वदेश नहीं रहा। अगर वे वहासे कुछ सस्कृति लेकर आये तो उसे पूरी तरह यहाके लोगाने अपनाया और यहाकी मूल्यव्युत्पत्ति सब बातें उन लोगाने अपनाया और वे पूरे-पूरे यहाके हो गये।

जब मुसलमान इस देशमें आये तो यहाके लोगोंसे वे तुरन्त घुलमिल नहीं गये। उनके गोमासाहारका यहाके लोग सहन न कर सके और यहाकी मूर्ति पूजाका वे भी सहन न कर सके। जब और प्राणियाका मांस खाया जाता है तब गायका मांस खानेमें क्या रज हो सकता है यह उनके ध्यानमें नहीं आ सका। भारतकी वृषि प्रधान सस्कृतिसमें गायका क्या महत्त्व है यह किसीने भी उन्हें नहीं बताया और न कलाप्रिय भारतवासी मुसलमानाके मूर्ति विरोधको समझ सके। अब दंगेके जड़ लोगाने मूर्तिके नाम पर क्या क्या अनाचार चलाये थे इसका खयाल तक हमारे लगाको न था।

किन्तु भारतीय सस्कृतिसमें अब बहुत बड़ी चीज थी जो जय देशोंमें बहुत कम पायी जाती है। भारतके लोग पहलेसे यह मानते आये हैं कि वीश्वरके पास पहुँचनेके माग अनेक हैं। मनुष्य अज्ञानी है यह कोई उसका गुनाह नहीं है। वीश्वर सबकु है। वह हर मनुष्यके हृदयकी बात जानता है। अगर मनुष्यमें दुष्टता न हो तो उसका अज्ञानको क्षमा तो वीश्वर पहलेसे ही कर देता है। वीश्वरके सामने छोटे और बड़े, पंडित और मुल्ला, विद्वान और जगली — सबकु सब अज्ञानी ही हैं। अबका अज्ञान काजलके जसा होगा तो दूसरेका अज्ञान कोयलेके समान होगा। उनमें से किसे सजा करे और किसे माफी दे ?

जो मुसलमान बाहरसे हिन्दुस्तानमें आये उन्होंने किसी देशको अपना स्वदेश बनाया, अपनी स्वभाषा छोड़कर यहाकी भाषाको ही स्वभाषा बनाया। बुल बुलाके साथ कोयलका गाना सुनकर भी उनका हृदय अछलने लगा। तरबूजके प्रति जो भक्ति थी वह उन्होंने यहाके आमको अपना की। और वे हिन्दुस्तानी

वन गया। यह बात हुआ बाहरसे आय हुआ मुसलमानोंकी। किन्तु आज हिन्दु-स्तानमें जो मुसलमान ह, उनमें बाहरसे आये हुए कितने ह? फी सदी बीस भी नहीं हांग। बाकीके सब अनादि कालसे इसी देशक रहनवाले ह। उनके लिअे हिन्दुस्तानी बननेका सवाल ही नहीं था। वे कभी गर हिन्दुस्तानी थ ही नहा। वे ता यास वाल्मीकि बुद्ध और शकराचार्यके ही वराज ह। जिन भारतवासियान किसी भी कारणसे अस्लामका स्वीकार किया, अन्हाने कालिदास और भवभूति व्यासभट्ट और भास्कराचार्य वाग्भट्ट और तानसेनकी अपनी विरासत छोडी नहीं है। मुसलमान होनेसे अन्होन फारसी और अरबीको अपनाया जरूर किन्तु बंगाली और मराठी तामिल और तेलगू जादि अपनी मातृभाषाआके अन्हान छोड नहीं दिया। मातृभाषाका द्रोह करके किसीन अपना सामर्थ्य बढाया नहीं है, अपना बुद्धार नहीं किया है। सस्त्रुत भाषा जितनी ब्राह्मणाय है अतनी ही दूसरे सब वर्णोंकी है। जितना ही नहीं सस्त्रुत भाषा जितनं हिन्दुओंकी ह अतनी ही हिन्दुस्तानक मुसलमान और ओसाजी तीना समान लिख हुअ भय साहित्यका सत्कार हिन्दू मुसलमान और ओसाजी तीना समान भावसे कर सकते हैं। अगर कोई अिस विरासतसे मुह मोडेंग तो वे अपनको सत्कारकी दृष्टिसे दरिद्री ही बनायग।

जिन लागान अस्लाम या जीसाजी धमको स्वीकार किया है व हिन्दू धमग्रथाका हिन्दुओंकी तरह प्रमाण नहा मान सकते तो भी उनके प्रति अुनके मनमें जादर भाव अवश्य रहेगा। नया धम ग्रहण करनेसे वे अपनी विरासतको छोड नहा देंग। किन्तु अुसे अपनी नअी दृष्टिसे शुद्ध करके अपन नय धमके द्वारा समृद्ध ही करेंग। भारताय सस्त्रुतिकी चमक मिल्नेसे अुनका धम अधिक तेजस्वी बन जायगा।

और जो लोग हिन्दू ह व भी ओसाजी और जिस्लामी धमग्रथाका प्रानाण्य न स्वीकारते हुअ भी अुनकी जिज्जत तो अवश्य करग और अनसे अुतना ही लाभ अुठायेग जितना व अपन धमग्रथासे अुठाते ह।

ससारम जितने सारे धम ह किन्तु अुन सब धमोंका जेव विगाल धम-कुटुम्ब बनानकी शक्ति भारतीय सस्त्रुतिमें ही है। भारतीय सस्त्रुतिन बबका वह दिया है कि मानव कुलमें प्रचलित सब प्रधान धम सच्चे ह। सभीकी प्ररणा जीस्वरसे मिली है। और तबक सब मनुष्याये बीच प्रचलित होनेके कारण मनुष्याकी अपूणता नी अुनम आ गयी है। गगा गगोतीसे निकली है लेकिन वही ठहरी नहा है। जब तक वट विगाल सागरमें विलीन न हो जाय तब तक अुस आगे बलना ही है। अुसमें यमुना जाकर मिलगी चमण्वती और शोण आकर मिलगी सरसू और गडवी भी आकर मिलेगी और सागरमें पहुचते पहुचते हिमालयके अुस पारस आनेवाली ब्रह्मपुत्राक साथ भी अुसका सगम हो जायगा। भारतीय

सस्कृतिकी भी वैसी ही बात है। वदिक सस्कृतितसे अुसका अुद्गम हुआ हागा। मुसकं पहलेकी बात हम नही जानते किन्तु अुसमें दुनिया भरकी सस्कृतियाने अपना-अपना कर भार डाल दिया है। भारतीय सस्कृतिके अिस्लामी और बीसाजी सस्कृति मिला गया है। अिसलिके हिन्दुस्तानक अिस्लामकी खूबी अरबस्तान, ग्रीरान या मिस्रके अिस्लामसे कुछ अलग हागी, कुछ अधिक हागी। भारतका बीसाजी धम अिटली, फ्रांस, जमनी, अिग्लड और रूसके बीसाजी धमसे कुछ अलग सुगंध बतायेगा। बीसाजी धमकी खूबी जब हिन्दुस्तानके बीसाजी लाग बताने लगेगे ता बीसाजी धममें अेक नजी ही समझि जा जायगी।

और अिस्लाम तथा बीसाजी धमके हिन्दुस्तानमें आनेसे हिन्दू धमकी खूबी भी अधिक अच्छी तरहसे स्पष्ट हाने लगी है। मूफी मत और कबीर मत, ब्राह्म-ममाज और आगाखानी मध्प्रदाय, सबमें हम भारतीय सस्कृतिकी सम-व्य-वारी गवित देख सकते हैं।

और जा लोग बीश्वरको नही मानते, किसी भी धमके प्रति आदर रक्ता पसन्द नही करते, किसी शास्त्रको नही मानते बुद्धिके अ्रेष्ठ किसी भी चीजका खीकार नही करते वे भी भारतीय सस्कृतिके बहिष्कृत नही है। अुनकी भी परम्परा अिम दगमें प्राचीन कालसे चली आगी है।

नदीमें रोज नया पानी आता रहता है। अेक प्रातमे दूमे प्रातमें वह बहनी है, ता भी अुसका रग, रूप, ब्यवित्तत्व और सौंदय अक्षुण्ण रहता है। सस्कृतिकी भी यही बात है। भारतीय सस्कृतिके दुनिया भरकी सब सस्कृतियाना अमर दीख पडता है अेकिन वह भारतीय ही रही है। भारतीय गदमें आय प्रारभका सूचन अयस्य है किन्तु वदिक या महाभारत कालमे वह सीमित नही हो सकती। कजी लोग भारतीय गद पर आपत्ति अुठाते ह। व भारतीय सस्कृतिका स्वभाव ही नही जानते। भारतीय सस्कृति अक जीवित चत्तयमय और बढमान सस्कृति है। मानवताका अन्निम कयाग ही अुसका आदग है। भारत यप अुसका कन्द्र है, मध्यबिन्दु है, और अुसका कायशेत्र अखिल विश्व है।

मशी, १९३९

धर्मोका धम*

[सब धम परिपद]

सब धम परिपदके विचारको भारतमें प्रस्तुत करनेका श्रेय स्वामी विवेका नन्दका मिलना चाहिये। बुन्हीन जगतको यह समझाया कि जिस सब धम परिपदम् हिन्दू धमका समान साझेदारके रूपमें प्रतिनिधित्व न हो वह परिपद अधूरी ही मानी जायगी। सन् १८९३ में भारतके शिक्षित वर्गको यह लगा कि जगतम हिन्दू धमकी श्रेष्ठता सिद्ध हुआ है। और अूस दिनसे स्वामी विवेकानन्द का नाम हमारे लिअ अक घरेलू शब्द बन गया। म अूस समय छोटा था परन्तु जिस समाचारकी चर्चा करनेवाले जपन बड़े भाजियाके ज्वलत अुत्साह और हिन्दू धमके भविष्यके विषयम अुनकी असह्य आगाआका आज भी मुझे पूर स्मरण है। कुछ ही समयम स्वामी विवेकानन्दके भाषणाका अनुवाद मेरी मातृ भाषा मराठीमें हो गया और लोग अुन भाषणाका बड़ी अुत्सुकतासे पढन लग। केवल विषयकी दृष्टिसे तो वेदातका पान रखनवाले वर्गके लिअ अुन भाषणोम नया कुछ नहा था परन्तु अुनका अक अक शब्द प्राणसे परिपूण और आगा तथा आत्म विदवाचसे भरा हुआ था। अुन भाषणाम स्वामीजीन हिन्दू धमको जिस तरह प्रस्तुत किया था अुसकी अपूर्वता अुनके अर्वाचीन दृष्टिकोणम तथा आधुनिक युगके सामाजिक और साक्षणिक प्रश्न हल करनेके लिअ अुनके द्वारा किय गये वेदातके सिद्धान्ताके अुपयोगमें निहित थी। जैसे जैसे म अुमरमें बढता गया वसे वसे मेरी दष्टिम अुनके अुपदेशाका महत्त्व बढता गया और म स्वामीजीको भारतीय सस्कृतिके चरमोत्कर्षके रूपमें मानने लगा।

कुछ वष बाद स्वामीजी द्वारा मेरे गुरु 'क नामसे गुरु महाराज रामकृष्ण परमहंसका अर्पित श्रद्धाजलि मेरे हाथमें अचानक आजी। अुसका मुन पर अदभुत प्रभाव पडा। अुस छोटेसे जीवन चरित्रके द्वारा स्वामीजीने मुझ आध्यात्मिक जीवनकी वास्तविकता और महत्तामें श्रद्धा रखनेवाला बना दिया। म समझ ही नहा पाया कि जग्रजी और सस्कृत भाषाके पानसे सवथा अनभिज्ञ अक निरक्षर यकिन स्वामी विवेकानन्द जैसे दार्शनिक और तेजस्वी प्रजावाल मनुष्यमें शिष्य भाव कस प्ररित कर सका होगा। लेकिन मुझे तो पहलेसे ही स्वामीजीन मत्र

* ता० ३-३-३७ को कलकत्तामें हुआ सब धम-परिपद (पालमट भाफ रिजीजन्स) के अवसर पर दिय गये अग्रजी भाषण The task before religions का अनुवाद।

मुग्ध कर दिया था व जा कुछ लिखत धुम पर मैं आंतरिक श्रद्धा रखता था। धुम सखिपन जीवन चरित्रने मेरे मानसिक दृष्टिकानमें प्राति अल्पन्न कर दी। कॉलेज-जीवनके आरम्भ पर स्वल्प मुझे जा सगाय-वृत्ति और तत्त्वज्ञान प्राप्त हुआ थी धुममें भारी कल्पली मच गयी, और आध्यात्मिक जीवनके जिस दानका मैं बहुत दिनासे खा रहा था वह मुझे फिरस प्राप्त हो गया। मैं यह कहूँ ता अनियायाकिन नही हागी कि जिस जावन चरित्रका पठन मेरे लिये नया जन्म सिद्ध हुआ।

मने यह समझा कि भारतकी सच्ची आवश्यकता ता जेक अस शिक्षा-शास्त्री और समाजशास्त्रीकी थी, जे वेदान्त मूर्तिमत् प्राचीन ध्येयके समान जेक सच्चे धार्मिक पुरुषके जीवत अनुभवाका लागाको नये सिरस अय कर दिखाये। विवकानन्दका लगा कि यदि मुझे भारतके लागाको अपनी बात सुनानी हो तो पहल सुदूर अमरिकाकी अुच्च भूमि पर मुझे पहुँचना चाहिये। जिसलिये जगतके घमोंकी परिपदमें हिंदू धमका स्वयं निपुक्त प्रतिनिधि बनकर अुन्हाने अपना यह अधिकार प्राप्त किया।

आज मैं जिस सब घम-परिपदमें रामकृष्ण और विवकानन्दकी अभिन्न मूर्तिवा अपनी भक्ति अणण करने आया हूँ और यह लिखत लिखत ही निर्मातर जेक तीमरे अगव रूपमें मुझे भगिनी निवदिताका स्मरण हाता है। धुनकी

Web of Indian life नामक पुस्तकने, The Master as I saw him' नामक काव्यचित्रमें धुनके द्वारा चित्रित अद्भुत जीवन रखाने, 'The Footfalls of Indian History' नामक निबन्धने तथा अय विविध निबन्धाने मेरे लिये युनिवर्सिटी शिक्षणका काम किया है, नही, मुझे कहना चाहिये कि भगिनी निवदिताकी पुस्तकें और निबन्ध मेरे युनिवर्सिटी शिक्षणक दोषाका सुधारनेवाले गिद्ध हुए हैं। रामकृष्ण विवकानन्द और निवदिताका मिलाकर जेक अलपण्ड प्रवाह बनता है। व पृथ्वा पर आध्यात्मिकतान अवतार जमे ह, विशाल बटवण के रूपमें जेक ही बीजके अद्भव और विस्तार है।

यहा मेरी स्मृति रामकृष्ण-परिवारके दूसरे सदस्याकी ओर पाछे लाटती है। मन् १०११में जब मैं जिस परिवारकी यात्राके लिये कलकत्ता आया था तब मैं थी थीमा मास्टर महागय, स्वामी ब्रह्मानन्द तथा रामकृष्ण मिशनका सचान्त करनेवाले स्वामीजी महाराजके अय गुरुव धुआन भाग्यशास्त्री मण्डलस मिला था। वहा सबसे पहल जिने सजामीस मेरी भेंट हुआ थी वे थे स्वामी प्रेमचानल। वुर समय व वेरूर मठके अध्यक्ष थे। व सच्चे भक्त और भव नवन थे। व अग्रेनी वलन वम जानते थे, हिन्दी गायद विलकुल नहीं जानते थे। धुनउ किसी प्रदनका अुत्तर पाना बहुते कठिन था। अब मन गुरु महाराज वारसे धुनस पूछा ता व कवल ध्यानकी रंगामें पहुँच गये और मूक बन गये। किन्तु

अनुभवको बौद्धिक भूमिका पर यात्किचित् अभिव्यक्ति देनेका प्रयत्न आज हम यहा कर रहे हैं।

रामकृष्ण परमहंसने भारतके सब मुख्य धर्मोंका सच्चा अध्ययन करनेकी आवश्यकताको प्रत्यक्ष सिद्ध कर दिखाया है। ससारकी विविध प्रजायें यदि आपसकी गलतफहमियाका दूर करनेका और सुमेल साधकर जीनेका कोअी माग नहीं निकालेंगी तो उनके बीचका झगडा लगभग अनिवाय बनता जायगा। अस तरहकी परिपद केवल बौद्धिक क्षेत्रमें ही काय करना छोड दें, तो ये यह काम पूरा कर सकती ह। धम अनुभवकी चीज है। उसे प्रेम और श्रद्धास ही प्राप्त किया जा सकता है। व्यावहारिक आदर्शवाद ही सारी प्रजाआके बीच तथा उनका द्वारा विकसित किये हुये जीवन मार्गोंके बीच मेल साधनेका माग दिखा सकता है।

सब धर्मोंका तथा उनके बतये हुये जागतिक प्रश्नाका अध्ययन अब केवल सस्कृतिके विद्वान अभ्यासियाना विलास ही नहीं रहा है। वह अब अधिकाधिक सुसंगठित सामाजिक जीवनकी प्राथमिक आवश्यकताका रूप लेता जा रहा है। अतनी सावधानी अवश्य रखी जानी चाहिये कि यह अध्ययन मानसिक गगन विहार न बन जाय। उसे जीवन-स्पर्शी बनना चाहिये और प्रश्नाके अचित्त हल प्राप्त करनेके लिये प्रयोग भी करने चाहिये। लोग सेवाकी ही भावनास अेक स्थान पर अेकत्र हो सकते हैं और हृदयका मेल साध सकते ह। बुद्धि अधिकसे अधिक आपसमें अुनकी समझको बडा सकती है अथवा पहलेसे ही अुनके बीच यदि सदभाव हो तो किसी हद तक अुसे सहारा दे सकती है। परंतु हृदयोको जेकमाथ बाधनेवाली और हम सबको अेक मानव-जातिम जेकत्र करनेवाली शक्ति तो सेवा ही हो सकती है। स्वायत्त्याग तथा स्वापणकी सीमा तक जा सकनेवाली सेवा ही वह शक्ति है जो सबत्र सुमेल स्थापित कर सकती है और हम सबका अेक परिवार बना सकती है। अलग अलग सगठन अस क्रियामें किसी हृद तक सहायक तो हो सकते ह, परन्तु सगठन आत्माका साधन नहीं है। पृथ्वीके सभी सगठन पार्थिव ह, और इस तरह व आध्यात्मिक विकासमें अनेक बार विघ्न कारक सिद्ध होते ह। बहुत बार तो जो परिणाम सिद्ध करना अुन सगठनाके स्वभावमें ही नहीं होता अुन परिणामाकी आशा अुनसे रखकर हम अुनकी अुपमागिताको नष्ट कर देते ह। सच्चे सेवक जेक-दूसरेकी स्वभावत ही पहचान सकते ह और स्वयं स्वतंत्र रहकर ही अेक-दूसरेकी मदद करते ह। हमें सब धर्मोंका अेक व्यवस्थित फेडरेशन (संघ) नहीं बनाना है, परन्तु अेक ही क्षेत्रमें काम करती आत्माका सहज और स्वतंत्र सहयोग प्राप्त करना है। जगतके महान धम आज जो अेक-दूसरेके प्रतिस्पर्धी बन गये हैं अुसका कारण अुनके सिद्धान्तामें रहनेवाले भेद नहीं ह परन्तु वह बडा सगठन है जो प्रत्येक धमके

रक्षा करने अथवा अुसका आचरण करनेमें प्रवृत्त होते समय भी सनका गला घाटने, अुने लज्जित करने या निबल बनानेका ही काम करती है। सत्तारके धर्मोंने मध्ययुगकी राज्यसत्ताआक नमूने पर अपना सगटन जमानेका प्रयत्न किया और असा मान लिया कि सत्यके पीछे यदि सत्ताका बल हा ता अुसका जल्दी प्रचार हा सक्ता है। मैं नही मानता कि नास्तिकता भी अिससे अधिक दुराओ अथवा अधिक हानि कर सक्ती है। जिस प्रकार भीस्वरकी और धन-दौलतकी अेकसाय पूजा नहा की जा सक्ती अुसी प्रकार सत्य और सत्ताकी भी अेकसाय पूजा नही की जा सक्ती। हा, सत्ताका बल सत्यना ही आतरिक् बल हा ता बात अलग है। अिसलिये धर्मोंने अपने आसपास सत्ताकी जो दृष्टि और विचारमरणी सडी कर दी है अुससे बाहर निरालनेका प्रयत्न अुन्हें करना ही चाहिये। अहिंसा सत्यका ही अेक विगिष्ट पहलू है। खूब गहराओमें अुतर कर हम जाच करें तो पता चलेगा कि सब धर्मोका रहस्य सत्य तथा अहिंसाके प्रति अनय भक्तिमें ही निहित है। जसा कि आयरिंग कवि 'अे० थी०' ने अुपयुक्त शब्दोंमें कहा है सत्य स्वय ही अपना अुचित बल है।

सब धर्मोंने बीच चलनेवाले समाम क्षगढाकी जडमें अिस महान सत्यका अस्वीकार ही है। सारे धम अपने सत्यसे विमुख होकर असा मानने लगे हैं कि अुनका सगटन, अुनका सख्याबल घाडेमें कहा जाय तो अुनकी सत्ता ही वास्तवमें अुनका सत्य है। बना अपने सम्प्रदायके लागावी सख्या यद्दानेके लिये अितनी अुत्सुक्ता कसे हा सक्ती है? अथवा बडे बडे समुदायोंमें लोणाका धम परिवतन करनेना अहकारपूण दावा कस समव हो सक्ता है? सच्चेसे सच्चा अेकमात्र धम-परिवतन ता असत्यसे सत्यमें, अधकारसे प्रकाशमें, दुराओस भलाओमें और अन्यायसे मायमें ही हो सक्ता है। और असा धर्म-परिवतन जगतके सभी धर्मोंक अनुयायियोंमें हाना अभी बाकी है।

प्रत्येक धमके दा अग हाते हैं अेक, अुसके सिद्धान्त अर्थात् सत्य, दूमरा, अुमकी आचार विधि अयात् साधना। और हिन्दू धमकी यह बलिहारी है कि अुसने अिस बातका पहलेसे ही समझ लिया था। अुसने यह भी समझ लिया था कि अिन दो अगों से केवल आचार विधिको ही तत्रबद्ध किया जा सक्ता है, सिद्धान्तसे सम्बन्धित भागका नही। अिसलिये हिन्दू धमने मनुष्यके विचारा कल्पनाआ और ध्येयाका पूणतया भुक्त रहने दिया। अिसी कारणसे हमें हिन्दू धममें अूचेसे अूचा वेदान्त-दान तथा विविध दशनाकी समृद्धि देखनेको मिलती है। किन्तु केवल बौद्धिक शोध हमें कभी सन्तुष्ट नही कर सक्ती। अिसलिये हमने जीवनके प्रयोग किये और अिसके फलस्वरूप अपने अपने निश्चित जीवन-भाग तथा अचल आचार विधियावाले असत्य सप्रणाय खडे हुअे। ये आचार विधिया ही मनुष्यकी साम्प्रदायिक मायताआको वास्तविक रूप प्रदान करती हैं। परतु

वादमें हमारे लागाकी युद्धशक्ति और प्राणशक्ति पर कोअी विरिन्न निष्क्रियता छा गअी और बुन्हाने धमके सिद्धान्तामें परिवतन हो जाने पर भी अपनी आचार विधियाम परिवतन करना छाड दिया। वदाचित् सत्तान सत्यवा पन् भ्रष्ट कर लिया और साथ ही धमका भी सत्वभ्रष्ट कर लिया।

परम तत्वका रूपनाये विषयमें अद्वती और द्वतीम अुतर और दक्षिण ध्रुवाने जितना अतर है। परन्तु आप यदि बुनके जीवनकी जाच करें ता बुनक आचारमें आपको काअी अतर नहीं मालूम हागा। द्वती वदाचित् अद्वती बन जाय तो भी बुसके अनुसार जीवनके प्रति बुसक दृष्टिबिदुमें अथवा बुसकी आचार विचारकी विधियामें कोअी परिवतन नहीं हागा। हमारे तत्वचानियाने जीवनमें यावहारिक और पारमाथिक पक्षवा सुविधापूण भेद रोज निश्चाला है। जिसलिअे जब स्वामी विवेकानन्दक समक्ष पडित लीम अपनी अवतव्यगीलताके बचावमें यह भेद रसते तो स्वामीजी अपना धीरज एो बठते थे और खूब चिद्व जात थ।

प्रत्येक दानकी अपने अनुरूप अथ स्मृति होनी चाहिये। परन्तु जनाके पास बुनकी जाहिंसा और अनेकात-वादके अनुरूप कोअी स्मृति नहीं मिलती। बुनकी अहन्शीति अथ साधारण कोटिकी पुस्तक है। वेदातियान निष्पुतरतासे अथ तक शुद्ध स्मृतिकी रचना कर डाली बिन्तु बुसके अनुसार जीवन जीनेकी जिम्मेदारी यतिया अथवा सयासियाक लिअे सुरक्षित कर दी। अद्वतवादको स्वीकार करन वाले गृहस्थी वेदान्तीन अपनी जीवन पद्धतिमें जरा भी परिवतन नहीं किया। जिस कारणसे दशनाकी सपूण चचा चचा परिपदक निरे वाद विवादका रूप ले लेती है।

प्राचीन कालन भाष्यकारोन विभिन्न दशनाकी तकगुदता तथा बुनम निहित सद्वातिक मायताआकी अववाक्यता प्रकट कर दिखानी है। परन्तु अथ विभिन्न दाशनिक सिद्धान्ता तथा विविध साम्प्रदायिक मायताआसे फलित होनवाले सामाजिक आचार वतानका समय अवाचीन विचारकोके लिअे कमीका पक चुका है। जिस नूतन दृष्टिसे यदि हमारे आस्तिक और नास्तिक दशनाका अभ्यास किया जाय तो बुनमें से अक नया और अुपयोगी अथ प्रकट हागा और हमारा समाज पुनर्जीवन प्राप्त करेगा।

जन और सिक्ख धमके साथ हिदू धम बौद्ध धम जरतुरती धम यहूदी धम औसाअी धम तथा अिस्लामका और दूसरे सब धमोंका यदि सामाजिक दृष्टि कोणसे अध्ययन किया जाय ता आज जो प्रश्न मानव-समाजको परेगान कर रहे ह उनना हल जरूर मिल सकता है।

य प्रश्न कौनसे ह ?

भं धम-परिवतनक प्रश्नका जिससे पहले अुल्लेख कर ही चुका ह परन्तु वह धम परिवतन अक धमसे दूसरे धमका नहीं बल्कि असतसे सतका अयायसे यायका है। असा धम-परिवतन नया हमने सामाजिक जाथिक और राजनीतिक

क्षेत्रमें किया है? जिन सब क्षेत्रोंमें आज जो बखेडा मचा हुआ है, उसका कारण जिन क्षेत्रोंमें पापवृत्तिका सबया अभाव है। यह वचन भीसा मसीहका कहा माना जाता है कि राजाका जो है वह राजाको दा, और जीस्वरका जा है वह जीस्वरको दा। अंक हिन्दू शास्त्र-वचन तो सीधा ही कह देता है कि राज्य चलानेके बाद राजाका नरकमें ही जाना पडता है। जा मनुष्य राजा बनकर दूसराक जीवनका नियमित करनेका प्रयत्न करता है, वह नरकमें जाता है, सत्ताके बल पर भरी गयी राजाकी तिजोरीमें से दानके रूपमें प्राप्त किया हुआ सारा धन अपवित्र है। जोका भी धमामा पुरुष उसे स्वीकार करने पर भ्रष्ट हूँगे बिना नहा रहता।

ता फिर जगतकी आर्थिक परिस्थितिके विषयमें जिस सब धम-परिपदका क्या निणय है?

जगतके महान गतिस्थापक आन्दोलन सब प्रकारके युद्धाका आज भी विराध कर रह है लेकिन उसका कोजी जसर नहीं हाता। दूमरी ओर सब दंगामें विनाशक गस्त्रासन और साधन-नामग्री तेजीसे बढ़ाओ जा रही है। मह सब धम-परिपद अपनी आवातका अमरकारक भले ही न बना सके, परन्तु जिसे जितना ता धापित करना ही चाहिये कि युद्ध आजकी गोपण-मदतिके रूपमें सारे सत्तारमें फैल हूँगे रोगका ही समय समय पर हानेवाला आक्रमण है, जोर यह रोग स्वय नतिक जीवन-स्तरका हानि पहुचा कर सिद्ध किये जानेवाल महंगे भौतिक जीवनका परिणाम है। हमें यह धापणा करनी चाहिये कि जीस्वर और मनुष्यमें श्रद्धा रखनेवाले लोग जिन दाना जावन-स्तराकी नये सिरम जाच कर। आज ममान में सबत्र रुड बने हूँगे गील-सदाचार, अब्यमिचार तथा समाज हितके आदर्शोंको चुनौता दी जाती है। प्राचीन व्यवस्थाका बचाव यदि हम आप्त-वचनासे या शास्त्राके तदनुकूल अथ निकाल कर करने जायेंगे तो आज जिससे हमारा काम नहीं चल सरगा। आज हमें सामाजिक आदर्शोंकी नजी व्यास्या करके धार्मिक आदर्शोंको लोपाने मनमें सजीव करना हागा। जिन कायमें भी सगठित विचार और सगठित सकल्प अवश्य हमारी सहायता कर सकते हैं। काम-वासना जा विवाहका और जिमलिये सामाजिक जीवनका मुख्य आधार है भावनाआन चक्रका अंक बलवान अग है, साथ ही वह आध्यात्मिक गति अत्यन्त करनेका विधेय साधन भी बन सक्ती है। जिसका आजकी तरह भौतिक दृष्टिबिन्दुमे नही किन्तु आध्यात्मिक दृष्टिबिन्दुमे अध्ययन करना चाहिये और अमक विषयमें जिम्मेदारीसे प्रयाग किये जाने चाहिये। आजके भौतिक और गैर जिम्मेदार रवयैके प्रति हम बुदामीन नहा रह सकते।

जगतके विविध धर्मोंक जिन प्रकार अंक स्थान पर जेकत्र हानेका दूसरा परिणाम यह आना चाहिये कि लगभग सभी धर्मोंमें—यहा तक कि गून्ता

अिन सब प्रश्नाका अेकमात्र हल समाजवाद है। आज समाजवाद भविष्यका घम बन जानेकी तयारी कर रहा है। जगतके प्रचलित धर्मोंका रुग अिस नयी शक्ति और नये आदशके प्रति बसा होगा ? मुझे तो लगता है कि हम अवश्य ही समाजवादको अपना सकते ह और समाजवादको धार्मिक पद्धतिसे प्रस्थापित करनेका अपना स्वतन्त्र माग विकसित कर सकते ह। जिसे वनानिक समाजवाद कहा जाता है अुसने असी अपरिपक्व विचार-पद्धति और वग विग्रहकी असी निष्ठुर काय-पद्धति खडी कर ली है, जो अतमें भयकर सिद्ध हा सकती है। वह सब धर्मोंके लिये अेक बडी चुनौती है। यदि सभी घम समाजवादको साहसके साथ स्वीकार करके जीवनका नया माग नहीं दिखायेंगे तो अुन सबको सग्रह स्थानके सामाजिक विभागमें प्राचीन अवशेषकी दशासे ही सताप मानना पडेगा। प्राचीन आदश तो विद्यमान है, अितना ही नहीं आजकी आवश्यकताअके लिये जितना आवश्यक है अुससे अधिक वह पर्याप्त है। परन्तु अुसके पीछेका प्राचीन अुत्साह — अगर वह कभी या — अब नहीं रह गया है, और धार्मिक पुरुषाने गरीबाकी असहाय और निराशापूण स्थितिकी परवाह करना भी छाड दिया है। सदभावनाकी निरी यातें अन्वोय प्रशंसा तथा घम विषयक सद्धार्तिक या दाशनिक चर्चामें अपने आपमें चाहे जितनी अच्छी हा, परन्तु धर्मोंकी परिपदके लिये अितना कायन्त्रम कभी पर्याप्त नहीं कहा जा सकता।

प्रत्येक घममें प्राचीन शास्त्राका नये ढंगसे अर्थ करनेका प्रयत्न किया जाता है। अिस कारण प्रत्येक घम धीरे धीरे अर्थ और व्याख्याकी अपनी नयी पद्धतिया विकसित करता जाता है। परन्तु शास्त्रवाक्योकी व्याख्या पर तथा शास्त्र-वाक्याके अर्थ पर ही आधार रखनेके बदले हमें मानवशास्त्र, समाजविद्या, कला तथा विकासवादकी और अिन सबसे अधिक आध्यात्मिक अनुभवकी सहायता स्वीकार करनी चाहिये और आजके धर्मोंके सिद्धान्ता तथा आचार विधियों पर प्रकाश डालना चाहिये।

*

जब हम 'धर्मों' जस बहुवचनका प्रयोग करते ह तब हिंदू धर्म, अिस्लाम, श्रीसात्री धर्म आदि प्रचलित धर्मोंका ही विचार करते हैं। परन्तु अिन प्रचलित धर्मोंके आवरणके नीचे बिलकुल अलग बुनियादा पर सबथा नये धर्मोंका विकास होता जा रहा है। मानवताका घम जीवनके सभी प्रश्नाका सतोपकारक हल प्रस्तुत करनेका दावा करनेवाली अेक सपूण याजना है। कला अेक दूसरा घम है, जो जीवनमें सगति — सुभेल स्थापित करने तथा मानव विकासके प्रश्नाका निराकरण प्रस्तुत करनेका दावा करती है। कानून शायद आधुनिक युगका सबसे अधिक लोकप्रिय और शक्तिशाली घम है। मनुष्यको विरासतमें जा दुःख मिले ह और जो दुःख अुसने स्वयं अपने लिये अुत्पन्न किये ह, अुन सबका अिलाज

अचित्त कानूना द्वारा करनेकी बात सोची जाती है। रोज नये बननवाले कानूना द्वारा मनुष्यके संपूर्ण जीवनको नियंत्रित करनेका अिच्छा रनी जाती है। मनुष्यसे सम्बंधित किसी भी बात या हरअक बातके लिअे धारामभा ही प्रत्यक दगमें अेक बडी सत्ता बन बडी है। हम प्रतिदिन कानूनाकी निष्पत्ताया अनुभव करते हैं फिर भी अपनी सर्वोत्तम शक्ति हम कानूनकी पद्धतिना विवास करने और उसे नियंत्रणम लानेम सच करते ह।

हममें यह भायता दढ हाती जाती है कि अधविश्वास अब शीघ्रतासे नष्ट होते जा रहे ह। परन्तु हम नय अधविश्वासका स्थान देनक लिअ ही पुराने अधविश्वासका दूर करनेमें सफल होते ह और अधविश्वासका साम्राज्य हमगाकी तरह विजयी ही सिद्ध होता है।

मेरी अपनी अकमात्र आगा तो शिक्षा घमक श्रमिक प्रचार और प्रसारमें निहित है। परन्तु यह शिक्षा कौअी शिक्षा विभागके मन्त्रियान हायमें रहनवाली शिक्षा नहा है मेरा आग्रय अुस शिक्षास है जिसे अधिक अच्छ जीवनका — आध्यात्मिक जीवनका — सदेग देनवाले थोडसे पगम्बरान फलाया है। यह शिक्षा ब्यक्तिक और सामाजिक तथा राष्ट्रीय और आतर राष्ट्रीय — अिस प्रकार समग्र मनुष्यको शिक्षित करनेका अिरादा रखती है।

अिस दृष्टिकोणसे यन्ि देखें तो ज्ञान भक्ति और कम ये आत्मोन्नतिके बकल्पिक माग नही ह परन्तु आत्म विकासके हमारे साधनारूपी रत्नके अलग अलग पहलू ही ह।

मत्य और अहिसामें निष्ठा ये कौअी बौद्धिक सिद्धांत नही ह। ये तो मनुष्य जातिके जाने हुए अमोघ आचार ह। य सब प्रकारके धार्मिक जीवन और आचारोकी कसौटी बननवाले ह। और ब्यक्ति तथा समुदायके जीवनमें अिन आचारोको अुत्थारनका अेकमात्र साधन शिक्षा ही है।

असा लगता है कि मनुष्य जाति घम भावनाको पुनरुज्जीवित करनेके लिअ नअी शिा और नअी अिद्रियकी प्रतीक्षा कर रही है। प्राचीन लोग बलशाली साहजिक बतिया तथा बिजलीकी तरह घमक अुठनवाले स्फुरणाके युगकी छायामें रहते थे। वे तीव्र ध्यानके द्वारा अनतके रहस्यमें गोते लगानका प्रयत्न करते थे। असी ध्यानशक्ति अुत्साहपूर्ण प्रारभिक कालका लक्षण होती है। अुन लोगान किसी गून् रीतिसे अत स्फुरणकी अिद्रिय प्राप्त कर ली थी जिसे हम लाग खौ बढे ह। साक्रेटीस जरतुस्त बुद्ध और अुपनिषद-कालके वादक अपियाके समयसे मनुष्य जातिने तक प्रधान युगमें प्रवेश किया है। असा कहा जा सकता है कि अिस युगके पीछे पीछ अक और सगठनवा जमाना आया और दूसरी ओर कलात्मक आविष्कारका जमाना आया। अुसके बाद विकासवाटके सिद्धांतका प्रचार हुआ और अुसन हमें अतिहासिक दृष्टिकोण प्रदान किया जिससे प्राचीन लाग बहुत

परिचित नहीं थे। कलात्मक दृष्टि और आंतर राष्ट्रीय दृष्टिकोण — ये आजकी मानव-जातिके मुख्य लक्षण हैं। घमोंको यदि फूलना-फूलना ही और मानव-जातिको नया जीवन प्रदान करना ही, तो उन्हें जिन जमानेक स्थान और प्रवाहको समझकर जीवनका नया माग दिखाना चाहिये। जिस बातको अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि आजके अधिकांश मानव-समुदायमें जोर मुख्यतः जुसका मागदान करनेकी इच्छा रखनेवाले शिक्षितोंमें घमका महत्त्व बहुत घट गया है। सत्साराक घम बहुत लम्बे समय तक अपनी भाव चलाना बंद करके निष्प्रिय बठे रहे हैं, जिसीलिये आज उन्हें मालूम हाता जा रहा है कि उनके पाम कीमती माल हाने पर भी प्रवाहमें आगे बढनेके बजाय व पीछे हटते जा रह है। जिस वाच मनुष्य-जातिने विज्ञान, राजनीति और प्रचुर धन-दौलतको ही अपनी प्रवृत्तिका मुख्य क्षेत्र बना लिया है। जिसलिये अब ता घम मनुष्य जातिकी जिन मुख्य प्रवृत्तियाका अथ प्रदान करें जिनके बीच सुमल स्थापित करें जोर जिन्हें अपने नियंत्रणमें ला सकें, ता ही उन्हें अपना मुख्य स्थान फिरसे प्राप्त हो सकता है।

४

सार्वभौम जीवन-दर्शन*

१

दर्शन-परिपदके अध्यक्ष-पद पर अपने आपको देखकर मुझे जितना आश्चर्य होता है उतना आप लागाको भी गायद नहीं हाता हागा। कलिंग छाउनेके बाद न ता मने जिस विषयका अधिक अभ्यास किया है न मने जिस विषयमें कोसी साहित्य लिखा है। जो मनुष्य जीवनके अलग अलग अगाका महत्त्व समझता है उसके अभ्यास और चिंतनमें दर्शनशास्त्र भी आ ही जाता है। जिस तरह मेरा भी दर्शनशास्त्रसे संबंध रहा है। परंतु यहां मैं अपनी योग्यता या अयोग्यताकी चन्दा करना जरूरी नहा मानता। अध्यक्ष दा प्रकारके होते हैं कुछ अप्रमाय हाते हैं तो कुछ भीड मजक हाते हैं। मैं मानता हू कि यहां मैं दूसरे प्रकारका अध्यक्ष हू। और जिसलिये मैं अपना कतव्य जितना ही मानता हू कि परिस्थिति प्राप्त कतव्यको अपना घम समझ कर उसके सामने सिर धुकाऊ और यथाशक्ति उस पूरा करू।

* सितम्बर १९३८में गिमलामें हुये हिंदी साहित्य सम्मेलनके दर्शन-विभागके अध्यक्ष-पदसे दिया गया भाषण।

अभी अभी मेरा समय सीत साहित्य-परिष्कार जुटा है हिन्दी, मराठी और गुजराती साहित्य-परिष्कार। प्रत्येक मुख्य परिष्कार साथ अभी विनाशाय परिष्कार नी आयोजन किया जाना है। जिस परिष्कार जिसे सामान्य रूपों में जितना असाह होता है उसे दखनर भी अिन परिष्कारा नाम अभागी परिष्कार रता किया है। कुछ स्थानों में ता अती परिष्कारें बद कर देनेता गुणाव भी आया है। परन्तु मं जिस सुझावका पसाद नहीं करता।

जिस सम्बन्धमें मेरा आशा यह है कि प्रत्येक विभागी परिष्कार हा जाने बाद अुसना एक अलग मंत्री नियुक्त किया जाय। यह मंत्री हिन्दी भाषामें अुस विषयके साहित्यकी पूरे रूपमें बसी और वितानी प्रगति हुई है अुस विषयमें क्या क्या किया गया है तथा अुस विषय पर अय प्रान्तों और विभागोंमें बसी मौलिक कृतिया प्रकाशित हुई हैं जिसकी एक यारेधार सूची तयार करे और अुस दूमरे रूपकी परिष्कारें समक्ष रत।

विज्ञान दान इतिहास साहित्य, समाजशास्त्र नृशास्त्र (Anthropology) राजनीति आदि विषयोंमें जिन छागारी दिलचस्पी है अुस पुराने ओर नये साहित्यसेवकाका अलग अलग सगठन करनेके लिये विभिन्न परिष्कारों असे कुछ विशेष सदस्य बनाये जाय जिनसे कोश्री फीस न ली जाय — अुन्हें सन्स्य बनानेके लिये किसी गण्य माय व्यक्तिकी सिफारिश ही पर्याप्त मानी जाय। मंत्री असे सन्स्योके साथ सम्बन्ध स्थापित करे और यदि अुन सदस्यसे वह कुछ लिखवा सके ता लिखवा कर समेलन-पत्रिकामें प्रकाशित करे।

जिन सब विभागोंके मंत्रियाका मडल समेलन-पत्रिकाका सपादक मडल बने। जिस प्रकार यदि काय किया जाय ता राष्ट्रभाषा हिन्दीके सभी अगारी अुन्नति होगी परीक्षा विभागका काम भी परिष्कार होगा और प्रचारको अधिक महत्त्व दिया जाय या साहित्यको? जैसे आत्मघाती प्रश्न भी अपने आप गत हो जायगे। जो विभाग मद गतिसे चलता हो अुस विषय प्रोसाहन देकर आगे बढ़ाया जाय।

जब हिन्दी साहित्य सम्मेलन जिस प्रकार हिन्दी साहित्यके अग प्रत्यगकी रक्षा करेगा तब वह 'लिटररी आर्गनाइजर' अथवा इजीनियर बन जायगा। (आर्गनाइजर को हम हिन्दी या गुजरातीमें क्या कहेंगे — यास या पूपा?)

२

मेरे आदोंके अनुसार यदि जिस परिष्कारका आयोजन किया गया होता, तो भीड़से वचनकी दृष्टिसे भी मं जिस स्थानको कभी स्वीकार न करता। परन्तु हमारे समेलनकी अभी आरम्भ दगा है जिसलिये मेरे कुछ विचार और सुझाव हिन्दी भाषी जनताके समक्ष रखनेका मुझे जो अवसर मिला है अुसका लाभ अुठानेकी दृष्टिसे ही मं जिस स्थान पर खड़ा रहनेकी घण्टता करता हू।

दशनशास्त्रका गहरा अभ्यास न करनेके कारण ही शायद दशन-सत्रधी मेरी कल्पना कुछ अलग हो गयी है। मैं नहीं जानता कि विद्वान् दार्शनिक बुझे कहा तब स्वीकार करेंगे। परन्तु इस विषयमें यदि थोड़ी भी चर्चा होगी तो अस्से मुझे सतोप होगा, यह भी संभव है कि अस्से मेरे दशन-सत्रधी ज्ञानमें थोड़ा सुधार अथवा वृद्धि है।

दशन शब्द आया कहासे? अस्मिक स्थान पर तत्त्वज्ञान शास्त्र अथवा तत्त्व विज्ञान क्या नहीं कहा गया? आप वचन है कि 'आत्मा वा अरे द्रष्टव्य श्रान्तय मन्तव्य निदिध्यासितव्य ।'

अनुपनिषद्के इस वचनमें आत्मज्ञानकी जो साधना बताया गयी है, अस्से आरम्भिक विभागको (द्रष्टव्य विभागका) ही दशन कहा जाता है।

आत्मज्ञानकी प्राप्तिके लिये जा तत्त्व चिन्तन किया जाता है अस्सेका दशन कहा जाता है। तत्त्वज्ञानकी प्राप्तिके लिये जा शास्त्र विचार हाता है वही दशन है। न्यायिकाके मतानुसार चारह तत्त्व अथवा प्रमेय हैं जिनका तात्त्विक ज्ञान हाता आवश्यक माना जाता है। वह ज्ञान अस्मिककारक और समस्त प्रथियाका छेदन करनेवाला है। हम जिन चारह तत्त्वकी ही दशनशास्त्रके मुख्य विषय मानें — आत्मा, शरीर जिद्रिय, अथ बुद्धि मन प्रवृत्ति दाप प्रेत्यभाव फल, दुःख और अपवग। जिनमें से द्रव्य-गुण-कर्मरूपी अथ बाह्य स्रष्टिसे संवध रखता है। बाकी शरीरसे आत्मा तथा अपवग तकके सभी तत्त्व मनुष्य-जीवनसे सम्बन्ध रखते हैं।

प्राचीन कालमें दशनके दो मुख्य भाग किये गये थे आस्तिक और नास्तिक। अस् भेदका समझ लेना ठीक हागा। आज तो जो लोग श्रीश्वर और धम पर (और गायद रुद्रि पर) श्रद्धा रखते हैं अथवा श्रद्धा हानेकी बात कहते हैं वे आस्तिक कहे जाते हैं। और जो लोग श्रीश्वर तथा धमके प्रति अविश्वास प्रकट करत हैं, वे नास्तिक कहे जाते हैं। लेकिन जिन शब्दाका मूल अर्थ असा नहा था। वदा तथा वदिक शास्त्रा पर विश्वास न होना ही नास्तिकताका लक्षण माना जाता था। जो मनुष्य श्रीश्वरमें तो विश्वास रखता था, परन्तु वदामें विश्वास नहा रखता था, अस् भी नास्तिक ही कहा जाता था। अस्के विपरीत जिन मनुष्यका वदामें विश्वास हाता वह यदि श्रीश्वरके अस्तित्वका अस्कार करता तो भी अस् शुद्ध आस्तिक माना जाता था। नास्तिकी वदनिन्दक। जो मनुष्य वदाकी समस्त आनाआक अस्सम और प्राह्य होनेकी बात स्वीकार करता परन्तु वेदाके अपौरुषेयत्वका स्वीकार नहीं करता था, अस्से भी नास्तिकी ही अस्पाधि मिलती थी।

आस्तिक और नास्तिककी व्याख्यायें सदा अस्सी नहीं थीं नहीं हा सकतीं। अस् असी व्याख्या भी प्राचीन कालसे चली आती है कि परलोकमें जिन

जीवन व्यवस्था

मनुष्यना विश्वास हा वह आस्तिक है और परलाकमें जिनका विश्वास न हा वह नास्तिक है। मर विचारसे जिस यास्यामें बहुत तथ्य है। परलोककी रूढ़ कल्पनाका त्याग करके यदि हम खुसकी तकसुद्ध और युक्तिमाय व्याख्या करें, ता जा मनुष्य आत्माके अमरत्वको स्वीकार करता है उसे मरणोत्तर जीवन, साम्प्रदाय अथवा परलाकको भी स्वीकार करना पडता है। परन्तु जिस समयमें हम आग विचार करग।

मेरी दृष्टिसे तां जिसका आत्मा विश्वास है वह आस्तिक ही है और ज जन्मादी होनक कारण जात्मा विश्वास नहीं करता वही नास्तिक है।

पहल हम गार्स प्रामाण्यसे सब रखनवाली यास्याकी चर्चा करग। म गार्स प्रामाण्य और ग्रय प्रामाण्यमें भद करता हू। आज हड़ अथम जिसे ग्रय प्रामाण्य कहा जाता है उसे तो सच्चे दार्शनिकों से विरले ही स्वीकार करेग। जितन भी ग्रय ह वे सब मनुष्यक बनाय हुआ ह। जिस ग्रयने कर्ताका हम नहीं जानते खुस हम अनानिमस अथवा अपौरुषय वह सक्ते ह परन्तु जिसम कोभी शक नहीं कि प्रत्यक ग्रय मनुष्य कृत है। अस ग्रयमें जा बुच्च वाटिक पुरुषा द्वारा रचे गय ग्रय ह जनम और प्रणीत तत्त्वचान अवश्य भरा हा सक्ता है। परन्तु औरकरका दिया हुआ पान मनुष्यने ग्रहण विय तनीम जसमें दोष अपान और अप्रणता मिल गय ह। कर्पनि सुद्ध जलकणावे हवामें आते ही अूनमें हवाक रजकण मिल जाते ह और जब वे जलकण जमीन पर गिरत ह तब तो जमीनने गुण घम भी अूनमें प्रवेश करते ह। फिर खुस पानीना हम पूणतया गुद्ध नहीं कह सक्ते। अिसी प्रकार औरकरके साथ खुसका जन मनुष्यकी वाणीमें व्यक्त हुआ तब मनुष्यकी बुद्धि और श्रद्धाके साथ खुसका और गार्सवानो भी मनुष्य धीरे धीरे विरसित हानवाली अपनी श्रद्धा और बुद्धि परा ही तो ग्रहण कर सक्ता है न? अिसलिअ दानगार्सक अध्ययनम ग्रयका प्रामाण्य हमारी कोभी सहायता नहा कर सक्ता।

त्रि

आत्मामें तो अपनिपदा ग्रहसूत्रा और गीताको ही वेदान्त प्रमाण मानत ह। म अिसना यह अय करता ह कि अपनिपदाक कमी-बनी तो व यह भी कहते ह कि हमन अमुक वन्ध अचामें हा गया है—

है वट अनुभव ,
अ

अिमीलिअ

समग्र

सकलित

किया है जिसलिये अन्हें भी हम प्रमाण मानते हैं। और जिन्हीं अपनिपदाके दोहनक रूपमें तथा ब्रह्मसूत्रो द्वारा निश्चित किये हुअे निणयके आधार पर श्रीकृष्णके समान जगद-मुहने गीता द्वारा जिस जीवन-कला अथवा योगशास्त्रकी रचना की, असे भी प्रमाण माना जाता है। अिन तीताक अनुकूल जो ज्ञान दिया जायगा वह अनुभव-मूलक ज्ञान होगा, जिसलिये यह मर्यादा बाध दी गयी कि जो पुरुष प्रस्थानत्रयीका समय करगा वही आचार्य हो मकेगा। आचार्यका केवल बुद्धिशाली होना ही पर्याप्त नहीं माना जाता था।

आचिनोति हि शास्त्रार्थं आचारे स्थापयत्युत ।

स्वयमाचरते यस्तु स आचार्य प्रचमते ॥

अिमका जय यह हुआ कि जो पुरुष धर्मानुभवी लागाके वचनाको बाद-रायण तथा श्रीकृष्ण जस सवमाय आचार्योंने कथनानुसार समयता है अुन सिद्धान्ताके अनुसार जन-समाजका जीवन क्रम बना दता है और स्वय भी अुसका अनुसरण करता है वह तत्त्वज्ञ धमकार समाजशास्त्री लोकगुरु ही आचार्य-पद प्राप्त कर सकता है।

अय कभी आगे नहीं बढ़ सकता। शास्त्र सदा ही प्रगतिशील हाता है। मनुष्यकी बुद्धि अनुभव कल्पना तुलना तथा अद्वाके विकासके साथ शास्त्रका भी दिन प्रतिदिन विकास हाता जाता है। मनुष्यकी ये सब शक्तिया अीश्वर-दत्त होती हैं। अिस कारण प्रत्येक शास्त्र मनुष्य-कृत हाते हुअे भी अीश्वर प्रणीत कहा जा सकता है। अिस सिद्धान्तके अनुसार यदि देखा जाय ता जो साहित्य अथवा धमग्रथ विभूतिमन श्रीमत् और भय दिखायी दे अुसे अीश्वर-सभूत ही समयना चाहिये। परन्तु कोयी अय विशेष अीश्वरका नि श्वासरूप है जिसलिये वह अ्रातिरहित ही होना चाहिये, अिस भूमिकाको सनातनी हाते हुअे भी मैं स्वीकार नहीं कर सकता। अिनने भी धमग्रथ और शास्त्रग्रथ हैं अुनक प्रति मेरे मनमें बडा सम्मान है। म सिष्यभावसे ही अुन्हें देखता हूँ। अुनस म जो कुछ ग्रहण कर सकता हूँ, सीख सकता हूँ, अुसे म वृतातापूर्वक ले लेता हूँ। और जो कुछ मेरी समयमें नहीं आता अुसके बारेमें म अपना निणय स्थगित रखता हूँ—अर्थात् न ता म अुसे स्वीकार करता हूँ न अुसका विरोध करता हूँ। म ता यह मानता हूँ कि प्रत्येक दार्शनिककी यही दृष्टि और यही भूमिका होनी चाहिये।

परमात्मा पर विश्वास रखना या न रखना यह प्रत्येक मनुष्यकी अपनी निष्ठा वृत्ति और अभिरुचि पर आधार रखना है। परमात्माको केवल 'माननेमे' न ता विनेष सात्त्विकता प्रकट हाती है और न अुसे न माननेस कात्री खास वहादुरी प्रकट हाती है। जो जिज्ञासु 'हृदि सस्फुरद आत्मतत्त्व' का मानता है और पूर्ण प्रयत्न करने पर भी 'परमात्म-तत्त्व' पर विश्वास नहीं कर सकता, अुसे

म तो नास्तिक नहीं कहूंगा। जिस आत्मतत्त्वका कम या अधिक स्पष्ट या अस्पष्ट अनुभव प्रत्यक्ष मनुष्यको होता है उससे जो अिनकार करता है उसे म अवश्य नास्तिक कहूंगा। उसे मनुष्यकी प्रतिष्ठा उसकी श्रद्धा और जीवनके प्रति बुरसकी दृष्टि ही अलग होती है। मेरी 'याख्यावे' अनुसार जनाका नास्तिक नहीं कहा जा सकता। स्वयको अनात्मवादी कहनेवाले वोढाको भी म नास्तिक नहीं मानता। मैं तो यह मानता हूँ कि जब वे आत्मासे अिनकार करते हैं तब वे केवल अह प्रत्ययसे ही अिनकार करते ह। उनकी 'यकी' बुपासना बस्तुतः अचित्त अतक्य और अयाह्यय आत्मतत्त्वकी ही बुपासना है। मेरी यह भूमिका भदत आनन् कोशल्यापनको माय नहीं है परंतु म अभी तक उसे छाड नहीं सना हूँ।

आत्मा और परलोकका म जसा सबध मानता हूँ उसकी दृष्टिसे जो मनुष्य परलोकमें विश्वास नहीं करता वह नास्तिक ही है। अय लाक नास्ति पर असा जिसका विश्वास है और साम्परायके बारेमें लाइफ आपटर डेथ के बारेमें मत्युव वादके अस्तित्वमें जिसकी श्रद्धा नहीं है वह मनुष्य नास्तिक है। जिस मनुष्यका अिस बातमें विश्वास नहीं कि मत्युका अतराय हाते हुअे भी अक प्रकारका अलण्ड अनुस्यूत धारावाहिक जीवन चलता है वह धम और अधमका विवेक नहीं कर सकता। जुसके आचरणमें और जीवनम दुराचार आसानीसे प्रवेश कर सकता है क्वाकि उसकी नास्तिकता उसे हर प्रकारक मोहसे धर लेती है और जुसकी बुद्धि क्षीण हा सचती है।

प्रज्ञा और आस्तिकताका अविच्छिन्न सबध है।

प्रनानागात्मको माह तथा धर्मायनाशक ।
तस्मात्नास्तिकता च व दुराचारश्च जायते ॥

हमारी सबमाय और रूढ कल्पना यह है कि मनुष्यकी मत्युके परचात जो भी अवश्य रहता है— फिर वह जीव ही सत्कार पुज हो वासना-श्रधि हो या कम-समुच्चय हो— वह नया गरीर धारण करके अपना कतुत्व ज्ञातुत्व तथा भोक्तृत्व बढ़ानेके लिये अिस दुनियामें फिरसे आता है। अिसीको हम पुन जम कहते ह और हमारा यह विश्वास है कि पुनजमका यह परपरा अपवग अथवा मोश तक बसी ही चला करती है। यह कल्पना अगास्त्रीय अथवा अब पानिन नहीं है। बुद्धिम भी अिसे समझा जा सकता है। लिन कोअी मनुष्य अिसना अनुभव नहीं करा सनता। अत अिसे जेक हाअिपोयसिस — वाद अथवा अभ्युपगम ही कहना चाहिये।

मनुष्य अपनी मृत्युके परचात् अपनी सततिमें जीता है और अपन वायका विस्तार करता है— अिसे भी अुसका जक प्रकारका साम्पराय कहा जा सनता है। वग जिस प्रकार अपने धीज द्वारा अपनी सतति-परपराको बनाये रखता

है और अपनी जातिको नित्यजीवी बनाता है अुसी प्रकार मनुष्य भी अपनी सततिके द्वारा अजर-अमर हाकर अपने साम्प्रदायका सिद्ध करता है।

हमारी जिनासाका विषय यह नहीं है कि शरीरके छूटनेके बाद अुसके स्वासाच्छ्वासका क्या हाता है। शरीरके निश्चष्ट हो जानेके बाद अुसके भीतरकी प्राणशक्ति कहा जाती है? यह विज्ञानका विषय माना जा सकता है। दशानके अिस विषयमें शोध नहीं करनी है। मृत्युक बाद मनुष्यके शरीरका क्या होता है अथवा हम अुसका क्या करते हैं यह हम सब जानते हैं। 'वायु अनिलम, भस्मान्तम् शरीरम्' — अितना ता स्पष्ट ही है। अिसके सिवा जो भी स्वभाव अध्यात्म अथवा पमनेलिटी' बाकी रहती है अुसका क्या हाता है, यही मुख्य प्रश्न है। मुख्य विषय यही है कि मनुष्यने अपने समस्त जीवनमें जा जो सस्कार प्राप्त किये हा जिन जिन धर्मोंका अनुशीलन किया हा अुन सबके समूह अथवा ग्रथिका क्या होता है। आत्मा विभु है। अुसके आने-जानेका होने अथवा न होनेका प्रश्न ही नहीं अुठता। परमात्मा भी — यदि वह हो तो — विभु है। अुसके विषयमें प्रश्न ही क्या हो सकता है? परन्तु मनुष्य-जातिके लिये सबसे महत्त्व-पूर्ण प्रश्न यही है कि मृत्युके बाद जो व्यक्तित्व (पमनेलिटी) रहता है और जो सारे सस्कार-समूहका आधार है, अुसका मनुष्यके मरनेके बाद क्या होता है।

मनुष्य यदि यह समझ ले कि अुसके व्यक्तित्वका कद्र भले ही अुसका शरीर हो परन्तु वह शरीरसे मयादित नहीं है अुसके व्यक्तित्वका बड़ा भाग अुसके साधियामें अुसके समाज और अुसकी परिस्थितियामें तथा जिन जिन तत्त्वाके साथ अुसका मवध रहता है अुन तत्त्वामें होता है ता वह अिस बातको भी समझने लगेगा कि मृत्युसे अुसका बहुत ही थोडा अंश नष्ट हाता है। शरीरके छूटने पर अुसका कम-स्वातन्त्र्य शायद नष्ट हाता होगा — कदाचित् अुसका सूत्रम बन जानेके कारण यह स्वातन्त्र्य बढ भी जाता हो — परन्तु मत्युस अुसके व्यक्तित्वका नाश तो नहा ही होता।

राजाका राजत्व अुसके राज्य अुसके प्रजाजना और राज्यके कानून-कायदा तथा अुनके तत्र तक विस्तृत होता है। अितना ही नहीं सधि विग्रहके द्वारा राजा जिन पडासी राज्याके सपकमें आता है अुनमें भी अुसका राजत्व अवश्य व्यक्त होता है। अिस राजत्वको अेक प्रकारका प्रवाह ही मानना चाहिये। अिसका अुद्गम अनादि अितिहासस हुआ होगा और न जाने कौनसे शक्ति-सागरमें — पुरुषाय-सागरमें — वह विलीन होनेवाला है। राजाकी मत्युसे राजत्वका नाश नहा हाता। अुसे केवल अपना केंद्र बदलना पडता है। अिसीलिये अिग्लडमें लाग राजाकी मत्युके अवसर पर कहते हैं "The king is dead, long live the king!"

प्रत्येक व्यक्तिने व्यक्तित्वकी सच्ची स्थिति असी ही है। हम जितने अपने शरीरमें रहते हैं अुससे वही अधिक अपनी परिस्थितियामें समाजमें कार्योंमें,

सहयोगी भासनाओं साधियाम, विरोधियों अपनी सततिमें तथा धारा वाही सनातन और अनत कालमें रहते ह । जतमें जब हम कृताप हाकर अनतम विलीन हो जात ह, स्मतिशेष बन जाते ह तभी हम निर्वाण अथवा मोक्ष प्राप्त करते ह । हरएक मनुष्यके जीवनकी समद्धि या विस्तार अक्षता नही होता । कितने ही लोग अपने अदम्य सकल्पके कारण अपन जीवनका कल्पनातीत विस्तार कर लेते ह । यदि अके कल्पना अके कल्प तक विवसित हाती रहे ता कोजी आश्चय नही । परन्तु अुसक कृताप हो जाने पर नानमें अुसकी परिममाप्ति हो जाने पर, मनुष्यको मोक्ष मिलना ही चाहिये ।

मेरी दष्टिसे साम्परायका यही सच्चा अथ है । मनुष्यका शारीरिक मानसिक तथा सकल्पात्मक काय ही अुसके यकित्तत्वका सच्चा रहस्य है । 'यथावम यथाशुतम जिस यकित्तत्वका प्रवाह चलता रहता है । जरत्कारव आतभागने यागवल्क्यसे पूछा कि गरीर आत्मा आदि समस्त तत्त्व जब विलीन हो जाते ह तत्र पुरुषका क्या होता है ? तत्र यागवल्क्यने अुसे अेक ओर ले जाकर जो गूढ रहस्य धताया अुसमें भी अिसी कमतत्त्वका अुल्लख था असा अुपनिषद कालके अपिने कहा है ।

जिस मनुष्यका अिस साम्परायके बारेमें विश्वास है वही मेरी रायमें ज्ञान पूर्वक त्रिकालावाधित रह सकता है । अुसकी दष्टि भी व्यापक और दीघ बनती है । अुसकी सत्ता साधभीम होती है । वही अजर-अमर होता है । जिस सष्टिमें जो विराट तत्त्व सबत्र याप्त (अनुस्यूत) है वही आत्मा है । अुससे भिन्न कोजी पदाथ आत्मा नहा है । जिस प्रकार अेकका गुणक सब सरयाओंमें सदव रहता है अुसी प्रकार आत्माका भी सबत्र और सबमें अस्तित्व है । अुसके अभावकी कल्पना भा गही की जा सकती । अुसके आसपास ही हमारा यकित्तत्व और हमारा जगत प्रकट हाता है और हम अपने यकित्तत्वका अनुभव कर सकते है ।

जा लोग आत्मामें विश्वास नही करते अुन्हें भी आत्मा छाड तो नही ही देती । जिसलिअे अुनका भी अथेय अकल्याण गही हागा । जिनका आत्मामें विश्वास नहा है वे आत्माकी अेक विगिष्ट व्याख्या करव ही अुसस जिनकार करत ह । अुन्हें गाय अिसनी कल्पना नहा हागी कि अपने जिस अिनकारसे ही वे आत्माका स्वीकार करत ह भू ही वे अिसे समझ न पायें ।

और हम जिसस आत्मामें विश्वास करवानेका प्रयत्न भी किसलिअे करें ? अीवर और आत्माके चम्पियन — प्राता — बननेका यय प्रयत्न हम क्या करें ? क्या जीवनका जान और भान समय आने पर भीतरसे ही मनुष्यमें अपने जाप अुत्पन्न नहा हागा ? यह आत्मा सब कुछ ग्रहण करती है प्राप्त करती है सदा अन्भाग करती है तथा अक्वड और अनत रूपमें निरतर रहती है । अिसलिअे यह आत्मा है । श्री गकराचायन आत्माकी व्युत्पत्ति आप् आ + दा,

आ + अद और आ + अत घातुअसि की है। आप् का अर्थ है प्राप्त करना, आ + दा का अर्थ है ग्रहण करना आ + अद का अर्थ है अपुभाग करना और आ + अत का अर्थ है निरंतर चलते रहना।

यह कहना कठिन है कि आत्माके साक्षात्कारमें सुख है या नहीं। परंतु आत्माकी प्राप्तिमें हमें अपना केन्द्र मिल जाता है। उसके बाद ही सारा विश्व हमें यथास्थित प्रतीत होने लगता है। हमारे जीवनके समस्त मूल्य (Values) यथाय वन जाते हैं। जैसे मूल्य-परिवर्तनमें ही जीवनका परिवर्तन—जीवनकी सिद्धि निहित है। इसके बाद कोश्री प्रणिय नहीं रहती किसी तरहकी शक्ति नहीं रह जाती। आत्म-साक्षात्कार ही अंक अद्भुत सामर्थ्य है, परम गति है। अंक बार प्राप्त हो जाने पर अिसका कभी ह्रास नहीं होता। अिसीलिये हमें अय सारी वाताका त्याग करके आत्मप्राप्तिये लिये अखड और अथक प्रयत्न करना चाहिये। 'तमेवकम जानीथ आत्मानम अया वाचा विमुञ्चथ, अमृतस्यप सेतु ।'

अिस आत्माको ही अन्तरात्मा कहते हैं, परमात्मा कहते हैं, परब्रह्म कहते हैं आत्माराम कहते हैं और पुरुषात्तम भी कहते ह मनुष्य-मानव हृदयमें अुसका निवास होनेसे अुसे नारायण भी कहते ह। वतमान भूत और भविष्यके नर-नारी समूहका नार या Humanity कहा जाता है। यह नार ही अिसका अयन है प्रतिष्ठाका स्थान है, वही नारायण है—'God of Humanity' है। मनुष्य-जीवनके सर्वोत्कृष्ट सामाजिक आदरके विचारसे अुसे पुरुषात्तम कहा जाता है और अुमकी व्यापकताके कारण अुसे नारायण कहा जाता है। सपूण समाजके साथ, समष्टिके साथ, अपने 'नार के साथ अंक रूप हो जाने पर हमारा मर्यादित यकित्तत्व नष्ट हो जाता है हमारी पसनेलिटि विलीन हो जाती है और नारायणके साथ हमारा सायुज्य—तादात्म्य—हो जाता है। यही सब व्यक्तियाका चिर साम्प्रदाय है। जो लोग अिसमें विश्वास नहा करते, अुनके जीवनमें मन्यता दडता और पूणता नहीं आ सकती। वे सबव्यापी वण्णवी शक्तिसे वचित रहते ह। भरे आगेक विवचनकी दृष्टिस आस्तिक-नास्तिकका यह भेद स्पष्ट करना आवश्यक था क्यकि आगे चलकर मुझे यह सिद्ध करना है कि जसा हमारा दान होगा वैसा ही हमारा धम होगा, और हमारा समाजशास्त्र भी अुसके अनुकूल ही रहेगा।

म तो यह मानता हू कि हमने अभी तक अपने दानका पूरा लाभ नहा अुठाया है। प्रत्येक दान जीवनकी अंक पथक दृष्टि (View of life) है। और जसी दृष्टि हो वसा ही जीवन क्रम (Scheme of life) भी होने चाहिये। अपनी सामाजिक रचना (Social structure) भी हमें अुसके अनुकूल ही खडा करनी हागी।

जसा कि मैं ऊपर कह चुका हूँ, हमारे उपनिषदों में आत्मवीर अपियाकी तात्त्विक शार्थ और धर्मानुभव दिये गये ह। मनुष्यने साचा कि सारे अनुभव अकरूप होने ही चाहिये—फिर वे चाहे जसे गदामें यवत किये गय हा अनुकी अभियक्ति चाहे जितनी भिन्न हो। असि अक ही विचारस भगवान बादरायणने ब्रह्मसूत्राम जुपनिषदाके आधार पर जेक अखण्ड तत्त्वविद्याका ग्रथित किया है।

अब प्रत्येक अनुभवका विज्ञान अथवा शास्त्र — Science — बनना चाहिये और प्रत्येक विज्ञान या शास्त्रके साथ अुसकी जीवन प्रेरक और जीवन-व्यापक कला Art of life भी होनी चाहिये। जुपनिषदामें जो अनुभव और विचार पाये जाते ह अुहीका ब्रह्मसूत्रने विज्ञान या शास्त्र बनाया और जिन दानाक आधार पर भगवान श्रीकृष्णने अेक सर्वांग-परिपुण जीवन-कला अर्थात् योगशास्त्र अदभुत रूपमें रचकर हमें दिया। अुसे हम भगवद्गीता कहते ह।

परतु यदि हमारे समाज-व्यवस्थापकाने अपने अपने दशनके साथ अुसके अनुकूल स्मृति भी दी होती तो हमारा ध्यवितगत जीवन तथा सामाजिक जीवन कृताथ हो जाता।

हमारे प्रत्येक दशनके साथ अुसकी अपनी कोजी न कोजी साधना भी होनी ही है। परतु प्रत्येक दशनक साथ अुसके आधार पर विकसित तत्कशुद्ध तथा ध्येयसिद्धिके लिअे शक्तिशाली समाज-व्यवस्था अथवा स्मृति हमारे पास नहीं है।

जनाकी अहनीति मने देखी है। अुसमें मुचे जन दशनका तत्कशुद्ध विनियोग कही भी दिखायी नहा गिया। इत अद्वत विशिष्टाद्वत आदि भिन्न भिन्न दृष्टिवाले वेदातिथाने अपनी अपनी स्वतंत्र स्मृतिया निमाण करनेका कही भी प्रयत्न किया हो असा दिखायी नहीं देता। जा अद्वतवादी है वह समाजमें प्रचलित अूच नीच भावको कस बरदास्त कर सकता है? जो अद्वतवादी है वह वण-व्यवस्थाको स्वीकार कर सकता है या नहा? अस प्रश्न न ता किसीने किये और न किसीने अिन प्रश्नाके अुत्तर दिये। अद्वतके साथ बधिकार भेदक सिद्धातका मल सघता है या नहा असका भी किसीने निणय नहीं किया। नतीजा यह हुआ कि हमारी दशन चचा कभी भी जीवन चर्चा नहीं बन सकी, और हमारी स्मृतिया भी दान शद्ध नहीं बनी।

प्राचीन कालम असे ही पुरुषका दशनाचाय माना जाता था, जा प्रस्थान ग्रथीकी अेकवाक्यता सिद्ध कर दिखाये। यह आदग अवश्य ही सच्चा था। परतु अजु तो हम अुसीको आचाय कहेंगे जो हमारे सभी दशनाका महत समवय करे जुन समवित दानोका अनुसरण करके अेक श्रेणीबद्ध साधना क्रम तयार करे और अुसके साथ अेक सावभौम स्मृतिका भी सूचन करे। असे ध्यवितको हम दानाचाय न कहकर जीवनाचाय कहेंगे।

दूमरी दृष्टिसे सोचें ता जो पुरप धम, अय काम जोर मोक्ष अिन चारा पुरुषार्थोंकी यवस्था बताये अिन चाराका तारतम्य जोर अधिकार निश्चिन करके जीवन-मम-वयका माग दिखाये वही जीवनाचाय बन सकता है। हमारी दशन विद्या और जीवन कला अिसीमें सायक हागी। आत्मविद्याका, ब्रह्मविद्याका, अनुसरण करनेवाला योगशास्त्र जीवन साधना और सामाजिक स्मृति प्राप्त होनेसे व्यक्तिगत तथा सामाजिक मनुष्य जीवन सुमस्कारी और सशास्त्र बनेगा।

हमारे तत्त्वचानने समाजका शायद मायारूप माना होगा। परन्तु समाज और जाति तत्त्वके रूपमें ता अेक ही है। यदि जाति नित्य है ता व्यावहारिक दष्टिस समाज भी नित्य है। अुसे भी तत्त्वचानका प्रमेय बनाना होगा। अुसकी अुक्षा करना सबथा आत्मघाती माना जाना चाहिये।

जब काल माक्सने अपना साम्यवादी समाजशास्त्र दुनियाको दिया तब अुसे सपूर्ण बनानेके लिअे अुहाने यह भी बताया कि अुसकी नीव किस दशन पर आधार रखती है। यदि वे आत्माको स्वीकार कर सके होते, तो वग विग्रह पर वे जितना अधिक भार नहा ही दे पाते। अुनका दशन सच्चा हो या पूठा, परन्तु अुहाने दशनशास्त्रका सिद्धांतिक चचाकी मरभूमिसे बाहर निकाल कर अुने सामाजिक जीवनका आधार बनानेका जा माग दिखाया, वह अुनकी बडीसे बडी सवा है। गाधीजीने सत्य अथवा आत्माको अपनी जीवन-व्यवस्थाका कद्र मान लिया और अिस सिद्धांतके फलस्वरूप अहिंसाको जीवन साधनाके रूपमें स्वीकार लिया जिसलिजे अुनके जीवन-दशनमें सब-सद्भाव, सब-मम-वय और सर्वोदयकी ही बात आ सकती थी। अुन्हीने जगतका यह बताया कि सबन्न विविधता होते अुजे भी अुसमें अेकता कैसे स्थापित की जा सकती है।

जब हमें अपने दशनशास्त्रका भी सामाजिक रूप देना पडेगा। असी कोजी भी विचार-व्यवस्था जोर तत्त्वचान सच्चा दशन है, जो सावभौम होनेके कारण व्यक्तिगत जोर सामाजिक जीवनके सब अग प्रत्यगा पर जोर अुनके प्रत्येक पहलू पर प्रकाश डाल सकना है, जो सबकी सन्तापजनक अुपपत्ति और सम-वय करता है तथा राजनीति, धमनीति और जयनीतिको शास्त्रशुद्ध बनाता है।

जिस दष्टिसे सोचें तो व्यक्तिवाद भी अेक दशन ही है। जिससे अुलटा समाजवाद अेक दूसरा दशन है। साम्यवाद अथवा समष्टिवाद अुसीका अेक बदला हुआ रूप है।

गाधीजीने सत्य अहिंसा शरीर धम और स्वदेशी आदिके आधार पर जो सत्याग्रही यवस्था दुनियाके सामने रखी है वह भी अेक सावभौम दशन ही है। अुस हम सत्याग्रह-दशन बढ सकते ह। सर्वोदय दशन भी अुसे कहा जा सकता है। साम्यवात्ममें और जिन दशनमें जो भी साम्य अथवा भेद पाया जाता

फेफड़े ह, धीरज मेरा व्रत है, श्रद्धा मेरा चैतन्य है और सर्वोदय मेरा प्रसाद है। मैं जैसी जगदम्बा हूँ—जगद्धात्री हूँ। मेरी अपासना करनेवालेको किसीका मुह नहीं देखना पड़ता। उसकी सारी अच्छाईयें मेरे द्वारा ही तृप्त हागी। मैं भविष्यकी मन्त्राणी हूँ। मेरे द्वारा ही मनुष्य परिपूर्ण और कृताथ बनेगा।

दशनशास्त्र अंक सावभौम विद्या है। उसे हम केवल तत्त्वचर्चा तक ही मर्यादित न बना दें। हमारे जीवन पर उसका पूरा पूरा प्रभाव पड़ना चाहिये। और दशनकी इस सिद्धिके लिये हमें तत्त्वज्ञानाथ-दशनका रूप ही बदल डालना चाहिये। अतना ही मुझे यहा कहना है।

म अपने विचाराका जरा भी विस्तार नहीं कर सका हूँ। बुनका समयन करनेका भी मुझे मौका नहीं मिला। उस आर कवल अिगारा करके ही मुझे सतोप मानना पडा है। मैं लाचार था। सेवाके आदेशको माये पर चढाकर म यहा आया हूँ। जिन विचारोंसे प्रेरित होकर म तत्त्वज्ञानकी खान करता हूँ अुन्हें आपके समक्ष रखकर ही मैंने सतोप कर लिया है।

सत्य पर धीमहि।'

५

धर्माचार्य अथवा साहित्याचार्य*

आजका अपना विषय पसद करनेमें मुझे अपने मनके साथ थोडा सघष करना पडा। पहले मेरा विचार था कि भारतकी अनेक भापाआ बोलिया और बुनके परस्पर सम्बन्धके विषयमें ही आज कुछ कहूँ। राष्ट्रभाषा हिन्दीके प्रचाराथ भारतके विभिन्न प्रान्तामें घूमते घूमते भापाके प्रदनका मुझे जो दशन हुआ और उसके पीछे रहूँ प्राताभिमान, भापाभिमान लोक शिक्षण तथा राज्य प्रबन्धके सबधमें अल्पन्न होनेवाल प्रश्नाके जो हल मुझे सूझे अुन्हीका सक्षिप्त विवेचन करनेका मेरा विचार था। हमारे साहित्यकारा प्रचारका और श्लोवसेवकाको जिस प्रश्नका गहरा अध्ययन करके गासकाको अुचित दिशा सुज्ञानी चाहिये, क्याकि निकट भविष्यमें यह विषय सबसे अविज महत्त्व ग्रहण करनेवाला है।

परतु मुझ लगा कि यह विषय जितना साहित्यका है अुससे अधिक राष्ट्र नीतिका और राष्ट्र-सगठनका है अिसलिये साहित्यके साथ सीधा सबध रखनेवाला बोझी दूसरा विषय मुझे लेना चाहिये। अुसमें भी कुछ समयसे मेरे दिभागमें जो विचार अिक्कठे हो रहूँ थे अुन्हें अेक बार सदगति अवश्य देनी चाहिये, जिस भावनास मैंने आजका यह विषय चुना है।

* ता० १७-३-३८ को बडोदामें दिया गया भाषण।

सत्ता भोगी है। जिसका कारण यह है कि वे गृह समाजगास्त्र थे। वे लोकमानसका जानते थे और लोकहित किस बातमें है यह भी जानते थे। इसके फलस्वरूप वे लोक हृदयके स्वयं-सम्राट बन गये थे।

प्राचीन कालमें अमर लागाने मनुष्य जातिक निमाणमें बडेसे बडा हाथ बटाया था। परन्तु असे स्वयंभू धर्म पुरुषाकी परम्परा और गददी स्थापित करनेका प्रयत्न मिथ्या हाता है। जस प्रत्येक अच्छी बातका असफल अनुकरण हाता है वस धर्माचार्या भी अमर अनुकरण हाने लगा। अमुक पुरुष मूल धर्माचार्याका पुत्र है बुद्धुम्बी है या गिप्य है जिसीलिअे यदि वह अनकी गददी पर बडे, तो वह बाह्य आचारका अनुकरण कर सकता है और समाजका बाह्य नियत्रण भी कर सकता है परन्तु जिसने जीवनका अथवा चतयका विकास ता हा ही नही सकता। यलि बाह्य नियत्रणसे समाजका अुद्धार सभव होता तो राज्यमत्तान कभीका अुसका अुद्धार कर दिया हाता। राज्यसत्ता अपनी मयादाकी जानती है और अेक विसय मयादा तव लोकसदा करके रक जाती है। परम्पराके आधार पर बने हुअे धर्माचार्य जिससे अधिककी जासा रखकर दभका पापण करते ह और निष्फलताका निमत्रण धते ह।

जिन धर्माचार्योंके समान ही समय जित्तु अुनसे अधिक दीघदर्शी और नम्र हाने ह सत। सतान समाजक नियत्रणका आग्रह छाड दिया। अुहाने स्वयको ही नियत्रित करनेमें अपनी सारी गवितका अुपयाग किया और अपनी वाणी तथा आचरण द्वारा जितना विचार प्रचार और धर्म प्रचार सभव था अुतना करक सताप माना। धर्माचार्य स्वाभाविक रूपमें कमकाडी हात ह, क्याकि अुनका सवध बाह्य नियत्रणक साथ अधिक हाता है। सत कमकाडको गीण स्यान दकर कमयाग, सदाचार और भवितमागका ही प्रधानता देत है। जिसस अुह अपने कायम अधिक सफलता मिलती ह।

धर्माचार्यों और सताने लाग पर असर डालनेके लिअे अपने जीवनकी सहायतामें साहित्यकी सवाता अुपयाग किया। धर्माचार्योंने गास्त्र भाष्य और टीकायें लिखा और सताने स्तात्र तथा कविताआकी रचना की। साहित्यके जीवन पर हानेवाल जिस प्रभावका दखकर कुछ साहित्य-कुशल लाग सतानका अनुकरण करने लगे। अपनी भाषागवितका अुपयाग करके अुन्हाने सतवाणीका गुस्त्र अनुकरण किया। जिसलिअे मोलभाल समाजने माना कि वे लाग भी सत हा ह। वाणीका अनुकरण ता हा सकता है परन्तु रहन-सहनका, अुदात्त जीवनका अनुकरण कस ही सकता है? अत अस साहित्याचार्योंन अपने सतपदका धार्ये रखनेक लिअे दभ गुरू किया। वे कहने लगे हम ता माक्षात्कारी पुरुष ह, हम घघनसे परे ह। तुम हमारे अुपदेगके अनुसार चला। हमारा आचरण तुम्हारे अनुकरणके लिअे नही है। 'न देवचरित चरत।' हम चाह जसा

आचरण करे फिर भी हम गुद ह। हम वहाँ वसे तुम चलो। हम करें वसा तुम मत करा।' लाग भी मानने लगे कि मुक्तास्ते न विचारणीयचरिता ।' किंतु असा दम कहा तक चल सकता था ?

प्रचारके दो साधन ह जीवन और कविता आचार और विचार, चरित्र और साहित्य। अिनमें से दूसरा साधन कम प्रभावकारी नहीं था। कविता, विचार और साहित्यकी मददसे ही धमका यापक प्रचार हुआ है। प्रसिद्ध धर्माचार्यों और सतामें साहित्य-संजनकी शक्ति थी। बुहाने नहीं तो बुनके गिप्याने तजस्वी साहित्यका सजन अवश्य किया है। अर्पोरूपेय माने जानेवाले कुरान गरीफकी लाकातरता सिद्ध करनेके लिये जेव दलील यह भी दी गयी है कि बुसकी किसी भी आयतनी बराबरी कर सके जसी अेक कायकृति रच कर तो बताओ। बुपनिपद वाजिबल बुद्धके धम-सवाद जन धार्मिक साहित्यके अग, सतवाणी — यह सब अुत्तम साहित्य ही है।

जब साहित्यकी शक्तिके जार पर किया जानेवाला सतावा छिछला अनुकरण बहुत बढ गया तब लोग अुससे घबरा गये। लोग समझने लगे कि साहित्य शक्ति और सतपन दो अलग चीजें ह। फिर भी साहित्यका आकषण बढनसे सामाय लाग भापाके सामने जीवनको गौण मानने लगे। अिसलिये कुछ साहित्याचार्य साहमपूर्वक आगे आकर कहने लगे हम तो केवल साहित्यके अुपासन ह। अुच्च जीवनका दावा हम करत ही नहीं। हम ता केवल विचारा और बल्पनाआव प्रचारक ह। अिसने अधिक् कुछ करनेकी जिम्मेदारी हमने अपने मिर पर ली ही नहीं है। हम विष्कुल सामान्य कोटिके मनुष्य ह। हम केवल म्वान्त सुखाय लिखते ह। तुम्हें अिसमें आनंद आये ता जरूर हमारे साहित्यका आनंद लो।

जसे साहित्यकाराने जिस हद तक अिस तरहका रस अपना कर दमको दूर किया और जीवनका स्वच्छ बनाया अुस हद तक बुहाने समाजकी सेवा ही की है।

परन्तु कोअी निलज्ज और बेह्या मनुष्य भी दमका दूर करनेका दावा कर सक्ता है। यथापवादक नाम पर छिछले जीवनका प्रचारक बनना आसान है। अिगन लिये बहुत बढा प्रयत्न करनेकी जरूरत नहीं हाती। साहित्यकी सजावटसे भाग प्रधान जीवनको आसानमे मुदर बनाया जा सकता है। अिमलिये असे साहित्यन लावप्रिय हानेमें देर नहीं लगती।

धर्माचार्योंकी सत्या धीरे धीरे अप्रतिष्ठित हो गयी। सतावा जीवन अेनानिव अमायात्मन और अेबलन्ती मालूम हाने लगा। अिसलिये साहित्याचार्य अधिक् आगे आये। साहित्यके आधार पर साहित्य-संजनकी योग्यता मापनेकी बत लोगामें होनी ही है अिसलिये साहित्याचार्योंकी खुब बन आयी।

साहित्यका प्रभाव जसे जैस बढता गया वैसे वैसे कलाका तत्त्व खिलता गया। और साहित्य द्वारा कसा पीटिक, हितकर और रुचिकर भाजन परोसा जाता है जिसका विचार करनेके बजाय जिस बात पर अधिक ध्यान दिया जाने लगा कि वह भोजन कितने सुंदर बरतनमें परोसा जाता है। कलाकार कहने लगे कि कला अुसके 'significant form' में है चमत्कृति जनक शब्द-रचना या आकारमें कला है जिसीमें अुसकी प्रधानता है। जिसके फलस्वरूप साहित्याचाय समाजको कसी प्रेरणा देते हैं यह बात माना गीण बन गयी। सच पूछा जाय तो कलाका मम अुसके चुनावमें 'selection' में है सच्ची कला चमत्कारी निरीक्षण और चमत्कारी विवरणमें निहित होती है। Power of perception' और power of expression' में ही कलातत्त्व निहित है। दोनोमें हसके जैसी वैदग्ध्य शक्ति ही मुख्य है।

अब यह वैदग्ध्य शक्ति 'selection' की दृष्टि अथवा हसवृत्ति केवल मुख-परायण भी हो सकती है और हित-परायण भी हो सकती है। साहित्या-चार्योंको अपनी इस शक्तिका अपुयाग अपने हित तथा जगतके हितके लिये करना चाहिये। परंतु सभी साहित्याचाय असा नहीं करते। जिस प्रकार धर्माचार्योंका जीवन दुबल मन गया अुसी प्रकार साहित्याचार्योंका जीवन भी शिथिल होने लगा। जिसलिये लोकगुरु बननेकी अपनी योग्यताको खोकर वे नटो विटा और गायका जसे केवल लोक रजक बन गये।

जिस प्रकार जब धर्माचार्यों और साहित्याचार्योंने बडी बडी आशायें दित्ता कर और असाधारण अधिकार भोगकर अतमें निराशाका जन्म दिया, तब लोग फिरसे जिम्न बातका जाच करने लगे कि धर्म क्या है और साहित्य क्या है?

संपूण जीवसृष्टिका—मनुष्य-जातिका तथा मनुष्येतर जगतका कल्याण कसे हो सकका विकास कसे हो जिस बातका विचार करनेवाला तथा जिसके अनुसार जीवनका मागदशन करनेवाला तत्त्व ही धर्म है। महाभारतकारने कहा है यत् स्यात् धारणसयुक्त स धर्म इति निश्चय ।' जिसी विचारका सक्षिप्त बरके अुन्हाने दुवारा कहा यत् स्यात् अहिंसासयुक्त स धर्म इति निश्चय ।' यदि हम अेक-दूसरेका नाश करने लगे, तो दुनियामें कुछ रहगा ही नहीं। जिससे बाह्य जगतका तो नाश होगा ही, परंतु अुसके साथ हमारे हृदयका भी नाश हो जायेगा। जिसीलिये अहिंसाको धर्मका आधार माना गया है। धर्मका यह विधान जीवनके लिये है, जीवनके विकासके लिये है।

धर्ममें अनेक बातें अतीन्द्रिय, अलौकिक होती हैं। जिसलिये अंसा माना जाता था कि धर्मकी प्रेरणा तथागता (तानिया) से ही अवतारी पुस्पासे ही मिल सकती है। धर्ममें कुछ न कुछ तो अतीन्द्रिय अलौकिक और गूढ रहने ही

पाया है। फिर भी जस जस जीवनका अध्ययन और प्रत्यक्ष दान हाता जाता है वस वस धमरा स्वरूप भी बुद्धिग्राह्य और निश्चित हाता जाता है।

आहारगाम्त्र और विहागगाम्त्र, शौचाचारका गाम्त्र और लोचाचारका गाम्त्र अथगाम्त्र और समाजगाम्त्र मानसगाम्त्र और व्यवहारगाम्त्र, राजगाम्त्र और नियमगाम्त्र (गिना) जीवन-भाषना और कलापासना विनात और अध्यात्म — अिन सजा मिठाकर धमका कलवर बनता है। यही जीवनगाम्त्र है। आज हमें उस जीवनगाम्त्रमें पारगत जावाचाचायोंकी आवश्यकता है।

कुछ गार्हिमाचाय कहते ह राजनीतिस हमारा काभी सबध नहीं हम तो शाश्वित रिण वातावरणमें विचरण करत ह। कुछ धामर धर्माचाय भी भिना ही कायर वतिस कहते ह राजनीतिसे हमारा क्या वास्ता? हम ता पारगाम्त्र कल्याणका रिचार करनवाल ह। अिग नवर और मायारूप जीवनस मुक्त हानका माग बनाना ही हमारा अेकमात्र काय है। ये दोना ही खनरास भागनवा ह। जा लाग सतरासे भागते ह अनुमें कितना तेज हा सकना है? अारा प्रवतिस कितना जीवन प्रवट हा सकता है?

जावनाचाय समस्त जीवनका विचार करता है। वह जीवन-वार हाता है और यदि तम गच्च धमकी प्राप्ति हा जाय और जसमें सच्ची गार्हित्य गकित प्रवट हा ता वह जीवन वार जीवन-गमाट बन सकता है। जीवनाचाय हानके कारण ता गार्हिमाचाय बन अस अेक लाकातर पुरप हमार वाच विद्यमान ह। ये ह गार्हिमाचाय ठापुर। जीवनाचाय हानस जा धमाचाय बन गये ह अस भा जस अगीका पुरप हमारे बाज ह। और ये ह मन्तरमा गार्धी। अिन दानारा विभूतिया भिन्न ह फिर भी ताकीतर ह।

पारनगाम्त्रकी अभी सपूण रूपमें रचना नहा हूभी है अिग कारण जाज भी नय तम प्रवागाक अि अयकाग है। जावनगाम्त्र कभी भी सपूण नहा हागा अिग अि अगमें प्रवागारी वीरगाक अि अनत काग नय अयकाग बना रटगा। गार्हित्य-परिणत हास भाषारा विनात हा सकता है गार्हित्यता तम विगड रिना जा सकता है परंतु पारनगाम्त्री कला गिमाग नहा रिने जा सकत। धम गरिणा हाग धमका गसरण और परिणरण हा सकता है परंतु जीवना चाय कला अगता नहा हा सकत। अगाजन धम-परिणतारा अयाजन किया हा। अकरन भी अिग लकाग प्रवाग किया हा। अग ता विनेगवा जनता भी गय धम गरिणाका अयजन करती है। किंतु जब जावनाचाय का काम तने हएने और अग गमय जगा परिणतारी प्रवतिसाट रिना ही गय धम-गमरय रिड हा अेक ग गाने मय धम-गमरयवरा रिणग गगा। और अगक बाग गार्हित्य भा सय गड हागर मनन टाकरा गमड बनायगा।

समीक्षा

जिन भौतिक पदार्थोंका हम अचेतन कहते हैं वृत्तका आंतरिक जावन वसा हाता है यह हम नहीं जानते। सुख या दुःखमें सचेतन प्राणियोंके शरीरमें जा परिवर्तन अथवा विकृति होती है वसा ही परिवर्तन अथवा विकृति जड माने जानेवाले पदार्थोंमें भी कुछ अंग तक देखी जाती है। अब यह तो निश्चयके साथ कौन कह सकता है कि वह केवल बाहरी विकृति है या भीतरमें जिन पदार्थोंको सुख दुःखका और भावनाओंका अनुभव हाता है? मनुष्या और पशुपक्षियोंमें मछलियाँ जीव जंतुओं और कीटों मकाडामें सुख दुःख जैसे दिग्वाजी देने हैं वैसे वनस्पतियोंमें नहीं दिखायी देते। किंतु मनु भगवान् जिस आद्य अपिमाने कल्पना की थी कि वक्ष, वनस्पति आदिके भीतर जसी सत्ता — चेतना हाती है जा बाहर व्यक्त नहीं होती। अतः सत्ता भवत्यस्ते। जगदीशचन्द्र बसुके प्रयागवाक्य दारमें जाननेके बाद हमें यह लगे बिना नहीं रहता कि मनु भगवानकी कल्पना बिल्कुल सच्ची है। मनुष्यमें ता सुख दुःखकी भावना और जिष्ट-अनिष्टकी भावना हाती ही है। पशुपक्षियों और कीटों मकाडामें भी वह दिखायी पडती है। वक्ष वनस्पतियों तथा जीवधियोंमें भ्रमके अस्तित्वका अनुमान हाता है। जिसलिये हमारी कल्पना दौडती है कि जड माने जानेवाले पदार्थोंमें भी यह भावना हाती चाहिये। और जिस कारणसे अचेतन न विद्यत जिस वचनके अक्षरशः सत्य होनेका विश्वास वठता है।

विश्वक अल्पतः किये गये पदार्थोंमें जितने जस तक जडता है अतः अंग तक अतः सुखका स्थूल या सूक्ष्म शास्त्र बनाना मभव मालूम हाता है। जा अंग चतय रूप माना जाता है अतः शास्त्र बनानेमें अनेक कठिनातियोंका अनुभव हाता है। फिर भी चतयशास्त्र बनानेके प्रयत्नसे जानका सामा जितनी व्यापक वनी है अतः भौतिक पक्षके अध्ययनसे नहीं वनी है। आज तक भौतिक प्रयोग निश्चयात्मक — गतातीत — पाये गये जिससे यह माना गया कि भौतिक सत्यता ही निराबाध सत्य है भौतिक प्रमाण ही केवमात्र तपितकर प्रमाण है। और जिस कारणसे भौतिक जगतके सिद्धान्तोंको चेतन जगतमें लागू करके गणित अथवा गणितशास्त्रसे यदि भौतिक घटनायें सिद्ध हा पदार्थशास्त्रके सिद्धान्तोंसे

यदि रसायनशास्त्र सिद्ध हो, रसायनशास्त्रके द्वारा यदि वनस्पतिशास्त्रका सुमेल साधा जा सके, वनस्पतिशास्त्र यदि प्राणीशास्त्रका हूक खाजे और प्राणीशास्त्रसे यदि मानसशास्त्र और समाजशास्त्रका निर्माण किया जा सके, तो मनुष्यको लगता है कि हमने ज्ञानको सरल बनाया है, पानके आधारको सुदृढ़ बनाया है। अतः बाद तो अध्यात्मशास्त्रको अलग और स्वतंत्र स्थान देनेकी भी आवश्यकता नहीं रह जायगी। स्थूलसे यदि सूक्ष्म फलित हो जाय तो कोजी परेगानी नहीं रहेगी, जसी मायता सबत्र लिखाही देती है।

वास्तवमें जिससे विरुद्ध दिशामें और अिसीलिअे विशुद्ध दिशामें प्रयत्न होना चाहिये। चतय-तत्त्वका हम भीतरसे अनुभव है अतःका 'यापार हमारे जीवनमें प्रत्यक्ष होता है जिस चतय तत्त्वका अधिक अध्ययन जिसका निरीक्षण और परीक्षण यदि अुत्कटतासे किया जाय तो जिसके बारेमें हमें अदभुत ज्ञानकी प्राप्ति हानी चाहिये।

संभव है कि यह ज्ञान हमें प्रयाग पद्धतिसे नहीं किंतु योग पद्धतिसे प्राप्त हो। विज्ञानके मागकी अपेक्षा ध्यानमाग संभवतः जिसमें अधिक अुपयोगी सिद्ध होता होगा। अतःके बाद जिस बातकी जांच करनी चाहिये कि मनुष्यम जो चतय प्रकट रूपमें है वही निचली कोटियोमें भी सूक्ष्म रूपमें है या नहीं। जिस प्रकार निकटके स्पष्ट और अनुभूत चतयके रूप लक्षण तथा स्वभावके सिद्धान्ताकी रचना करके बादमें अुहें यदि हम प्राणीशास्त्र वनस्पतिशास्त्र रसायनशास्त्र पथा विज्ञान और ज्योतिष तक ले जाय तो हमारे ज्ञानका विस्तार सबथा भिन्न पद्धतिसं होगा और बहू अवलिप्त सीमा तक पहुंचेगा। जिससे ज्ञान-साधनाकी सारी बुनियाद ही बदल जायगी। निरीक्षण परीक्षण और प्रयोगक साधनाको जिस प्रकार हम सूक्ष्मातिसूक्ष्म बताते ह और भौतिक घटनाअके ज्ञानक्षेत्रमें नित-नअी विजय और सफलता प्राप्त करते ह अुसी प्रकार मनुष्यके भीतरक साधनाका — मन बुद्धि अहकार चित्त आदि अत करण रूप साधनाको — यदि हम गुडस गुड बनायें तो ज्ञानका अेक दूसरा और समय पहलू सुलेगा और विकसित हागा। प्राचीन कालमें जिस दिगामें कुछ निश्चित प्रयत्न हुआ थे परंतु आज अुन्हें हम भूल गये ह। अतःके विषयमें आज जो बातें लिखित रूपमें मिलती ह अतःमें से कअी बातें तो संभवतः अत तत्रके विस्मय हो जानेके पश्चात बादके लागोने अनुमान और कल्पनासे लिख डाली हागी। जिसलिअे जिन बातों पर आधार न रखकर जिस क्षेत्रमें हमें मूलसे ही नये प्रयत्न करने हागे।

अतः साधनाकी यह गुडि ही तप है। यह तप ज्ञानयुक्त होना चाहिये जिस आज भुग दिया गया मालूम होता है।

३

प्राचीन कालमें कवि शब्दका अर्थ अलग था, आज अर्थका अर्थ अलग है। आज कविता काय कल्पनाओं दौड़ाना और सूक्ष्म जटिल भावाका सच्चा-गूठा विश्लेषण करके अर्थ रोचक रूपमें व्यक्त करना है। कविका आजका श्रेय है मनुष्यक अनुभवा, अर्थका शकाआ और भया, अर्थका आगाआ और आकाशाआ तथा अर्थका वासनाआ और अिच्छाआको शब्दबद्ध करके या अन्य प्रकारसे व्यक्त करके सबग्राह्य बनाना। जीवनके अिन सब विभागमें जितनी अव्यवस्था, अनवस्था और गैर जिम्मेदारी होती है अतनी सब कविके काव्यामें दिखायी पडती है। कवि शास्त्रगुद्ध विचार करनेके लिये वचन-बद्ध नहीं है कविको जिस समय जो कुछ सत्य अथवा सत्यकल्प दिखायी देता है अर्थसे वह अर्थी रूपमें व्यक्त करता है। जिस दृष्टिसे कविके अर्थगार तत्त्वनामका कच्चा माल है। अनात प्रदेशमें खोज करनेके लिये निकले हुअे कोलबसाको जिस बातका विश्वास नहीं हाता कि कसे खडास अर्थका मिलाप हागा। भारतकी खोजके प्रयासमें अमेरिका अर्थके हाथ आयेगा और अर्थीको भारत भूमि मान लेनेका भ्रम खडा हागा। कवियाने यह स्वीकार नहीं किया है कि दुनियाके जान अनुभव या अर्थके साथ अर्थके अर्थगाराका मेल बैठना चाहिये। वे यह भी नहीं मानते कि अर्थक अिन अिन समयके अर्थगारोंमें और अिन अिन वसिाके अर्थगारोंमें काअी मेल हाता चाहिये। कविक कल्पना विहारमें यदि आकस्मिक सयागसे जीवन-अुपासना आ जाय और अर्थक फलस्वरूप यदि अर्थके अर्थगारोंमें अर्थसूत्रताका हमें दर्शन हो ता कवि अर्थ अवाछनीय नहीं मानता। वह आनन्द और आश्चयमें अर्थका स्वागत करता है। परन्तु यदि अर्थके अर्थगारोंमें काअी मेल न हा ता भी कवि अर्थसे अपना दाय नहीं मानता। "Do I contradict myself? Well, then I contradict myself I contain multitudes" *—जिस प्रकार कहधर कवि वच निकलगा। यदि सारे समाजमें विचारा और सिद्धान्ताकी अराजकता चलता है ता अर्थक कविके मस्तिष्कमें अर्थक चलनेसे आसमान नहीं टूट पडेगा। जिस प्रकार राजाके अर्थक सलाहकार होते हैं राज्यतंत्रमें जिस प्रकार अर्थक पार्टिया हाती ह वपमें जिस प्रकार अर्थक अर्थके होती ह, अर्थी प्रकार मनुष्यमें अर्थके जीवन पर अधिकार करनेवाले अर्थक तत्त्व रहेंगे ही। अिद्वयाका शुकाव, तरह तरहकी वासनाओं कल्पनाओं अनुभव, अर्थुप्त जीवन प्रयाग नआ-पुरानी निच्छाओं और अधविश्वास—सब मिलकर अपने चुनावकी अुम्मीदवारी करनेके लिये अर्थके सामने खडे हागे। अिनमें मेलकी अपक्षा कसे रखी जाय ?

कवियाके काय विहारमें जिम्मेदारीकी अपेक्षा चाहे न रखी जाय, परन्तु पारमार्थिकता (seriousness) की अपक्षा ता पूरी पूरी रखी जाती है। अर्थमें

* अमेरिकन कवि वॉल्ट विटमैन।

कुछ अदृष्ट तत्त्व ता रहेंगे ही। मनुष्य-जाति बयस्क बनी तबसे अमने जीवनकी मीमासा आरम्भ की है। लेकिन आज भी जावनकी गूढ़ता मिटी नहीं है। जस जसे ज्ञान और निश्चलपणका विक्राम हाता जाता है वस वस जीवनकी गूढ़ता क्षितिजकी तरह आगे ही बढ़ती जाता है। अिस कारण तत्त्वज्ञानके अधिकाधिक परिष्कृत होनेक वावजूद जीवनकी ग्राधम मगयामें वह थककर पीछे ही पता रहा है।

अिसलिअे तत्त्वज्ञानीका बार-बार ठहर कर अपने माधनाका अधिक सूधम और अधिन तीदण करना पडता है। और तब जसे प्रामाण्यवादमें जुलझ जाता है असा प्रकार तत्त्वज्ञान सदा मनोविश्चलपणमें अुलझता रहा है। तत्त्वज्ञानीने बुद्धिका तीदण बनानेकी जरूरत ता स्वीकार की परंतु जीवनको गुद बनाने और अुसक द्वारा जीवनका माक्षात्कार करनेका गतिन पानेकी जरूरतका स्वीकार नही किया। धार्मिकनाने अिस कतयका निष्ठासे स्वीकार किया है।

५

कवि और तत्त्वज्ञ दोनाका समन्वय करके धमने ज्ञान-साधनाके लिअे जीवन गुद्वि रूपी जीवन-साधनाकी आवश्यकताका स्वीकार किया। जीवन ही ज्ञानप्राप्ति का अुत्तम साधन है और ज्ञानप्राप्ति हानेके बाद अुमका विनियोग भी जीवनक विकासके लिअे ही हाना चाहिये अितना समय लेनेके बाद धमने कविक दानकी चल्क और तत्त्वज्ञानीक विश्लेषणकी मददसे माक्षात्कारका भाग अपनाया।

अिसमें पहले पहले जीवन गुद्विकी स्पष्ट कल्पना मनुष्यका नहीं आधी। गुद्विके नाम पर जीवनको गूयरूप — तत्त्वरहित — कर डालनेवाले कितने ही पय खडे हा गये। जीवनमें समयकी आवश्यकता है तपकी आवश्यकता है वीयकी आवश्यकता है। अिहें प्राप्त करनेके वजाय कुछ लागाने जीवनको जीवन विमुख बनानेका प्रयत्न किया। हमारे वैरागियाम अिसके कितने ही अुदाहरण मिन्ने ह। जादू कीमिया, जडी-बूटी ज्योतिष और मन्त्र साधना जसी विचित्र प्रवृत्तिया वैरागियामें दिखाधी दती रही हैं। किन्तु अुनके गूयताक आदशक साय अिन प्रवृत्तियाका मरु नहीं बठ सकता। अीश्वरने जिन वक्ष-वनस्पतियास मनुष्यका अलग किया अुहीका जीवन फिरसे स्वीकार करना अीश्वरका पराजित करना है। अिसमें धार्मिकता नहा है तब फिर धम विजय ता ही ही कस सकती है?

धमकी सच्ची प्रवृत्ति यह हागी कि वह मनुष्य-जीवनक ठाटे छाटे प्रवाहाका गहरा बनाये और बादमें अुन्हें अुचित दिगामें मात्र कर अुन्हें बलवान और वेगवान प्रवाहाका रूप दे।

तत्त्वज्ञानमें अनेक बाद अुत्पन्न हाते ह। धम जीवत वस्तु ह अिसलिअे अुसमें अनेक पय और साधनायें स्थापित हा जाती हैं। लेकिन अिसे हम भू नहीं सकते कि जब तब जीत-जागत लोगक हाथमें ये पय और साधना क्रम रहत ह तब तब ये प्रयोगके रूपमें ही रहने ह। लेकिन बादमें जड लाग अिन प्रयागाका

सिद्ध हुए तत्राका रूप दे दते ह और नये या अधिक अनुभवका लाभ बुझाने इगकार करते ह। पथाके बानेसे बाभी नुक्सान नहीं है लेकिन यायबुद्धिके अिन प्रयागाके परिणामका आदान प्रदान करनकी तयारी रखनी चाहिये। बुद्ध भगवानन अकातिर तपस्याके मागवा अनुभव करव बसकी व्ययताकी घोपणा की। उनके प्रयोगाक अिस निष्पपको कुछ लोगाने अतिम माना और कुछ लागान पहलेसे ही बसका विराध किया। भौतिकशास्त्री तटस्य रहकर अपन सिद्धान्त स्थापित करते ह और बुहे छाडते ह बार-बार बुट जाचते ह और मुघारते ह और अपन अनुभवके प्रति ही वे वफादार रहते ह। धममागमें भी असा ही होना चाहिये। किन्तु अिस मागमें व्यक्तिनिष्ठा अयनिष्ठा अथवा वचन निष्ठा मताग्रह दलबदी और पक्षाभिमान वाधक सिद्ध हुअे ह और सत्तावा लोम अिसम घुस जानसे ये सभी भ्रष्ट हुअे ह। धम यदि जीवत न रहें तो वे विपले बनकर सारे जीवनको नष्ट कर दते ह। धम जसी तीव्र प्रभावकारी वस्तुकी विवृति मारक ही सिद्ध हो सकती है।

६

कवि तत्त्वन और धमन तीनोंन देखा कि कुछ ऐसी अमर श्रद्धायें होती ह जो कल्पनासे भिन्न अनुभवसे परे और साधनाके लिअे प्रेरक होती ह। यह कहना कठिन है कि य श्रद्धायें कहासे आती ह कसे मनुष्यको पकडती ह और किस वातमें उनकी शक्ति समापी हुअी है। य श्रद्धायें सब मनुष्याको समान रूपसे नहा पकडती। प्रत्येक युगम अिनका स्वरूप बदलता है, अिनक नये नये अवतार होते ह और जिसीलिअे प्रत्येक युगको अपना वशिष्टप प्राप्त होता है। सभी मनुष्य बुद्धिका प्रयोग करते ह। परन्तु बुद्धिमें ये श्रद्धाय मिली रहती ह अिसलिअे दशनो और पथाकी विविधता अुत्पन हाती है। अहिंसा अिसी प्रकारकी अक स्वयभू श्रद्धा है। गाधीजीने अुते सत्यसे निवालनका प्रयत्न किया है। परन्तु असा करनेके लिअे सत्यके रूपको ही गूड बनाना पडता है। और अतमें हम जहा य वहीके वही रह जाते ह। अहिंसा अक स्वयभू अमर श्रद्धा है और वह जीवनके काय जीवनक तत्त्वपान जीवनकी साधना और जीवनक साक्षात्कार सभीम प्रवेश करती है।

आज हमारे देशमें जो जीवन चर्चा चलती है अुसक पीछे जान-अनजान भी अहिंसाका तत्त्व रहता है जिस वातको हम समझ ल तो ही हमारी चर्चा विगद और फलप्रद बनगी।

७

जीवन चर्चामें अक वातका हमें ध्यान रखना चाहिये। तककी कसौटी पर जो चीज अगुद्ध और अपवित्र सावित हो अुसे हम अपनी अिस चर्चामें जरा भी स्थान नहीं देंगे। परन्तु जिन प्रश्नोके सामन तक स्वय ही धक्कर

हक जाये, वहा तकके दोपकी वजहसे हम प्रश्नाका बुझा नही देते। मनुष्यका जीवन तकबुद्धिके जितना सरल नही है। असह्य विरोधी वस्तुआका समवय करके जीवन स्थिर और प्रवृत्त हुआ है। बुझकी सरल मीमासा करने जायगे, तो अतमें वह व्याज-सहित हमसे बदला लेगा। जिसलिअे तकका पूरा-पूरा लाभ बुझात हुआे भी बुझके निणयाका हम सावधानीके साथ ही स्वीकार कर।

ध्यानमें रखने लायक दूसरी बात यह है कि जीवनकी मीमासामें अनुभवके विरुद्ध कोभी बात नहीं आनी चाहिये। साथ ही बुझमें मानव-जीवनकी अमर धडाआका द्रोह भी नही हाना चाहिये। मरा विश्वास है कि प्राचीन विचारवाने अिम बातकी सावधानी रखी थी। परन्तु बुनका अनुभव अघूरा या, अनुभव पर विचाराका प्रकाश डालनेकी बुनकी शक्ति स्थूल थी और निश्चित किये हुआे निणयाकी पुन जाच करनेकी बुनकी प्रयाग-वृत्ति मद थी, इसीलिअे प्राचीन तत्त्वगान अपने समयक लिअे ठोस और सच्चा हाते हुआे भी आज वह हमारा पर्याप्त दिशादशक नहा बन सकता।

परन्तु आज दुनियामें जितने भी महान धम प्रचलित हैं वे सब अनेक दृष्टियासे जीवनकी मीमासा ही हैं। बुनके पीछे प्रयोग-वीराका गहन अनुभव है इसीलिअे बुनक सिद्धान्त सहज भावसे हमारे आदरके पात्र बनते हैं। बुन पर काजी विचार किया ही नही जा सकता असा मानना पुरानी भूल है। तकक अेक अटकेसे बुहुँ बुझा देना आजकी भूल है। अनेक अघूर सिद्धान्ताका घेरा खडा करनेसे हम गोल-गोल जलूर घूमेंगे लेकिन प्राति जरा भी नही कर सकेंगे।

अघसत्याका ले बुझना — बुहुँ बिना सोचे विचारे ही स्वीकार कर लेना आजके जमानेकी विशेषता है। अघसत्यामें हमगा अधिक जोग हाता है। बुनमें परिणामाक वारेमें गर जिम्मेगारी भी अुतनी ही रहती है। अघसत्य सदा आश्रमण करनेमें विश्वास रखते हैं। बुनका यह स्वभाव सदा दोपरप ही हाना है अंसा नही कहा जा सकता। जा व्यक्ति सारे पहलुआका दख सकता है और हर पहलुकी सुन्दरताकी आर बारी-बारीसे चुक जाता है, बुझमें काय करना जाग और बुत्माह कम रहता है। वह परस्पर विराधी दशीलाका चिन्तन करनेमें लगा रहता है।

चौतरफा विचार करनेक बाद अतमें आचरणकी अेक स्पष्ट दिगा निश्चित हानी ही चाहिये और अपनी सारी शक्ति हमें अुसी दिगामें प्रवाहित करते आना चाहिये। परिस्थितियामें परिवतन न हा तब तक अुसी दिशा और अुसा अुपायका दृढतामे पकडे रहनेकी शक्ति भी हममें हानी चाहिये। यह शक्ति हममें आध्यात्मिक अरित्रके बिना नही आ सकती। पुराना जमाना

जीवन-व्यवस्था

यदि अपरिवर्तनशील माना जाता है तो आजका जमाना परिणामका विचार न्ये बिना स्वभाव है जिसील्लिअे परिवर्तन करने विस्वाम रखननाला हो गया है। नव नव पीतिकर नराणाम यह भावना स्वभाव है धम नहा। परतु आज जनसमुणाय अपन स्वभावक ही वग हानर आचरण करता है। जहा चरित्रकी दढताकी आवश्यकता है जहा पतवार पर मजनुत हाय रखवर नौकाका जव ही निशामें चलाना जरूरी है वहा आज निष्ठाका यह जनाप्रता बहुत मद पढी हुआ निष्ठा देती है। लाग प्रतिज्ञा पालनम दुबल हो गये ह और चचल वस्तुजाम निष्ठा रखनवाले बन गय ह। आज जीवन मीमासा और जीवन चर्चा कितनी ही कयो न चउ परतु विचारपूर्वक कष्ट सहकर जीवनकी साधना करनेवाले लोगाक जुदाहरण बहुत कम मिलते ह।

८

संस्कृति किसे कहा जाय यह अभी तक पूरी तरह स्पष्ट नहीं हुआ है। अक समय जैसा था जब कि नतिक जीवन चरित्रकी दढता जायव ही संस्कृतिका आधार मान जाते थे। आज परिस्थितिया बदल गयी ह। तरह तरहक अनभव करना प्रसगानुसार अथवा बिना कारण परिवर्तन करना धयके साथ परिणामाकी जाच न करना — यह आजका स्वभाव बन गया है। सदा चार और चरित्रके अप्रहृके बिना यदि संस्कृतिका निर्माण किया जा सने तो आज जनावाको यही चाहिये। कीआ "यक्ति चरित्रका सीधा विराध नहीं करता। सदाचारक जादामें आवश्यक गढि और परिवर्तन भी हाता है। परतु आज जनक जगह यह वक्ति दिखायी देती है चरित्रका विवास प्रत्येक मनुष्यका व्यक्तिगत प्रान है जिसक जाधार पर समाजका और राज्य "यनस्थाका विचार किया ही नहा जा सनता।

अिमात्रिअ चरित्रक स्थान पर आज संस्कृतिक लिज भौतिक साधन गवित बौदिक विकासकी सूधमता राज्यतत्रकी स्थिरता बलाकी विगिष्टता आदि अय वाताका जाधार खोजा जाता है। जिसके फलस्वरूप प्रत्येक सामाजिक प्रयोगकी स्थिति वसी ही हो जाती है जसी जवातसे वचनक लिख सारी रात जगलम भटक कर मवरे ठीक जकात-नाकेके सामन ही आकर खडी होनवाली गाडीकी होनी है। और जतमें हमारी गाडा अिस अनुभव पर जाकर रक जाती है कि नतिन प्रगति किये सिवा काजी चारा नहा है। दुनियाका आधनिक अथगास्त्र सनाचारगास्त्रस वचनका मिध्या प्रयत्न करता है दुनियाकी "यावहारिक राजनीति भी नीतिका दभ करक नीति"युय ढगस काम करना चाहती है तथा निशामें नीतिना आग्रह रखनक बारेमें लाग अविकाधिक मागक होन लग ह। अिस प्रकार जीवन माधनाम सनाचारका नीतिका अग अथवा अजुग जितना कम किया जा सन थुतना कम करनेकी वृत्ति आज लोगाम बढ रही है।

९

पुराणामें अेक कथा है । अेक खाये हुअे राजाको ढढनेके लिये जुसकी रानी त्रिखण्डमें घूमी लकिन अतमें यक्कर रानीने राजाकी बाहरी खोज छाड दी । अुसने सोचा कि जो ब्रह्माण्डमें है वह पिण्डमें होना ही चाहिये । अिसलिये रानीने अपने मनको शात, निश्चल और निर्विकार बनाकर अपने भीतर ही राजाकी खोज शुरु की । जितना ब्रह्माण्ड बाहर है अुतना ही मेरे भीतर भी है अिसलिये ध्यानके द्वारा भीतरकी सप्टिमें राजाका पता लगना ही चाहिये — जैसा सोच कर रानीने अपने भीतर राजाकी खोज की और अिसमें अुसे सफलता मिली । पुराण तो असा ही लिखेंगे । आज भी अगर हमारी कोअी चीज खो जाय और हम सारी दुनियामें अुथल पुथल मचानेके बजाय थोडा रुक्कर सोचें कि वह चीज कहा थी, कहा तक हमें अुसका स्मरण है वह कहा रखी हुअी होनी चाहिये तो कम प्रयत्नमें अुसके मिलनेकी अधिक् समावना रहती है ।

अिसी प्रकार किभी विषयमें अधे होकर अनेक प्रयोग करनेके बजाय यदि हम पहले मनमें ही सोचें और अपने असे विचार रखनेवाले लोगाके साथ चर्चा करें, तो जीवनमें समय और शक्तिका कितना ही अप-यय करनेवाले प्रयोगाकी अपेक्षा मनमें — विचार-क्षेत्रमें — ही मनन तथा चर्चाके रूपमें प्रयोग करके हम कीमती निणय पर पहुंच सकते हैं, असा करनेसे हमारी शक्तिका सग्रह भी होता है । जो पना फलदायी चर्चाका शास्त्र जानती है वह अनेक गलतियासे बच जाती है । किसी भी निणय पर आनेके पहले हम जो विचारक समिति नियुक्त करते हैं अुसका यही अुद्देश्य होता है ।

लोक शिक्षणकी दृष्टिसे आम जनताके लिये अिस समितिका निणय जानना जितना जरूरी है, अुससे अधिक् जरूरी और महत्त्वपूर्ण है निणयसे पूव हुअी अनेक विध चर्चाको जानना और अुसके ममको समझना । अिस प्रकार जीवन-चर्चा सामाजिक शक्तिको बचाने और बढानेका अेक साधन है । जैसी चर्चामें सब-समत और अेक लक्ष्यवाले निणय पर पहुंचनेकी आशा गायद ही रखी जायगी । परन्तु अितना तो निश्चित है कि अुससे समाजकी विचार शक्ति और आचार-दृष्टि अधिक् शुद्ध होगी ।

१०

प्राचीन कालमें समाज-तत्र अेकसी गतिसे चला करता था । अुसके कुछ बाह्य नियमामें सामांय परिवतन भले ही हो जाय परन्तु अिन प्रश्नाकी गहराअीमें कोअी नही अुतरता था कि समाजकी बुनियाद कसी है और समाज किन तत्त्वाके आधार पर चलता है । और यदि कोअी अुतरता भी था तो समाज रचनाकी कोअी कायमय पौराणिक अुपपत्ति दवर ही सतोप मान लेता था । अुस समय लोगोमें कुछ अिस प्रकारकी बत्ति थी कि समाज कोअी अगम्य गूढ वस्तु है,

वह स्वयगतिक है, हमें समाजका स्पर्श करनेसे डरना चाहिये। आज जिस अगम्यताको तोड़नेके प्रयत्न चल रहे हैं। कोअी वस्तु गूढ है—अगम्य है—जिसलिअे वह पवित्र है, जिस प्रकारकी मनोवृत्तिका जाज कोअी बरदास्त नहीं कर सकता। आज यह मनोवृत्ति दिनादिन बढ रही है कि समाजजीवनकी जडें हम सोचते थे अतनी गूढ और दुर्वोध ह ही नहीं। गायका जवडा बडा हागा तो वह अधिक घास खायेगी, अुसकी नाक चौडी होगी तो वह अधिक स्वास लेगी, अुसके थन बडे होंगे तो वह अधिक दूध देगी। वस, जितनी बातो परस अच्छी गायके लक्षण निश्चित कर लीजिये, जिससे अधिक जिसमें कोअी गूढ बात है ही नहीं—यह कहनेकी ओर आजके गोपालनशास्त्रकी वृत्ति रहती है। गुणभेदका विस्तेपण करते करते वह परिमाण भेद पर आ पहुचता है, जिसलिअे जिसमें रहस्य जसी कोअी बात है ही नहीं, असा सिद्ध किया जा सकता है। यह आजकी मायता है।

गूढवाद आज जितना कम हो सके अतना ही अच्छा है। अनान और आलस्यस गूढभावको जम देना मनुष्यके लिअे शोभाकी बात नहीं है। प्रत्येक वस्तु अभीमास्य है—असा वह देनेमें थडा नहीं परतु जडता है यह हमें समझना चाहिये। जिसके साथ हमें यह भी जानना चाहिये कि किसी वस्तुकी अुतावलीम की गअी मीमासा महत्त्वपूण तत्त्वाको भुला देती है और अतम घट्टुटी प्रभात माय से सवेरा होने पर मूल कठिनाअीका जकात-नाका तो हमारे सामने खडा ही रहता है।

११

और अतमें विविध प्रकारकी जीवन चर्चा करनेका फल क्या है? हमें सारे जीवन और जेक पूरी सदी तक वाग्वर्धिनी सभा नहीं चलानी है। पीडी दो पीडी तक भरपेट चचा करनेके बाद मनुष्य जीवनको अेक विशिष्ट दिशा मिलनी ही चाहिये।

भेरी कल्पनाके अनुसार ठेठ प्राचीन कालमें लोग कवल स्फूर्तिसे ही विचार करते थे। जेकाथ भय विचार मनम स्फुरित हुआ कि अुससे मोहित होकर वे अपना समस्त जीवन अुसी विचारको अपण कर देते थे। अुस जमानेके लोग अलौकिक प्रयोग वीर थे। अुसके पश्चात् तक्बुद्धिका विकास होने पर चर्चाका युग आरभ हुआ। मनुष्य-जाति प्रौढ बनी। म मानता हू कि ६०० अीस्वी पूवके आसपासके १००-२०० वर्ष मनुष्य जातिके प्रौढ बननेका काल बताते ह। अुस कालमें ससारके सभी देशमें चर्चामें चलती थी भव्य सवादाका आयोजन किया जाता था और सिरकी बाजी लगाकर वाद विवाद होता था। जरतुस्त मुकरात, याज कल्क्य बुद्ध भगवान महावीर—ये सभी समकालीन थे असा तो कोअी नहा कहेगा किन्तु ये सब मानव-बुद्धिकी प्रथम प्रगल्भताक प्रतिनिधि अवश्य थे।

असके बाद जीवनने जो नया मोड़ लिया, उसमें भक्ति-मन्त्रदायका अधिक विकास हुआ सामाजिक सस्थाओंकी स्थायी रचना हुआ, विविध कलाओं तथा विद्याओंका अद्वय हुआ और मध्ययुगका वभव प्रकट हुआ ।

अब मानव-जाति अेक महान परिवर्तनके समीप आ पहुँची है । जिस मौसमकी फसल कसी होगी, जिस प्रश्नका उत्तर हमारे जीवनकी अुत्कृष्टता और पारमार्थिकता पर आधार रखता है । जमानमें खूब अच्छा कस हो, पानी अुचित मात्रामें हा और हवा-वरसात अनुकूल हो ता खेतकी फसल सुन्दर आनी ही चाहिये । परन्तु यदि काओ जमीन जोतनेका पुरुषाय ही न करे, और जोते ता भी अुममें अच्छे बीज न बोये तो दोष मौसमका नहीं माना जायगा ।

अब मानव-जीवन महान परिवर्तनके बिन्दु पर खड़ा है । जिसमें जा सकल्प बाये जायगे, जो प्रयोग आजमाये जायगे और जिन प्रेरणाओं पर अमल किया जायगा वे अेक भव्य, व्यापक और तेजस्वी सस्कृतिका रूप ग्रहण करेंगे । परन्तु जिसके लिये श्रद्धाको ही अपना धन समझनेवाले प्रयोग-वीरोंकी आवश्यक्ता है । यदि मनुष्य क्षुद्र वासनाओं और तुच्छ आदर्शोंके वग हो जाय, यदि मनुष्य अुत्तुग महत्वाकांक्षाओंके लिये शास्त्रीय निष्ठा तथा फकीरोंकी लापरवाहीसे अपना जीवन 'योछावर करनेके लिये तयार न हो तो यह मौसम बेकार जायगा । प्रतिदिनके सुख, प्रतिदिनकी मुरझितता और पामर विलासितामें ही यदि मनुष्य सतोप माने तो जमानेकी असाधारण परिस्थितियोंके कारण ही उसके जीवनमें विकृति आ जाती है और जीवन सड जाता है । परन्तु यदि मनुष्य महासागरके भयानक तूफानमें भी कूद पडनेकी हिम्मत करे यदि वह प्राणाकी बाजी लगानेको तैयार हो जाय तो निश्चित रूपसे वह जैसी महान सस्कृति तथा अलौकिक प्रगतिका स्वामी बन जायगा जिसकी आज तक कभी कल्पना नहीं की गयी थी । पारमार्थिक चर्चाके अंतमें बायवत्तर—अधिक शक्तिशाली—जीवनका विकास होना चाहिये । उस जीवनसे जो नया मानव जन्म लेगा वह मनुष्य-जातिको सबधा नयी दिशा प्रदान करेगा । हम जिन महान सक्त्पासे परिचित वनें अुनका आह्वान करें, अुनकी दीक्षा लें और अुनके रगमें रग जाय ।

१२

हमें अपात बिन्दु अुज्ज्वल भविष्यमें छलांग मारनी है ।

महाभारत

अुपनिषद-कालके गुरु शिष्य-सवादा तथा सरल जीवन-पद्धतिके बाद हमें मध्यदेशक और अिद्रप्रस्थके महाराज्याका दशन होता है।

हस्तिनापुरके राजा शातनुको बुढापेमें दूसरी बार विवाह करनेका मोह हुआ और वह भी अेक धीवरकी पुत्रीके साथ। और यहीसे महाभारतकी दुद शाका आरभ हुआ। पिताकी अिस अिच्छाको पूरी करनेके लिये भीष्मने आ जीवन ब्रह्मचारी रहनेकी प्रतिज्ञा की और राजपदका त्याग करके यथाशक्ति राजसेवा करनेका व्रत लिया। शातनुके बादके राजा अच्छे नहीं निकले। विचित्रवीर्य बहुत छोटी अुमरमें मर गया। धृतराष्ट्र जन्मसे अघा था और पाडु पाडुरोगसे मर गया। अुसके बाद राजगद्दीके लिये धृतराष्ट्रके पुत्रा और पाडुके पुत्रोमे क्षगडा गुरु हुआ। दुर्योधनने अनेक प्रकारसे कपट-जाल रचा और पाडव हर बार अुस जालमें फसे। विदुर और श्रीकृष्ण पाडवोके सहायक थे, अिसलिये हर बार पाडव जैसे-तैसे दुर्योधनके जालसे बाहर निकल जाते थे। अतमें युधिष्ठिर दुर्योधनके साथ जुआ खेलनेको तयार हुआ और अुसमें हारा। पाच भाअियाकी पत्नी द्रौपदीके भी युधिष्ठिरने दाव पर लगा कर खो दिया। अतमें यह शात तय हुआ कि पाडव बारह वषका वनवास और अेक वषका अज्ञात वास पूरा करें, तो अुनका राज्य अुन्हें लौटा दिया जाय। बारह वष तो आसा नीसे कट गये। तेरहवें वषमें पाडव विराट नगरीमें गुप्त रूपमें रहे। अज्ञातवासका वष मुश्किलसे पूरा हुआ होगा कि अितनेमें पाडवोकी क्षान्धमके अनुसार गायाका रक्षण करनेके लिये प्रकट होना पडा। अिससे यह विवाद अुठा कि अज्ञातवासका अेक वष पूरा हुआ या नहीं। चद्रकी गतिके अनुसार वष गिना जाय अयवा सूपकी गतिके अनुसार अिसकी चर्चा चली और अतमें रणकी शरण लेनेका निणय हुआ। अिस भारतीय युद्धमें भारतके लगभग सभी राजा शामिल हुये थे। दोनो पक्षाकी कुल अठारह अक्षौहिणी चतुरग सेना कुक्षेत्र पर अेकत्रित हुआ। अठारह दिन तक यह युद्ध चला और युद्धके अतमें दोनो पक्षाके कुल अठारह मनुष्य बचे। पाडवाकी विजय तो हुआ, परंतु युधिष्ठिरको हाय मल कर कहना पडा कि यह जय तो पराजयसे भी बुरी है। अघमकी सडाध खूब फली हुआ थी। धम-सबधी बाद विवाद करनमें प्रत्येक व्यक्ति प्रवीण था। महाभारतके युद्धमें बचे हुअे काठियावाडक साल्व अुमत्त वनकर परस्पर लडने लगे। अतमें वहां भी भयकर गृहयुद्ध हुआ और संहार-काय पूरा हुआ। अुसके

बाद परीक्षितका राज्य आरम्भ हुआ। तक्षक नामके नाग राजाने आक्रमण करके अुसका वध किया। अजुनने खाडव वनको जलाकर नागकुलका जो नाग किया था अुसीका यह बदला था। परीक्षितके बाद जमेजयने नाग लोगसे बदला लेनेके लिये अेक सत्र आरम्भ किया। हिंसा और प्रतिहिंसा जोरासे चली। परन्तु नागकायाके अुदरसे अुत्पन्न हुअे आस्तिक नामक अेक ब्राह्मणकी मध्यस्थतासे यह विग्रह शांत हुआ और विग्रहसे अुबी हुअी भारतभूमिको अतमें शांति मिली। अुसके बाद क्या हुआ, अिसका निश्चित अितिहास नहीं मिलता। परन्तु बैरसे बर शांत नहीं होता, क्षमासे ही बर शांत होता है—अितना पाठ भारतभूमिने भारतीय युद्ध, यादवाके गहयुद्ध और जमेजयके सप्तसत्रसे सीखा, अैसा कहें तो गलत नहीं होगा।

अिस भारतीय युद्धके समकालीन कृष्ण-द्वैपायनने (अिन्हीको वेदव्यास कहा जाता है) अुस युद्धका तथा अुस समयका संपूर्ण वणन जय अथवा महाभारत नामक अेक विंगाल ग्रथमें लिख रखा है। महाभारत ससारके बडेसे बडे ग्रथाम स अेक है। व्यासने अिस रूपमें यह ग्रथ लिखा होगा अुसी रूपमें तो आज वह हमारे पास नहीं है। अिस महान राष्ट्रीय ग्रथके अनेक बार राष्ट्रीय सस्करण हुअे ह।

रामायणमें भारतवपका आदर्श चित्रित किया गया है जब कि महाभारतम अनेक अच्छी और बुरी वासनाअसे पीडित महान जन-समुदायका यथाथ चित्र प्रस्तुत किया गया है। भारतके असह्य पहाडासे हिमालय अपनी अुत्तुगताक कारण अलग पडता है अुसी प्रकार महाभारतमें दो नरवीर श्रीकृष्ण और भीष्म सबसे अलग पडते हैं। दोना ही घटना-जालके सूत्रधार होते हुअे भी परिणामके बारेमें कोअी परवाह नहीं करते। भीष्माचार्य विरोधी पक्षके सूत्रधार ह, फिर भी श्रीकृष्णके परम भक्त ह। वे अत्यन्त स्वायत्यागी, प्रतिज्ञा निष्ठ ब्रह्मचारी और तपस्वी ह। फिर भी निष्ठावद्ध होनेके कारण यह जानते हुअे भी कि अुनका पक्ष असतका पक्ष है व अुमे छोड नहीं पाते। 'अयस्य पुरुषो दास' जसा दीन वचन कहकर अुन्हें अपने आचरणका समथन करना पडता है जब कि श्रीकृष्ण जसी कोअी जिम्मेदारी स्वीकार ही नहीं करते। वे सारे परिणामाको पहलेस ही जानत ह। भीष्म यदि अथके दाम ह, तो श्रीकृष्ण प्रेमभक्तिके दास ह। भीष्मकी क्तव्य निष्ठा अलौकिक है, श्रीकृष्णकी अनासक्ति देवी है। भीष्माचार्यने निष्काम काम किया और फलकी सारी व्यवस्था आइवर भावसे श्रीकृष्णने की।

रामायणकी सीता और महाभारतकी द्रौपदी अपने रूपकी तरह स्वभावमें भी विरोधी हैं फिर भी दोना अपने अपने ढंगसे आदर्श नारिया हैं। सीताका सर्वापण आदर्श है जब कि द्रौपदीकी तेजस्विता अनुवरणीय है। यही कारण है

महाभारतका आस्वाद

महाभारतको ज्वा ज्वा हम अधिक पढ़ते हैं तब तब जगह प्रति हमारा आनंद बढ़ता ही जाता है। प्रतिदिन रमावतु जैसा महाभारतकी प्रमाणता सामान्य मान्यता है। महाभारत कि प्रमाणकारी अथ विद्वान् प्रोभा दनवाण ही तो यह है आयमन्त्र । समाप्त मणि कीन्तु मन्त्र है तो महाभारत मय गभीर है। महाभारतका अन्तर्गत महाभारतमें अन्तर्गत मनुष्य स्वभावकी प्राप्ति है।

महाभारतराजों पण्डित विद्वानों अथ मनुष्य सक्ति-निभयता अन्तर्गत मन्त्र विद्वान् धृतराष्ट्रका सादृश और गुणर विद्वान् प्रस्तुत करामें विद्या है। यह अथ राजा कुछ भी नहीं करता। यह सबकी बात मन्त्र गुणा ही रहता है फिर भी आत्मता अथ तब हम अन्तर्गत नजरब सामान्य दूर नहीं रण मन्त्र। मन्त्र पर दक्षकी मन्त्रावा वणन करनेवाला मन्त्र राजा दक्षकी साक्षात् मन्त्र है। मन्त्र-कुछ तात्ते-युद्धते हृष्टे भी जैसा दक्ष अथ है मन्त्रे धृतराष्ट्र भी मन्त्र है। भीष्म विदुर और राजमन्त्रे समान सत्ताह्वार अन्तर्गत आमपण रहते थे सामान्य जैसी पण्डिता नारी भी अन्तर्गत गुण वंशती-मन्त्रवास्ती थी यह यह बात भी जाता था कि धीरुण्य प्रत्यक्ष परमात्मा हैं फिर भी अन्तर्गत अथन कुछ नहीं देता कुछ नहीं समझता।

दोषमपीमन्त्र हेमन्त्र जैसा यह धीण-सकल धृतराष्ट्र हमारे हाथ कुछ नहीं हागा अपने आप जो होना ही हुआ करे की वृत्ति रखकर जीता है।

चेतनाधारी होते हुए भी 'जडवल्लोक आचरेत' सूत्रका घतराष्ट्रने विकृत वृत्तिसे पालन किया है। सारा दोष दुर्योधन पर थोपनेके लिये तयार रहते हुए भी घतराष्ट्रका अधिकसे अधिक समयन दुर्योधनको ही मिलता है। मौका आने पर वह विदुरको दूर हटा देता था लेकिन दुर्योधन पर अकुश नहीं रखता था। जैसे जैसे शकुनि जुझेमें जीतता गया वैसे वैसे जिस बूढ़के हृदयकी कली खिलती गयी। कौन जीता? क्या जीता? दाव पर क्या रखा गया था? जैसे प्रद्वन वह बड़ी आतुरतासे पूछता रहता था। इसीसे उसके मूल स्वभावकी पहचान हमें हो जाती है। भारतीय मुद्देके अतमें जिस कौरव राजाने लौह-भीमको भुजाआमें दबाकर उसका जो घूरा कर डाला उसमें भी हमें घतराष्ट्रके इसी स्वभावके अत तक बने रहनेका प्रमाण मिलता है। घतराष्ट्र असमय तथा कूट मनोवृत्तिका अत्यन्त समर्थ चित्र है।

प्रत्येक नाटकमें और कथामें नायकके साथ उपनायक हात हैं। साहित्य शास्त्रने अिनके स्वभावको चित्रित करनेकी मर्यादायें बतायी हैं। परन्तु कभी कभी कथानकामें नायकके सिवा अेक दूसरा मगल-मूर्ति पात्र होता है। विक्टर ह्यूगोके 'ला मिज़रेबल्स' का बिशप ऑफ़ डी अेक असा ही पात्र है। 'ला मिज़रेबल्स' के लम्बे और विपुल कथानकमें बिशप ऑफ़ डीका बहुत कम संवध आता है। परन्तु उसकी मगलमयी छाया ठेठ अत तक कथानक पर छायी रहती है। जिस कथानकका कोयी भी पात्र विनापस अूचा नहीं अुठ सका है।

रवीद्रनाथ ठाकुरके 'घरे बाहिरे' का नायक निखिल और उपनायक सदीप है। परन्तु मगल मूर्ति तो निखिलका अध्यापक—'नत नयने जनिमेये' उसकी चिन्ता रखनेवाला चन्द्रोखर है।

महाभारतकी तीन मगल मूर्तियां ह भीष्म वृष्ण और व्यास। जिस त्रिमूर्तिमें भी प्रधान स्थान भीष्मका है। वृष्णकी विभूति अतमें दिव्य होनेके कारण भव्य नहीं कही जा सकती। व्यास किसी वानप्रस्थके समान दूर ही दूर रहते हैं। समस्त महाभारत पर अपनी मगल छाया फलानेवाला तो घमात्मा भीष्म ही हैं। व सागरके समान गभीर, हिमालयके समान प्रचंड और अतत आकाशके समान गात और निमल ह।

भीष्म वृष्णके अुत्तम भवतोंमें से अेक ह।

प्रह्लाद-भारद-भरागर-मुण्डरीक-

व्यासाम्बरीप गुव-शौनक भीष्म-दाल्म्यान् ।

स्वभागादाजुन-वसिष्ठ विभीषणादीन्,

पुण्यान् अिमान् परमभागवतान् स्मरामि ॥

जिस प्रकार प्रतिदिन प्रात काल अुठकर हम जिन परम भागवताका स्मरण करते हैं उनमें भी भीष्मका स्थान अनुपम है। दूसरे भागवत भगवानके अधीन

रहकर अनुकी प्रेरणाके अनुरूप व्यवहार करते ह। किंतु भीष्मके भाग्यम अपने परम प्रभुका अखंड विरोध करना ही लिखा था, और फिर भी अनुकी विराध भक्ति नहीं थी।

भीष्म जीर कृष्णका राष्ट्र पुरुषाके रूपमें विचार करने पर भी दोनाक स्वभावका बहुत बड़ा भेद हमारे सामने स्पष्ट हो जाता है। दोना धमनिष्ठ, धम परायण जीर धमकार ह, परंतु दोनाका जीवन-दान सबया भिन्न है। भीष्मका जीवन-तत्त्व बहुत अशमें प्रभु रामके जीवन-तत्त्व जसा है। दाना मर्यादा-पुस्तोत्तम ह, दोना स्वयको धम-परतन समझनेवाले ह और दोना धम पालनके लिअे कोअी भी त्याग शात वृत्तिसे करनेवाले ह। दूसरी ओर कृष्ण जैसे प्रतिष्ठा भजक ह वसे ही मर्यादा भजक भी ह। धममागम प्रत्येक नियमका अपवाद कसे हो सकता है यह बतानेके लिअे ही मानो कृष्णने अवतार धारण किया था। बकिमचद्रने श्रीकृष्णका जेव जीवन चरित्र लिखा है। वास्तवम वह जीवन चरित्र नहीं है परन्तु श्रीकृष्ण पर लगाये जानेवाले आक्षपाका अक बड़ा खडन ही है। "याय निपुण लोग अपनी सपूण बुद्धिका अुपयोग करके बचाव न करें तो श्रीकृष्णके अक भी कायका औचिरय हमारे ध्यानमें न आये। गाधीजीने जिस प्रकार गायके बछडेको मार कर अहिंसा धमका पालन किया वसा ही कुछ हर समय श्रीकृष्णने धमका पालन किया होगा — जिस तरहका भास हमें होता है। श्रीकृष्णने इसी बातका अभ्यास किया होगा कि धमक सिद्धाताक मूल तक पहुंच कर अनुके तत्वाथका पालन करनेके लिअे गदायका विराध कसे किया जाय।

देवदत्तने (भीष्माचार्यन) भरी जवानीमें अेक भीष्म प्रतिना करके राय और स्त्रीका त्याग किया। जिस जेक प्रतिनाके पालनके लिअे अुहाने चारा तरफसे अपनी हानि होने दी। प्रतिना पालनका प्रयोजन न रह जाने पर भी अुहाने वह प्रतिना कभी न छोडी। जीर अनुका भाग्य भी कसा विचित्र था ! अुहाने राज्यका स्वीकार नहीं किया, फिर भी राज्यका सारा भार तो अुह ही अुठाना पडा। अक माता पिताकी सत्तानाक चगडेको टालनेके लिअे अुहाने विवाह नहीं किया परंतु अुन्हें कितने ही नियोग जीर मितने ही विवाह कराने पडे। अधिक क्या कहा जाय ? स्वयंवरामें भाग लेकर नौजवान कन्याआको भी वे जीत लाये ! जीर भाअी भाअीके जिस चगडेको टालनेके लिअे अुहाने अखंड ब्रह्मचय स्वीकार किया अुसी शगडेके कारण अुन्हें अपनी जिच्छाके विरुद्ध असत्य पक्षके लिअे लडकर और लाखा मनुष्याका सहार देखकर अपने प्राण त्यागने पडे ! भीष्म प्रतिना ससारके लिअे अेक आदग बन गअी है। भीष्मका ब्रह्मचय भी अुतना ही अलौकिक था। जिस ब्रह्मचयके वन्से वे परम पानी परम समय और परम धमन ही नहीं, अिच्छा मरणी भी बन गये थे। परन्तु

भीष्मकी जिस प्रतिज्ञासे कौरव कुल अथवा आय-संस्कृतिको क्या लाभ हुआ ? और कुछ नही तो मैं सत्यके लिये लड़ रहा हूँ अतना सतोप तो भीष्मको मिलना ही चाहिये था। राज्य पर अपने अधिकारका छोड़कर वे राजाके सबर बने। अपनी सारी वफादारी अन्हाने राजगद्दीके लिये अर्पण कर दी। जा खाता हूँ वह राजगद्दीका अन्न है, राजगद्दीकी जो भी आना हा असे गिरोघाय मानना चाहिय जिस प्रकारकी वधानिर वृत्ति अन्हाने धारण की। भीष्मके जसा तत्रवादी (constitutionalist) गायद ही दूसरा कोअी हो सकता है। किंतु तत्रको ही देवता मानकर आचरण करनेसे अन्हाने राष्ट्र-हितका सबनाग कर दिया।

दूमरी ओर श्रीकृष्णने हर मौके पर विद्रोही वृत्ति ही धारण की। जिस समय अुनकी सबज्ञता और धमवृत्ति जिस माग या बदमको अुचित ठहराती, अुसीका नि शक भावस अनुसरण करना श्रीकृष्णका माग था। जिसी मागसे पाडवाका रक्षा हुजी। यह सच है कि विजय पाडवाका मिली परंतु वह विजय अितिहासके पिहसकी विजय जैसी थी। अतमें धमराजको छलछलाअी आखामे कहना पडा

जयोऽयमजयाकारा भगवन् ! प्रतिभाति मे ।

राष्ट्रके क्षात्रकुलका हास हुआ। अजुनका भय सच्चा सिद्ध हुआ। साय जस रानपुत्र नाचनेवाले छाकराका काम करने लगे और अपि-मुनियाकी हसी अुडाने लगे। कश्यप जसे वैद्य विगारद ब्राह्मण भी तक्षककी रिदवत खाकर राज संवाका छाड लोट गये। असी अघाघुधी सबर फल गअी। स्वय श्रीकृष्णके धर मुरामत्त मादवाका कलह जागा और अुसीके फलस्वरूप दूसरा महान कुलक्षय हुआ। जिसमें कोअी शका नही कि श्रीकृष्णने धमकी स्यापना की, क्योकि अुन्हाने अजुन-गीता अुद्धव-गीता और अनुगीता जस सर्वोच्च धर्मोपदंग जगतको दिये। परंतु अुनक अपने युगमें अथवा अुसके बादके अेक हजार वर्षोंमें कृष्ण धमके प्रचारका अथवा अुससे होनेवाली मानव-समाजकी अुन्नति और समदिका नाम निगान भी दिख्वाअी नही देता। यही कहना चाहिये कि राजसूय यज्ञ करके धमराजने राजकुलका सबनाग किया। परंतु भीष्म या कृष्णके मागकी परीक्षा तात्कालिक परिणामाकी दृष्टिसे करना गलत है। श्रीकृष्णकी मृत्युके पश्चान यदि अथा घतराष्ट्र जीवित होता तो वह अवश्य कहता कि सचमुच 'का' ही बलवान है अुसकी अिच्छाको अयया करनेके लिये कोअी समय नही।'

युधिष्ठिर गीताधमके अनुसार यथाचित आचरण रखकर नम्रतापूर्वक अपना कतय करनेवाला और मानवके लिये जिनना सतोप पाना संभव है अुतना सतोप प्राप्त करनेवाला अेक सपूण राष्ट्र-पुरुष है। धम अय काम और मोक्षके चतुर्वगका अुममें माग्य समवय हो गया था। अैहिक विजय अहिक

सुख और अद्विक्त बन्धव—ये सब बाहरसे आकषक और भीतरसे निस्तार अित्रायनके फल जैसे हैं यह समझ कर ही अुसने व्यवहार किया था। 'धर्मो रक्षति रक्षित' यह सुधिष्ठिरका प्रतिज्ञा वाक्य था। धर्ममाग पर सुधिष्ठिरकी जितनी श्रद्धा थी अुतनी किसी दूसरेकी मालूम नहीं होती। धर्ममाग हमें जहाँ भी ल जाय वही नि गक होकर हम जाना चाहिये और धर्मके हाथम हम किसी भी समय सुरक्षित हैं यह श्रद्धा हमेशा रखनी चाहिये—जिस वक्तिक फलस्वरूप धर्मराजका जीवन सब दृष्टियासे सफल रहा है।

कण धर्मराजका बड़ा भाजी था। बेचारेको जन्मसे ही आय और गुन सस्कार प्राप्त नहीं हुए थे। कण निष्ठांम दृढ हृदयका अुदार, रणमें गुर और आदश दानी था। परंतु हीनताकी ग्रथि (inferiorty complex) अुसकी रण रणमें बघ गयी थी। कुछ बातें दुर्योधनकी समझमें नहा आती थी परंतु कण अुन्हें समझता था। अुन बातोको भी दुर्योधनके समक्ष कणने साफ शदाम नहीं रखा। मित्रनिष्ठाका अर्थ यह तो नहीं है कि मनुष्य मित्रका अनुयायी बन जाय अुसकी धुनके अनुसार चले। रणने निष्ठाका बफादारीका अनिरेक करक दुर्योधनकी सारी हीन वक्तियाका प्रात्साहन ही दिया। यही कारण है कि कणक समान अनय मित्रकी निष्ठाके प्रति प्रतिनिष्ठा दिखानेके लिये दुर्योधनको अपने अधम मागमें अधिकाधिक दृढ हाना पडा।

कणका बडेसे बड़ा दाप अुसका अभिमान, अुसका अहप्रेम था। वह किनीको कुछ समझता ही नहीं था। प्रत्यक्ष भारतीय युद्धके पहले अनक बार पराजित हाकर कण और दुर्योधनको अपने पद और विराधी पक्षके बलाबन्का अनुभव ही चुका था परंतु जिस अनुभवकी सतन अुपेक्षा करनेमें ही कणने बहादुरा मानी हागा। पाच पाडवाने मिलकर जो दिग्विजय की थी बसी कणने अकल ही करके दुर्योधनस बणव याग कराया था और असा करके गायोके हरणके लिये की गयी घाययात्रासे आत्म विन्वास लो बठनेवाल दुर्योधनको जोग चढाया था। परंतुरामम कणने अस्त्र प्राप्त किय अयवा अिद्रको अपने कुडल दे दिये यह बहुत बड़ा बात थी। किंतु अिसस भी अधिक मूल्य अुसकी दिग्विजयना था। परंतु महाभारतरारने अिस दिग्विजयको बहुत महत्त्व नहा दिया। गायद पाडवाकी दिग्विजयक बान कण गया था अिसलिये अुसे यह विजय आसानीसे मिल गयी ही। दिनकी बात सुननेमें धृतराष्ट्र दुर्योधन और कण तीनाके माग तीन अलग प्रकारके थे। धृतराष्ट्रसे जा बात वही जाती वह तुरत अुसके गले अुत्तर आती थी परंतु अुस पर आचरण वह जरा भी नहीं कर पाता था। पाडवगीतामें दुर्योधनक मुहसे जो श्लोक कहलाया गया है वह सचमुच धृतराष्ट्रके स्वभावका खोतक है

जानामि धम न च मे प्रवृत्ति ।

जानाम्यधम न च म निवृत्ति ॥

कनापि देवन हृदि स्थितेन ।

यया नियुक्तोऽग्निमि तथा करामि ॥

धृतराष्ट्रकी दृष्टिमें देव और दैवमें जा अेक मात्राका पक् है वह भी नहीं रह गया था ।

दुर्योधन पलाभिमानी, स्वार्थी और दीघद्वेषी था, जिसलिअे अुममें अतमुखता जसा कुछ नहीं था । वह बार-बार आवेगमें आ जाता था बार-बार अपने कथनका समचन करना था बोध देनेवाले व्यक्तिके हतु पर ही शका करता था और अपने निचय पर दृढ रहकर सबको अपने साथ पकडे रखता था । फिर भी अेक बात अुसमें अैसी थी, जा अुस हमारे आदरका पात्र बनाती है — वह भीतर और बाहर समान था । वह अपनी मनावृत्तिके साथ अीमानदार रहता था । कणक विषयमें असा कहना कठिन है । कुछ बातें कण अच्छी तरह समच लेना था । परन्तु वफादारीसे आचरण करनेके आग्रहका मानकर वह दुर्योधनकी बातका ही ग्रहण करता था और फिर हृदयपूर्वक अुमीका धारण करक अुससे चिपटा रहना था । कणके असे स्वभावके कारण अुस महापुरुषकी प्रथम पक्तिमें रखना कठिन है । भीष्म विलकुल नम्र बनकर अपना मत प्रकट करत थे अुनका यह मत धमनान और परिस्थितियाके सपूण नानके अनुरूप हाता था । यह मत निभदेह दुर्योधनके विरुद्ध जाता था, परन्तु युद्धक समय भीष्म सपूण निष्ठास लडते थे । भीष्मक समान महापुरुषकी नी यह कतव्य निष्ठा और राजनिष्ठा कण जसे हलके दरजेक आदमीकी समचमें कस आती ? अुस तो केवल अुसी अेकनिष्ठाका मान था, जिमकी धुन राजाके अनुयायियामें हाती है । जिस कारणसे अुमने भीष्माचार्यक साथ हमंगा अयाय क्रिया और दुर्योधनका मन अुनक बारेमें अयन्त कल्पित कर दिया । भीष्म दिल खालकर लडत नहीं अुनके मनमें पाडवाक प्रति पशपात है जिसलिअे वे सपूण शक्ति लगाकर युद्धमें अुसते नहा — अैसा दुर्योधनका जा लगा करता था अुसका कारण कण हा था । अपने दस लिनक युद्धक अतमें भीष्म पितामहका दुर्योधनके मुखस जा ममभेदी वचन सुनने और सहने पडे तथा जिनके कारण जिस बीर पुरुषकी आखामें आंगू आ गये थे अुनक मूलमें भी कण ही था । स्व-पर-वलका यथाय अनुमान न हाता और गुस्ससे जलकर लुठ जाना यदि युद्धकलाकी दष्टिसे महादाप हा, तो भीष्माचार्यने कणका जा अध रथी कहा वह सबथा अुचित ही था ।

किसी योद्धाका रथी हाता केवल गीय पर आधार नहा रखता । यह सच है कि युद्धे अपलायनम् प्रत्येक क्षनियका धम हाता चाहिये, परन्तु कुशल योद्धाका अवसरक अनुसार काम करना पडता है और भविष्यकी नीतिका मामने रखकर युद्धमें पीठ भी दिखानी पडती है । धमराजने कडी बार पीठ दिखाजी थी । दुर्योधनने भी पीठ दिखाजी थी । तब यदि कण दिखाये ता आश्चयकी बात

नहीं। परन्तु निष्प्रभ होकर हतबल हाकर पीठ दिखाना अंक बात है, और शत्रुके बलका आजमा कर जिस समय हम शत्रुके सामने टिक नहीं सकेंगे जसा अनुमान लगाकर मौकका टाल देना दूसरी बात है। यह भेद जा नहीं समझता और आधा पर पट्टी बाधकर अघा बनकर मृत्युको स्वीकार करता है उसे विरक्त कहा जा सकता है। गायद उस मृत्यु-परायण भी माना जा सकता है, परन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि उसने शात्रधमका परम युक्तप प्रकट किया है।

भीष्मने कणका मरसर या द्वेषसे अध रची नहीं कहा था, बल्कि यह समझ कर कहा था कि जिस तरह कणका पानी अतारनसे ही उसके हृदयमें बसा हुआ घमड अतरगा, जिसके पीछे भीष्मका अंक हेतु उस गलत अनुमानको भी सुधारना था जा दुर्घोषने युद्धका निश्चय करते समय लगा लिया था। भीष्म जब तर जीवित ह तब तब म युद्धमें भाग नहा लूंगा असी घोषणा करके कणने शात्रधम तथा मित्रनिष्ठा दानाको मित्र दिया और युद्धम भीष्म विश्वयी न हाकर मृत्युको प्राप्त करेंग जिस विचारका मजबूत करके प्रारम्भमे ही अप-गानुनका वातावरण अल्पप्र कर दिया था। जिस अवसर पर मित्रनिष्ठा दान प्रतिज्ञ तथा युद्ध-शुभ्रम तनुत्यागी कणने यही सिद्ध कर दिखाया कि वह सब कुछ हात हुआ भी अतमें अहमेमी ही था।

कणका बल अगरी मित्रनिष्ठा जमके विषयमें अुसक साथ हुआ अन्याय रूपमें अुम प्राप्त हुआ वीरोचित मरण और अुस समय भी अुसके साथ हुआ अपाय—अिद सब दानाके कारण कणके बारेमें जनताके मनम स्वाभाविक गानुनमूर्ति कौतुब और पशपात है। जिस पक्षपातक कारण कणके दोषाकी ओर लागाना ध्यान नहा जाता। कणक साथ जुदार दाय करते समय कृष्ण अतुन अाति पाडव-गणियां साथ अयाम न हा और भीष्माचारका मन कणके विषयमें कुछ अनुचित हा जानेका पूर्वाग्रह न बन जाय इसी खयालसे अितना विवेचन करना मुग जरूरी लगा है।

अंक तरहमे दना जाय ता भीष्म और कण दाना ही यह जानते थे कि धारा पग अगजना पग है और अतन्वीगलमें भी वह पगु है फिर भी दोना कणक कणय निष्ठा अानी आयवक्तिन प्रति दफानर रहते हुआ फलके बारेमें गलत अगामीतना रखर मदमें गड थ। भारतकप पर राय करनका अधिकार अंग भीष्मका था धमे हा कणका भी था। भीष्मन सौतेली माके वाक लिअ अपना भुगत मनाकर अिधे और कणने अपना मानाकी अुपशाक कारण राज अन्तु क अाने अधिकारता त्याग किया था। भाष्मकी धातुनिष्ठा तथा कणकी मित्रनिष्ठा और पशनिष्ठा आय-मन्त्रिनी बहुत बडा सपत्ति है।

कण और भीष्म अर-दुमरेग अीष्मा करते थे जसा लगना स्वाभाविक है। फिर भा अर-दुमरेकी मन्माका पट्टाने बिना नहीं रहन यही

वात जगतको दिखानेके लिये भीष्मके रणभूमि पर गिरनेके बाद और दाना पक्षा द्वारा गोकके कारण युद्ध स्थगित कर दिये जानेके बाद महाभारतकार दुःखसंनम्र बने हुअे मानसवाले कणको भीष्मके पास ले गये है। वह प्रसंग सचमुच अुदात्त और वरुण है। यह बूढा पशुपाती है, यह हम सबका घुरा चाहता है— जिस तरह भीष्मके खिलाफ सदा दुर्योधनके वान भरनेवाला वण आमुआसे छुपी आवाजमें जब भाष्मसे प्राथना करता है कि म वण आपका दान करने आया हू, मेरी आर दयादृष्टिसं दखकर मुषसे दो 'शद बोलिये', तब लगता है कि भीषण कलियुगका बीजारोपण करनेवाला काल पूरा हा गया है और अुमके स्यान पर प्रेमघमका सिचन करनेवाला तथा सत्ययुगका शुभ स्मरण करानेवाला काग आ गया है। राजनीतिन लाग मौका आने पर हृदयकी कोमलता दिखात हैं, अपने स्वायकी रक्षा करते हुअे अुदारता, आयता और अंत मुखता भी दिखाते हैं, परन्तु जिस अवसर पर असी दमपूण सस्कारिताका हमें जरा भी भास नहा होता। आदौ नम्रा पुननम्रा कायकाल च निष्ठुरा कार्य कृत्वा पुननम्रा' अैसा बीभत्स राजनीतिन न तो वण था और न भीष्म थे। कणिक नीति' में कहे अनुसार काय हो जानेके बाद आखात्री पलके गीली करके दिखानेकी घूतता भी जिस मिलनम नही थी। यहा जेक आय पुरुष दूसरे आर्योत्तम तथा अहत-शदको पहुचे हुअे पुरुषको प्रणामाजलि अपण करने आया था। भीष्मने गदगद अंत करणसे वणका अपने पाम बैठाकर बताया कि अुसके लिये अुनके मनमें कितना आदर है और यह भी बताया कि हमेगा अुसका (वणका) तेजावघ करनेमें अुनका क्या जुद्देश्य था। भीष्मने जमभर जिस शातिके लिये जी-सोड परिषम किया अुस शातिकी स्यापनाके लिये अुन्हाने वणसे गुद्ध मनसे याचना की। वणने भी अुतने ही खुले मनसे अैमा क्या सन्नय नही है जिसक अपने कारण भीष्मको बताया और अपने निश्चयक लिये अुनके आगीर्वाद मागे। अुदार भीष्मने वणको अपने आगीर्वाद दिये और अुसे अुस्माह दिलाकर अनासक्त भावसे युद्ध करने तथा कौरवाका नेतृत्व ग्रहण करनेकी सलाह दी। हिमालय जैसा अुत्तुग आयत्व तथा महासागर असा गभीर काहण्य 'यक्त करना अय किस अवसर पर सभव होता? युद्धके वणनाकी तरह जिस प्रसंगके वणनको भी विस्तृत रूप न देकर महाभारतकारने अवसरकी पवित्रता तथा समयका औचित्य दोनोंकी रक्षा की है। भारतवष जस समद्ध, भय और सौंदर्य विपुल देशकी ही अुपमा जिसे शोभा दे अुस महाभारतमें भी जिस प्रकारके देव-दुलभ प्रसंग कितने हागे?

भगवद्गीता

कुरुक्षेत्रकी रणभूमि पर दोनों पक्षोंके साथ लड़नेके लिये सज्ज खड़े हैं। युधिष्ठिरन दाना सपाक बीच खड़ रहकर स्वयं यह घोषणा की है कि विनाका अभी भी पापके लिये अपना पक्ष छोड़कर विराधी पक्षमें जाना हो ता वह जा सता है। उसे अवसर पर पांडव-पक्षक वीर अजुनको सका हुआ कि हमारा लड़ना बुचित है या नहा? लड़नेमें पुण्य है या पाप? सगे-सब घियानो मारकर राज्य करना बुचित है अथवा राज्यका त्याग करके सयास लना बुचित है? श्रीकृष्ण स्वयं अजुनके सारथिके रूपमें रथमें बठे थे। अजुन युनकी गरणमें गया। कितना विचित्र कितना नाजुक और फिर भी कितना स्वाभाविक प्रसंग। जिसने ऊपर मारी लडाओका आधार हो वही याददा यदि अंतिम क्षणमें अंग तरह गस्त्र फेंकर म नही लडूगा कहते हुए खडा हो जाय ता क्या हो? बुल्गाहव चार गदासे अजुनको जोग चढनवाला नही था। अंगरित्री श्रीकृष्णन अजुनका धमका रहस्य समझा कर यह बताया कि बुसे क्या करता चाहिय। श्रीकृष्ण और अजुनने बीच हुआ अिस सवात्का महाभारतमें अठारह अध्यायामें धणन किया गया है। अुनमें कुल सात सौ श्लोक ह। बुसे क्या भीतर हिंदू धमक सारे ही तत्त्वाका समावेग भलीभाति हो जाता है। बुसे पड कर मनुष्यता अुत्तम रूपमें अंग वातका ज्ञान हो जाता है कि बुसे जिस सगारमें कस व्यवहार करना चाहिय। भगवद्गीता सारे हिंदुआका महान धम प्रय बन गभा है। गभी पधान लोग भगवद्गीताके प्रति आत्न रखते हं। गानाजीरा अनुषात् ससारकी सभी भाषाआमें हुआ है और प्रत्यक दगके लोग गीताजीरी प्रामा करत ह। भारतमें ता भगवद्गीताका अय समझानके लिये अिनन प्रय अंग गय ह कि अुन सबको अवत्र निया जाय तो कधी अल्मारिया नर जायें।

राष्ट्रन जावन पर जिसका बडस बडा प्रभाव पडा हो फिर वह कोअी राष्ट्रन पुनर हो राष्ट्रीय पन्ता हा अथवा राष्ट्रीय प्रय हा बुसका बुल्ख अिहागतो करना ही चाहिय। महाभारत रूपी विनाल महासागरमें भगवद्गीता अर जगा रन है जिंगता प्रभाव कक हिनू गमाज पर ही नहा परन्तु भारतके नाय अिम अिम प्रजाका मवध स्यापिन हुआ है अुम अम प्रजा पर पडता अन्ता है और अंग भी सग पडता रहगा। य प्रय अभी तक भी वृद्ध नही हुआ है।

मनुष्यका वतव्य क्या है, घम-सकटमें मनुष्यको कौनसा भाग लेना चाहिये, क्या करनेसे मनुष्य कम करते हुअे भी अुससे अलग रह सकता है जिसकी चचा गीतामें की गयी है। जिसमें व्यक्ति तथा समाजके जीवन रहस्यकी चर्चा आध्यात्मिक दृष्टिसे की गयी है।

भगवद्गीताको हमारे शास्त्रोंमें उपनिषदाका श्रीकृष्ण द्वारा दुहा हुआ दूष कहा गया है। श्रीकृष्णने ज्ञान, भक्ति, साध्य, योग आदि सारे मार्गोंके मूल तत्त्वाकी 'यावहारिक' चचा करके अजुनको यह बताया है कि अुसके जैसे क्षत्रियका वतव्य क्या है। अजुनको प्रतीति करानेके लिये श्रीकृष्णने अपना बाल स्वरूप अथवा विश्वरूप अजुनके सामने प्रकट किया। जिस विश्वरूपका अर्थ है भूत, भविष्य और वतमान तीनों बालाका अेकत्र की हुओ अितिहास-भूति। जिसे हम भावी या अदृष्ट कहत ह वह अीश्वरकी दृष्टिस वतमान और ज्ञात है, अैसा श्रीकृष्णने अजुनको दिखा दिया और फिर भी तेरी अिच्छा हो बसा कर' यह कहकर अजुनको अुसके स्वातन्त्र्यका भान भी अुन्हाने करा दिया।

परतु श्रीकृष्ण अर्जुनको युद्धके लिये प्रेरित कर सके, जिससे हमें क्या लाभ हुआ? वेद यासने कृष्णाजुनका दिव्य सवाद जगतके सामने अितिहासके रूपमें नहीं रखा है, अुन्हाने जिस सवादके द्वारा यह घम रहस्य प्रकट किया है कि प्रत्येक मनुष्यके हृदयमें वासना रूपी प्रबल शत्रुके विरुद्ध ('कारुण्य दुरासदम्') जो सनातन युद्ध चलता है, अुसमें मनुष्यको निरहकार बनकर बसे लडना चाहिये ('युद्धस्व विगतज्वर')। अत हृदयमें अथवा समाजमें जो दुवृत्तिया हा अुनके विरुद्ध लडनेवाले प्रत्येक याद्धाके लिये भगवद्गीता गुरु-अुपदेश सिद्ध हुयी है।

प्रस्थानत्रयी किसलिअ ?

अस दुनियावी जीवनची वज्रटसे बचकर जो व्यक्ति मासकी तरफ प्रयाण करता है उसकी यात्राका पाथय क्या है ? हमारे पूवजाके अनुसार (१) दस अपनिपद (२) ब्रह्मसूत्र और (३) भगवद्गीता य तीन ग्रंथ मोक्षयात्राने पर्याप्त पाथय ह । और असलिअ अिन तीन ग्रंथाको प्रस्थानत्रयी कहा जाता है । प्रस्थान' का अथ है घर छोडकर मासकी तरफ प्रयाण करनेकी त्रिया । अुमक लिअ यह जुपयुक्त और जुत्तम पाथय है ।

अब ये ही तीन ग्रंथ क्या चुन गय ? और अिहीका अधिकार किस लिअ माना गया ?

भौतिक धत्र तथा आध्यात्मिक क्षेत्रमें अनुभव अर्थात साक्षात्कार ही अतिम प्रमाण हो सकता है । जुसीका अधिकार माना जाता है ।

वेदकालमें जिन अपियाण अपना जीवन धमको समर्पित किया और धमका ही ध्यान किया जुन अपिधान अपन अनुभव विचार और कल्पनाय वेदके अ तमें ब्राह्मण ग्रंथाम और जुपनिपदामें लिखकर रखी ह । यह सारा धमानभव वेदके अन्तिम भागमें लिखा गया है असलिअ अिसे वेदात् कहत ह ।

अब हरअक प्रामाणिक और प्रयत्नशील मनष्यको जा अनभव हाता है वह सबत्र अकरूप ही हाता चाहिय । कल्पनामें फक हा सकता है तब जाट टड रास्तेसे जा सकता है लेकिन अनुभव तो अकरूप ही हो सकता है । अनुभव अगर अैकागी हो तो भी अनुभवके दूसरे जगाव साथ असका मल बठना ही चाहिय । असलिअ दस अपनिपदाम जो अनुभव लिख गय ह और सगृहीत किय गय ह जुनमें यदि अक्वाक्यता न हो तो हम मान लेना चाहिय कि हम जुन वचनाका अथ ठीक ठीक समझ नही पाय ह । जो काभी अिन वचनामें सामजस्य स्थापित कर सके असकी बात विचारन योग्य मानी जायगी ।

विभिन्न देगामें प्रचलित भिन्न भिन्न कानूनाका अध्ययन करक जुनम पाय जानवाले मूलमत तत्त्वाको चुन कर जिस प्रकार हम अनका अक धारागास्त्र (Jurisprudence) बना लेते ह असी प्रकार धर्मनिभवके विश्व वचना परसे परब्रह्मका स्वरूप और अुस प्राप्त करनेकी साधना निश्चित कर देनवाले ब्रह्मसूत्रोकी रचना वादरायण कृष्ण-द्वैपायनन की है । अगर हम दसोपनिपद्को raw material of Religious Expenence (धार्मिक अनुभवका कच्चा माल) कह सरे तो ब्रह्मसूत्राको the organised essence of Spintual

Knowledge' (आध्यात्मिक ज्ञानका सुव्यवस्थित सत्त्व) कह सकते हैं। जिस 'science of metaphysics' (अध्यात्म शास्त्र) की सहायतासे अपनिपदाका रहस्य समझनेमें सुगमता होती है। 'Science is organised knowledge' — शास्त्र सुव्यवस्थित ज्ञान है। अपनिपदामें जो आध्यात्मिक ज्ञान बिखरा हुआ है वह ब्रह्मसूत्रामें सुव्यवस्थित हुआ है। केवल जाननेसे विज्ञानके प्रयोजनकी पूर्ति हा जाती है।

लेकिन मनुष्य केवल जाननेसे तृप्त नहीं हाता। जसा अुसने जाना है वसा जब वह जीने लगता है — या जीना जानने लगता है — तभी अुसे सतोप होता है। जिसलिखे हरअेक विज्ञानके साथ अुसके 'application' (विनियोग) की दुकलाका अर्थात् जीवन-कलाका जब विकास होता है तभी ज्ञान और अुमका शास्त्र कृताय माना जा सकता है। यह जीवन कला भगवान श्रीकृष्णने अेक अद्भुत अवसर पर योगयुक्त होकर अजुनके लिखे प्रस्तुत कर दी। जिसलिखे कहा जाता है कि अपनिपद् गायें है और गीता अुन गायका दुग्धामृत है। गीताके प्रत्येक अध्यायके अन्तमें हम कहते ह 'अुपनिपदामें जा ब्रह्मविद्या है अुमके अनुसार योगशास्त्रका िमाण करके भगवानने जिसका गायन किया वह भगवद् गीता है।' ('विद्' का अय है सीखना, जिस परसे विज्ञान (Science) के लिखे 'विद्या' शब्द बना है। और शास का अय है नियन्त्रण करना, राह दिखलाना, जिस परसे 'शास्त्र' अर्थात् code of Conduct' — चाल चलनके नियम — अथवा art of Life' — जीवनकी कला — ये दो शब्द सिद्ध हुअे ह।)

अुपनिपदामें से पहले ब्रह्मविद्या निकली, तदुपरान्त योगशास्त्र निकला, और अुसीना भगवानने गायन किया जिसलिखे अुसे भगवद्गीता कहते हैं।

जिस रीतिसे धर्मानुभवका लेखन करनेवाले (१) दस प्रधान अुपनिपद्, (२) अुनको विलोकर निकाली हुअी ब्रह्मविद्या और (३) अिन तीनाकी दृष्टिको रक्षा करके रचा हुआ योगशास्त्र अर्थात् जीवन-कला — अिन तीनाका जो कोअी मेल बठा मखे, तीनाकी अेकचाक्यता सिद्ध कर सके, अुसीने जीवनका रहस्य पाया है और वही आचार्य माना जा सकता है, असी प्राचीन मयादा है। जो जीवन व्यवस्था अिन तीनाका सामजस्य कर दे अर्थात् जो जीवन-व्यवस्था जिस प्रस्थानत्रयीके साथ विलकुल ठीक मेल खाती है वह धर्मानुभवके अनुकूल है असा हमार पूवजाका मतव्य है। जो मनुष्य अिम प्रकारकी नअी जीवन-व्यवस्था ममाजके सम्मुख अुपस्थित करता है, अुसका मागलान स्वीकारनेके लिखे समाज तयार हो जाता है। लेकिन असा मनुष्य अगर केवल बौद्धिक कसरत करके िखाये, तो अितनेसे अुसे आचायत्व प्राप्त नहीं होता। अुसे जिसके अनुसार जीकर अपने आचरण द्वारा अपनी पारमायिकता (earnestness) सिद्ध करनी चाहिये। आचायका यह आदण है

आचिनाति हि शास्त्राधम आचारे स्थापयत्युत ।
स्वयमाचरते यस्तु स जाचाय प्रचरते ॥

सामान्य शास्त्रोक्त से जो अनुकूल रहस्य धीन-धीन कर निकालता है (आचिनोति हि शास्त्राधम) और जो उस रहस्यका जीवनमें अनुस्यूत करनेकी या बोलनेकी प्रक्रिया सिखाता है (आचार स्थापयति जुत) और जिसमें भी महत्त्वकी तथा दुष्कर बात तो यह कि जो उसके अनुसार आचरण करता है यानी जीवन जीकर दिखाता है (स्वयं आचरते यस्तु) वही आचार्य कहला सकता है। प्रस्थान ऋषीकी ऐकवाक्यता जो तत्सं जीवन-व्यवस्थासे और अपने आचरणसे सिद्ध करता है, उसीको हम आचार्य या धर्मविद लोक-नायककी हैसियतसे स्वीकार कर सकते हैं।

जस आचार्य आज तक अधिक नहीं तो पाच-दस अवश्य हुआ ह। शंकराचार्य रामानुजाचार्य भगवाचार्य बलभगवाचार्य निम्बार्क आदि प्राचीन आचार्य और श्री दयानन्द सरस्वती श्री अरविन्द, महात्मा गांधी आदि आधुनिक आचार्य जिस देशका पथ प्रदर्शन करते आये हैं।

अब सवाल यह है कि अगर जिन सबका प्रतिपादन मूल धर्मानुभवसे सुसंगत है ता जिनकी जुदी जुदी दृष्टियामें भी कुछ न कुछ अंशता मिलनी ही चाहिये। हम जिनमें आपसमें लडाकर अन्तम जो जीत उसीको प्रमाण माननेकी सोच, तो जीवन द्राही ठहरेगे। ये सार आचार्य अपनी बुद्धि और श्रद्धाके अनुस्यूत हमें सम्पूर्ण जीवन-व्यवस्था देते हैं। अतना ही नहीं स्वयं उसके अनुसार आचरण करके जब अन्होंने सफलतापूर्वक लोक-नेतृत्व किया है तब जून सबकी दृष्टिमें भी वही तो मेल होना ही चाहिये।

साराण जिन सब आचार्योंमें जो काजी समन्वय करके दिखायगा वह सचमुच आचार्योंका आचार्य माना जा सकता है। जिस समय जसी विभूतिकी सारका आवश्यकता है।

जिसके लिये जनाका सप्तभगी स्यादवाद काममें आता ही चाहिये।

अुपनिषदोकी शिक्षा

[अेक पत्रसे]

आपका पत्र मिला ।

वीचमें मेरी तवीयत सूब अचठी मालूम होती थी । अुन दिना मैंने पढनका आनद लिया । चौमासेकी वनथी दखनेक लिअे म थोडा धूमता भी था । महा राष्ट्रकी भूमिकी काजी अनोखी शोभा है । अूची-नीची जमान जहा दखा वहा छाटी वडी पहाडिया । असिलिअे चलनेम या देखनेमें नया नया आनद मिलता है । गुजरातमें यह आनद नही मिलता । बिस्तर पर लेटा लेटा भी म यहास सिंहगढ़ दख सकता हू । और मेघाकी प्रतिभा ता प्रतिक्षण नया नया रूप धारण करती है । हरीभरी धरती और नीला आकाश दाना मिलकर रगाणे सभी मिश्रण और प्रकार सिद्ध कर दिखते ह । हरी घास खाकर मस्त बने हुअे बछड पूछ अूची करक चारा आर कूदते फिरत हैं और पापट मैना और पडुव पक्षी नये नये गीत खाजते ह । असी वनगाभाके बीच भद्दी माटर-बसा और भेरियाके शुडा जसी ट्रेनाकी अमदता भी दय जाती है और दोना सबत्र फले हुअे कायमें वद्धि ही करती ह ।

असे अनुकूल वातावरणमें अुपनिषद पढनेमें कितना आनद जाता होगा, असिकी कल्पना आप कर सकत ह । लगभग सारे ही अुपनिषद म बार-बार पढ गया हू । प्रतिक्षण अुनमें स मुचे नअी दृष्टि प्राप्त होती है । आजसे पन्द्रह वष पूब मने अुपनिषद् पढे थे, परतु भाष्यकी सहायतासे ।

यह मच है कि भाष्यकाराने हम पर अनेक अुपकार किये ह किंतु अुप निषद असे ग्रथ ह कि भाष्यके साथ पढनेस अुनका मूल स्वाद नहा मिलता । भाष्यकारामें यह दाप हाता है—आप चाहें तो अिस अुनकी मयादा कह लीजिये—कि वे अुपनिषदामें से अेक बिशेष तर्कसिद्ध और समचित वस्तु निवालनेका प्रयत्न करने ह । अुपनिषद अिस तरह पढनेके लिअे हैं ही नही । अुप निषद् ता पानवीर परमहमाक 'inspired' अुदगार ह । अुपनिषद् कार अपियाने यह सोचा ही नही हागा कि हमारे वचनामें परस्पर विराध है या नही, अुसे कोजी मुयवस्थित सुपरिष्कृत तस्वपान (फिलासफी) निष्पके रूपमें निक्लता है या नही । अुनके विचारा तथा कल्पनाआमें शुद्ध कौमाय है । अुनके भाषा प्रवाहके साथ अेक बार हमारा परिचय हो जानेके बाद ता जिस तरह हम

गायका धारोष्ण दूध पी जाते ह जुसी तरह हमें अपनिपदाके अमृतकी धारायें पीनेका जानद अनुभव होना चाहिये।

अपनिपदाकी कुछ दलीलें हमारे गले नहा झुतरती। कुछ बातें पन्कर तो हम हसे बिना नहीं रह सकते। सत्यकी साधमें अपनिपदाके अपि कसे अनेक दिशाओंमें दौड़ते ह यह देखकर हमारे मनमें अुनके लिअे प्रेम झुमडता है। विचारकी अेक भी दिशाकी साज अुन्हाने वाकी नहीं रखी है। परंतु सदिया तक की गयी अस खोजके अतमें जब हम अुहे अध्यात्म पानक धवलगिरिसे सर्वोच्च शिखर पर बठे हुअे देखते ह और अभय व ब्रह्म की अुनकी गभीर गजना सुनते ह, तब भक्तिभाबसे हमारा मस्तक नत हो जाता है और साप्याग प्रणिपात करके 'त्व हि न पिता योऽस्माक अविद्या परपार तारयसि। नम परमअपिभ्य नम परमअपिभ्य।' जसी अपनिपदी नति (नमस्वृति) हमारे मुखस निकल पडती है।

आज हमारे समाजमें अपनिपदाको दूरसे ही नमस्कार करनेकी वृत्ति दिखायी पडती है। अपनिपदाका अध्ययन बहुत कम होता है। और जो होता भी है वह बयोवद्ध लोगोंमें भाष्याकी सहायतासे तथा पचीकरणके प्रपचके बाद होता है। हमारे युवक जब सीधे अपनिपदाके पास जायगे तभी अुनकी दृष्टि खुलेगी तथा विचार और जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें नये नये अनुभव प्राप्त करनेकी शक्ति अुनमें बनेगी। अपनिपदाके वचन तो बिजलीकी कौंध जैसे ह। अुनका सपूण अय अभी तक किसीने किया नहीं है। पाच पचास हजार वष तक नये नये ढगसे प्रयत्न किये जायें, तो भी अुनमें से जाननेको कुछ न कुछ वाकी ही रह जायगा। प्रत्येक व्यक्ति अपने अनुभवकी मददसे नये ढगसे अपनिपदाके पास जायगा और अनुभवसे तेज अुनी हुआ बुद्धिसे नयी प्ररणा अपनिपदासे प्राप्त करेगा। अस अेक ही वचनको हम लें समूला सोम्य अिमा सर्वा प्रजा सदायतना सत्प्रतिष्ठा। असमें सपूण मानव-समाजगास्त्र समाया हुआ है।

'सर्वासा विद्याना हृदय अकायनम् — अस वचनको पढनेके बाद क्या गिशाकी सपूण दिशाको बलनेका मन नहा होगा ?

'हृदयेन हि रूपाणि जानाति। हृदये हि जेव रूपाणि प्रतिष्ठितानि भवति।' मानवत्वयके अस निरूपणको पढनेवाला यवित कला और आनद-मीमासाको नयी दृष्टिसे ही समझेगा। और थोडा आगे जाकर जब अध्यात्म विद्याका वही हिमालय कहता है हृदयेन हि सत्य जानाति। हृदये हि जेव सत्य प्रतिष्ठित भवति।' तब तो हमें असा लगे बिना नहीं रहता कि समग्र तत्त्वज्ञानकी नीव ही बलनेकी आवश्यकता है।

मैं तो आपको अितना ही लिखना चाहता था कि अपनिपदाका स्वतत्र अभ्यास करनेकी जरूरत है। अधग्रढासे नहा परंतु स्वतत्र बुद्धिसे और आदरकी

वृत्तिसे। काव्यके क्षेत्रमें गत पचास वर्षोंमें हमने अपने बालकाका खूब मागदर्शन किया है। अब उपनिषदोंके अिस भव्य कायमें उनका मागदर्शन करनेकी जरूरत है। तभी सस्कारी शिक्षण सायक हागा। जानकारी चाह जितनी दिमागमें भरें लेकिन अतना ही करनेसे क्या लाभ हागा? हृदय-परिवर्तन होना चाहिये। और हृदय-परिवर्तन करनेकी शक्ति तो अिन उपनिषदाके अपियामें ही है।

अक्तूबर, १९२६

१२

नये जीवन-दर्शन

[अेक पुरानी टिप्पणी]

हमारे विद्वान धार्मिकोंने यह बात निश्चित कर दी है कि जो मनुष्य प्रस्थानत्रयीकी अेकवाक्यता सिद्ध कर दिखाये वह आचाय है। प्रस्थानत्रयीका अय क्या? उपनिषद ब्रह्मसूत्र और भगवद्गीता। उपनिषदामें हमारे अपियाके मौलिक अनुभव और मौलिक विचार हैं। ब्रह्मसूत्रामें उपनिषदोंके वचनासे नियरा हुआ दाशनिक शास्त्र है। और गीता अिही उपनिषदासे तयार किया हुआ दिव्य रसायन है। गीता उपनिषदाका अत्यन्त व्यापक किन्तु सक्षिप्त जीवन-भाष्य है।

अिसलिये मूल वस्तु तो उपनिषदामें सगहीत प्राणवान तथा प्रामाणिक अनुभवात्मक विचार ही हैं। जा मनुष्य अिन सबकी अेकवाक्यता सिद्ध कर सके अर्थात् अिन अुद्गारामें से अेरूप तथा अखंड जीवन रहस्य निचोड सके, वही आचाय है वही जीवन-स्वामी है।

जीवनक सपूण तत्त्वाकी मीमासा जिसमें की गयी हो, अेक सावभीम तत्त्वकी कुर्जीसे प्रत्येक प्रश्नका हल जिममें बताया गया हो जो बुद्धिका समाधान करे हृदयको सतोप दे, कमको प्रेरित करे और बुद्धि हृदय-कम तीनाका समन्वय करके पुरुषार्थके अतमें विजयी गति प्राप्त कराये वह दर्शन है। असे दर्शनका द्रष्टा अपि है और अुसका यास (organiser) आचाय है।

आजके युगमें जीवनके सभी मुख्य प्रश्नोंका हल निवालनेवाले कुछ दर्शन प्रचलित हैं। सपत्तिशास्त्र असा अेक दर्शन है। वह मानता है और कहता है कि सपत्तिके प्रयोगत हर बातमें सफाता प्राप्त की जा सकती है। यह दर्शन कहता है कि जो बात सपत्तिके क्षेत्रमें नहीं आती, वह अपेक्षाके लायक है। अिस अपेक्षाकी सलाहने कारण यह दर्शन अधूरा या पगु नहीं माना जा सकता। वेदात भी तो जगत और मायाकी अपेक्षा ही सूचित करता है न।

चिकित्साशास्त्र भी अेक दान है। वह कहता है कि आत्मरक्षा अथात् गरीर तथा प्राणाकी रक्षा मनुष्यका परम धर्म है। सभी प्रकारके कामाभोग भागनेकी शक्ति बढा कर अधिकसे अधिक जीना जीवनका परम पुरुषार्थ है।

राज्यसत्ता भी अेक दान है। सयबल और कानून-बल अुसका द्विविध साधन है। अुसका विश्वास है कि दुनियाके सारे दुखाकी दवा सत्ताके योग्य अुपयोग द्वारा हो सकती है। यदि कोअी सामाजिक आपत्ति दूर करनी हा या सामाजिक अभिलाषा पूरी करनी हो, ता समन्वयारी भरे कानून बनाने तथा अुन कानूनाका व्यवस्थित अमल करनेकी शक्ति बढानसे असा किया जा सकता है।

विश्व-यापी व्यापार तथा वस्तु विनिमय भी दानकी कोटिम पहचानेकी आकाक्षा रखता है। भूख जीवनका मुख्य प्रक तत्व है। जहा भूख मालूम हो वहा अुसे तृप्त करो कि जीवनका मुख्य काम पूरा हुआ।

संसारका प्रत्येक धर्म तो जीवनके प्रत्येक प्रश्नका निराकरण करनेके लिये ही अुत्पन्न हुआ है। प्रत्येक धर्मको लगता है कि जीवनका रहस्य मन ही अच्छी तरह जाना है। लोग मेरा सेवन करेंगे तो अुहें सुख अवश्य मिलेगा अथवा जा कुछ अुन्हे मिलेगा वही सच्चा सुख होगा।

आजकल कला भी संपूर्ण दान होनेका दावा करती है। दुखाकी बात अितनी ही है कि कला स्वयं अपना स्वरूप नहा जानती। कलाने हर बातको सरल आह्लात्क और अनुकूल बनानेका बीज अुठाया है। जो प्रश्न धर्मको कठिनस कठिन लगे ह अुन्हें भी अत्यंत सरल और सुसाध्य बना सकनेका जादू भरे पास है यह कलाका अेक बड़ा दावा है।

प्रत्येक दान स्वयंभू संप्रापके जसा होता है। प्रत्येक दानकी यह वृत्ति होनी है कि वह अपनी शक्तिम सब कुछ कर सकता है अुस दूसरे किसीकी मन्की जरूरत नहा वह अमहाय नहीं है किसीकी मदद भी यदि वह लेता है ता अुदारता खिलाने या अुस प्रात्माहन देनेके लिये ही। अिस वृत्तिक बिना अुमम दानत्व बसे आ सकता है? यदूनी लोकात्र परमेश्वरकी तरह प्रत्येक दान द्वितीयाक्षम — लाभी अीवर ही हाता है।

कुछ लोग प्रत्येक दानसे थोडा थोडा अच्छा तत्व अकत्र करके अच्छाअीकी संपूर्ण सामग्री तयार करना चाहते ह। लकिन दानका स्वभाव ही कुछ असा है कि वह दूसरे दानके माय मिल ही नहा सकता। जैसे तेल और पानी अेकमाय नहीं मिल सकत गव्वर और नमक अकमाय नहा मिल सकते बसे ही दा दान अेकमाय मिश्रर नहीं बन सनते। यह भय रहता है कि दानाकी गिचणी कर देनेसे वे स्वयं भी विगडेंगे और मानव-जीवनको भी विगाडेंगे। परंतु मनुष्य-जाति ता मानव-ममनिके आरभस ही प्रत्येक दानस थोडा थोडा अा प्तर और अुन सबको मिश्रर ही अपना जीवन चलती आअी है। अथदाठु

मानव-जाति अपनी जिम्मेदारी अेक ही दगनके हाथमें नही सौंप सकती । वह सभी दशनाकी अेक समिति नियुक्त करके अपना कामकाज जुसके हाथमें सौंपती है ।

अैसा करनेसे मनुष्य-जातिको सुविधा तो बहुत हुआ, सुरक्षितता भी शायद मालूम हुआ है, परंतु यह ढ्रम बुद्धतिकी दष्टिस ठीक नही है । अेक अेक दशनके हाथमें अपना जीवन सौंप कर मनुष्य जातिने आज तक कितने ही प्रयोग किये हैं, परंतु अिममें अुसे सदा पछताना पडा है । अिममें दोष दशनाका नहा है, दोष तो मनुष्य-जातिकी अुतावलीका ही है । प्रत्येक दगनने जीवनकी व्यवस्था हाथमें लेनेमें पहले जो कौल-करार किये ह, अुनमें अेक कडी गत अुसने यह रकी है कि हमार प्रयोग अेकाग्रतासे बहुत लम्बे समय तक किया जाना चाहिये । धयकी यह गत मनुष्य जाति पाल नही सपी । अिस कारण अेक भी दगनकी पूरी परीक्षा होनेका सतोप न तो अुस दगनको मिला और न मनुष्य-जातिका मिला । मनुष्य-जातिको ता निकटका लाभ चाहिये और अतमें सुन्दर ढ्र नी चाहिये । आरभमें, मध्यमें और अतमें लाभदायक सुखदायक और मरल हो, असा कुछ अुसे चाहिये । यह अिच्छा चाह जितनी स्वाभाविक हो, परंतु जीवन ढ्रमके यह विरुद्ध है । धय कहता है कि अिस प्रकार मध्यरात्रिके बिना सूर्योदय नही होता अुसी प्रकार निराशामें से निकले बिना ढ्रद्धा भी आशाकी सुवण किरणें नही दिखा सकती ।

दगनाके अिम महान स्वयवरमें मनुष्य जातिके हाथासे माला पहननेके लिये अेक दशन राज अुपस्थित हुआ है । अुसका नाम है विनय अर्थात् शिक्षण । शिक्षण अेक अद्भुत जडी-बूटी है, अलौकिक रसायन है, अमत-भजीवनी है, कामधेनु है तथा कल्पलता है । शिक्षण आप अिमकी कल्पना कर सकें वह सब है और अुमस अधिक भी बहुत कुछ है । सत्ययुग लानेकी गफित तो शिक्षणमें ही है — अमा दावा शिक्षणके दगनकाराका है । हमें अिस दगनके स्वरूपका, अिसकी मागका, अिसके कलाकाराको, अिसकी गतोंको और अिसकी ढ्रश्रुतिका ध्यानस मुनना चाहिये । संभव है कि यह अंतिम राजपुत्र ही स्वयवरमें सफल हो । आज तक कोअी दगन सफूठ न हुआ अिसलिये शिक्षण भी सफूठ नही होगा, अैसा अनुमान निकालनेमें अनुचित अुतावली होनेकी भी संभावना है । जब हम हर दगनकी बात मुनने आये हैं, तो शिक्षणकी बात भी क्या न मुने ?

मूलभूत मनन

—And having found his instrument,
Forgets or disregards or more presumptuous still,
Denies the Power that wields it

—William Cowper

निसर्गमें बुद्धि, हेतु और योजना नहीं है असा कौन कह सकता है? जो बुद्धि मदाघ होकर निसर्गके बारेमें असा सकुचित मत रखती है वह बुद्धि भी क्या निसर्गकी ही वृत्ति नहीं है?

मष्टिमें असरय जीव पदा होते हैं। अन्हें पोषण मिलता है अुनका विकास होता है और अुनका नाश होता है। और यह सब किसी मागलिक नियमक अनुसार ही होता है यह क्या बताता है? जहा भी देखिये वहा यवस्था है योजना है औचित्य है अनुकूलता है सुदरता है धीरन है विकास है। यह सब महाबुद्धिके बिना सम्भव ही नहीं हो सकता। वनस्पतिके जीवन और विवामकी जाच कीजिये। सूक्ष्म कीडाका जावन घम खोज निकालिये। तारोक विस्तारका और अुनक विराट रास (नल्यन्कीडा) का ध्यान कीजिये। हृदयकी गूँ और जटिल भावनाओके महासागरमें अवगाहन काजिये। पात और अनात सभी अदभुत है यवस्थित है हेतुपूर्ण है। पत्ताका जाकार बादलाकी अस्पष्ट रेखाये हृद्दियोकी रचना गखाका मराट पतिगाके पख हिंसक जानवराकी भूख स्वापदा (शिकारी जानवरा) का भय दुष्टोक पड्यत्र और प्रत्यक्का यापनेवाली अल्प या महानिद्रा सभी कुछ हेतुपूर्ण है। कुछ हमें पसन्द आता है कुछ नहीं आता। कुछसे हम प्रसन्न होते हैं कुछसे हम घबराते हैं। यह हमारा जीवन घम है। हम केवल जेक अंग हैं। अक्षकी मनाभावनास संपूणकी रचना या योजनाका माप नहा निकाला जा सकता अुसकी जाच अुसका मूल्याकन नहीं किया जा सकता। असे भूखके बिना खाना नहा पच सकता असे जिनासाके बिना निरीक्षण नहीं हो सकता असे अखड जागतिके बिना अुन्नति नहीं साधी जा सकती वसे ही नम्रताके बिना अपनी अत्पनताके भानके बिना विश्वके रहस्यकी चाकी नहीं हो सकती—अितना मानव वत्र समझेगा?

जहा देखिये वहा निमगमें कितनी सुदरता है कितनी यवस्था कितनी परस्पर अनुकूलता कितनी मितययिता कितना सामजस्य है!

तब क्या निसर्गमें बुडाअपन नहीं है? है भी और नहीं भी है। यदि प्रत्येक प्रयोगमें अमुक विशिष्टता ही और प्रत्येक प्राणीका अनुभव लेनेवाला चतुर्था केन्द्र अथवा व्यक्तित्व प्रत्येक प्रयोगमें ही, तो फिर बुडाअपन कहा रहा? निसर्गमें समृद्धि है धैर्य है और बुद्धिहीन अनतता है। जितना कुछ शब्द जाता है या मूख कर गिर जाता है असमय विनष्ट हो जाता है, अघूरा रह जाता है अथवा दूसराका शिकार बन जाता है, वह सब क्या बेकार गया? नहीं, कभी नहीं। प्रत्येक वस्तु जिस प्रकार सकारण है उसी प्रकार सप्रयोजन भी है। निसर्गमें व्यय कुछ नहीं है।

हमारी बुद्धि और निसर्गकी महाबुद्धिके बीच जातिका अंक्य है, परन्तु अस्वयका अक्य नहीं, इसीलिये हम उस महाबुद्धिको समझनेकी हिम्मत तो कर सकन ह, परन्तु नम्र बनकर ही वसा करनेका आगा रख सकते हैं।

और वह महाबुद्धि भी क्या पूण विकसित हुई है? पूण व्यक्त अथवा प्रकट हुई है? अमुका निय विकास होना ही रहता है। अमुक विकासका अंत कब होगा यह कौन कह सकता है? परन्तु अमुका अंत किमलिये हा?

व्यक्तिका अथवा विश्वका जीवन प्रवाह रूप हाता है।

हम भले ही यह मानें कि यौवनमें वाल्यकाल मिट जाता है और बड़ा वक्त्याम वाल्यकाल तथा यौवनका लोप हो जाता है परन्तु वास्तवम असा नहीं होता। मत्र अवस्थायें—विकासक क्रमक अनुसार हम जितनी अवस्थाआसे होकर निकल हा ये सब अवस्थायें—अंक ही साथ हममें हाती ह। किसी कयाके अंत तक जब हम आ जाते ह तो क्या अुसके आदि और मध्य नष्ट हो जाते हैं? कोरी राग पूरा हो जाने पर क्या अुसका अस्थाअी और अतरा नष्ट हो जाना है? अमा होता तो रागका गान ही हमें नहीं होना। भूत भा वनमान है। नगी समुद्रमें मिल जाती है फिर भी अुसका अुद्गम और अुसका मध्य तो अहता ही रहता है। निसर्गकी महाबुद्धि व्यक्त हाती जाती है विकसित होनी जानी है ता भी अुसके प्राथमिक स्वरूपका अवगोप ता रहता ही है। जिन प्रकार हिन्दू धर्ममें 'तानि धर्माणि प्रथमानि आसन् से लेकर अद्यतन विचारा और आचारा तक सभीके लिये स्थान है, गवका आदर है अुसी प्रकार निसर्गम सभी स्थितियाका समावेग और समन्वय है। अधिकाग स्थानामें वह स्थूल रूपमें है, तो किमी स्थानमें सूक्ष्म रूपमें है।

*

पुरुष-मूसनमें कहा गया है कि विराट पुरुषके अमख्य मस्तक है, असख्य आर्ये हैं और अमख्य पर ह। अिसके आधार पर हमें जानना चाहिये कि विराट पुरुषक अमख्य मन और असख्य हृदय भी ह कयाकि वह सब अकरूप है। जिन अनन मनानें काशी भी विचार अुठा कल्पना आगी या भावनाकी अूमि अुटी

कि वह किसी न किसी प्रकार मूलरूप लिये बिना नहीं रहती। अर्थात् तो मनके यापार पर प्रबल नियंत्रण रखना जरूरी होता है।

म जितने मानसिक पाप करता हू वे सब मेरे आचरणमें भल हा न अतार परन्तु वही न वही तो वे आचारका रूप लेंगे ही। यह आगा ध्यय है कि हम किसी न किसी प्रकार अपने विचारा, अपने मनोरथा और अपनी वन्यना तरगाको अलग या अल्पित रख सकते ह।

पानीमें पडा हुआ नमक जसे सारे पानीमें फल जाता है आकाशमें झुठी झुठी जूमि जसे अनत तक पहुच जाती है वसे ही हमारी वासनार्ये विवमें पत्ती ह और विश्वको बनाती ह या असे पीडा पहुचाती ह। केवल आचार पर रता जानेवाला नियंत्रण काफी नहीं है चिन् गवित तो हमार सबल्पमें ही रहती है। सारा विश्व और जुसका अक अक रज सबल्प प्रभव है अिसल्लिजे सबल्प गुडि ही महासाधना है।

२१-४-२७

१४

ॐ - प्रणवोपासना

[अक प्रवचन]

ॐकार हमार सबश्रेष्ठ जकाधरो मत्र है। अिसे प्रणव कहते ह। अिसका दगन और श्रवण गभीर और आह्लादक है। अपियाने अिस प्रणवका रहस्य वतानेके लिअे जेक अपनिपदका अपयोग किया है फिर भी अिसका सपूर्ण आकलन नहीं होता। अिस ॐ का अथ क्या है? ॐ का अथ है सनातन हा'। सगय अभ्रद्धा नास्तिकता सबको जेक स्मितसे ही दूर करनेवाला यह प्रसन्न हा' है। ॐ कहता है ब्रह्म है यह जगत है भूत भविष्य वतमान सभी है। अिनके परस्पर सबधके बारेमें हम कसी भी कल्पना क्या न करें सब कुछ है और वह अेक ही है, कुछ नहीं है असा नहीं। जहा ॐ है वहा असत्य अभाव या सगयके लिअे स्थान ही नहीं है।

वही सत्य-नारायण है। वही हमार प्रिय सखा है। अुसके सट्वासमें हम सबत्र सुरक्षित ह। जीवनमें अनेक माग हमें लल्चाते ह हर कदम गवासे भरा होता है सर्वोच्च आदग वीनमा है—अिस बारेमें हम सदा अुलचनमें पडे रहते ह प्रतिक्षण हमार सामने धम-सकट आते ह परन्तु यदि हम अिस प्रिय सखा ॐ का अथवा गुड सत्यका हाय पवड कर चलें तो वही भी अुलक्षण

नहीं रहनी। समान-सेवा करनी है? हा परन्तु मत्यका हाथ छोड़ कर नहीं। दान और परोपकार करना है? हा परन्तु वह भी मत्यक प्रति बफादार रहकर ही। गाल्त्राकी रचना करनी है? हा किन्तु जहा तक सत्य ले जाय वहा तक। अथ सबका सहवास खतरासे भरा हा सकता है परन्तु जिस प्रकार बालकके लिअे परम आप्त, परम कल्याणकारा अुसकी माना ही हाती है, अुसी प्रकार मनुष्यके लिअे यह सत्य ही परम आप्त परम कल्याणकारी हाता है। और सब वाने बाहरी होनी हैं। अुह प्राप्त करना हाता है या अुहें सीखना हाता है परन्तु सत्य तो हमारी अुत्पत्तिक साय ही रहता है वह हमसे पहलेवा है। बहू समुरालके सभी लागाकी श्रद्धाभक्तिने सेवा करती है, परन्तु अुमकी निष्ठा ता जेक पतिको ही अपित होती है। अिसा प्रकार हम चाह जिम क्षेत्रमें काय कर, चाह जो जिम्मदारी जुठायें, चाह जो साधना कर, परन्तु अिम प्रिय मत्ता सत्यको अिस मनातन सायीको छाडकर न करे। वह है अिमीलिअे जगत है। वही ईश्वर है। हमारी दष्टि अन्तमुख हागी तब हमें यह विदवान हागा कि आत्मा अुमसे अलग नहा है। सत्यका अथ बबल ययाय कचन हा नहा है। सत्य हमार साय पहलेसे ही है। जस जन हमारी जुननि हाती नाती है वस वने हमें जिम सत्यका सूक्ष्म जीर सूक्ष्मतर दगन होता जाना है। स्थूल अथवा सूदम सत्यके दगनसे कोअी मनुष्य बचिन होता ही नहीं। अिसीलिअे सबके लिअे आगा है और सबके जीवनमें जिम्मेगारा है। सत्यका दगन ही जीवनका मार है बाकी सब नि सार है। क्या? क्या आपका विदवास नही हाता कि बाकी सब नि सार है? मैं सचमुच कहता हू कि बाकी सब नि मार है। हम अुस हृदय-स्वामीको धाखा न दें। वह हमें कभी घोखा दता ही नहीं। वह कल्याणकारी है यह अुमकी मुदरता है परन्तु यह अुमकी निफारिग नही है। मत्य सत्य है यही अुमकी निफारिग है। प्रत्येक प्रवत्तिका अनिम फल, जतिम सतोप सत्य ही है।

अिम बातना अनुभव हानेक बाद ॐ ही हमारा महानाथ्य बन जाता है। अुसका जप ही हमारा अग्वड मताप हो जाता है।

सतवाणीका कार्य*

जाज जब त्रि देशमें धम धमवे बीच झगड़े बढ रह ह और चन्द लाग घबरा कर यहा तक कहने लगे ह कि धम मजहबकी दला ही न रह तो अच्छा, तब 'सतवाणी' का यह सग्रह देखकर अत्यन्त आनन्द और सन्तोष हाता है। दावानल चारो ओर भडक रहा हो और बीचमें वर्षा हो रही हा तब जसा सन्तोष होता है वसा ही असर 'सतवाणी का देग' सतप्त हृदय पर पढता है। लडाओ झगड़े होते ह धमवे मिय्या अभिमानसे धमके नाम पर चलाये जानेवाले स्वाध, मत्सर और द्वेषसे अथवा अज्ञानके कारण वास्तविक भावकी छोडकर गन्दाको दिये हुअे महत्त्वके कारण। सत बहते ह धम काओ घरका पंगु तो है नही जिसका पालन पोषण बाह्य रूपस किया जा सकता हो। धम तो जीवन परिवर्तन है नओ दृष्टिको प्राप्त करना है। धम अेक विगिष्ट कोटिका जीवन है। अुस जीवनका जिन्हाने प्रत्यक्ष परिचय पा लिया अुनक मनमें बाह्य सिद्धान्ताके झगड़े गीण हो जाते ह। पढुचे हुअे लोगकी तो अेक ही बात होनी है। 'सब साधोका जेक मत बिचके बारह बाट।

जब देशमें धम-अधमके लडाओ झगड़े बढ गये तब अिन सताने अनेक रूपाम अवतार ले लेकर धमका हाद दूढ निकाला और लोगोका दिया। सतामें सबको सभालनेकी समबयकारी बति थी परस्पर स्वाधका मेल जमानके लिअे वह धूर्तोंका किया हुआ समझीता नही या। सतमें और कोओ श्रेष्ठता हो या न हो जुसका प्रथम लक्षण अुसकी निस्पहता है। जो निस्पूह है वह निभय भी है। जिसीलिये अिन सताने धर्माग्रही और धर्माभिमानी कमकाण्डी लोगा पर कोडे लगानेमें जरा भी सकोच नही किया।

सताक पाम जिस सुधार-कायक लिअे कोओ निदिचित योजना या काय पद्धति नही थी। अुहे पुरानी रचना तोट कर किसी नओ रचनाकी स्थापना नही करनी थी। व रचनामात्रको अुदासीनतासे देखते थे। कभी वे कहते थे कि अिन ग्रथामें क्या खोजते हो अिनमें क्या घरा हुआ है। ग्रथाको छोड दो। ग्रथाके सहार हृदय ग्रथि खुलनेकी नही। मसि कागजके आसरे क्या टूट भवबध।' कभी वे कहते थे कि अिन ग्रथाका कोओ दोष नही। सोचनेवाले लाग ही जहा स्वार्थी अज्ञानी या मोहमत्त हा वहा वेधारे धमग्रथ क्या करे?

* श्री विद्यागी हरि द्वारा सगहीत सतवाणी की प्रस्तावना।

सताने सबसे बड़ा काम यह किया कि धम और रुढ़ि के नाम पर जो भ्रम, वहम या गलतफहमिया फलो हुई थी उनको दूर कर दिया। संभवतः सताका सबसे श्रेष्ठ काय यही है।

लोगोंके भ्रमको दूर करनेके साथ साथ अन्हाने व्यवहार शुद्धिका काय भी काफी किया है। अन्हाने जमानेमें भिन्न भिन्न जातियामें जो कुछ छल कपट और अमानुषता थी उसे भी दूर करनेके लिये सताने काफी प्रयत्न किया है। वे सत्यके प्रचारक थे। जहां तक धुनके जीवनका सम्बन्ध आता था वे सत्याग्रही भी थे। किन्तु समाजकी कमजोरीको तथा अन्हानेके और अपने बीचमें रहनेवाले अंतरको देखकर सत्य प्रचारमें अधिक आग्रह अन्हाने नहीं रखा।

सामाजिक सुधारके बारेमें भी सताने कुछ कम काम नहीं किया। छुआछूतको अन्हाने असा फटना है कि अगर स्वार्थी ब्राह्मणाने अन्हानेका काम बिगाड़ न दिया होता तो छुआछूत कभीकी नष्ट हो गयी होती।

सत जानते थे कि जाति-व्यवस्था और वर्ण-व्यवस्था समाजके आर्थिक संगठनके लिये चाहे जितनी आवश्यक हो, परंतु जिस व्यवस्थासे समाजका कल्याण और व्यक्तिका अुद्धार न कभी हुआ है और न हानेकी संभावना ही है।

सतमतका प्रादुर्भाव या तो अनादि कालसे है किन्तु जिस 'सतवाणी' का यहा संग्रह किया गया है अंस वाणीका और अंसकी परम्पराका प्रारंभ तो गायद कबीरसे ही हुआ है। कबीरने जो काय किया अंसकी प्रेरणा तो अन्ह स्वामी रामानन्दसे ही मिली थी। कबीरका हिन्दुआ और मुसलमाना दोनोंके ही साथ घनिष्ठ सम्बन्ध होनेके कारण अन्हमें असाधारण योग्यता आ गयी थी। निभयताके साथ वे दोनोंका फटकारते थे। दोनोंका वे शुद्ध सत्य धमका रास्ता दिखाते थे। आज हमारे देशमें और खासकर गावामें जो हिन्दू मुस्लिम-भेदता दीख पडती है वह सताकी ही बदौलत है। सताने सामाजिक नियम ज्या के-त्या ही रहने दिये। वे जानते थे कि सामाजिक रूढियाके पीछे विगिष्ट वर्गोंके हित-अहितका भी सवाल आता है। लोगोंको जिन रूढियाके बारेमें अुदासीन बना दिया, तो आधा काम हमारा हो गया। बाकीका आधा काम युग प्रवतक काल स्वय ही कर लेगा। सताकी जिस दृष्टिमें गायद दीधदशिता थी। गायद अपने सामाजिक कायको दृढ़ बनानेके सम्बन्धमें वे अुदासीन थे। समयके प्रवाहके साथ समाजमें रुढ़िने अपना आसन फिरस जमा लिया और अन्हने निश्चय किया कि सताका अुपदेश सताके ही लिये अच्छा है। लोगमें न तो सताका त्याग है और न सताकी शक्ति है।

सताके कायमें यह जा कमजोरी रह गयी अंस सताकी काय-पद्धतिका दोष मानें या मनुष्य-स्वभावके नसर्गिक दोषका परिणाम मानें ?

सताने गान्धधमकी श्रद्धाजलि देकर अेक आर रख दिया। लोकधममें जो अच्छा अंश अुहें मिला अुसीकी अन्हाने प्रतिष्ठा बनायी और अनिष्ट

अपना प्राणपणन विरोध किया। अपने अनुभव अपने निरीक्षण और लाक-
कल्याणके आधार पर बुढ़ाने विगिष्ट सिद्धांत निरपेक्ष धम चलाया।

जैक बान सास तीरस ध्यानमें रखनी चाहिये। जिन सताकी गगात्री तो
नवनायाक मागमागमें है। हठयोग और कौमियाका प्राचाय धुनमें दहुत था।
बागमें जिन दाना चीजाकी प्रतिष्ठा कम होन लगी और सुरता-साधक ध्यान-
यागना महत्व बग। ध्यानयाग चूकि लाक मुलभ नही था असलिजे अुसके साथ
गाय भक्तियाग आ गया। अनासक्ति और त्याग तो सतधममें प्रारभसे अत तक
भरा ही हुआ है। हठयागकी प्रतिष्ठा सताने अपन मूक विरोधसे जिस तरह
कम की जूमी तरह ब्रह्मवाथमकी प्रतिष्ठा भी सतान बिना किसी विरोधके
कम कर दी। जा ब्रह्मचारो है वही सत हा सकता है—गृहस्थाथम सताके
जिभे है हा नहा जम विचारको जुहाने धीरे धीरे नरम बनाकर सागगी सतोप,
असक्ति और भूतमायक कल्याणकी दयावृत्ति अिन्हीका अुहान जीवनका सार-
गदग्य बनाया।

गताक प्रभावन हमारा राष्ट्रीय चारित्य बहुत ही अूचा अुठा असिमें कोअी
गन्ठ हा नगी। सिन्नु आजकल सनमनक प्रचारके बारेमें जैक गिकायत बार
बार अन्वी है। वट यह कि गतान गगामें जो सताय-वृत्ति और अनाग्रह पदा
किया तारा ननाजा है कि लागामें लोक जीवनके बारेमें अनुत्साह पग हो गया।
गनवाणाका अिजिन अधिन प्रचार हुआ मिकगामें वण्णवामें और महाराष्ट्रके
धारकरा लागामें। गनमनक और गनवाणीके प्रचारक गुण-दोष जिन लोगके
जीवनम निचिन करनेका माह अिन्हीमिनाका अवयव हागा सिन्नु अना करना
अधिन नग है। प्राचीन बागम मनुष्यने अपन सामाजिक गुण-दापाक अनुमार
अन धनका गनगा और जपना सदुचित दृष्टिक अनुमार अमका पालन किया।
जा बापर है व अिन्हीका लाग पीछ रहकर अपनी बापरताका ढाक दते ह
परन्तु जिनम अिन्हीक धम बापरताका धम सिद्ध नहा होना।

भाषाकी दुगिम भी गतारा गग कुछ कम नहा है। गतान ता भाषाकी
अक टरगाग ही गग दा है जिनमें स नअी नगी रिम्मना अगफिया नित्य दल-
दालर तिन्नी रगी ह। बादूककी गगीकी तरह गनवाणी सीधे मनुष्यक
हृदय तक पहुच कर अक क्षाक नाकर अमका मरा हुआ धमअिन्ही पुनजीवित
कर गग है। गगकी बागा अनरायी जन-मनाकर अगगार मपुर और गय
पुन गग है। अरकी गगी निचय-मक हानी है कयाकि वट जीवन-भूक हाती
है अिन्ही कारण व गग-गगन भा हाती है। गनवाणी तिन्नी भी राष्ट्रकी
गग-गग पुग है। व गगगाका विगम नग सिन्नु पावनका निचाह है अिन्ही
जि व व विन और अमर गग है। गनवाणा अगी स्वर्गीय गगा है जिनमें
गग-गग बागम गग-जीवन पविन गमद गमय और स्वतंत्र हा जाता है।

भिन्न भिन्न सताक वचनाका जैसा सग्रह करना दीघकालने सकल्प और प्रयत्नाका फल होता है। अक्सके पीछे जा परिश्रम किया जाता है अक्सके साथ साथ जो अपूर्व आनन्द मिलता है वही अस परिश्रमका भयुर फल है। अस सग्रहक पठन-पाठनसे जा आनन्द हाता है अममे वही बरकर सग्रहकारको जिन रत्नाका चुनाव करनेमें हुआ होगा।

मग्रह करनेके बाद मग्रहकारने जिन भिन्न भिन्न गीपकाके नीचे जिनका वर्गीकरण किया है, व शीपक ही सतमतका रहस्य बतानेके लिये समय ह।

सग्रहक साथ साथ आयुनिक हिंदी गद्यमें सग्रहका जो भावाय (paraphrase) सग्रहकारने दिया है अमम अमकी कविव शक्ति भी प्रकट होती है। जिसे पठने समय गद्यकान्यका रसास्वाद मिल जाता है।

मुझे विश्वास है कि जिन लोगकी जन्मभाषा हिन्दी नहीं है अह यह भावाय बड़ी सहायता पहुँचायेगा। अपनी अपनी प्रान्तीय भाषाओं बोलनेवाले हम हिंदी प्रेमियाका यह विशेष कतय है कि हम अपनी अपनी भाषाकाके सताकी सूक्तियाका असा ही सग्रह सकलित कर अस नागरी अक्षरामें छपा दें और हिंदीमें अस्का अनुवाद भी दे दें। विद्यागीजीकी गद्यकायकी शक्ति हरअेक भाषान्तरकारमें गायद न हो किन्तु कवियाकी वाणीका तज और असकी मधुरिमा अपने कर भारसे राष्ट्रभाषाको ममृद्ध किये बिना नहा रहगी।

१६

सत्य-नारायणका व्रत

१

प्रास्ताविक

स्वामी विवेकानन्दने अपने 'अनुबोधन' में कुछ सुन्दर कथायें और आनन्द-प्रद गल्पित्त दिये ह। उनमें अेक यह भी है

'सनातन हिंदू धमका मंदिर गगन-स्पर्शी है। अस मंदिरमें जानेके माग भी कितने है। और अस मंदिरमें क्या नहा है? वेदानियाके निगुण ब्रह्मसे लकर ब्रह्मा विष्णु, महानेव दुर्गा मूय-नारायण और चद्रमा तक तथा चूह पर सवार गणेशसे लेकर ठेठ छठी गीतला जमे छोटे-बड़े देवी-देवताआ तक सभी कुछ है। और धद, वेदात दान पुराण तत्र आदिमें जितना माल भरा है कि अममें मे अेक ही चीजमे हमारा भव-अधन टूट सकता है। और अम मंदिरके सामने लागाकी भीड़ भी कितनी बड़ी है। तैतीस करोड़ लोग अस मंदिरकी ओर दौडत हैं।

“हमारे मनमें भी कुतूहल पैदा होनेसे हम पदल चले गये । लेकिन जानर देखते ह तो स्तब्ध रह जाते ह । मंदिरके भीतर काजी जाता ही नहीं । दरवाजे पर पचास सिर, सौ हाथ दो पेट और पचास परावाली अंक मूर्ति खड़ी है और सब लोग उस मूर्तिके पराके पास लाठ रहे ह । अंक आत्मीसे हमने पूजा यह है क्या ? जुसने कहा ‘अस मंदिरके भीतर जा दरो दग्ना दिवाजी देते ह अुहे आप दूरस ही नमस्कार कर और अुन पर जेव दा फूँ फेंक दें ता अुनकी बहुत पूजा हो गयी । लेकिन सच्ची पूजा ता जिस दरवाजे पर खडे देवकी ही करनी चाहिये । और यह जो आप वद वेगत दान, पुराण शास्त्र सब देखते ह अुनका प्रसंगवग श्रवण कर ता कोजी हज नहीं । लेकिन आगा तो आपको जिस देवकी ही माननी चाहिय ।

‘हमने दुवारा पूछा तो जिस देवाधिदेवका नाम क्या है ?’

‘अुत्तर मिला लोकाचार यानी रूढि ।’

जिस छटादार गच्छित्रमें स्वामी विवेकानन्दने हिंदू धर्मका यावहारिक रूप दिखाया है । यह स्थिति केवल हिंदू धर्मकी ही है असा नहीं । सारे ससारमें सभी धर्मोंकी यह स्थिति है । शास्त्रकी प्रगति तकके अनुसार ही सक्ती है परंतु लोकाचार तो हृदयका प्रवाह जिस दिगाम बहे अुसी दिगामें बहता है । जीसाजी धम जीर अिस्लाममें कितने ही सस्कार और प्रयायें अुन धर्मोंके सिद्धान्तोंसे भिन्न ह । भारतमें द्विज और अद्विज असा समाजका बडा भेद होनेसे शास्त्रधम तथा प्रावृत धमके दा स्पष्ट भेद पडे हुंजे हम देखते ह । हर समय धम मुधारकोंने प्राकृत धमको सुधार कर अुसे सस्कृत धम बनानेका प्रयत्न किया है । रूढधम और अुसकी रूठियाकी निगा करनभ ही हमन अभी अभी अनेक वष बिता लिये परंतु हमारे ध्यानमें यह बात नहीं धाजी कि रूढ धमके पीछे राष्ट्रीय प्राण होते ह । दशके दोष और देशकी विशेषतायें देगकी शक्ति और देगकी अशक्ति जिस रूधमक ही अणी होते ह । किसी देगका शास्त्रधम केवल अुस देशके आदेश अथवा सर्वोच्च महत्वाकाक्षाको बताता है, परंतु दशकी सच्ची स्थिति तो रूधमस ही समझी जा सक्ती है । समाज जब बहते पानीकी तरह पुरुषार्थी जीर स्वच्छ होता है तब शास्त्रधम पत्यर नसा कठोर बना हुआ नहीं होता और रूढधम भी अपमानित नहीं होता । समाजमें अुच्च वग और सामाय वग जब परस्पर मिल जुल्कर रहते ह तब शास्त्रधमकी अुदात्तता क्षर कर कर रूढधममें अुत्तर आती है और जिस प्रकार कमलको कीचडसे पोषण मिलता है अुसी प्रकार शास्त्रधमको रूढधमसे नित नया भोजन मिलता है । शास्त्रधमका तर्काश्र बहुत तीक्ष्ण होता है, शास्त्र धमका मानसशास्त्र बहुत सूक्ष्म होता है । परंतु रूधम बहुत भोला होता है । वह मानव-स्वभावकी गहरी परीक्षा नहीं करता । शास्त्रधम ब्रह्मदेवकी तरह

हम-बाह्य होता है, जब कि रूढधर्म बहुचराजी माना' की तरह कुक्कुट-बाह्य हाता है। शास्त्रके हसको तत्त्वरूपी मानी मिलते हैं या नहीं, यह कहना कठिन है परन्तु रूढिके कुक्कुटको बहुत धूमनेवाला हानेके कारण भल-बुर सस्काराक रूपमें दाने खूब मिलत हैं।

आजकल यूरोपमें सस्कारा लगाका ध्यान अश्यापालाजी अथवा मानव वग शास्त्रकी ओर अधिक है। अुमका प्रभाव भारतमें भी पडा है। यहांके विद्वान शास्त्रासे बाहरक हिंदू सस्कारा और रीति रिवाजाका अध्ययन करने लगे हैं। बंगालमें रवीन्द्रनाथ ठाकुरने बाब्रुल सप्रदायके साहित्यकी ओर लगाका ध्यान खीचा है। मैसूरमें मिथिकल सोसायटीने तथा बम्बईमें सर नारायण चदावरकरने लोकरूढियाकी दृष्टिसे हिंदू धर्मका रहस्य खानेका प्रयास आरभ किया है। यूरोपक मानववग शास्त्री मुख्यत असे माधनाके वारमें टिप्पणिया लिखनेका तथा भिन्न भिन्न देगामें प्रचलित मायताआकी तुलनाका काय करते आये हैं।

सम्कारी सनातन धर्मका रूढधर्म भी बडा सस्कारी है। अुसका अध्ययन विष्णुकुल अलग ढगस हाना चाहिये। हिन्दू ममाजके नेताजाकी दृष्टि पहलमे ही जिम रूढधर्मकी ओर हानेमें अुन्हाने रूढधर्मके स्वतन्त्र प्रवाहको किसी भी तरह राका नहा और पहलसे ही अुमे सस्कारी बनानेका गुभ प्रयत्न आरभ कर दिया था। अुन्हाने रूढधर्मके सभी देवी-देवताआको पचामतनक अवतार बना डाला अुनमें से मुख्य देवी-देवताआका राष्ट्रीय त्याहारामें स्थान दे दिया मामक बदलेमें अुडदका आटा या भूरा कुम्हडा रख कर हिंसक सस्काराको अहिंसक बना दिया और जिम प्रकार सारी जनताको अुननिका भाग दिखाया।

रूढधर्ममें बहुत बडी गुदता खानेना ही भारी भूल है। लगाका जमा म्यभाव है जुमीको स्वीकार करके अुममें जुनतिका अेकाय बीज बो देनेका, लाक जीवनमें अहिंसाकी अेकाय काध्यमय छटा बना देनेका ही काम अुसमें किया जा सकता है। जिमी दृष्टिसे हिंदू शास्त्रकाराने रूढधर्म पर कौनसे और कितने मस्कार चनाये ह और अुनकी वजहमे आजका हिंदू जीवन कितना सम्कारी तथा कायमय बन गया है जिमकी हमें सस्कारिकी दृष्टिमे जाच करनी चाहिये। भगिनी निवदिनाने जिम प्रकारका अध्ययन बहुत किया है। फीलिडग हॉग्ने ब्रह्मदेगके वारमें जिसी तरहक अनेक लेख लिखे हैं। कि-कड माहवने जॅग अिडियन पद्धतिस जिम दिगामें बहुत लिखा है। परन्तु हम अितनेसे कभी सतोप नहीं मान सकते। हमें प्रत्येक त्याहार, प्रत्येक रिवाज और प्रत्येक सम्कारकी जाच करनी चाहिये और यह खोज निकानेना चाहिये कि अुममें कौनमा रहस्य रखनेका प्रयत्न किया गया है। रूढियामें दोष देखना कठिन नहीं है। परन्तु सत्यकी गुभ दृष्टि गुण विवेचनसे सताप नहीं मानती, वह ता रहस्य जानना चाहती है। अमी ही दृष्टिसे अपने देगके प्रचलित व्रता तथा अुसवाका

अभयन हम करना चाहते हैं। जिसका आरंभ हम गुजरात और महाराष्ट्रमें लोकप्रिय तथा तुलनामें अत्यन्त नवीन व्रत—सत्य-नारायणक व्रतसे करने हैं।

२

व्रत रहस्य

सत्या परता नाहीं धम।

सत्य तचि परब्रह्म ॥*

— मुक्तेश्वर

सत्य-नारायणका व्रत जिस प्रातमें तथा महाराष्ट्रमें अत्यन्त लोकप्रिय है। धर्मशास्त्रोंमें जिस व्रतका स्थान नहीं है परन्तु रुद्धधर्ममें सत्यनारायण-व्रतका स्थान ऊँचा है। लागाकी यह मायता है कि जिस व्रतसे अिष्ट-कामना सिद्ध होती है। जिस व्रतमें सत्य-नारायणकी पूजा कथाका श्रवण तथा प्रसादका भक्षण—जैसे तीन मधुर विभाग हैं। कदाचित् इसी कारणसे जिस व्रतक पीछे सत्यकी जा महिमा है वह ठक गयी है। उस महिमाकी ओर लोकाका ध्यान खानेका यह एक अल्प प्रयत्न है।

जिस रहस्यको पढ़नेसे पहले जिन लोकाको सत्य-नारायणकी कथा याद न हो चुक यह कथा जान लेना जरूरी है।

धर्म मानव हृदयकी अत्यन्त अुच्च वृत्ति है, और वह मनुष्यके संपूर्ण जीवन को व्याप्त किये रहती है। हमारा जावन अुत्तम, सामान्य अथवा हीन होता है धर्मको भी हम असा ही रूप देने हैं। बुद्धि प्रधान ताकिक लोग धर्मवृत्तिका तत्त्वज्ञानका दार्शनिक रूप देते हैं प्रेमल नम्र लोग अुम अुपासनाका रूप देते हैं कम प्रवान कला रसिक लोग पूजा अर्चा आदि ताकिक विधि द्वारा धर्मवृत्तिका पापण करते हैं जब कि सामान्य अथ जन समुदाय कथा कीतनके द्वारा ही धर्मके अुच्च सिद्धान्तोंका आकलन कर सकत हैं।

धर्मचरणके फलके बारेमें भी यही सिद्धान्त लागू होता है। धर्मचरणका फल आंतरिक अथ स्वयं और अुच्च होता है। यह बात जिन लोकाक ध्यानमें नहीं आ सकती अुनके सतापके लिये पौराणिक कथाओं द्वारा बाह्य फल बताना पडता है। धर्मके तत्त्व कितने ही अुचे कथा न हो परन्तु यदि अुह समाजमें रूढ़ करना हो तो अुह समाजकी भूमिका तक नीचे अुतारना ही पडता है। भगवान् तयामत (बुद्ध) ने जिन तत्त्वका अुपदेश किया वे अुच्च अुदात्त और नतिक थे परन्तु जब अुह देवी देवता पूजा-अर्चा मन्त्र-तंत्र आदिका ताकिक स्वरूप देकर महायान पथ अवनरित हुआ तभी वे तत्त्व अथवा अुनका अण आधे अ्रेणियाके गये अुतरा। सत्य नारायणका व्रत इसी प्रकारका एक ताजा

* मत्स्य भिन्न काओ धर्म नहा है। सत्य ही परब्रह्म है।

बुदाहरण है। अके पुराण घर्माभिमानी शास्त्रीने कहा था कि सत्य-नारायणका व्रत पिछले १०० वर्षोंमें ही अस्तित्वमें आया है। गुजरात और महाराष्ट्रके बीचके व्यापारका और छोटे छोटे राज्याका स्मरण जब ताजा था अतः समय यह व्रत गुरू हुआ होगा। परन्तु अिस व्रतके विस्तार और लोकप्रियताको देखते हुए यह कहना गलत नहीं होगा कि अिस व्रतमें लोगोंके हृदयमें बसनेवाले घमका रूप सुदूर ढगने देखनेका मिलता है।

दुनियाका अधिकतर व्यवहार मामूली लोगोंके हाथमें होता है। सत्य पर आम लागाकी तात्त्विक श्रद्धा बहुत कम होती है। ससारमें चाहे जसा नुकसान सहन करने जितना पीछे सामाय लागामें नहीं होता। सत्य-असत्यका बोधी भी विचार किये बिना क्षणिक और प्रत्यक्ष लाभके लिये लोग बचन भग करते हैं नियम तोड़ते ह झूठके सच्चा कर दिवाते ह। कामनाकी सिद्धिके लिये सत्यक साथ समझौता करनेवाले असे अज्ञान लोगोंको सत्यकी लगन कसे लगायी जाय और सत्यक सेवनसे ही अतमें सारी कामनायें सिद्ध होती है यह श्रद्धा अज्ञान लोगोंके मनमें कस बठायी जाय, यह अके विकट सनातन प्रश्न है। साधु-सताने कानून बनानेवालाने तथा समाजके नेताअने अनेक तरहसे अिस दिगामें प्रयत्न करके दख लिया है। सत्यनारायण-व्रतके प्रवतकने अपनी गक्ति और मनिके अनुसार सत्य-नारायणकी पूजा तथा कयाके द्वारा अिस प्रश्नको हल करनेका प्रयत्न किया है।

सत्य-नारायणकी पूजाको लागामें प्रचलित करनेसे दो अुद्देश्य सिद्ध अुअे हैं। लोग सत्यका सेवन या पालन करे यह पहला अुद्देश्य सत्यकी महिमाका समाजमें निरंतर गान हो, यह दूसरा अुद्देश्य। अिस पूजाको अुत्सवका नाम नहीं लिया, परन्तु व्रत कहा है—यह बात भी महा ध्यानमें रखने जसी है। अुत्सवमें हम किसी भूतकालीन घटनाका या किसी धार्मिक तत्त्वका अुत्साहके साथ सहज स्मरण करते हैं जय कि व्रतमें हम अपने जीवनको अधिक अुचा बनानेके लिये कोअी न काअी दीक्षा ग्रहण करते ह।

सत्य-नारायणकी कया सुननेसे और स्वादिष्ट प्रसाद खानसे सत्य-नारायणका अुत्सव हुआ माना जायगा लेकिन अुस व्रत नहा कहा जा सकता। जिस सत्य-नारायणका व्रत करना हा अुमने स्वयं हर समय, हर स्थान पर और हर अवसर पर सत्यके आचरणकी और भौका मिलने पर नव लोगोंको सत्यका महत्त्व समझाकर सत्यका कीतन करनेकी दीक्षा ला हा तो ही अुस सत्य-नारायणका व्रत करनेका पुण्य मिल सकता है।

दुनियामें सभी लोग मामध्य और सपत्तिकी अभिलाषा रखते हैं। धम कहता है 'भूतदया तथा सत्याचरण द्वारा ही तुम्ह सच्चा मामध्य और सपत्ति मिल सकती। पुराणाने यही सिद्धान्त अेक सुदूर रूपक द्वारा हमारे मन पर बठाया

है। पुराण कहते हैं सामर्थ्य और संपत्ति अर्थात् शक्ति और लक्ष्मी क्रमशः कल्याणकी अर्च्छा तथा सत्य अर्थात् शिव और सत्य-नारायणके अधीन रहती है, क्योंकि शक्ति शिवकी पत्नी है और लक्ष्मी सत्य नारायणकी पत्नी है। पतिकी आराधना यदि तुम करो, तो पत्नी जरूर तुम पर अनुग्रह करेगी। जिस प्रकार घन धातु सतत संपत्ति आदि अर्थात् लक्ष्मीकी अर्च्छा रखनेवाले लोगोंसे जिस व्रतमें सत्यकी अर्थात् सत्य नारायणकी आराधना करनेको कहा गया है।

हिंदू धर्ममें तथा हिंदू नीतिशास्त्रमें सत्यका व्यापक अर्थ किया गया है। श्री वेदव्यासने महाभारतमें सत्यके तरह अर्थोंकी कल्पना की है। हिंदू शास्त्रों और पुराणोंका जुलट कर देखें तो हमें मालूम होगा कि परस्पर सबका भिन्न तीन वस्तुआका समावेश सत्य शब्दमें होता है।

पहली वस्तु सत्यका अर्थ है यथाथ वचन। जो बात जमी हो जिस रूपमें हम जानते हैं अथवा जिस रूपमें हुई हमने देखी हो जिस रूपमें हमने उसे समझा-बूझा है उसे वही ही यथाथ कहना सत्य है।

दूसरी वस्तु सत्यका अर्थ है अतम सृष्टिका नियम अथवा किसी भी महावाक्यका विधान। सत्य ही मूल जुगता है सत्य ही हवा चलती है सत्य ही पृथ्वी विद्यका (सबका) धारण करती है सत्य ही यह लोक चलाता है सत्य ही मनकी प्रतिष्ठा है — अर्थात् सत्य-वचनमें सत्यका अर्थ होता है अतम नियम जिसका अल्लघन नहीं किया जा सकता।

तीसरी वस्तु सत्यका अर्थ है प्रतिष्ठा पालन। सत्यका अर्थ है यह टेक कि अब बार मुझ निकल हुआ बोझा पालन होना ही चाहिये, उसी टेक कि अब बार मुझ निकल हुआ वचन हमें निकल नहीं जाना चाहिये। अतः सत्य शब्द ही बचने अपने कुटिल अर्थका दे लिये जिस सत्यके लिये ही राम वनवासको गये जिस सत्यके लिये ही हरिश्चंद्रने अपने राज्यका दान कर दिया। यही तब कि मानवभक्त पंच पाण्डवाने मानाव वचनका सत्य सिद्ध करनेके लिये द्रौपदीके साथ विवाह करनेका निश्चयीय माना जानेवाला काम भी किया।

(आज हमारा सत्य और वफादारीकी कल्पना अधिक बिगुड़ हो गयी है अपने पुत्र का प्राण बरक लगे है यह जाने बिना ही पांच भाभी समा-रूपमें बाट ली मानाव मूलम निकल हुआ अतः वचनको सत्य सिद्ध करनेके लिये आज यदि बाबा पांच भाभी जेव स्वाम विवाह करने लगें तो हम कुछ गणेशकी मूर्त ही करेंगे। मनमें ब्राह्मणका लिये हुआ अपने वचनका सत्य सिद्ध करनेके लिये प्रजाके स्वामित्वका मूल्य राय यदि प्रजा पर घोर अत्याचार करनेवाले किमा तामगी ब्राह्मणका कांजी राजा मचमुच दत्त तो आज हम अपने राजधर्मसे भ्रष्ट ब्रह्मचर और पातर हो कहेंगे। अब यही तो हमने करके अनुसार सत्य-नारायणकी कथाका रहस्य समझना चाहते हैं।)

जन-समुदायमें खास तौर पर दो वृत्तियां प्रबल होती हैं लोभ और भय । अिन दो वृत्तियांका लाभ बुठाकर सत्य-नारायणकी क्या रचनेवालेने सत्यकी महिमा गात्री है । सत्यका भेदन और कीतन करो, जिससे तुम्हें सतति सपत्ति आदि सारी बातें मिल जायगी तुम्हारे सकट दूर हागे और तुम्हारी मना-कामना परिपूण होगी — यह हुआ लोभ । सत्यको भूलोगे सत्यको छिपाओगे ता तुरत ही तुम्हारे बाल-बच्चे मर जायगे, तुम्हारा धन घाय नष्ट हो जायगा, तुम्हारा जमाबी डूब मरेगा राजा यदि अयायसे किसीको जेलमें बंद करेगा, तो उसकी सत्ता नष्ट हो जायगी और जुस पर सब तरहके सकट आ पडेंगे — यह हुआ भय ।

सत्यका व्रत सत्रके लिजे अेकसा फरुदायी है । सत्य पालन सब वर्णोंका धम है यह दिखानेक लिजे जिस क्यामें ब्राह्मण राजा वैश्य ग्वाले और लकड हारेका लाया गया है । असा लगता है कि अपुर बतये हुअे सत्यके तीना अय सत्यव्रतम स्वीकार किये गये ह । वश्य साधु और असका जमाबी की हुअी प्रतिनाआको भूल जात है जिसलिजे अुन पर सत्यदेवका कोप होता है । असके फलम्बरूप चद्रकेतु राजा अुनके विरुद्ध हा जाता है । अिन अभागे समुर-जमाबीकी स्त्रियाके हृदयम प्रतिज्ञा-पालनकी धमबुद्धि जाप्रत होती है, जिस कारण तुरत चद्रकेतु राजाके हृदयमें भी यायबुद्धि जाप्रत होती है । साधु और असका जमाबी चोराके डरमे दडी माधुके सामने झूठ बोलते हैं, जिसलिजे हमारे क्याकार — जिस असत्य भाषणसे अुनका सबस्व नष्ट हो गया असा अुनका अनुभव दकर — विनाशके भय द्वारा अुह सत्यनिष्ठ बनाते ह । कलावती पति-दशनके मोहक कारण सत्यनारायण-व्रतके नियमका भग करती है । तुगध्वज राजा अपने अुच्च वर्णके गवसे और सत्ताके भन्से सत्यका अनादर करता है । जिसलिजे कलावतीका पति और तुगध्वज राजाका राज्य नष्ट हो जाता है । परंतु कलावतीका मोह और राजाका मद नष्ट होते ही अुनका सौभाग्य अुह फिर प्राप्त हो जाता है, यह दिखाकर क्याकार लोगसे कहते ह भाजियो, जो सच हो वही बोली, अपना वचन मत तोडो तथा समाज और प्रकृतिके सबयापी नियमाको मत तोडो, अुनका जुल्लघन मत करो । जिस प्रकार आचरण करोगे तो तुम्हारा अहिक और पारलौनिक कल्याण अवश्य होगा, क्याकि जा मनुष्य सत्यका पालन करता है वह

सर्वान कामान अवाप्नोति

प्रेथ सायुज्यम् आप्नुयात् ।

जिस लोककायमें सत्यको सब-सग-परित्यागी दडीका रूप दिया गया है, यह भी ध्यानमें रखने जसी बात है । जिसमें कविने बडे सुदर ढगमे यह सूचित किया है कि सत्यका अनुसरण करके चलनेस समस्त वासनार्ये नष्ट होकर

मनुष्यमें सत्यसकी वृत्ति दृढ होती है और सत्यका आचरण करनेवाले मनुष्यमें आंतरिक वृत्तिया तथा बाह्य समाजका नियमन या दंडन करनेकी दृढी शक्ति उत्पन्न हो जाती है। सत्य-नारायणकी पूजामें सत्यके स्वरूप तथा महिमाकी प्रकट करनेवाले कुछ अत्यंत जुदात्त श्लोक हैं। अहं यहा देकर श्री सत्य नारायणकी ययामति की हुआ जिस अुपासनाको म पूरा करूंगा।

नारायण त्वमेवासि सर्वेषां च हृदि स्थित ।
 प्रेरकं प्रथमाणानां त्वया प्रेरितमानस ।
 त्वदानां गिरसा घत्वा भजामि जनपावनम् ॥
 नानोपासनमार्गाणां भाववृद्धं भावबोधकं ।
 त्वन्धिष्ठानमात्रेण सर्वं सबाधकारिणी ।
 तामेव त्वा पुरस्त्वृत्य भजामि हितकाम्यया ॥
 न मे त्वदयं प्रातास्ति त्वदयं न हि दवतम् ।
 त्वदयं न हि जानामि पालकं पुण्यरूपकम् ॥
 नमस्ते देवदेवेन नमस्ते घरणीघर ।
 त्वत्स्य कोऽन पापभ्यं शानास्ते जगतीतले ॥

वाङ्मताय फलप्रदं अिस श्री सत्यनारायण-व्रतका जोर कथाका रहस्य जो पढगा जुमीको श्री सत्य-नारायणका कृपा प्रसाद मिलेगा। यह सस्त्रुत भाषामें लिखा हुआ नहा है अथवा आयुनिर्णय है असा मानकर यदि कोश्री अिसका अनादर करेगा तो अुसका सत्यनारायण-व्रत निष्फल जायगा। परंतु यदि कोश्री मनुष्य ध्यान और मननके साथ अिस मुनकर सत्य-नारायणके व्रतका आचरण करेगा तो वह

सर्वदुःखभ्यो मुक्तो भवति मानव ।
 सर्वपापविनिमुक्ता दुःखं मोक्षमाप्नुयात् ॥
 अिह सद्यः फलं भुक्त्वा परत्रे मोक्षमाप्नुयात् ।
 धनधान्यादिकं तस्य भवेत् सत्यप्रसादतः ॥
 दरिद्रो लभत वित्तं बद्धो मुच्येत वधनात् ।
 भीता भयात् प्रमुच्येत सत्यमेव न शय ॥

कल्पियुगमें कोश्री भा मनुष्य चाह जसो भली-दुरी कामनामें सिद्ध करनेके अिधे सत्य-नारायणका व्रत करने लगा। यह लेखकर श्री महादेवने फलप्राप्तिके मागमें अेन मत्त और चरन्वनी टाल दी है

अा मनुष्य अिनदित्रय और सत्यवादी होगा, वही अुम अुवाड कर अिस व्रत फलका द्वार खोल सकेगा। अिति शम्

गजेन्द्र-मोक्ष

श्रीश्वर हमारा परम पिता है यह तो सब लोग मानते हैं, परन्तु हम सब भाजी भाजी हैं जिस बातका विश्वास सबको नहीं होता। सर्वोदयमें त्रिश्वाम करनेवाला सत्याग्रही वसुधव कुटुम्बकम का नियम पालनेवाला होता है जिसलिये कोणी मनुष्य उसका शत्रु नहीं होता। जिसका यह अर्थ नहीं कि काशी सत्याग्रहीने प्रति शत्रुता नहीं रखना। जिसके अनेक शत्रु हो सकते हैं। धर्मके अनुसार चलनेवाला प्रत्येक मनुष्य अधमका आचरण करनेवाले मनुष्यके मार्गमें विघ्नरूप बनता मालूम होता है। फिर भी सत्याग्रही अपने मनमें किसीके लिये प्रेमके सिवा दूसरा काजी भाव नहीं रखता। जब वह अपने भाजीको कुवासनाके वश हुआ देखता है तब प्रेमसे उसका विराध जरूर करता है। समय आने पर प्रेम कठोर हो सकता है। प्रेममें दुबलताकी या मोहकी मद्धता नहीं होती। परन्तु सत्याग्रही विरोध करते हुए भी अपने भाजीका भला ही चाहता है और अपना विराध वह खद कष्ट सहकर ही प्रकट करता है। जिस विरोधके मूलमें प्रेम रहता है, वह हमेशा सफल ही होता है। जिसमें देर भले ही लगे परन्तु विजय तो प्रेमकी ही होती है। मद्य पूछा जाय तो जिसमें विराधी पक्षकी भी विजय होती है। वह बेचारा जिस कुवासनासे घिरा हुआ रहता है उससे वह मुक्त हो जाता है—उसमें से वह अपनी आत्माको फिर प्राप्त कर लेता है। यह भी जेक अनाधारण विनय है। सत्याग्रहका युद्ध धर्मयुद्ध होता है। जिसलिये उसका परिणाम सदा सबके लिये शुभ और मंगलमय ही होता है। जब दो आदमी परस्पर विरोधी स्वाथके वश होकर लड़ते हैं तब जेककी जीत और दूसरेकी हार होती है। श्रीश्वर तटस्थ रहकर देखता है और कमका नियम झगड़ेका निपटारा कर देता है। परन्तु जब एक पक्ष स्वाथको छोड़कर धर्मका आधार लेता है तब परमात्मा स्वयं उसका पक्ष लेता है, क्योंकि परमात्मा सदा सत्यका पक्षपाती होता है। कठिन काम तो है स्वाथको छोड़कर धर्मका पालन करना। श्रीश्वर धमनिष्ठ मनुष्यकी परीक्षा भी कुछ कम नहीं करता। श्रीश्वरकी नीति धमनिष्ठ तथा उसका विराधी—दानाका हित करनेकी होती है। जिस कारणसे धर्म-संग्रामकी अवधि भी बहुत लंबी होती है। धमनिष्ठ पक्ष जब निष्पाप बन जाता है तभी उसे सफलता मिलती है। और सफलताका मुख्य भाग तो यह है कि विरोधियाका विराध शांत हो जाता

है जोर दोना फिरस पहल जसे जेकप्राण भाओ भाओ बन जाते ह। यही सिद्धांत पुराणामें 'गजेन्द्र मोक्ष' की कथामें बताया गया है।

अिद्रक दरवारमें हाहा और हूह नामके दो गवये भाओ थे। जुनके हृदयम मत्सरने प्रवेग नही किया तब तब वे हिल मिलकर रहते थे। परन्तु दोनाके दुर्भाग्यसे जुनक मनमें स्पर्धा बढ गयी। दोनाके मनमें यह भाव अल्पन्न हुआ कि म ही थोष्ठ हू असलिअे थोष्ठ स्थान मुझे मिलना चाहिये। अिद्रने दोनाको समझा कर कहा जीश्वरके यहां सब समान ह। म तो तुम दोनामें कोओ भेद नही देख पाता। फिर भी अुन गवयाको सतोप नही हुआ। अतमें अिद्रने दोना भाओयाको देवल अपि क पास भेज दिया। देवल अपि महानानी थे त्रिकाल-दर्शी थे। लेकिन पूषनानी प्राय मोन ही रहता है। अपिका मोन देखकर थोप्या जोर मत्सरसे भरे हुअे दोना गवये कहने लगे बिल्कुल मूख है। कुछ भी नही समझता। मुनिने मोन तोडकर दयाभावसे कहा तुम दोना कस मूग हो! स्पधा जोर असूयास तुम्हारे निमाग सड गये ह। तुम्हारे भाग्यमें क्या लिखा है यह तुम नही जानते। जानते होते तो अितना मत्सर न रखते। परमा रमाने हर मनुष्यका भविष्य असस गुप्त रखा है फिर भी कमका सिद्धान्त समझानेके लिअे जरा कठोर बनकर म तुम्हारा अितना भविष्य जानता ह अतना तुम्ह मुना देता ह। भाओ भाओ होकर भी तुम जेक-दूसरेस जीप्या करते हो अिमका परिणाम यह होगा कि तुम स्वगसे नीचे गिरोगे और चित्रकूट पवतके पास पशुयोनिमें जम लगेगे। अक बनेगा जगली हाथी और दूसरा बनेगा शरोवरमें रहनेवाला मगर। वहा तुम अपने वरका पशुभावसे पोषण करोगे भाओ भाओ न रहकर गशु बन जाओगे।

बन अितना मुने ही दोनाका भद अुतर गया। दोनाको क्षणिक पश्चात्ताप हुआ। दोना अपिवे चरणामें लोट कर प्रायना करने लगे आप हम पर दया नहा करण ?' अपिने कहा कमका नियम अटल है। अिममें किसीकी दया थाम नही आती। किंतु कमका नियम कल्याणमय भी है। वह अितना कठोर है अुनना ही दमामय भी है। कमका फट दडरूप नही हाता। अुसमें बिगडे हुअे आत्मीका मुधारनकी शक्ति हाती है। तुम दोनामें स अेकक हृदयम पश्चात्ताप जाग्रत रग्या और वह घमके माग पर चलगा। सक्तके समय अुसे ओश्वरका स्मरण हागा। दूसरेक हृदयमें जीप्याकी आग घाय घाय जलती रहेगी। वह असरोत्तर नीच ही गिरना जायगा। परतु अुसका भी अुद्धार हागा। अपने भाओरा विरोध करन करत अुसक हृदयमें भाओकी श्रद्धाका सचार हागा असमें भी आस्तिकता अल्पन्न हागी जोर आस्तिकताक बल पर अुसका भी अुद्धार हा जायगा।

भविष्यका अितना परदा खाल कर मुनिराज फिर मीनमें डूब गये और हाटा तथा हूह अपने कर्मोंके कारण स्वयस नीचे गिर गये। अेक बना राजाका हाथी और दूसरा बना पासके सरोवरका बडा मगर (ग्राह)। दाना अपने पूवजमका भूल गये, अपने भ्रातत्वका भूल गये। मगर हाथीको खाना चाहता था और हाथी मगरस डरता था। हाथा अपने पशु-जीवनके अनुसार विलासमें डूब गया। शत्रु कहा है और शत्रुता बल किसमें है यह बात विलासके नोमें चूर हाथी भूल गया और रूप-शौवनवती हृषिनियाक साथ क्रीडा करनेक लिए सरावरमें अुतरा। ग्राहको ता वही मिल गया जो वह चाहता था। अुसने गजराजका पाव पकड लिया। गज छूटनेके लिये चिघाडने लगा। हृषिनिया भी लाचार बन कर चिघाडने लगी। लकिन पानीमें हाथीका बल कितना चलता ? हाथी जमीनकी ओर दौडने लगा और मगर अुस पानीकी ओर खींचने लगा — 'गजो ह्याप्तपते तीर ग्राहश्चाकपत जन्म।' दानाका यह मुद्र सदिया तक चला (दिव्यवप-सहस्रकम्)। अतमें अव्यक्त-मूर्ति ग्राहने विनाल गजको पक्ज-वनमें — कीचडमें खींच लिया। जब गजके लिये बचनेका कोअी माग नही रह गया। अुस समय गजको यह ज्ञान हुआ कि अब मुचे केवल हृदयस्थ परमात्मा ही बचा सकता है। गजराज न तो शास्त्र पडा था न वह वेदविद था। परन्तु अुच्च कुर्मों जमा हुआ होनेक कारण वह नारायण-भरायण था। अुसने नारायणका ध्यान किया। कविने गजराजके ध्यानका गीर्वाण-वाणीमें अिस प्रकार बणन किया है

अनाश्रयाय देवाय निस्पृहाय नमो नम ।
नमो जगत्प्रतिष्ठाय गोविन्दाय नमो नम ।
विश्वेश्वराय देवाय शिवाय हरये नम ॥

नारायणाय परलोक परायणाय
कालाय लोकनाथाय ।
हितारमकाय आतिविनाशनाय नमस्करोमी ।
अच्युत आत्मवन्त प्रभु प्रपद्ये ।
सनातन लाकगुरु नमामि ॥

शरण्य शरणानाना प्रपद्ये भक्तवत्सलम् ।
प्रपद्ये भुवनसगाना यतीना परमा गतिम् ॥
अेवाय लोभनाथाय परत परमात्मने ।
नम सहस्रशिरस अनन्ताय नमो नम ॥

ध्यान समाप्त होते ही आत्मशक्तिका आविष्कार हुआ गजराजके हृदयमें श्रद्धाका पूर चडा।

तावद भवति मे दुःखं चिन्ताससारसागरे ।

यावत्कमल्पपत्राक्षं न स्मरामि जनादनम् ॥

गजराज पानीमें पूरी तरह डूब गया था। सास लेनेवाली सूडका अप्र-
भाग पानीक ऊपर रह गया था। अमुसे अेक कमल तोडकर गजेद्रने भक्तिभावसे
भीरवरको अपण किया। कमल अनासक्तिका प्रतीक है। कीचडमें अुसका ज म
होता है पानीमें अुसका निवास है। फिर भी वह शुद्ध और पवि रहता है।
पानीमें रहकर वह पानीसे अलिप्त रहता है और प्रकाशमान प्रतापशाली सूर्यका
ध्यान करता है। कमलकी वृत्ति धारण करके गजराजने जीवरको कमल अपण
किया जिमलिअे भगवानको अुसकी मन्दके लिअे दीडना पडा। परमात्माने
गोद्रे और ग्राह दानाको कीचडसे बाहर खींच लिया।

पम्बो पर जाने ही ग्राहकी गति तथा अुसकी दुःखि गण्ट हो गयी।
स्वायके छूट जानेसे अुसे भी परचात्ताप हुआ। अप्रमेय परमात्माने दोनाका अुद्धार
किया। भगवानके दानके बाद भला किसकी दुःखि हो सकती है? दोनाके
हृत्प पवित्र हो गये। अुह अिस बातका भान हो गया कि हम अेक ही परम
पिताके पुत्र ह, भाअी भाअी ह समान ह एक ही ह।

दृग्बद्धधममूला वेदस्य च पुराणगास्त्रादथ ।

त्रनुकुसुमो मां तफलो मधुसूदनपादपा जयति ॥*

महाभारतकारने लिखा है गजेद्र मोक्षकी यह क्या सुननेसे दुष्ट स्वप्नका
नाग हाना है। क्या न हा? भीरवर भल-बुरे दानाका बल्याण करता है।
दाना अपने अपने ढगसे भीरवरकी चरण-पूजा करते ह।

सुरामुररचिनपादपद्म मनातन अेकगुरु नभामि ।

माच १९२३

दुःख मू है, जाध्याम्हिले न जिमना तना है प्राचीन
स्वाय-यागपूना पुण्य है और मुक्ति
अम परमान सप्त जय है।

स्वाद-सयम

[हमारे शास्त्र स्वादेन्द्रियके समय पर बहुत ज़ार देत नही लगते' — गाधीजीके अिस वचनस प्रेरित होकर कानासाहबने स्वादेन्द्रियके समय पर कुछ सुंदर शास्त्र-वचन भेजे ह। अिह भेजत हुअे वाकासाहब लिखते ह आज जो शास्त्र अधिक रुढ है उनुके वारेमें वापूजीकी यह टीका सही है। वडेसे बडा पुष्य ब्रह्म भोजनमें है अिस प्रकार लोगोको समझा कर रोप मिष्टान्त खाने वाले ब्राह्मण स्वाद-सयमकी बात न करे यह स्वाभाविक ही है।'

गाधीजीका यह वचन ब्रह्मचयको ध्यानमें रखकर कहा गया था। गाधी जीका कहना था ि ब्रह्मचयकी नींव बचपनमें ही डाली जानी चाहिये और स्वादेन्द्रियके समयकी प्रतिना लिये विना यह नींव बच्ची ही रहती है। जितना जोर हम ब्रह्मचय पर देते हैं उतना ही जोर आरभस हमें स्वादेन्द्रिय-सयम पर भी देना चाहिये। गाधीजीका यह वचन यहा बुद्धत करने जसा है 'शतानके लिअे पेटमें से प्रवेश करना आसान होता है। अिस द्वारको खुला रखा कि समझ लो सब पापाके लिअे मारे द्वार खुले कर लिये गये।

वाकामाहव भा जिन बुद्धरणाके अतमें स्वीकार करते ह कि बाल-ब्रह्म चारियाके लिअे गाधीजी स्वादेन्द्रिय-सयम पर जितना ज़ार देत है उतना जोर शास्त्रामें नहा दिया गया है। परंतु स्वादेन्द्रियका वहकानेस जो अनय परम्परा चात्रू होनी है अुसका वणन यद्यपि यतिको ध्यानमें रख कर ही किया गया है, फिर भी वह सब लागान लिअे हृदयमें अंकित करने जसा है। अिसलिअे वाका साहबक भेजे हुए शास्त्र-वचन हम यहा देते हैं।

यह कहनकी आवश्यकता नही कि जहा अति-आहारको वज्य कहा गया है वहा स्वादेन्द्रिय-सयमकी ही बात कही गयी है क्यकि अति-आहारके मूलमें स्वाद ही है।

— महादेव देसायी]

अनारोग्य अनायुष्य अस्वग्य चातिभोजनम् ।

अपुष्य लोक विद्विष्ट तस्मात्तत्परिव्रजेत् ॥

नोच्छिष्ट कस्यचिद् दद्यात् नाद्याच्च व तयातरा ।

न चवात्स्यग्न कुर्यात्

॥

— मनुस्मति

अति भोजन आरोग्य आयुष्य और स्वग तीनाको असम्भव बना देता है, वह अपुष्य है, जगतमें निन्दित है, अिसलिअे त्याग करने पाग्य है।

किसीको जूठा जन नहा दना चाहिये, असमय नहा खाना चाहिये तथा अति-आहार नहीं करना चाहिये।

यमस्मृतिमें नीचेके वचन आये ह

अजसगात वल् दर्पो विपयासक्तिरेव च ।
काम श्रोथ तथा लोभ पतन नरक् ध्रुवम् ॥
तावज्जितेन्द्रिया न स्याद विजितायन्द्रिय पुमान् ।
न जयेद्भसन यावज्जित सब जिते रस ॥

अनकी आसक्तिसे बल अहंकार विपयासक्ति, काम श्रोथ और अतमें निश्चित ही नरक पान होता है। अय अिन्द्रियोको जीत लेने पर भी जब तक मनुष्य रसका नहा जीतता तब तक वह जितेन्द्रिय नहीं कटा जाता। जिसने रसको जीत िया अुमने सब-कुछ जीत लिया।

मनुस्मृतिमें दूसरा वचन भी है

अेक काल चरेत भक्ष न प्रसज्जत विस्तर ।
भक्षे प्रसक्तो हि यतिर विपयेष्वपि सज्जति ॥
अलाभे न विपादी स्याललाभे च न हृषयेत् ।
प्राणयात्रिकमात्र स्यान् मात्रा सगाद्विनिगत ॥

अेक जून भिक्षा माग लनी चाहिये बहुत पानेकी अिच्छा नहीं रखनी चाहिये। भिक्षा प्राप्त करनेमें आसक्त यति विषयमें भी फस जाता है।

अगम होने पर विपाद नहीं करना चाहिये लाभ हाने पर प्रसन्न नहीं हाना चाहिये अनेक प्रपचाका परिग्रह छोडकर केवल शरीर-यात्रा चलानेका ही प्रपच रचना चाहिये।

आगे चलकर मनुस्मृति कहती है

अपात्राभ्यवहारेण रह स्थानासनेन च ।
हृष्यमाणानि विषयर जिन्द्रियाणि निवृतयेत् ॥
अिन्द्रियाणा निरोधेन रागद्वेषक्षयेण च ।
अहिंसया च भूताना अमत्तवाय कल्पते ॥

अप-अन्न खाकर जवात स्थान तथा आसनसे विषया द्वारा खीची जाने-वागी अिन्द्रियाको (विषयाने) मात् लेना चाहिये।

अिन्द्रियात् निरोधम राग-द्वेषक् क्षयम तथा भूताने विषयमें अहिंसाका विक्रम करनेसे अमत्तव प्राप्त किया जाता है।

अब वि-मनुस्मृतिवा देविये

ना स्वाप्येद्रम तत्र जिह्वया धमबिन् क्वचित् ।
अनेन विधिना ह्वा पचप्राणाहुनि पथम् ॥

नेप जौपयवत्प्रादय म्बिचयर्षं श्रुतिगासनात् ।
मष्टामष्टे न कुर्वीत राद्वेषौ च चेतसा ॥
मितागना भवन् नित्य भिन्नुमोत्परायण ।
कामश्पादया दाया न भवन्ति मितागिन ॥

धमका जाननेवाला (अतः खाते समय) जीभसे रसका स्वाद न लं । जिस विभिन्ने अन्न जन्म पक्ष प्राणाहृतिया देकर वाकीका अन्न श्रुतिक शासनक अनु-
सार शरीर निवाहक लिजे बदन औपधिकी तरह खाना चाहिये । बसमें बच्चे
या पक्ष हूअेका, स्वादिष्ट या अस्वादिष्टका विचार नहीं करना चाहिये तथा
मनसे राग-द्वेष नहा करना चाहिये ।

मान-परायण भिन्नुका नित्य मिताहारी रहना चाहिये । मिताहारी मनुष्य
काम, क्रोध आदि दोषांसि मुक्त रहता है ।

मानमें कौनसा अन्न पसंद किया जाय, जिस विषयमें देखिये

हित मित सन्नाशनीयान् यन्मुखेनव जीयते ।

धातु प्रकुप्यते येन तदन्न वजयेत् यति ॥

मद्रा हिनकारी और मित आहार खाना चाहिये, सरलतास पचाया जा
सक असा ही आहार खाना चाहिये । जिस अन्नम धातु (वात पित्त कफ) का
प्रकोप हो बने अन्नका यनिका त्याग करना चाहिये ।

दत्ताश्रेय कहते हैं

जामममितम आहार आहर्त् आत्मवान यति ।

जयनशुधितस्यापि समाधिर् नव जायते ॥

जिनात्मा यनिका आत्माके अनुकूल आहार करना चाहिये । अथत क्षुधित
(भूखा) रहनेवालेका भी समाधि सिद्ध नहा हानी ।

व्यामनी कहते हैं

नाहार चिन्तयेन प्रातः धममक तु चिन्तयेत् ।

मनस्यार मनुष्यको आहारका विचार न करके केवल धमका ही विचार
करना चाहिये ।

श्रुति-वचन जिस प्रकार है

औपषव-प्राणीयात्प्राणमधारपाय यथा भेदोवद्विन जायत ।

केवल प्राणाको टिकाये रखनेके लिजे औपषकी तरह अन्न खाया जाय,
जिस प्रकार खाया जाय कि भेद अर्थात् चरबीकी वद्धि न हो ।

सप्तपदी

मन्त्राणामे पक्वार्थं जीवन्तं ममां आ । मृत्युं ममै स्थातुं ह्यसि ॥
जीवनं आत्माया अधिपतिरिह भूया वाताय परित्रय वरायाः ॥ १ ॥
पत्नी मन्त्राय अहं अष्ट अष्ट अष्ट अष्ट अष्ट अष्ट ॥ १ ॥ व गव गव १ ॥ स्थातुं
वर्त्ते जत ॥ परतु भुत गवता आगार भिन् मन्त्रा गाय मन्त्राय पर १

१ ॐ श्रीं अर्चनी भव । मा मा भूयता भव । वरार्थं प्राप्ते
चान्तरं त्रिं पति-पत्नी दोनामै जगतां हातां पारिष । अहं दूग्देका जगतां
द्वन्वाता चतय हाता पारिष । मम-मन्त्रायी भिन् मिन मन्त्रिभ्र-मन्त्राय
वद्व और वात्त नीरर चाकर तथा अय आरिन्त्र त्र — गवता आगार गू
स्थाश्रम पर है । अिगन्त्रिं पति-पत्नी परतो मन्त्रि वडाात त्रिं गता मन्त्र
रहना चाहिये । अिगमें भी पत्नीको पति-पत्नी पारिषी १ त्रिगन्त्रिं
गुण-दुष्टमै अपन भूयताहा वापय मन्त्रा त्रिं पर अतो पत्नाय मन्त्राय
मागता है । गुरुपार्यं करनेकी त्रिम्माता मरी है परतु तरी मन्त्राय
हमना ही चाहिये । जीवन्-मन्त्रायै वांते प्रायगे मन्त्र आयं त्रिगन्त्रिं म पत्नी
चतुगा नू मने पीछे पीछ आता । म त्रिं प्रथारा पत्नी वर भूयता पत्नी
नू भी करना । हमारा आत्मा जव रहता । अिगाये हाता राता अर्चनी बनता ।
जता बह वर पति मन्त्रायी परमात्मामो प्रायना करता है त्रि वर पति-पत्नी
दोनाको माय दिगाये ।

१ श्रीं वा जय है प्रेरणा । भूयता वर पर पर-गुन्धीरी गानी चानी है ।

२ ॐ अूर्जे त्रिपती भव । भूयता अहं है पति पत्नी गाम्भ्य ।
विवाह मन्त्र-पसे गारीरिन् तथा दूग्दी गन्त्रिया वद्वनी पारिष । वद्व परिपारता
भार भुठानेने लिजे पति-पत्नी दोनामै सब प्रकारकी पति-पत्नी आवश्य है । गृहस्था
श्रममें परस्पर आपपणो माय जे-दूग्दी गन्त्रि वडााती प्रवलि भी होती
चाहिये ।

३ ॐ रायस्पोपाय त्रिपती भव । विवाहवा तीमरा आत्मा है धन धायकी
समद्वि । गृहस्थाश्रम पर ब्रह्मचय वानप्रस्थ और गन्ध्याम तीना आश्रमारा अय
स्वम्भन है अत प्रत्येक गृहस्थीका धन धायकी समद्विने लिभ प्रयत्न करना ही
चाहिये । त्रिप्र प्रकार धन धायकी आवश्यकता है अमी प्रकार ज्ञान बुधालता
और हर प्रकारके गुभ सस्काराकी भी आवश्यकता है । गृहस्थियाको अिन सबके
लिभे मदा ही प्रयत्नवान रहना चाहिये ।

४ 'ॐ मायामव्याय चतुष्पती भव।' जो लग यह समझन है कि विवाह केवल अकेल-दूसरेके सुखके लिये ही है, अतः यह जानना चाहिये कि आपसमें प्रेमकी गहरी भावना सब प्रकारका साम्य तथा घब घब और पान-कुगलता — जितना प्राप्त करनेके बाद ही और जिन तीना वाताकी व्यवस्था तथा बद्ध करनेके बाद ही मनुष्य सुखकी कामना कर सकता है और अमुक याग्य भी बन सकता है। त्रिमीत्रि द्विवाहके सात अद्वेषामें सुख-सतोपको बद्रम्यानमें रखा गया है।

जिस प्रकार त्रिविध तैयारी करनेके बाद ही सुख भागनेके लिये मनुष्य तैयार हो सकता है, अतः प्रकार अिस सुखसे तीन प्रकारके अिष्ट परिणाम निकलने चाहिये।

५ 'ॐ प्रजाम्य पचपदी भव।' प्रजाका अर्थ है सतान जोर समाज। गृहस्थाश्रम जिनके हितके लिये होना चाहिये। विवाहकी सतान सम्कारी हा मुनिमित्त हा, ता ही माना पिताका अिहलोक और परलोकमें पारिवारिक जीवनमें और मनातन सामाजिक जीवनमें स्थिरता प्राप्त हो सकती है। अपुनिपदामें कहा गया है कि जा मनान अच्छी तरह सुनिमित्त और सुमम्कारी होती है, वही माना पिताका और दूसरे पितराको अुत्तम लोक प्राप्त कराती है, अुह सम्गति अपण करता है। पुत्र अनुनिष्ट लोच्य आह।'

जिसके बादका आदग वैवाहिक जावनके लिये अत्यत आवश्यक है। जिस आदगकी रक्षा और पालन हा तो ही विवाहिन जीवनकी सफरता सिद्ध हा और अुसकी सुगघ जत तक टिकी रहे।

६ ॐ अनुम्य पटपदी भव। वषमें जस अेकके बाद दूसरी, छह अुनुए आती हैं और सारी मष्टि जिन अनुजाके अनुगार अपने जीवनमें परिवर्तन करती है वैम हा पति-भरतीका भी जीवनकी अनुआमें होनेवाल परिवर्तनके अनुगार निन-नूतन ढगसे अेक-दूसरेके लिये अनुकूल बनना चाहिये। व्यापार-व्यवसायमें मूल करार पर ही दृढतासे डटे रहनेकी जरूरत होती है जब कि विवाह-सम्बधमें अेक-दूसरेके अनुकूल बननेकी जरूरत होती है। युवावस्थाके सेलाडीपनमें दोना अेक दूसरेके साथ जस घुमिल जाते हैं अुसी प्रकार प्रौढ हाते ही दोना अेक-दूसरेकी प्रौढ रसिकताके अनुकूल बन जाते हैं। अिसके बाद जीवन समृद्ध होत हात अेकमें आय-गभारता आने लगी कि तुरत ही दूसरका भी अुसके अनुकूल प्रसन्न गभीरता अपने भीतर बढ़ानी चाहिये। परेगानीके समय जा पनी पतिको धीरज वधाये दु खक समय अुमे सात्वना दे, पराक्रम करनेके अवसर आने पर अुस प्रोनाहन दे, पतिकी विजयमें आनद व्यक्त करे और घमाचरणमें पूरी तरह अुसका नाय द वही सह धमिणी है। और जब जीवनके परिपक्व होने पर अेक पत्र विरविन अनुभव करे जुन समय रामकृष्ण परमहसके लिये जिस प्रकार अुनकी

पत्नी गारदा माता अनुकूल बन गयी अन्त प्रकार पत्नी माणमागमें भी पति का साधना-महचरी बन जाय तो वहा जायेगा कि अनुक विवाहता परिपूर्ण अन्त हुआ :

७ ॐ सखा सप्तपदी भव । जीवन भर जिग पत्नीका पतिका अनुकरण ही करना है जुस पत्नीके अनुयायी या गुलाम मान लिय जानना हर राना है । अत डरको दूर करनेके जिं परस्पर समानताका घातर गताभाव विवाहका सजश्रेष्ठ जोर चरम अहेय माना गया है । मय अपसा समानता रिगीका अधिकार नहा है । जहा समूह अक्य है वहा समानताकी जिं हा ही नहा गवती । सग्यके मूलमें परस्पर आदर और भक्ति हागी चाण्यि । पतिका पत्नीके विरड स्वाभिमानकी भावनाका विनाग न करन व्यवहारमें आश्रयानाराः स्थिति आ भव करते हुजे भी पत्नीके प्रति भक्तकी वृत्ति ही धारण करनी चाह्यि । अिग प्रकार अक-दूसरेके अपामक बन जाये दानाका जीवनम अपार आन ता प्राप्त हाता ही है माय ही दानाका अलड सहवास हाने पर भी विवाह-सम्बधमें कभी वासीपन नही आता । न तो यवान माूम हाती न अूव ममूम होनी । जिग प्रकार अपा प्रतिदिन आने पर भी अपनी प्रसन्नताका बनाये रखनी है असी प्रकार विवाहमें भी पति-पत्नीका नये नये आरपण और नय नये सताप निरन्तर प्राप्त हात ही रहते ह । जिस सम्बधसे जमी नित्य-नूतनता प्रसन्नता जोर जीवत गाति प्राप्त होनी है वही सम्बध सच्चा विवाह है । असीस सब प्रकारके कल्याण सिद्ध होते ह । विवाह-सम्बधका आदि मध्य जोर अत तीना स्थितियामें सुखमय गातिमय और कल्याणमय बनाया जा सकता है ।

जस जादशका पालन करनवाली पत्नी अपनी सवा नन्नता जोर प्रसन्नताके द्वाग केवल पतिकी ही नही परन्तु सास समुर नन भौजाभी सबकी आदरणाय सम्राणी बन जाती है और अुसक अुत्पन्न किये हुअे वातावरणके कारण मनुष्य तथा देव सभी सतुष्ट होते ह ।

जुलाभी १९३९

शास्त्रोका उपयोग

जिस प्रकार श्वास लेनेके लिये किसीसे पूछना नहीं पडता भारतमें रहनेके लिये जिस प्रकार हमारा लागाका किसीकी बिजाजत नहीं लेनी पडती, वुसी प्रकार सनातन धर्ममें रहनेके लिये किसीकी मेहरवानीकी जरूरत नहीं होती। सनातन धर्म पर किसीका बिगोप अधिकार नहीं है। वह सभोका है। सब हिन्दू वुसमें रह सकते ह और वुसम लाभ वुठा सकते हैं।

सनातन धर्मके अपि-मुनियाने धर्मशास्त्र रचे हैं और व मसूहत भाषामें लिखे गये ह। इसलिये ससूहन भाषा पवित्र मानी जाती है। लकिन ससूहत भाषाका अर्थ सनातन धर्म नहीं है। अकेले शास्त्राका भी सनातन धर्म नहीं कहा जा सकता। हिन्दू जातिके अथान ब्राह्मणस केर अत्यन्त तककी सारी जानियाक समबदार और पवित्र पुरुषाका जीवन और चिन्तन ही सनातन धर्म है।

जसे पवित्र पुरुष अत्यन्त नम्र बनकर शिष्यभावस प्राचीन अपि-मुनियाक बचनाको स्वीकार करते आये हैं। वे अपि मुनियाके बचनाके आधार पर अपना जीवन बनानेकी प्रेरणा प्राप्त करते आये ह। इसीलिये शास्त्राका अितना महत्त्व है। और वह अुचित भी है, क्यकि अपि-मुनि स्वयं धर्मप्राण ये — अर्थात् वे धर्मके लिये ही जीते थे। वे ओश्वर प्राप्तिके लिये प्रयत्न करते थे और प्राणी मात्रका कल्याण चाहते थे।

धर्मका विचार करना हो तब पहले धर्मनिष्ठ, धर्म-परायण और धर्मप्राण लागाक बचनासे धर्मकी दृष्टि प्राप्त करनी चाहिये। इसीके लिये और अितना ही धर्मशास्त्राका अुपयोग है।

ओश्वरने सबका आर्षे दी हैं, सभोको बुद्धि दी है प्रत्येकको वुसके अपने लिये और वुसके बालबच्चाके लिये स्वतन्त्र जिम्मेदारी भी ओश्वरने दी है। मनुष्य कितना भी अयोग्य क्या न हो फिर भी वुसके बच्चाके पालन पापणकी जिम्मेदारी वुमके हाथामें सौपने जितना विश्वास तो ओश्वर वुम पर रखता ही है। यही बताता है कि मनुष्य अपनी और कुछ हद तक दूसराकी जिम्मेदारी अपने सिर लेनेका अधिकारी अवश्य है। काशी भी मनुष्य इसलिये परतन्त्र नहा रह सकता कि वह मदबुद्धि है, अनपठ है पिछडा हुआ है या सस्कारहीन है। शास्त्र मनुष्यको परतन्त्र बनानेके लिये नहीं किन्तु वुस स्वतन्त्रताके अधिक योग्य बनानेके लिये है। इसलिये शास्त्र राजा या वानूनका स्थान नहीं लेते परन्तु

माता और गुरुना स्यात् तै हँ। जहाँ राजा और कानन पाम ताता प्रचेन को अधिकार हा यहा माना जीर मुधर पाम जाता अधिकार मिड करता जहरी नहा होना। गान्धार अध्वयनरा अधिकार ब्राह्मणारा ही है— श्री मायता यदि समाजमें पत्रा हुनी हा ता जिसरा कारण मही है कि गान्धार पानर लिअे जा भाषापान जो धय तथा जा बुताह पाचिने यन ब्राह्मणामें है जीर साधारण लागामें नहीं है। ब्राह्मणारी आजाधिरा हा गान्धार जय करने पर निभर रती है, अिमलिअे यत्ि व गान्धार अध्वयन र कर ता वहा जाय ? परंतु जब किसी भी वादरा मनुष्यरा अजाधिरा मिड जाता है तब वह आगानीमे अभिमानी और आलसा बन जाता है। ब्राह्मणारा नी असा ही हुआ।

यह बात सब है कि गान्धारकी रक्षा करे गान्धार प्रचार करने जीर गान्धारका अधिकाधिक गहरा अध्ययन करनेका काम ब्राह्मणको सौंप गया है। लेकिन समाज जाग्रत रहेगा तो ही ब्राह्मण अपना यह कर्तव्य अच्छा तरह पूरा करे। ब्राह्मणको जो दक्षिणा जीर जाजीविका मिलनी है वह कर्त्त दूगरी जातिवाक गगाना आजीर्वाद देनेक लिअे ही नहा मिटती। अुह स्वय पानमान और चरित्रवान रद्वर सब लोगको पवित्रताका और शौचल्यरी गिणा नी चाहिये लोगका सदाधारका पाप देना चाहिये। गिनेनी लागार आश्रमणम प्रजाकी रक्षा करनेके लिअे जिस प्रकार क्षत्रियाकी सेना रती थी अुनी प्रकार ब्राह्मणारी सेना अणा अधविद्वाम जीर अनाचार रपी गनुस उडनर प्रजाकी रक्षा करनेके लिअे थी। क्षत्रिय यदि लुटेरे बन जाय जीर ब्राह्मण अना तथा अधविवागक समयक बन जाय तो वे समाज द्रोह करते ह। फिर व समाजमे जमीन जागर या दक्षिणा पानेके अधिकारी नहीं रह जात।

समाजमें जब अकाध मनुष्य विफरता या विगडता है तो समाज जुम सजा कर सकता है। परंतु जब पूरा बग ही विगडता है रास्तेम भटक जाता है सड जाता है या गिधिल बन जाता है तब समाजको अपनी रक्षाना काम स्वय ही करना पडता है। जसे मौक पर क्षत्रिय और ब्राह्मण यत्ि परम्परास चलती आजी अपने अधिकारकी बातें करे तो व अुहे गोमा नहा देती और न समाजक सामने अुदना बुड चलता है। लोगक तूफानी या डरपोन बननम जसे राजाकी लाज चली जाती है वसे ही लागार नास्तिन या अधविवासी बननमे धमाचापोंकी लाज निश्चित रूपसे धली जानी है।

अधविद्वान ही बन्नास बडी नास्तिकता है जीद्वरका द्रोह है धमपी हया है। यह दु सकी बात है कि हमारे लोग जिमे नहीं समझते। लगभग डेा हजार वष पहल भरवस्तानमें जेक मनुष्यने यह बात समझ ली थी कि अध विवामाका पोषण करनम जीद्वरका द्रोह है। अिसलिअे जुसन अधविद्वानारा

नाग करनेवाला ब्रेक पय चलाया। जहा फाडा हाता है वहा मक्खिया आकर बैठनी है और भुस मडाघकी ओर हमारा ध्यान गावती है। भुमी प्रकार जहा अघविश्वास हागे वहा भुनका भडा फाडोर लिजे अिम्लाम जरूर पटुच जायगा। नाचे अिम्लामका विनी भा घमस विरार नहा हा सन्दा। परन्तु अघविश्वासाका वह घार विरापी है। किसी समाजमें अिम्लामका मफ्तता मिन् ता समय लेना चाहिये कि जुन समाजमें घमके नाम पर अघम चलता है सच्च शास्त्र सा गये हैं बार अघविश्वासाका राज्य चलता है। यह प्रत्येक घमक लिजे बीस्वरकी दी हुओ नाटिम है। अिस नोटिसक मिलते हा प्रत्येक समाजका जाफत हा ही जाना चाहिये।

हिन्दू घममें जितनी भी जातियाका समावग हाता है उन सव जातियाको अपने चरित्रकी शुद्धि करनी चाहिये, सभीको अपना चरित्र-बल बढ़ाना चाहिये। अिनलिजे अघविश्वासाकी अयवा जघविश्वासाकी सत्ताका स्वीकार न करके हमें स्वय घमका रहस्य जाननेका प्रयत्न करना चाहिये।

आज कोओ भी मनुष्य सस्त्रुत भाषा सीख सकता है। शास्त्र सबके लिजे बिल्कुल खुले ह। शास्त्रामें अच्छा क्या है और आज न चल सक या गले न अनुन सक असा कितना है, यह भी सब कोओ जान सकता है। स्मतिप्रय अितने पुराने हो गये हैं कि कट्टरम कट्टर सनातना लोग भी यह नहा कह सकन कि व शास्त्राके अंगरायका पालन कर सकत हैं अयवा पालन करनेके लिजे तयार हैं। शास्त्राके अेक-अेक अंगरको पसद करनेवाला काजा सनातनी मिलेगा या नहा अिसमें भी गका हा है। कुठ लोग ककीलकी तरह दलीलें दकर अिस अिनिको छिपा जरूर मक्ते ह, परन्तु अिससे स्वय भुनका भी जब समापान नहीं हागा, तर दूसरा ता कौन षीत्रेमें आ सकता है? अिनीलिजे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि सनातन घमका अय है तमाम हिन्दू जातियाके सयाने और चरित्रवान लागका आजका धार्मिक आरग।

अवतारवाद

१

अवतारवाद हिन्दू धर्मका अथ विशेष अंग है। वेदान्त कहता है कि मनष्य मूलमें श्रीश्वर है। प्रत्येक व्यक्तिव हृदयमें श्रीश्वरीय तत्त्वका वाग है यह बात कम-अधिक परिवर्तनक साथ हरजेक धर्ममें कहा गयी है। रामन श्रीर या पौराणिक धर्मोंमें जिनमें देवी-श्वताआकी बहुत बडी सख्या है तथा जगतमें अथ अप्रतिम मल्ल बनकर रहनेवाले श्रीप्यात्रु श्रीश्वर पर ही श्रद्धा रखनवाले मन्दी धर्ममें, श्रीसात्री धर्ममें और इस्लाममें भी देवी-श्वताआक स्वभावाकी बलना लगभग मनुष्यके स्वभाव जसी ही की गयी है। धर्मकथाओंमें कहा गया है कि श्रीश्वरने मनुष्यको अल्पज्ञ किया है, परन्तु विनासवादी यह कहने आये ह कि श्रीश्वर ही मनुष्यकी वृत्ति है। असा आभास हो सकता है कि ये सब धर्म जब तारवादस मिलते जुलते ह। परन्तु अवतारवाले सचमुच जेक विष्णुण जीर अद्भुत परिणामवाली कल्पना है। यह वाद जितना हृदयको आवागमन गता है उतना ही तबबुद्धिके शिथे भी ग्राह्य है। अिसके मयाथ स्वल्पका हमें समझ लेना चाहिये। अवतारवादको कुछ हद तक समझ लेनेक बाद अथ मुसलमान और श्रीसात्री भी कहने लगे ह कि 'अवतार ही पगम्बर है अिम अयम हमें अवतारवाद माय है। कुरानमें तो स्पष्ट कहा गया है कि जमी जेक भी भूमि या पीडी नहा है जिस जीश्वरने पगम्बर न किया हो। मृष्टिकी तरह पगम्बराकी परम्परा अबाधित रूपमें चली आत्री है। यहूदी और जीसात्री भी पगम्बराकी परम्परा पर विश्वास रखते ह। अिसलिजे अथ यदि हम मन् कल्पनाका और विभिन्न धर्मोंकी अलग अलग समझके सच्च स्वल्पका अनुसरण करके अवतारवादकी भीमासा प्रस्तुत करे तो न बवल हिन्दू धर्मका परन्तु सभी धर्मोंको वह माय होगी। अितना ही नहा भविष्यमें समस्त मानव जातिका समावेग करनेवाला सारे धर्मोंका जो तत्त्व-परिवार रचा जायगा अुसमें अवतारवादको मुख्य स्थान प्राप्त हुआ बिना नहीं रहगा। यहा हमारा अुद्देश्य केवल लाभकी या प्रतिष्ठाकी दृष्टिके अवतारवादको मुद्दर दिखाना नहा है हमारा अुद्देश्य यही लिखाना है कि आज अवतार-भीमासा कितनी महत्त्वपूर्ण और ससृष्टि पोषक है।

बौद्ध परिभाषाक अनुसार कोयी जीव जब अतमुख बनकर अपनी स्थितिक वारेमें असतुष्ट होता है और अपन सारे दोषाको दूर करके सब शुभ गुणाका

आत्यंतिक विकास साधनेका मकल्प करता है तब उसे बोधिमत्त्व कहा जाता है। असा बाधिसत्त्व अेकक बाद दूसर सद्गुणकी पारमिता अयात सर्वोच्च बाटि सिद्ध करते करते प्रत्येक जन्ममें ऊपर चढता जाता है और अतमें बुद्ध बन जाता है। अुसमें जब अपना बुद्धार करनेकी शक्ति आ जाती है तब अुस 'पच्चक (प्रत्येक) बुद्ध' कहा जाता है। वही बुद्ध जब जगतका बुद्धार करनेके लिये समय बन जाता है तब वह शार्क्यासह गौतम बुद्धके समान 'तथागत' हा जाता है।

प्रत्येक मनुष्यका स्वाभाविक अुत्पत्ति क्रम यही है। गीनाने जितका 'अनेक-जन्म-ससिद्ध बह्वर परिचय दिया है अुसीको नर करनी कर ता नरका नारायण होय' अिस लोकोक्तिमें नारायण कहा गया है।

हममें से ही हमारा बुद्धारक अुत्पन्न हुआ, हमने जो साधना नहीं की वह अुमने की, हममें स ही अेक होने पर भी वह परमात्माका अण बन गया — यह सब आत्माने देवत हूजे भी मनुष्यके लिये अिस स्वीकार करना कठिन हाता है। अिसमें अेक यह कठिनायी तो है ही कि हमारी बराबरीका आदमी हमस आगे चला गया अमा स्वीकार करनेमें हमें हीनताका अनुभव होता है। लकिन दूसरी अेक सद्भावितक कठिनायी भा है जिनका विचार यहां किया जाना चाहिये।

यह शका स्वाभाविक रूपमें ही पदा हाती है कि प्रत्येककी आत्मा स्वभावस गुद्ध बुद्ध नित्य मुक्त और सब-समय होत हुआ भी अपना यह मूल पद वह क्या खो बठी? जो गुद्ध है वह अगुद्ध बन हा सकती है? जा मुक्त है वह बधनमें कैसे फस सकती है? जा निय है वह अनित्य कैसे बन सकती है? और जा सब-समय है वह स्वयको अघ पतनने क्या नहीं बचा सकती? ये प्रदन अुठना स्वाभाविक है। तब कहता है कि आत्माका अण पतन हुआ ही नहीं। यह सब भ्रम है। आत्मा गुद्ध बुद्ध, निय-मुक्ता ही है। ता फिर यह भ्रम किस पदा हुआ? जब स्वतंत्र रूपम दबने पर अस परस्पर विरागी कथन नहा मात्रम हात लगत ह तब तत्बुद्धि परगतानामें पड जाती है और अुम स्वीकार करना पडता है कि अिमका स्पष्टीकरण भरे पाम नहा है। अपने पराभवकी अिम स्वीकृतिको ही 'माया' कहा गया है। माया बोली बान, काशी मिद्धात नहीं है परन्तु बन्नुभ्यतिको स्वीकार है।

सर्वोच्च श्वित्तमें हाने पर भी जो आत्मा अपने स्थानको टिका नहीं सका वन अगुद्ध अनिय अपानी और बद्ध हानेक बाद फिरने ऊपर चढनेकी शक्ति कम प्राप्त कर सकती है? जो कुठ अपने पाम घा वही जिन मनालते नना आया वह आत्मा छाये हूजेका अण अपनी शक्तिम बापिम पानेकी योग्यता कम प्राप्त करगी? अिसलिये जा समय है अुमीका बृषालु बनकर नीचे अुतरना चाहिये और हमारा हाय पकड कर हमें ऊपर अुठा गता चाहिये। अिममें स्वय ऊपर चढना नहीं है परन्तु समयको हमें छाचकर ऊपर चढना है। सब-समय

परमात्मा वाह्य-बुद्धिसे कृपालु बन कर मनुष्याका बुद्धार करनेके लिये नीचे अतरता है और हाथ बगता है इसीलिये पतित बने हुए हम पुनीत हो सकते हैं। जिस जिस विभूतिमें हम बुद्धारके शक्ति देखते हैं उस उस विभूतिमें तारक प्रभु अतरा है अवतरित हुआ है जसा मानना ही युक्तिपूर्ण है। यह अवतार अल्प मात्रामें हो या पूर्णताको पहुंचा हुआ हो अमुक समयके लिये हो या जीवन पयत्नके लिये हो किंतु तारक तत्त्व बाहरस आकर मनुष्यमें अवतरित अवश्य हाता है, जसी जगतके बुद्धारकी जा कल्पना है इसीका अवतार वाद कहा जाता है।

कुम्हारका चक्र अके वार घूमने लगा कि फिर घूमता ही रहता है। परंतु उसकी गति स्वयंभू नहीं है। मिली हुई गतिको लम्बे समय तक टिकाये रखनेमें ही इस चक्रका सामर्थ्य है। चक्रका स्वभाव तो असा है कि वह — अति अल्प प्रमाणमें ही क्या न हो — प्रतिक्षण रत्नका प्रयत्न करता है। इसीलिये उसकी गतिको बनाय रखनेके लिये कुम्हारको हाथमें अके डडा लेकर बार-बार चक्रको प्रेरणा देनी पडती है। और इसके फलस्वरूप ही चक्र घूमता रहता है। स्वभाव जड समाजके बारेमें भी यही नियम लागू होता है। श्रीश्वरकी कृपासे अवतारो पुरुषाके प्रतापकी परम्परा चालू रहती है। प्रेरणाका सबल अटूट बना रहता है। धीकनी चालू रहती है इसीलिये ससृष्टि हपी अग्नि आज तक प्रज्वलित रही है।

यह प्रेरणा बाहरसे आती है अथवा अतः स्फूर्त है? मानुषी है अथवा अतिमानुषी है? — इसकी चर्चा हम नहीं जायग। अवतारवाद कहता है यह प्रेरणा निःसंदेह बाह्य है अतिमानवी है। इस प्रेरणाको मनुष्य ग्रहण कर सकता है धारण कर सकता है यही उसका महत्ता है। विरोधी पक्ष कहगा घषणक फलस्वरूप जब गरमी बहुत बढ़ जाती है तब उससे आग भडक अठती है और वह ज्वाला या प्रकाशका रूप धारण करती है जसा हम हमगा देखते हैं। जुष्णता स ही प्रकाश अत्युत्पन्न हाता है। जुष्णता और प्रकाश स्वस्वरूप भेद है किंतु तत्त्वतः जुष्णताका अत्यधिक रूप ही प्रकाश है इस विषयमें हम शका नहीं करते। जुष्णता अत्यधिक बढ जाती है तब हमारे अवतारके लिये पृष्ठभूमि तयार होती है, असा कहकर चाह जहाम प्रकाश आकर अमम घुम नहा जाता। वह भीतरस ही प्रदीप्त हाता है। अिमी प्रकार मनुष्य जातिका तारनहार मनुष्यामें स ही अत्युत्पन्न होता है और वह मवध्रेष्ठ मनुष्य-स्वभावका ही बना हुआ हाता है।

अिग चचाको जरा जागे बढान पर यह स्पष्ट हो जायगा कि दो पक्षाम मनभेद नहीं है बवल गभेद है। गाधीजी कहते हैं जा पुरुष अपने युगमें सबसे श्रेष्ठ धमवान हाता है उस भविष्यकी प्रजा अवतारके रूपमें पूजती है। त्रिपुरपमें अपन यगमें सबसे अधिक धम-जागति हाती है वह उस युगका

अवतार हाना है।' अवतारकी कल्पनाका जसा दोहरा रूप देकर गांधीजीने अपुनरक वादको गत ही कर दिया है। प्रत्येक पीढ़ामें, प्रत्येक युगमें समाजका सावधान रखनेवाला काजी न काजी पुनः हाता ही है। जुसीकी विभूति अुसके समयक लामाको अमाधारण जैसी लगती है। अिमलिअे वादक लामा अुस अव-ताक रूपमें पहचानने लगत ह, और अुसकी दी हुजी प्रेरणाका शीवरीय प्रेरणा मान कर अ्रद्धा और आदरम अुस स्वीकार करते ह।

कुरानमें भी स्पष्ट कहा गया है कि अल्लाहने प्रत्येक दगाका और प्रत्येक युगका अेक अेक पगम्बर दिया है। पगम्बरस रहित काजी भूमि नहा है पगम्बरसे रहित काजी समान नहीं है। पगम्बरस रहित काजी युग नहीं है। अिमका अथ यह हुआ कि प्रत्येक स्थान और प्रत्येक कालमें कोशी त कोशी तारक पुनः हाता ही है। अुस पहचाननेका गवित समाजमें हानी चाहिये।

*

अिमो स्थान पर हम गान्धेजि प्रामाण्यका याडा विचार कर लें। तारक विभूतिकी प्रेरणाका अेक बार अ्रद्धा और आदरम स्वीकार कर लनेक बाद अुमक वचनाका सग्रह हाना विलकुल स्वामाविक है। अिम प्रकार प्रेरणा गदवद हारण प्रथाका रूप धारण करती है, मत-वचन ही गान्धे है अैसा जो मूल निडान या वह विकृत हा जाता है तथा गान्धे प्रामाण्यका गद्व प्रामाण्य अथवा प्रथ प्रामाण्यका रूप मिल जाता है। धमका तत्त्व गूल है अवमरक अनुमार अुमका विनियोग दल्लता है। धमन पुनः द्वारा परिस्थितिमाका प्रत्यक्ष निरीक्षण करक अेक समय जा निणय लिया जाता है वह काल और परिस्थितिमाके बदल जाने पर लागू नहीं हाता। गवराचापने भा कहा है यस्मिन् दगो वाक निमित्त च या धर्मोऽनुष्ठीयत स अेक दगाकालनिमित्तानरपु अधर्मो भवति। (गान्धे गान्धेभाष्य - ३ १, २५) अमा स्थितिमें व्याकरणगान्धे तक गान्धे और मीमामागान्धेक बल पर प्राचीन वचनाका अथ करना और मृतप्राय प्रथा पर गान्धेक समाजके जीवन क्रम तथा भाग्यका आधार रगता अत्याचार है और आमदाल है। 'गिण्टा प्रमाणम यही माग मच्चा है। वह पवित्र जावित्र यकि गिण्ट है निमकी बुद्धि और हृदय गुद्ध हैं जा समाज हितका समझता है आर जिनका हृदय समाज हितका आर ही मुडता है। सत्य, अहिंसा ब्रह्मचय, अमन्य अपरिग्रह अित्यादि वन जितक लिअे स्वामाविक वन गये ह व चिल्ल अ्यक्ति ही गिण्ट कह जात हैं। अम गान्धेक जा माग बताया हा वही गान्धे है। मनुहरि ता अिमस आगे जावर कएन है कि सत्युप्य सहर रूपमें जा कह दत हैं वह भी गान्धे ही वन जाता है।

परिपरितन्वा सत यद्यपि कथयन्ति ते न धुपेण्णु।

याम्पेया स्वरथा ता अेक भवन्ति गान्धेगान्धि॥

प्राचीन शास्त्र वचनाना अर्थ करना हो तो वह भी उस गिष्ट लागू द्वारा ही किया जाता चाहिये । जीवनके जीत जागते तत्त्वज्ञानको बचल पड़ितान हाथम नहीं फसने देना चाहिये ।

१९३०

२

हमार पूवज कह गये ह कि भूमिका भार हरण करनेके लिये प्रत्येक युगमें अवतार आते ह । अिन वचनाना केवल गणाय ग्रहण करनेस बहुतन लोगामें यह समझ घर कर बठी है कि जैत नावमें मुसाफिराका भार बड़न पर नावसे वह भार सहन नहीं होता और वह पानीमें डूब जाती है धम ही जनसंख्याके दणसे पृथ्वीको अपनी पीठ परका भार असह्य मात्रूम हाना है । वास्तवमें पृथ्वीके तत्त्वामे ही बने हुअे मानवाकी सख्या बढ़ने या पटनस पृथ्वीके भारमें और पृथ्वीके जड़ द्रव्यामें काअी घटती-बढ़ती नहीं होती ।

राओ जितने अेक छोटेस दानमें से बड़ जसा बिगाल वृक्ष जमीन पर खड़ा होता है, परंतु अिस बिगाल वृक्षका अितना बड़ा बोध बाहरसे नहा आता हवा पानी और मिट्टीसे ही वह पला होता है । वृक्षक बढ़नेसे परताका वायु कसे बढ़ेगा ? घोडे पर बठे बठे काजी सवार धलीमें रखी रोटिया खा ल तो थलीका बोझ कम हो जायगा और सवारके पटका बोध बड़ जायगा । लडिन अिससे घोडेको क्या ? अुसे तो अुतना ही बोझ डोना पड़ेगा । पृथ्वीको भी यही बात लाग होती है । पृथ्वीका बोध जो बढ़ता है वह भौतिक नहा परन्तु नतिक हाता है । अुस वृक्षका अुतारनेका वायु अवतारका होता है ! जब समाजमें अनाचार बड़ जाता है स्वाथ बिद्रोह बलह और नास्तिकता फूलते फलते ह तब पृथ्वीके लिये अुनका बोझ असह्य हो जाता है । अुस स्थितिम पृथ्वी गरीब गायकी तरह दीन बनकर अपने पालन-कर्ता विधाताके पास जाती है और सब अतर्यामी परमात्मा दया करके धम परायण व्यक्तिमें अवतरित होना है । निम प्रकार हम सिगढाको हिंग हिलाकर और फुवनीसे फूक फूक कर अुसकी जागकी प्रज्वलित करत ह अुसी तरह अवतारी पुरुष समाजको हिला कर धमको फूक कर धमका गुडीकरण करके फिरसे सांजनता मनुष्य प्रम और दवी सपत्तिका स्थापना करता है । नमाजक सयाने और ममचदार लाग अिस धम प्रेरणाकी पहचान कर आस्तिकतासे अुमका स्वीकार करते ह ।

अवतारका अुद्देश्य है मानव समाजमें धमकी सस्थापना करना । धम सस्थापनाका अर्थ काअी मत अथवा पथ चगाना नहा किंतु सत्य प्रेम दया वासना सयम, सबभूत हितमें रत रहनकी भावना आदि गुभ मंगलमय तत्त्वामे प्रति लोगामें बिवास जाना है । धम बही है जिनमें सबका कल्याण समाया हुआ हो । सबत्र

ममस्त प्रजाआको सनातन रूपमें धारण करनेवाला तत्त्व धर्म है। यह धर्म विद्व-
व्यापी हाता है सनातन होता है और इसी कारण नित्य-नूतन होता है। चित्रकार
जीवत चलत फिरते चतययुक्त गरीर पर मोहित हाकर अुसका चित्र बनाता है
और मूर्तिकार उसे गरीर पर मुग्ध हाकर अुमकी मूर्ति बनाता है। जिम व्यक्तिने
जीवन गरीरका दान किया है, जिसने जीवत शरीरके साथ मत्सग किया है
अुस चित्र या मूर्ति देखकर भी मूल चतयका स्मरण हाता है जोर अुमम
चतयमयी प्रेरणा मिलती है। किंतु जिनके अनुभव और कल्पना अुम चित्र या
मूर्तिक बाहर जाने ही नहीं, अुनक लिअे वह चित्र और मूर्ति बघनरूप हा
जाने हैं। चतयकी भूख जठ मूर्तिम कसे मिट सकती है? जावत मूर्ति मनुष्यका
बुद्धार करती है। निष्प्राण मूर्ति गल्का पत्थर बनकर मनुष्यको डुवा दता है।

अवतारी पुरुषाक नाम पर जा धर्म चलने हैं व सचमुच अुनके नहीं हात।
प्रेमका मदेग दूसरे गाव भेजेनेक लिअे प्रेमपत्र भेजना पडता है। प्रेमपत्र ले जाने-
वाला मत्स-बाहक प्रेमी नहीं होता, पत्रका कागज स्याही, स्याहीका रग, अुमरा
का मोड गद भाषा भाषाके अुकार—अिनमें न अेक भी तत्त्व प्रेम नहा हाता।
प्रेम ता अमृत है परन्तु अिन सब साधनाके विना अुसका वहन कसे हा? प्रमका
समपनेवाला अिन मव साधनाका जुपयोग करते हुजे भी अिन पर निभर नहीं
रहता। साधनासे प्रेम निन है यह ममप लनेक कारण वह साधनाका ही
मवस्व नहीं मान लेता। इसी यामे धर्म-मत्थापक अपने समाजमें म् हो
चुकी कल्पनाका रीति रिवाज और सिद्धान्ताका आधार लकर अुन्हीमें अपने
मदाका अुडेलता है और अुसे लागाक माभने रक्तता है। पुरानेमें स जितना
बुरा और त्याग देने सैसा अुमे विश्वासपूवक लगता ह केवल अुतनेका ही बह
विराध करता है। अुसकी वक्ति जितनेका निभाया जा सक अुतनेका निभा
नेकी ही होती है। वह जा नये साधन जो नअी प्रथायें अववा नअी मत्थायें
जुपन करता है और जिन वस्तुआक प्रति अत्यत आदर और आग्रह दाना ह
अुन सबका अुमके सदेगके बाहक रूपमें ही महत्त्व णिया जाना चाहिये। परन्तु
अविद्या—अज्ञान—से जकडी हुआ मनुष्य-जातिने तत्त्वके माय सम्बन्ध वापनेक
बजाय तत्त्व-बाहक अथवा तत्त्व-सग्राहक बाहरी साधनाको ही महत्त्व णिया है
और नभी कभी अुनक लिअे अनेक भयकर युद्ध किये हैं।

साधन भेक कारण असे युद्ध हाते देख कर कुछ लोग तत्त्वको केवल वादिक
रूपमें ग्रहण करके ही शतोय मान लेते हैं। साधनाके विषयमें अुनका विश्वास न
हानेक कारण व साधना-मात्रकी अपेक्षा करत हैं। व लाग अिस बातका नू
जात है कि धर्म केवल तत्त्वक ज्ञानक लिअे ही नहीं है—धर्म जीवन-परि-
चननक लिअे है आरमगुदिके लिअे है आरम-माक्षाकारक लिअे है। सामाय जन
नमुदाय दवका छाड कर श्रेवायकी या ममजिदकी ही अुपागना करते हैं अत्र कि

बुढ़ भुत्माही किन्तु अनानी धिद्राहा मन्त्रिका ताड कर रक्का बानना प्रयत्न करत ह। परन्तु सच्चा जहरन जिग बानना है कि मनुष्य मन्त्रिका मन्त्रि और जाँवरको जीश्वरक रूपमें पहचान। जगा हान पर मनुष्य गारां विषयमें सादक चिन्ता ही आग्रह रखते हुअ भी माधन-भूतक नती बनगा। प्रयत्न धम सम्भाषन या पगम्बर जा कुछ दे जाता है अुमना गुद्ध रूपम गया हा। अिसम म्त्रि अुमनी विरामतका प्रतिश्रण सस्करण और परिष्करण हाता चारिय। जिगरा नित्य सस्करण हाता है अुमना नाग नही बरगा पडता। नित्य सस्करण हा जावा का प्राणयुक्त अयवा चत यमय बनाये रखनका साधन है।

मुहम्मद पैगबरम पहले अरबस्तानमें बाबा अत्राहमका धम चलता था। अुम धममें अनेक प्रकारके दोष धुम गये थ। अुनमें स जा दाप मुहम्मद माह्व को जमह्य मालूम हुअे अुन्हीका अुन्हा डटकर विराप किया। परन्तु मक्काकी यात्रा (हज) कावाका चुम्बन कावाका स्नान अक्वस्त्री स्नान आदि विधियाका निर्दोष समझ कर अुन्हान चालू रहने दिया। बन्न-जीत्का पंगु-बलिदान भी मट् म्मद माह्वने स्वय आरभ नही किया परन्तु अिसक मूलम शिनि धिमाल अयवा रुक्मादक जसे भक्ताकी अलौकिक अीश्वर निष्ठाको दग्धकर ही मुहम्मद साह्वने अुम रन्ने दिया। मासाहारा लोगको बरू-अीदका बलिदान स्वभावत पाभा दता है परन्तु जिसी बरू-अीदका बलिदान भारतम महाकल्हका मूल बन गया है। तन्म्य दष्टिम अिस्लामका अध्ययन करनेस पता चला है कि बरू-अीदका बलिदान अिस्लामका मुख्य अंग नहा है। अिस्लामका अथ है जीश्वरक विषयमें अनप निष्ठा। अिस्लामका सच्चा आग्रह अीश्वरके अद्वतके बारेमें है। अनात्माको आत्मा मानना अनीश्वरको जीश्वर मानना — अिसम अिस्लामको अतिगय चिन् है। प्रयक धमनिष्ठ साधक और भक्तको भी जिम बानसे चिद होती है। जा गग अिगम निष्ठ ह धन-लालुष ह, जान माल परस्त ह किताव परस्त ह के सच्च भक्त नहा ह मच्चे मुमन्मान नही ह। आजकलके कुछ मुसल्मान दूमराका अनुकरण करके ताबून निकालते ह और मसजिद परस्तीका दोष बरने ह यह दूमरा बान है। परन्तु मच्चे अिस्लामका अथ है जीश्वर निष्ठा गरीबाक लिअ दना शान्त्र प्रायना और धमसवा। यही बात हर धमके बारेमें कही जा सनता ह। धमके कारण होनवाल झगडाको देखकर याकुल बने हुअ जब निरक्षर भवनने पूछा है

भाळा भाळा ठाकुर हाह
वापी का मरो? *

हिन्दू धर्म बनाम हिन्दू समाजशास्त्र

हमारे समाजमें धर्मके नाम पर अूच-नीच भावकी तालीम व्यवस्थित रूपमें दी जानी रही है। हिन्दू लोग आज असि भावको सनातन धर्मका जेक अभिन्न अंग मानने लगे हैं। हिन्दू धर्म अपने विशुद्ध रूपमें आय, जुदात और मुक्ति परायण धर्म है। यदि किसी घातक दोषने अुस निष्प्राण अनाय और जहरीला बना दिया हा, तो वह है अूच-नीचका भाव।

हम यह बात क्या नहीं समझते कि हिन्दू धर्म और हिन्दू समाजशास्त्र दाना अलग अलग ह। हिन्दू धर्म 'निर्दोष' और 'सम' ब्रह्मकी अुपासना सिखाता है। वह 'साधुष्वपि च पापेषु' 'समबुद्धि' का प्रतिपादन करता है। वह 'विद्याविनय संपन्न' ब्राह्मणसे लेकर 'क्षवपाक' तक सबके प्रति 'समर्णित्व तथा समवर्तिव का अुपदेश करता है। परंतु हिन्दू समाजशास्त्र अूच-नीचकी भावनाके अभद्र और अमंगल तत्त्व पर जोर देता है। यदि हम अपनी स्मृतियाम अूच-नीचकी भावनाको माय रखनेवाले वचन निकाल डालें, तो जुनमें बाकी कितना भाग बचगा।

अिसीलिअे भगवान मनुने अपनी स्मृतिमें ही अेक 'भेषज रूप' (औषधि रूप) वचन दिया है कि स्मृतियामें यदि कोअी धर्म (वेद) विरोधी वचन हो, तो अुस अप्रमाण मानना चाहिये। अिमका कारण यह है कि स्मृतिया मदा धर्मशास्त्रका विवचन ही नहीं करता, व धर्म विरोधी परन्तु तत्कालीन गिण्ट जन माय समाजशास्त्र, अयशास्त्र और रुढियाका भी समथन करती ह। परन्तु प्रगति न करनेका आदी बना हुआ समाज अेक बडे हितकारी 'यायको भूल जाता है। वह 'याय यह है समाजशास्त्र अथवा अयशास्त्रकी अपेक्षा शुद्ध धर्मतत्त्व अधिक प्रबल है। देस और कालस मयादित धर्मशास्त्रकी अपेक्षा सनातन और सावभौम धर्मतत्त्व परम प्रमाण है।

अिसलिअे जब समाजमें धार्मिकता बढ़ती है धर्मका आकलन विगुद्ध बनता है तब आधार और समाज रचनामें तत्त्वके अनुरूप परिवतनकी जरूरत स्वीकार की जाती है। अब वह समय आ गया है जब हमें 'गुद्ध हिन्दू धर्मको समाज व्यवस्था (जिसमें पुराना अयशास्त्र और परम्परागत किन्तु भेददशाक गिण्टा चार समाये हुअे हैं) क चगुलसे छुडा लेना चाहिये। अपनी स्मृतियाको अब हमें अपने अघ्यात्मके सिद्धान्तके अनुकूल बना रना चाहिये।

जनवरी, १९३९

आर्य सस्कृतिका आधार

[सामान्य जानकारी]

हिंदू धर्मको वेदधर्म भी कहा जाता है। वेद सगारमें प्राचीनग प्राधान और अत्यंत महत्त्वपूर्ण ग्रंथ ह। वनाम अिद्र मित्र वरुण छाया पूषिबी, जुषा, सविता रुद्र आदि जीवरने अनेक रूपाका वणन और स्तुति है। ये सारे मत्र अपिगण जब ध्यानमें बठते थ जुम गमय जुनमें स्फुरित होते थ। धदाम हिंदू धमके सभी तत्त्वारा सूदन मूल है। कुछ मत्रामें गुदर काय है। यद चार ह। जगदमें अधिकाग स्तुतिक ही मत्र ह। यजुर्वेदम यनथा प्रवरण है। मामवम हमारा प्राचीन गायन है। अथर्ववेदम विविध प्रवारकी अनेक बातें ह।

जिन वदासे ही ब्राह्मण नामक जेक दूसरा भाग उत्पन्न हुआ। यहा ब्राह्मण अनुक प्रकारक ग्रंथाका नाम है। ब्राह्मणामें यन-सम्बन्धी और धमतत्त्व सम्बन्धी सभी लकी चर्चायें ह।

ब्राह्मण ग्रंथासे ही अपनिषदाका जन्म हुआ। जुपनिषदामें हमार धमकी सारा जुदात्त कल्पनाय और असक विनाल तत्त्व जा गये ह। अपनिषदामें गुह गिष्यक कुछ सवाद बडे ही सुदर ह। भगवदगीतामें श्रीकृष्णने जिन जुपनिषदाका ही दूध दुह कर रखा है। (वाल्मीकि गार्हपत्याक बडे पुत्र दाराने जिन अपनिषदाका फारसामें अनुवाद किया था।) जुपनिषदाक वाक्य अध्ययन और अध्यापनका काम खूब बडा असिर्लभसे स्मरण शक्ति पर बहुत धोष पडने लगा। जिसके फलस्वरूप सूत्रग्रंथाका निर्माण हुआ। सूत्रग्रंथाम छोटे छोटे वाक्य जैसे ढगसे रच गये ह कि बहुतसी जानकारी ध्यानमे रह जाय। परंतु जिन वाक्याका अर्थ करनेकी कुजी गुरुम मिली हो तो ही जिन सूत्रग्रंथारा अपुषोग हो सकता है। यह कुजा और सूत्राका विवरण विद्वान आचार्योंने अपने भाष्यामें किया है।

जस जैसे फलप्राप्तिक लिज जेक निश्चित पद्धतिसे यनविधि करनेका आग्रह बना वसे वसे जीवनका हर काम लोग नियमके अनुसार और धमके अनुसार करने गये। चार वर्णोंमें से ब्राह्मणाको क्या आचरण करना चाहिये क्षत्रियका क्या कर्तव्य है व्याका धम क्या है और शूद्राको कौनसी मर्यादामें रहना चाहिये — यह सब विस्तारसे लिया गया। मनुष्य क्या खाये क्या न खाये क्या पहने दूसराक साथ क्या व्यवहार करे जीवनक मुख्य मुख्य जवसरा पर कौनमे सत्कार प्राप्त करे जयदा विक्रमिन्त करे आदि सब वाताक नियम रचे गये। जिन नियमाको स्मृति जिमलिज कहने ह कि जिन मुनिधान पुराने समयके आचारारा स्मरण

करके ये स्मृतिया लिखी ह । अिन स्मृतियामें मनुस्मृति और याज्ञवल्क्य-स्मृति बनी ह । बदके मत्र देवनाआमे सुने गये थे जिसलिअे अुह श्रुति कहते ह । ब्राह्मणा और जुपनिपदाका समावेश भी श्रुतिम ही होता है ।

जिम प्रकार मनुष्यके जाचरणाकी व्यवस्था स्मृतियामें हुअी है जुसी प्रकार धार्मिक और तात्त्विक विचाराकी व्यवस्था दशनाम हुअी है । आमाका दान करनेके लिअे ये ग्रथ अपयोगी है, यह जानकर अिन ग्रथाको ही दान कहा जाने उगा । दान छह है । जो दान बदाको महत्व नहीं दते अुह नास्तिक दान कहा जाता है । वे मवथा भिन्न ह । जिम वशानके बारेमें हम बहुत सुनत ह वह अपपुवन छह दानामें से अेक प्रधान दान है ।

(नास्तिक दानाम जन दान भी आ जाता है । जन लोग बदाको नहा मानने, अिसीलिअे यहा अुह नास्तिक कहा गया है । आज तो नास्तिक शब्द रिङ्कुल अलग ही अयमें प्रयुक्त होता है । नास्तिक शब्दा आजका अथ है जमा मनुष्य जा आत्मा अीश्वर अथवा धममें विश्वास नहीं करता । जन दानका नास्तिक कहनेमें नास्तिक शब्दा यह अथ नहीं लिया जाता ।)

प्रयेक धमक साथ धार्मिक कथायें ता रहती ही ह । कथाआके द्वारा धमक सारे निदान्त प्रसंग, धम-सकट, परम्परा सत्र कुछ समझाया जाता है । असी कथाआका सग्रह पुराणामें किया गया है । सष्टिकी अुत्पत्तिसे लेकर ताम्रमुखी (गारे) लोगके भारतमें आने तककी अनेक बातें अिन पुराणाम हैं । पुराणकाराने जमी जेक भी बात नहीं छोडी जिसका समावेश पुराणामें न हुआ हो । पुराण अठारह ह । जुपपुराण भी अितने ही ह । रामायण और महाभारत पुराण नहा है । अिनकी गिनता अितिहासमें होनी है ।

आजका हिंदू धम श्रुति स्मृति और पुराणके अनुसार चरता है । अिस लिअे अुमे श्रुति स्मृति-पुराणाकन धम कहा जाता है । अिसके सिवा आगमा या तत्राके नामसे अेक अलग धम-सग्रह है । व भी धमग्रथ ही माने जाते ह । बंगाल आमाम, नेपाल और काश्मीरमें अिन तत्राका अधिक महत्व है यद्यपि हिंदू धम पर सबत्र ही अिन तत्राका प्रभाव है । अिन तत्रामें कुछ विधिया अगी ह जिनका मवथा त्याग कर लिया जाना चाहिये ।

हिन्दू धर्म-संस्कार

[अेक चिन्तनीय अुपपत्ति]

महाभारतके युद्धके कुछ समय बाद बर्दिक या ब्राह्मण धर्ममें सडाध पठ गयी । अुपनिषदकालके अुच्च आत्मात्मिक आचार विचारके स्थान पर लोग आम अनारम्भकी गुण नीरस चर्चाआका ही धमका अ्तिम ध्यय मानने लगे । सब काअी यह समझन लग कि यन-यागके जाडवरपूण कमकाडमे ही स्वग आदि सब कुछ प्राप्त किया जा सकता है । असे समय बुद्ध भगवानने सही रास्तेसे भटक हुअे समारको साथ और सत्ताचारक माग पर भोग और महावीर स्वामीने सबके मन पर जाग्रहके साथ यह बान तमाअी कि अहिंसाम ही धम निहित है । अिसके सिवा जब बुद्ध भगवानके अनुयायी अुनक अुपदेशको अमुन धम अथवा सप्रदायका रूप देकर सबअ अुमदा प्रगार करन लग तब अुसम अनेक परिवतन करने पडे और अिसके फलस्वरूप बौद्ध धमके भी दो पथ हो गये । बौद्ध साधु बुद्ध भगवानके मूल अुपदेशा पर स्थिर रहनके बजाय जब अपने सप्रदायका लोकप्रिय बनानका प्रयत्न करन लगे और सप्रदायके प्रचारके लिअ राज्याश्रय भी खाजने ला तबने अुनके सधमें सडाध पठ गयी । हम बुद्ध भगवानक अुपदेशाकी सूक्ष्म जाच कर ता पता चलेगा कि अुनके अल्पदेशाम किसी नये धमकी स्थापनाकी अप ता धम-परिष्करणका ही भाग अधिक था । अुनका आग्रह परम्परागत प्रचलित धमके मूलभूत सिद्धान्ताना विराध करनका नही था । बुद्ध भगवानने ता अपनी नजरक मामने धमके नाम पर चल रह ढागक खिलाफ अपनी आवाज अुगाअी थी । अनेके अुपदेशाकी सूची यह थी कि अनका पूरी तरह पालन करते हुअे भी मनुष्य हिन्दू रह सकता था अितना ही नही बल्कि वह ज्यादा अच्छा हिन्दू बनता था । परंतु जबसे बौद्ध धमका साम्प्रदायिक स्वरूप ही अधिक बनन लगा तबन बौद्ध साधु ननिक तथा आत्मात्मिक दलित्त जीवनका रहस्य समझने और समझानके बजाय अपने अतिकाराकी रक्षाम ही अधिनाधिक जुटे रहने लग । ब्राह्मणाम अपन अुकेपनकी जा गयी थी वह बौद्ध साधुआम भी आन लगा । अिन प्रकार बर्दिक यनके पुराहित कबल अपने लाभके लिअ गोगामें अध विमान पन्तते थे अमी प्रसार बौद्ध माध भी अपने स्वार्थक लिअे तथा अगाकी नजरमें अपनी मत्ताको बानन लिअ अनेक अधविवासाका पोषण करन लग । बुद्ध भासादन जवापाकी पूजा करनेकी प्रथा आडवरमें बर्दिक कमकाडम जग ना कम नहा थी । माय ही बौद्ध माधआक दान नख असिय राख आदि

पर बड़े बड़े स्तूप बनानेमें तथा मठ खड़े करनेमें भागी खच करनेकी प्रथा चल पड़ी। अशोक सिवा अशोकने बुद्ध भगवानके अहिंसा और सयमके उपदेशसे जिन मारवादि गतिकी स्थापनाकी कल्पना का थी, वह गति भी दुनियामें नहीं आया। प्राचीन कालमें क्षत्रिय राजा अश्वमेध यज्ञ करके बट बड़े युद्ध लड़ते थे, वम ही बौद्ध राजा भी बुद्ध भगवानके अवशेषाक लिज आपसमें युद्ध करने लगे।

कुछ लाग जसा मानते ह कि हिंदू धर्ममें कोअी परिवर्तन करनेकी मुविधा है हो नहीं। हिंदू धर्म बिल्कुल प्रगतिशील नहा है। लेकिन यह बात सच नहीं है। हिंदू धर्मकी मायताआमें रीति रिवाजा और संस्कारामें धार धीरे रूपानर हाता आया है। वात अिनगी ही है कि जैसे मनुष्यक गरारमें रोज परिवर्तन हाता है परन्तु मूसम हातके कारण अुसका पता नहीं चलता वम ही हिंदू धर्ममें धीरे धीरे म् म परिवर्तन होने रह हैं। अमुक मिद्वान्ताका जिह वह अर्था सनातन मिद्वान मानता है रक्षा करके हिंदू धर्म योग्य परिवर्तन स्वीकार करनके लिजे मग ही तपार रहा है। आय राजकुमार मिद्वान द्वारा अपदिष्ट बौद्ध धर्म अुसका जरा भी विरोध नहा था। संभव है कि लागाका विराध हनुअकी यवन और गक जम विदेशी राजाअके नेतृत्वमें विवृत्त रूप ग्रहण करनवाक बाद धर्मके खिलाफ रहा हागा। स्थिति जसा अुत्पन्न हा गजी थी कि यदि भारतमें अिन राजाअका और अिनके बौद्ध धर्मका प्राबल्य वन्ता, ता भारतमें आय संस्कृति टिक नहीं पाती।

गाक्य मुनिने स्वयं समाजमें नया चतय जगानेक लिजे जसा प्रयाम आरभ किया था कुछ वसा ही प्रयाम जीमाकी तीमरी और चौथी गता दीमें भी भारतका आय प्रजाने आरभ किया था।

जगाकक वाद मुख्यत बौद्धाकी सायाश्रय मिलने लगा और ब्राह्मणाकी सत्ता राजवाजमें घटने लगा। लेकिन असकी वजहम ब्राह्मण धर्म डूब नहीं गया। देगक कोने-अतरेमें पडे हुअे कुछ साधु चरित ब्राह्मण पन्थि अुमकी रक्षा कर रह थ और वनके आश्रमामें रनेवाल ब्राह्मण अपि-मुनि अुमके मूलभूत सिद्धांताका मणोरत कर रह थे। अुन्हाने बुद्ध भगवानके बताये हुअ दापाको स्वीकार कर लिया जी-नोड परिश्रम करके गुद्ध बधिक धर्मका स्वरूप निश्चित किया और अुम पर बौद्ध धर्मका मुलमा चलाकर बधिक कमकाडवा स्पूल जडवाड अुममें ने निरान लिया। यन-याल और अुनके नाम पर होनेवाली हिमाका (जिमके विरुद्ध बुद्ध भगवानन प्रव आदोग्न किया था) हिंदू धर्ममें लगभग अत हा गया। नीति और मगचारको अुनका स्वाभाविक महत्व प्राप्त हुआ। हिंदू सयामी भी बौद्ध भिक्षुअके सभान अुपग्न करनेके लिजे सवत्र धूमने लगे। बोधिसत्त्व और बुद्धनी पूजाकी तरह राम और कृष्णनी भी पूजा होन लगी। अिस तरह बौद्ध धर्म हिंदू धर्मसे थ्रेष्ठ अथवा अधिक आकषण कोअी चाज नहीं रह गजी।

जिसके विपरीत बौद्ध धर्मक महापान सम्प्रदायमें विदेगी राजा अपनी अिच्छानुसार हस्तक्षेप कर सकते थे, जब कि अिम हिन्दू धर्ममें तो स्वामी परम्पराका ही प्रतिष्ठा रह सकती थी। अिसके फलस्वरूप नया हिन्दू धर्म गवत्र पत्र गया। विदेगासे जाय हुआ राजाभाकी भी जमा हिन्दू धर्म स्वीकार करके अुग प्राधाय देनेमें अपना हित मालूम हुआ। हिन्दू धर्मक अवतारवादने बुद्धका अुम समयके जयत लाभप्रिय भगवान विष्णुके अक अवतारका रूप द िया और गुड बौद्ध धर्मको आत्मसात् करनेका हिन्दू धर्मका प्रयत्न सफ़र हुआ।

हिन्दू धर्म मूर्तिपूजा कसे आरभ हुआ यह निश्चित रूपस कहना कठिन है। परन्तु यह माननेक कारण मिलते ह कि मूर्तिपूजा बौद्ध धर्मक प्रभावका फल है। कुछ लोग कहते ह कि बौद्धान बुद्ध भगवानक अवगपा पर स्तूप बनवाना गुरु किया और विहार बनाकर अुममें बुद्ध भगवानकी मूर्तिकी स्थापना व करन लग, अुमसे पहले हमारे दगमें मंदिर बावानेकी प्रथा नहा रही होगी य लोग मानते ह कि हमारे पुराणामें मंदिराना जो अुल्लेख है वह बादमें जाडा गया हागा।

बुड लाग तो यह मानने ह कि जीश्वरके अवतारकी कल्पना भी बौद्ध कालसे आरभ हुनी होगी। परन्तु अक ही जीश्वरके अक रूप ह यह कल्पना तो वेदामें भी है। अिमी प्रकार वेदाके कुछ अपि जैसा भी कह गये ह कि म ही जीश्वर ह। अत लागाके बुद्धाके लिअे जीश्वर मनुष्य रूप धारण करता है यह कल्पना वेधर्मक िअे अपरिचित नहीं है। भगवद्गीतामें तो अवतारवाक्या सिद्धांत सपूण रूपम पाया जाता है।

१०२३

२५

बुद्धका समय और बुद्धका काय

[ढाभी हजार वष पूव]

पहाडी प्रदेशमें रहनवाल लोगोंको बुदरतके साथ और आपसम अक दूरके साथ मत्रा कर्ना पडता है। अुनके बीच स्वतन्त्रताका और ञ्डाजीना वातावरण हमगा जाग्रत रहता है। लकिन जब य ही पहाडी लोग समनत्र मदानम जा पसन ह और समद पेंती चलाते ह तब अक अिस स्वभावमें परिवर्तन हा जाना है। विस्ताण और अपजाअू प्रदेशका देखकर मनुष्यमें या तो मायात्मक कल्पना दू हाती है या स्वभावम सतोषकी मात्रा वडकर अुसरी अहिमा वृत्ति दूड न जाती है।

गगा-यमुनाके तत्र पर महान साम्राज्याकी स्थापना हुनी महान बुद्ध लड गये और बुड समयक िअे तो लगभग सारा ही णेग वीरान हो गया — अिमका

त्रिनिहाम महाभागमें आ गया है। उसके बाद संपूर्ण भारतवर्षका पुनः एक जीवन-मूत्रमें बाधनेका प्रयत्न बुद्ध भगवानकी प्रवृत्तिसे आरम्भ हुआ। युधिष्ठिरने भारतवर्षका एक साम्राज्यक छत्रके नीचे लानेका प्रयत्न किया था। भगवान बुद्धने अहिंसा अथवा प्रेमक धमछत्रके नीचे मारी दुनियाका लानेका प्रयत्न किया। वह काय भी उसके अनुकूल ही था। दामें मगध कासल वत्स काशी, अवती जम छाटे छाटे राज्य विकरे हुए थे। गार्क्य मगध काशम काशीय मारीय मल्ल विद्द, चिच्छवी जादि गणके छोटे प्रजामत्ताक राज्य भी थे। राजा लाग साम्राज्यक प्राचीन आत्माको नजरक सामने रखकर सम्राट् बननेक चिन्त्र आपममें लहत थे। स्थितिभिमान और वणाभिमान मूत्र बढ गये थे मूत्रमें कुणाभिमान ता था ही। लागका जीवन आजकी तुलनामें कितना हा साय और मरत क्या न रहा हा, फिर भी मौज गौककी बसि खूब बढ गयी थी। बाह्य विधियाके नीचे धमका सुच्चा स्वरूप दब गया था। भयसे या लालचस कुदरता गकिनयाका मनुष्ट करनेमें ही धमका सवस्व समा जाता था। मत्राकी गकित्तक वारमें भ्रामक कल्पनामें बढ गजा था। लागमें बेनी मान्यता रूढ हा गजी थी कि मत्रा द्वारा नली-दुरी सय वासनामें तपन की जा सक्ता है और यन-याग करक उनमें दवताआक चिन्त्र पगुआका बगिदान देनेसे मार पाप घुल जात है।

जिन धाडेस गगाका अिस स्थितिसे घणा होनी थी वे दूनर छात्र पर जाकर गगरका तरह तरहके निरथक कष्ट दनमें ही जादनकी मफयता मानत थे। मुत्ताभोगमें डूबे हुये लागमें असे देह-दमन करनेवाल तपस्विवाकी प्रतिष्ठा अत्रधिक बढ गयी था। मनुष्य-जीवनका ध्येय क्या है धम किस धानमें है, मनथका मनुष्यक प्रति और अय प्राणियाके प्रति क्या बतन्व है—अिसकी सन्धा कन्वता ही गगाक मनके नष्ट हा गजा था। पडिल लाग निठले बडे बडे आचरके मन्वधमें अनेक चित्र विचित्र कल्पनामें खडी करके आपममें लहत-भगतत थे। आमा है या नहा आचरका स्वरूप कैसा है कौनमा यन करनेस कौनमा फर प्राप्त हाता है—आदि चचात्रामें ही व लाग चिन्-रान लान रहत थे।

विचारणीय गग अिन शुष्क चचात्रा आर गुष्क जीवनसे खूब गये थे। नाका जानियाके अनय और अनान गग ता विलकुल ही दब गये थे। जिन सब दुःखानु मुक्त होनेका माग खोजनेक चिन्त्र किनी समाप्त नितपी और स्थिर बुडि वाक व्यक्तिनी जहरत थी। बुद्ध भगवानने एक ओर कमना अट्ट निवम लागका समया कर बने-बडे यन-यागाका दम दूर किया और दूररा ओर आत्मा परमात्माका गुष्क चचात्राकी प्रतिष्ठा घटाओी अ-दमनके नगोकी नित्ता की तथा वणाभिमानका मत्र भा लाग, मुखकी लालसाके कारण लागका पामर बना दक्कर बृह ब्रह्मचर और त्यागका महत्त्व समयाया और अपने धमका दृन्तासे पालन करनेवाक गगाका एक मदान मध रचनर अुनके द्वारा भाा और भ्रमस कल्पित

घने दृष्टे समाज पर मानो सत्कारवा आत्रमण किया। बुद्धक समयमें गात्राम जा जच्छे धमतत्त्व ये अुहीवा अनुवाद जनभाषामें करव अुहान मव वर्णोंन लागको जुनका अुपलैग किया, और सब लागको अुन्हाने यह गमना किया कि सत्कार ही धमकी बुनियाद है अहिंसा और त्याग हा धमका आधार है।

बुद्धक कुछ पन्ति गिप्यान यह माग की कि आज समाजम सबत्र वन्नि भाषाकी ही अधिक् प्रतिष्ठा है त्रिसल्लिजे जुमी भाषाम आपव जुपन्नाका व्यवस्थित रूप देना ठीक होगा। बुद्धने स्पष्ट गन्ताम कहा म जमा प्रतिष्ठाका तोन्ना चाहता हू। म तो यह चाहता हू कि लागामें बोगी जानवागी मभी भाषाआमें तुम मेरे जुपदगाको फलाओ। धम मत्रके लिअे है।

अिमते समाजके मामाय जन अूपर जुडे। आग चत्वर मताने भी यही काय किया।

११२३

२६

जीता-जागता सघ

१

आय-समाज*

जाय समाज जेक जीता जागता सघ है वह आचें खुली रखकर दुनियाकी आर दखनवाला जेक सगठित सस्था है।

जाय असहिष्णु नहा ह यह सिद्ध करनका प्रयत्न आप विमल्लिजे कर? क्या असहिष्णुता हमेंगा दुगुण ही होती है? और सहिष्णुता क्या सत्ता सदगुण ही हानी है? महाभारतम अक् स्वान पर कहा गया है कि सहिष्णुता बाय डोनवाठ गधेका भूषण है। पडे रहता अपमान सहन करना लुट जाना आर फिर भी अिमका विलकुल ही प्रतिकार न करना यदि सहिष्णुता हा ता असी सहिष्णुता सत्गुण नहा है वह अधम है पाप ह। हम पर दुख आ पडे और हम जुसे दूर करनेका प्रयत्न न कर अिसमें पुरुपाथ नहीं है। यह ता पातक है क्याकि जो भी वस्तु हमें नीच गिराती है हमारा पात करती है वह पातक है।

सहिष्णुता दो प्रकारकी होती है जेक निष्क्रिय जडताकी पामरताकी, कायरताकी और दूसरी चापक दष्टिकी, प्रेमकी नव समय जुत्तरताकी। पामर

* ता० ३१-८-२८को सूपा गुरुकुत्क बापिक अुत्तमवक् अवमर पर अापन-पन्म किया गया भाषण।

मनुष्य अद्वारनाक नाम पर अपनी निरलताका छिपाता है और स्वयं अदत्त महिष्णु हानेका ढाग करना है। किन्तु अमुक जीवनमें तेज नहा दिवाजी दना। अगा महिष्णुताके बजाय तो अमहिष्णुता ज्यादा अच्छी है। भयसे डर जानेके बजाय माहिमी बनकर भयका सामना करनेमें ही मनुष्यकी बुद्धि है। आपके घमक अेकाघ सुन्दर तत्त्वका भल ही नाग हा जाय परन्तु अुनकी आत्माका कभी नाग नही हाना चाहिये। आत्माका नाग हुआ वहा सपूष घमका नाग हुना समयिय। प्रतिकार मनुष्यकी जीवन दगाका ँक्षण है। तनस्वी पुरुष अेकारको महन करक गात कम बठ मवता ह ?

परन्तु विचारवान गूर-वीर मानव दीध दष्टिने दग लेता है कि विचागहीन बनकर लनेमें कोभी गम नहा हागा महन करके ही हम जीतगे सन करनेसे हम बानी खोमेंे नही बल्कि परिस्थितिया पर विजय प्राप्त करेंगे। धयवान मनुष्य आत्मत्याग करके बडे बड कष्ट महन करता है और मानव मन्कृतिको अूचा जुठाता है। जिस प्रकार गागाका जवाब गागीसे दकर हम अेक प्रकारका ँयाय भले ही प्राप्त कर परन्तु अपनी या समाजकी काजी जतनि नहा करत अुसी प्रकार प्रयेक विराधीका विराध करनेस भी हम मदा श्रेय ही सापत ह जैमा नही वहा ना मवता। जब हम अपनी गतितके मानक माय नानपूवक कष्ट महन करत है तब हमारा घम सागहा कगआमें चमकता है और जतमें अुसने मवका बल्याण हाता है। दुष्ट मनुष्य पर विजय प्राप्त करनेके बजाय यदि हम दुष्टता पर ही विजय पा सकें तो वह श्रेष्ठ कदम हागा जिस कौन स्वीकार नहा करगा ? अमा वीरस्य मूपधम — क्याकि वाग्वी क्षमाके पीछे डर नहा होता। केकिन अगर हमें यह गे कि महिष्णु रहनेसे हम सर-कुठ खा बठेंग महिष्णु बनने जितने समय हम नहा ह ता समय हानेका ढाग करनेके बजाय अच्छा यही होगा कि हम विरोधका प्रतिकार कर। अिमीमें से हमें आगेवा रास्ता भिग्या।

आय-ममाजका प्रथम परिचय मुझे अुत्तर भारतमें हुआ था। प्रथम दानमें ही मैंने देन लिया कि आय-ममाजी किमीक साथ टक्कर लेनेमें सवाध नही करने। वे जिस बातका विचार करने नही ठठन कि हमारे विचागका प्रचार करनेमे विराधियाको बुरा लगेगा या नही। अपने मता और मिडानाक बारेमें व अितने अधिक पारमार्थिक (serious) होने हैं कि कही भी विवाद करनेके जिन्ने तैयार हो जाते ह। मैं यह खडा हू जोर ये मेरे विचार ह। या तो तुम अिहें स्वीकार करग या अिनका खन करग। — जिस प्रकार धाय समाजियाका कहने सुनकर मुमें गगता था कि अुनक रूपमें महननिधका नया जवदार हुआ है। अुम समय आय-ममाजी प्रचारकाके माय वाद विवादमें अुत्तर कर मैंने आय ममाजके बारेमें अुनम खूब जानकारी प्राप्त कर ली। एक अितना

ही था कि मरी वाद विवात्की मयात्न अलग थी। वाद विवात्तमें जेक आत्मी दूमरेका हरा तो सक्ता है लेकिन खुद जीत नहा सक्ता। विवात्क समय दोना हो वादी किसी हद तक प्रतिनिविष्ट* होले ह। जब दानारा यह विश्वास हो जाय कि व जेक-दूमरेका पक्ष समय गये ह तब जुहू विवात्तया अत कर दना चाहिये। मनुष्य बहुत बार विवादक वाद मिश्रनवाल अवात्तमें हा विराधी पक्षकी दलीलाको हजम कर पाता है।

शान वात् विवात्क फलस्वरूप यह मान्न हो जाना है कि प्रत्येक धर्ममें काजी न कोमी खूबी तो है ही। म यह बात समय गया ह कि मुसलमान मूत्त हिन्दुआको चिन्तानेके लिअ मूर्तिपूजाया विराध नहीं करत परन्तु व सचमुच मूर्तिपूजामें श्रीश्वरका धार अपमान मानत ह। जाप भल ही मूर्तिपूजाको धर्म मान परन्तु अुसके पाठे श्रीश्वरकी भक्ति ही है जीश्वरका अपमान करनेकी नीयत नहा है अिम प्रकार म जुहू समानेका प्रयत्न करता था। म जुनस कहता था कि मूर्तिम परमेश्वरको देखनवाल मनुष्यम जडता भी हो सकनी है और अुच्च जात्यात्मिक दृष्टि तथा कवि हृदय भा हा सकता है।

आय ममाजियाके तकके पीठे भी म जुनकी धमसवाकी गुणारक-वक्तिका दव सकता था। हिन्दू धर्म पठे हुजे चमत्कारा अविश्वासा पामरता और उतावात्से ये लोग अब गये ह जिसीलिअे अतका ये विरोध करत ह—यह तेनकर मेरी आत्माका सतोप होता था। कुछ हिन्दू शास्त्रामें लगाक मन पर धनक तत्त्वाको नमानके लिअ भय और लालचका छूटस जुपयाग बिया गया है। घरमें भय बाहर भय जलम भय स्वल्में भय! और मानो जमीन पर रहने वात् अयाचारी काफी न हा अिमलिअे आकागम भी गनि राहु और केतुका भय खडा कर दिया गया। यदि असा भय हा धनका आधार हो तब ता अुस धमका नाग हाना ही अच्छा है।

आय ममाजियामें भी शास्त्र बचनारा आग्रह दक्कर मुझे लगता था कि मुनमें यह वक्ति क्या नहीं है? म ता सनातनी हिन्दू हू समस्त शास्त्राम विश्वास करनेवाग यानी जुनके प्रति आत्तर रखनवाला हू। परन्तु मने कभी जिन शास्त्रा का पीनत् कात् जमा माना ही नहीं। म ता शास्त्राका अनुभवी और पूय लगाक बचन मानता हू। मेर मनमें जुनके प्रति आत्तरका भाव रहता है अथडा नहा रहतो। लेकिन जुनमें स म जितना समथ सक और जितना मेरे गल् अुतरे जनकको ही म स्वीकार कर सकता हू और अस पर जमल कर सकता हू। अथडा रचन हुअ भा यदि किमा बस्तुक दुरी या हानिकर होनकी प्रतीति मुये हो जाय, तो स्वल् अिमीलिअ म जुमका स्वीकार वा जुम पर जमल नहीं बग्गा कि शास्त्रामें जुमका विधान है।

* प्रतिनिविष्ट = विराधी बनकर बठे हुये हठाग्रही।

अतए भारतमें जब आय-ममाजी और सनातनी आपसमें लडते थे, उस समय सनातनियोंकी दगा बड़ी विपम हो जाती थी। आय-समाजी ता केवल वेद शास्त्रका ही प्रमाण मानते थे जब कि सनातनियोंके लिये वेदाके अपरात डरा अन्य शास्त्र-ग्रन्थ भी प्रमाण थे। अिन सबका बचाव कर ता ही सनातनी वाद विवातमें जीन मरने थे। और वेदाका विरोध तो उनमें ही नहा सकता था। अम वाद विवादमें जय म अतरता था तब कहना था कि मर लिये सभी शास्त्र श्रद्धापान जयान् आन्तरणीय ह परन्तु प्रमाणक रूपमें म किमी शास्त्रग्रन्थको नही मान सकता। आय मसूतिके अुदगमके रूपम और अनुभवी अपियाक मुखसे निकल हुअे अुदगाराक रूपमें वेद मरी दष्टिम पूज्य ह। अितु उनका निश्चित अथ जाने बगर म अुह प्रमाणके रूपमें कसे स्वीकार करू ? सायणाचाय वेदाका अथ जेक प्रचारसे करते ह तो यास्काचाय दूसरे प्रकारसे करते ह। लाकमायका जय अलग है ता अरविद घोषका अथ भी अलग है। स्वामी दयानद सरस्वतीका अथ तो उनमें भी अलग है। और व स्वयं हा यह बात कह गये ह कि प्रत्येक मनुष्यको वेदाका अथ करनेका अधिकार है। असी स्थितिमें वेदाक प्रामाण्यक वारमें शास्त्राथ करनेम क्या लाभ होंग ? जितना समयमें आये जुतनेका हम स्वीकार कर वाकीका समयमें नही आता अैसा कहकर छाड दें, किन्तु अुमकी निन्दा न कर। जहा तक मरी गुड बुद्धि चलती है मरा अनुभव पशुचता है और मरी श्रद्धा टिक सकती है वहा तक म शास्त्रारा मानता हू। मरा दष्टिमें प्राचीन कालके शास्त्राक व्याकरण गुड जयवा तजशुद्ध अथकी अपशा श्रद्धावान और अनुभवी धमद्रष्टा सन्तुरुपाके जीवन वचन अधिक महत्त्वपूर्ण ह। जुनक गदा पर विश्वास रखकर अपना मागदगन करनेका काम म अुह सौप दता हू।

अैसा वत्तिसे की हुअी चर्चाअामें हमें बडा आनद आता था। आय ममा जियाकी धमचर्चाकी अपशा अुनकी समाजसेवा और अुनका आत्मयाग मुने सदा अमित अुज्ज्वल लगा है। असे लोगाक कन्व वचन भी मुझे मीठे लगत थे। 'काश्मीरजस्य कृतान्पि नितान रम्या।'—काश्मीरके कसरका कडुअापन भी स्वादिष्ट लगता है। दयानद सरस्वती जमा तजन्वी त्रहचारी और समाज हिनपी पुर्य ही निभयतासे किमी राजाम भी कह मरता था कि तू कुत्ता मत बन। अिम समाजमें स्वामी दयानन्म लकर स्वामी श्रद्धानन् तक बलिदान त्नेवाल वार अुत्तज होने जाने ह अुस समाजका तज सग अुज्ज्वल हा रहनेवाला है। अिमो भा धमका प्रचार अुसक पेनेवर या प्राश्रुत गायका और प्रचारका द्वारा नहा हाना। गुड बन्निगनसे ही धमका प्रचार होता ह। धमका प्रचार अुस धमक अपने सध्धे तेजसे होता है।

आज गुडिकी और गुण-कर्मनुमा चानुवण्यकी बहुत चर्चा हुआ है। सच कह तो आप अलून्याकी जा गुडि करत है वह मुझे विन्कुल नापसन् ह।

जस्पृश्याकी गुद्धि हम किमलिअे कर? जुहाने जसे कौनये पाप या अपराध किय ह कि हम अु हे अगुद्ध मानें? व मृत पगजाकी चीरत ह चणल पुन बनात ह या पाक्षाना साफ करतै ह अिसीलिअे क्या व अगुद्ध हो गय? य सब ता नमाजक लिअे अपयागी घये ह। जिनक द्वारा अस्पृश्य लाग समाजकी कीमती मेवा करने ह। पावाने साफ करक व समाजको स्वास्थ्य प्रदान करत ह। जउ उगाणे कविने अपनी कवितामें जस्पृश्याकी तुलना स्वयं हलाहल पाकर दवाको अमृत देनेवाले नीलकण्ठ महादेवके माय की है। जसे वगको भग शक्तिकी आवश्यकता कसे हो सकती है? म ता अस्पृश्या को दूर रखनवाए स्पृश' वगकी गुद्धि चाहता हू। म स्पृश्यामे वन्ता हू कि भाजिया आपको टुट्य गड कीजिये और अपनी उत्तम प्रकारकी मवास आपको अणी बनानेवाली अिम जभागी जानिका अनाजिये। जस्पृश्याका दूर रखनेस हिंदू जातिका सगठन नहा हंग। जेक अस्पृश्यताका यदि हम खतम कर द ता हिंदू मुसमान जीमाजा सभाक साथ हमारा झगडा मिट जायगा। यह झगडा यदि पूणतया न मिटा ता भी मद अवसव पट जायगा।

आप समाज अस्पृश्यताको नहा मानता। फिर भी गुजरातक कुछ ताय समाजी अस्पृश्यता निवारणमें गियि ह भीतर ही भीतर या छिपे रूपम अस्पृश्यताका बचाव करते ह। रुडिप्रस्त मनातनी हिंदू यदि जस्पृश्यताका बचाव करे ता यह बात समझमें आ सकती है। लकिन आप लाग तो धमका जुद्धार करने निन्ले ह। आप रुदिक गशु ह। आप यदि जस्पृश्यताका बचाव कर तव तो हू हो गती न। जघविश्वाससे मभिन पाकर यलि जाप अपनका पुण्यपात्र मानने हा तो अक प्राचीन बचन उद्धत करके म जापने कहुगा

जयशत्रे कृत पाप पुण्यक्षेत्रे विनयति ।

पुण्यक्षेत्रे कृत पाप वक्ष्यन्पो भविष्यति ॥

दूनरी बात यह है कि आप चानुवण्यको जमसिद्ध नही मानते बल्कि गुण कमके अनुमार मानते ह। भगवत्गीतामें श्री भगवानने कया है

चानुवण्य मया सल गुणकम विभागग ।

अितम भार गुणकम विभागग गण पर दिया जाय या मया सल पर लिया ताय अिम प्रश्नकी बचामें मटा म नहा अनुहगा। म ता आपसे अितना हा कहुगा कि चानुवण्यका आधार चाहे तो हा अुसमें जूचनीचका भाव तो कभा हाता हा नग चाहिये। सब काजी अपन अपने स्थान पर समान ह। जूचनीचका भाव जाया कि प्रतिस्पर्धा तायी ही समन्विय। प्रत्येक मनुष्यकी अिच्छा सर्वोच्च स्थान पर पहुचनेकी हाता है। बुने मना कसे किया जा सकता है? प्रतिस्पर्धा जीर चानुवण्य अित दोनामें काजी मल नहा हा सकता। यदि जाय-समाजम भी ब्राह्मण

श्रेष्ठ और गूढ़ कनिष्ठ जसा अच-नीच भाव चालू रहगा ता यह समान मतानती समाजकी अपेक्षा जल्दी नीचे गिरेगा। सबका सम्कार प्राप्त करनेका, मांश पानेका तथा समाज-सेवा और भूमिमात्रकी सेवा करनेका समान अधिकार हाना चाहिये। जिसमें बाहरम मर्यादा लगानेका अधिकार निमीका नहा है। चातुर्वर्ष्य कब समाजमें जाजीविकाकी गति-मूलक और प्रगति पापक व्यवस्था करनेके लिये हा है। जह आपनी हित-सम्बन्धक परस्पर विरोधा होनेकी सम्भावना हा जहा जेका लाभ बन्नेस दूसरकी हानि होती हा वहा व्यवस्थाकी जरूरत हानी ह।

वर्ण-व्यवस्थाका मैं मनुष्य-स्वभावमें निहित [अथ प्रयोगरूप] मस्था मानता हू। और जब तक हम यह मानत हैं कि मनुष्य-स्वभावके निमाणमें जीव-वर्गका हाथ है तब तक चातुर्वर्ष्यक और वृत्त अथवा मनुष्य-वृत्त होनेकी चचा मरी दक्षिण प्रकार है। मनुष्यका स्वभाव तुरन्त नहा बदलता। हमारा पुनज-ममें विद्वान ह वग परम्परागत सत्कारामें विश्वास है और जिस दानमें भी हमारा विद्वान है कि गिना द्वारा तथा धर्म-सत्कारक द्वारा मनुष्यके स्वभावका बदला जा सकता है। और सब बातका विचार करके हम जपन मनमें चातुर्वर्ष्यकी व्यवस्थाका स्थिर कर सकत हैं।

चार वर्णोंका मिलाकर समाजका विराट गरीर बनता है किमी नी वर्णका केवल अपना ही विचार करके स्वतन्त्र अथवा जलग रहनेका अधिकार नही है—यह बात वेदके पुरुष-सूक्तमें स्पष्ट है। मुझे लगता ह कि जवन हिन्दुओंमें प्रत्येक वर्ण और प्रत्येक जाति अपने अपने अलग मड बनकर दूसर वर्ण या दूसरी जातिक प्रति अदामान अथवा लापरवाह हा गये तभीस चातुर्वर्ष्यका नाग हुआ है। ब्राह्मण यदि ब्राह्मणका ही विचार कर और अन्य तीन वर्णोंक अल्पकी परवाह न कर ता वे वर्णोंके गुरु न रहकर गतान बन जाते ह। क्षत्रिय अपनी जातिक आत्म-वर्धनाने समस्त समाजकी रक्षा करनेके बजाय यदि अपना जातिक अधिकाराका रक्षा और जातिकी श्रेष्ठता मिट्ट करनेमें लग जाय ता यही कहना पड़ेगा कि वे चातुर्वर्ष्यका नहा मानत। अन्य यदि सार समाजक लिये खेती और गोरभा करना छाड़ दें और अपने दानके प्रवाहका अपनी जातिका भंग करनेका दिगामें हा माइ दें ता वे आप लिये धमक गये कह जाया। चारा वर्णोंको मिलाकर अक-नीच समाज बनना है यह दिखानके लिये ही बलि बलिने महश्रापा पुरुषकी कल्पना की है। परन्तु जिस जुषमाको स्वीच-तानकर हम अमा अनुमान न निकालें कि पाव गरीरका आधा और निचला भाग ह जिसलिये गूढ़ समाजका आधा और अपुष्णणीय भाग हैं। प्रत्येक ममथकार मनुष्यका कर्तव्य है कि वह अपने आसपासके मनुष्य-मात्रको सम्कारी बनाये। ब्राह्मण अघात लियेक यदि यह कहे कि अमुक अमुक वर्णोंका मैं सम्कार द्वारा द्विज बनाभूग ही नहा ता मनसना चाहिये कि ब्राह्मण बाका दिवाला निकल गया ह।

समाजम कुछ लाग ता दुर्भाग्यम जड म या अपग रहेंग ही। प्रदान करन पर भी जा गग गस्कार प्रत्ये नही कर मनन अमे लागार त्रिभ द्विजाना अथान् मन्मारा लागानी परिचर्या करके अपनी आजीविका पानकी व्यवस्था गू वणमें है। परिचर्याका अर्थ है मनुष्यकी व्यक्तिगत सेवा। अग्रजीमें जिंग mental service कहा जाता है। स्वाध्यायी और स्वाध्यायी समाजमें परिचर्याक त्रिभ वमम वम स्थान होता है। सम्कारी लोग समाज गवाक रूपमें बीमाराका या जरात्रिजाकी परिचर्या कर विद्यार्थी धमरद्विष अपन गुरभ्रात्री परिचर्या करके रायापनक लिखे जरूरी पुरगत बु ह जग द हर परिवारमें युवक और युवतिया कृत्तनताका भावना और भक्तिम परिचारक अतिवद्ध गुरजनताकी परिचर्या कर यत् स्याभाविक है। जमी परिचर्या करनवाग मनुष्य हमारा बुधा उठता है। त्रिभ जमी परिचर्या अके नमित्तिक धम है। परिचर्याका धया करनवाला और जुमन जात्राविका प्राप्त करनेवाला अके वग खडा करके अमकी मस्याका दाना समाजकी नावकी दुबानवागी प्रवृत्ति है।

जिन प्रकार शिक्षाशास्त्री ब्रह्मचारिणी मातृसारीने अपग वाचका भी सन्तान प्रदान करनेकी नशा नगी पद्धतिया लोजनेका बीडा अठायी असी प्रकार म्म भा समस्त गूदाको शिक्षा जीर सस्कारा द्वारा द्विज बनानका बीडा अठाना चाहिये। ब्राह्मणको असा लगना चाहिये कि समाजका एक अके अनपठ या सरकार गूय गूद विद्यागुरु ब्राह्मणके पराजयकी पताना है। समाजमें गूदाकी सदया जितना कम होता है जाना ही समाज अधिक हल्का और अधिक गक्तिगाली बनता है।

जितने लोग स्वतन्त्र धया करके आजीविका प्राप्त करते ह और समाजक याग नेममें पूरा भाग लते ह व गव धन्य ह। मत्र वह धया राय-व्यवस्थाका हा जाभूषण बनानका हो दवा-दार करनका हो या जूते सीनका हो। विराट वन्य वणम अतक जातियाका और बीमाका समावग होता है। वेणमें ता थ य अथवा विग गूका प्रयोग सामाय मनुष्यक अथमें किया गया है। ब्राह्मण पुत्र गन शेष वरणकी प्राथना करते हुअ कहता है ह देव वरण हम सब विग हानन कारण स्वतन्त्रधर्मी ह। हम तुम्हारे नियम प्रतिदिन तोडते ह। तुम हम पर कोर न करना। मनुष्य समाजका बडा भाग वन्य समाज ही हो सकता है।

ब्राह्मण और क्षत्रिय ये दा वण समाजकी विगिण और अक्कट पारमायिक सेवाक त्रिभ जुत्वन हुअे ह। धम प्रचार अथवा शिक्षा प्रचारक प्रतापस यदि सारा समाज मार्त्तिक हा जाय तजन्वी बा जाय तो क्षत्रिय वणके लिखे अधिक काम न रू। धमनी गक्ति पर यदि हमारा मच्चा दिन्वास हो ता हमें अवश्य यह गागा कि अने समय जसा जाने ही वाला है जब मनुष्य समाजमें अयाय स्याचार जीर विग्रहका नाग हा जायगा। तजन्वी समाज अपनी रक्षाका काम किना रेक वाकी ही सगके लिखे नही सौप सकता। स्ववीयगुप्ता हि मना

प्रभूति । मनुकी प्रजा—मानव-जाति—अपने वीरसे ही अपनी रक्षा कर
 दूमरासे रक्षाकी अपना न रखे, जसी स्थिति किमा न किसी दिन ता जाना ही
 चाहिये । अमु समय तक प्रजाकी रक्षाके लिये अपना बलिदान देनेका तत्पर
 रहनेवाला एक वण समाजसे अपनी आजीविका प्राप्त करनेका अधिकारा रहगा
 ही । क्षान्वर्तिका समाजक प्रत्येक मनुष्यमें विकास हा यह वाछनीय है । परन्तु
 क्षात्रवण वण रह या छाग यह तत्कालीन परिस्थितिया पर आधार रखना ह ।

ब्राह्मणका धर्म विद्याकी अनुमना विद्यावद्धि और विद्याप्रचार धर्मका
 पालन धर्मका सम्करण और धर्मका प्रचार करना ही है । जब तक मानव
 प्राणी जन्मे हा अपने साथ ज्ञान लेकर नहा आता जब तक वह सस्वाराका
 गिनाकी अपेक्षा रखना है तब तक ब्राह्मण-वण अवश्य रहगा । ब्राह्मण अपने
 पान और दीघ दृष्टिसे समाजका स्वाभाविक नेता बन सकता है । वह समाज
 भन्क न बन जाय जिसक लिये हमार शास्त्रकाराने अमु पर तीन प्रकारकी
 मर्यादायें लगा दी हैं (१) ब्राह्मणका सपत्ति, सत्ता और सुख तीनाक दारमें
 विरक्त रहना चाहिये, (२) ब्राह्मणका अपनी जिज्ञिया पर विजय प्राप्त करनी
 चाहिये गरीबीमें रहना चाहिये धन-सचयकी त्याग देनी चाहिये तथा
 (३) ब्राह्मणका सत्तापीन बननेका लाभ नहा रखना चाहिये । महान चाणक्यन
 मत्ताका उपयाम करक विदेशक गविनागा लोकाके देशमे बाहर निरासनक
 लिये मगय देशमें महान हिन्दू साम्राज्य स्थापित करनेकी हिमायत की । परन्तु
 अन्तमें ब्राह्मण-धर्मके विरुद्ध यह कर्म करनेक लिये अन्हाने भारी प्रायश्चित्त किया ।
 आज दक्षिणे यूरोपक ब्राह्मण किस प्रकार दुनियाको मुल्गाने लगे हैं !

आज मुझे कही नी वणधर्म लिखात्री नही दना । जहां-तहा जानिया ही
 जानिया दिनात्री पडती है । जानि खूनके सम्बन्ध पर रची गयी सन्धा है । यह
 सन्धा नमू प्रमी है । धर्म सांस्कृतिक है जानि प्राकृतिक है । जिस प्रकार धाम
 अपन जाप लु आती है अमी प्रकार जानिया अपन आप बन जाती हैं । व
 धर्मक वण नहा परन्तु कुत्तरक वण रहती हैं । सम्कार प्रधान वण-व्यवस्थाका
 निकाये रखनेक लिये धर्मका जानाय व्यवस्थाका तगर नष्ट कर दना चाहिये ।

धर्म-परिवर्तनके दारेमें मर विचार अग्य हैं । अपने अपने समूहकी सन्धा
 बननेकी अिच्छामे दिया जानेवाला धर्म-परिवर्तन धार्मिकताका भूत्कर समूह धर्मका
 प्रदानता दना है । भारतमें जीयाअियाके अनुभवका दक्षिणे । कोअी व्यक्ति उत्र
 अपना धर्म छाडकर अीमात्री बनता है तो वह अपने समाजसे पूरी तरह जुवड जाता
 है समाजम अमुका कोअी सम्बन्ध नहा रह जाता । नये समाजमें अमुकी उडे न्वा
 नासिक रूपमें जमकी नहा । जब बडी तादादमें या मारी जानिका धर्म-परिवर्तन
 दिया जाता है तब अमा समाज अपने पुराने सत्वाग और अथविश्वामाका छान्ना
 नही । धर्म-परिवर्तन करनेमे केवल नामका लक्षण ही बदलता है । अमे वा

पुराने समाजसे जलग पड जाते ह और नय समाजक त्रिभे वोन बन जात ह । आवश्यकता है हृदयके परिवर्तनकी, हृदयकी शुद्धिकी सस्काराकी शुचिताका । जिसके लिये ता सभी धर्मों गुजाजिस है । प्रत्येक मनुष्य अपन आचरण द्वारा अपने जीवन सिद्धांताका जल्प दिवाये तो जसना अंतर आमपासक समाज पर स्वाभाविक रूपमें जितना हो सकता है जुतना अवश्य होगा । जब तब राम कहगे कि अबमात्र हमारा ही धम सच्चा है याकी सब धम झूठ है तब तब धार्मिक विग्रह रहगा ही धमक नाम पर अधम फलगा ही । अस्लाममें भा यह कया गया है कि औरवरने प्रत्येक देगके और प्रत्येक युगका धम पुरूप लिये ह, अमन किसी भी समाज या किसी भी युगका जनाय नहा रखा है । हमारा भा यत् किन्वाम है कि धमसम्पापनायाय यग युग अवतार हाते ह । औरवरका ययम्मा जमी ही हा सकता है । भिन्न भिन्न परिस्थितिका अनुसार भिन्न भिन्न जन स्वभावक अनुसार धमना कल्बर भल ही भिन्न भिन्न रूप धारण कर परतु धमनन वीतरूपमें तो सनन जेकसा हा आतप्रोत है । जब अिस यवरधाका मवन ममज्ञ लिया जायगा तभा जगतमें शांति स्थापित होगी । हमार वेद सबके त्रिभे खुडे ह — विवताच वग । सभी धमग्रय मव लागाने त्रिभे ह । प्रत्येक मनुष्यका अपने धमका पातन करते हुन भी सब धमोंके प्रयाका रीति रिवाजाका जोर सस्काराका जव्ययन करना चाहिये और औरवरकी विविध लीगको समय कर अनन जीवनको धय बनाना चाहिये । जब हम अिस तरह चल्य तभी हन यह विश्वास होगा कि दुनियाक सभी धम सच्चे ह सभी धम मागत्म-परायण ह । जोर तभी हमारे अिस भारतनपमे सब धमोंका जेक विश्व कुटुम्ब स्थापित होगा । हमारी शिक्षण-संस्थायें जसे धम-कुटुम्बका आदग अपन समक्ष रखें और जुमे मिद्ध करनेका यथाशक्ति प्रयत्न कर यह सबधा वाछनीय है । हमें अिस लिंगाम चलनकी शक्ति प्राप्त हो और हम मव मनुष्याकी जोर मित्रताकी दृष्टिसे दव मरें, जसी प्राथनाके साथ म अपना भाषण पूरा करता हू ।

२

सनातन आय-समाज

आय समाजमे सयामी ह गृहस्थी ह राजाीतिन ह गि तागास्त्री ह राजनानिम धवरानेवाग पेंगनर ह जोर सपूण नागरिकताका अनुभव न करनवाल मरकारी अगिकारी भा ह । आय-समान जब मुधारक पय है यद्यपि अुसमें भी प्रगतिना त्रिभेकर चौकनवाल राजनानिम धवरानेवाग जोर हमने बहुत काम कर लिया है अब तो जा कुछ मिथा है अुमनी रक्षा करनका काम ही रह जागा है' जसा मानववाले धम-परायण गग भी ह । कभी कभी जसे लागान

हाथमे समाजकी धुरा आ जाती है और सुधारक लोग आय समाजके भविष्यके वारमें धार्मिक बुद्धेगवा अनुभव करके निराग हो जात है।

जिम सबके बावजूद आय-समाज जेक जीवत समाज है। अुसने काफी प्रगति की है। मनातनियाका सफलतापूर्वक मुकाबला करनेकी पद्धति भी अुसने अब बडी हद तक बदल डाली है। आय समाजका भविष्य अुज्ज्वल है। किसी समय आय-समाजना अस्त हुआ ता वह अपने आदर्शोंम अुसकी धृढा घटनेके कारण अपना यपन प्रयासोंमें अुस निष्फलता मिलनेके कारण नहीं होगा परन्तु जिसलिअे हागा कि अुसने सुधारका जा काय हाथम लिया था अुसके पूरा हो जानेसे वह वृत्तायता अनुभव करके अपना पुराना स्वरूप छोड देगा और पुरानी प्रेरणाका नया रूप दतके लिअे नया गरीर धारण करेगा।

मनातनका अय है निय-नूतन। प्राण विसर्जन करके भी मूल सिद्धांतकी रक्षा करना और अुनके बाह्य स्वरूपमें समय समय पर परिवर्तन करना— निमामें मच्छा सनातनत्व समायो हुआ है। मरा विश्वास है कि असा सनातनत्व आय-समाजम पूरी मात्रामें है। अिसीलिअे मरा यह विश्वास है कि आय समाजका भविष्य अुज्ज्वल है।

२१-१२-२७

३

आर्य-समाजकी सफलता

जिम वारम किमीका मतभेद नहीं था कि (निजाम हैदराबादमें हुआ सत्याग्रहके सम्बन्धमें) आय-समाजकी मार्गें 'याययुक्त' था। सामाजिक शान्ति और सामाजिक हितका भंग न हा अुम समय तक प्रत्येक मनुष्यका अपनी मायताक अनुसार धार्मिक जीवन बितानेका अधिकार हाता चाहिये। अिम सिद्धांतका प्रस्थापित करनेके लिअे मनुष्य जातिन कितन ही युगा तक पुरुषाथ किया है और न जाने कितने ही बलिदान दिये ह। आज अिम विषयमें किसी प्रकारका मतभेद होनेका कोअी कारण नहा है। किन् भी यदि काअी पिछडी हूअी या भूझाग्रहा सरकार मनुष्यके सामाय अधिकारकी रक्षाके लिअे भी नये बलिदानकी माग कर ता प्रत्येक धर्मप्रमीका अितना बीमन चुनानेके लिअे तयार रहना चाहिये। परन्तु यह सवाा मार्गें अुठे बिना नहीं रहता 'काअी भी सरकार अमा बलिदान किसलिअे माने ?' जा बात अनेक बार उद्ध हा चकी है अुम पुन उद्ध करनेके लिअे क्या बार-बार बीमन चुवानी हाती ?

जिगका अुत्तर यह है स्वतंत्रता प्राप्त करना जितना मनुष्यका कर्तव्य है अुमन भी अधिक शान्त गच्छ रहकर अग स्वतंत्रताकी रक्षा करना अुमका अधिकार है। यदि हम किसी न किसी कारणसे अपनी स्वतंत्रता ता बडे ता

असली पुनः स्थापना करनके लिये अतिनी कीमत ता चुकानी ही पत्नी है। अंगर
विना यदि स्वयंप्रता मिले ता हम अंग पचा नहीं मारा।

आप-समाज हिंदू धर्मका मनामूस है।

जा लाग अनी स्वयंप्रता का बठन ह अहुद फिरग स्थापना प्राण करनके
लिये जैम कीमत चुकानी पडती है यम ही जा ता दूगगावा स्वयंप्रता छान
कर जुस पुन लीगानके लिये बलिगन मागन ह अ भी अंग अंग दुष्पयहाकी
कामत चुकानी पडती है। अतिहाग जाता है कि अंग कीमतता स्वयं कना
हाना है।

१२-८-१९

२७

प्राथना-समाजकी सेवा*

जमगमाला के भवनरवि भागनाथ नाराभायी द्वारा स्थापित महान
प्राथना समाजकी पच्छिभूतिका जुत्सव मनानके लिये आज हम महा धनत्र हजे
ह। साठ वषमें अके सबसर चर पूरा हाता है सारा जमाना बदल जाता है
जीर नये युगका आरभ होना है। साठ वष पहल जाके ही दिन अंगलणन
गाहजाके स्वास्थ चित्तन करनेके लिये अनक धर्मी लोग अक हृदय बनकर
प्राथना करनेके लिये जकथ हुआ व। जसीमें से गुजरातत प्राथना समाजका
जुदय आया। आज साठ वष बाद जे गुजरात पूरा स्वराज्यकी लडाईमें
सबसे जाके रहकर अक हृदय हो गया है जुस समय हम यह जुत्सव मना रह
ह। साठ वष पहल सरकारी गि ता विभागकी जाके प्राथना समाजका प्रासाहन
मिका था आज राष्ट्रीय गिवासे सम्बंध रखनवाल हम वित्तन ही लोग जाके
जीर भक्तिमे जिम मणि महानमम गमि हजे ह। प्राथना समाजका साथ
गि ता जाके जागाका यह सम्बंध विगत ध्यान लावनकाक है।

साठ वष पूरा प्राथना समाजके कारण गुजरात जीर महाराष्ट्रका सम्बंध
दूर हुआ था। आज जे महाराष्ट्रीयन नाते जिस समाजका जसबम भाग लते
दूर मुने जानइ होता है। प्राथना समाज पच्छिम हिंदुस्तानके अनक प्राताक
वीचकी प्रथम प्रम गायला है।

म यह बड़ तो गलन नहीं हागा कि प्राथना-समाजके साथ बचपनसे ही मरा
सम्बन्ध रग है। लगभग ३३ वष पहले म दारवारके हिंदू स्कूलम पन्ना था।

* ता० १७-१२-३१ को जहमरावा प्राथना समाजके मणि महोत्सवके
जनर पर दिया गया भाषण।

वहा हमारे अध्यापकाका युवाव प्राथना-समाजकी जोर था। धुनके प्रवचन में रमपूर्वक सुनता था। ठेठ वचनमें पढ़रपुरके साधु-सताका मुच पर जो असर हुआ था वह प्राथना-समाजके सस्कारास विगुद्ध और वृद्ध बना। जिस अुमरमें जाग्रत हृदय तराजीण रदियाक खिलाफ विद्रोह आरभ करता है जुसमें रदियाक साथ धम-सस्काराका भी नाश हो जानेका भय रहता है। गाम्त्रधमकी अपेक्षा हृदय-धमको अधिक समझनेवाले साधु-सताने अपनी आपवाणीसे अुस समय मुच जिस भयसे बचा लिया था। रदियाके खिलाफ विद्रोह करते हुए भी मनुष्य अपनी नीतिनिष्ठा जोर जीगनिष्ठाकी रक्षा कर सकना है यह जा विश्वास और मागदशन साधु-सताने मुचे दिया अुसे वतमान परिस्थितियामे लागू करनेका काय मेरे लिअे प्राथना-समाजने किया है। जुन दिना यह कल्पना रूढ़ हो गजी थी कि धम केवल अहिक और पार-गैकिक आत्मोन्नतिक लिअे ही है। जिसमें समाज-मेवाको जोड़कर जनसेवा ही जोरवर-सेवा है जिस प्रकारका सम-वय हमार जमानेने विगेष रूपसे किया है।

परन्तु आगे चलकर जत्र अिममें समाज सेवाका जोर बना, ता जीरवर और गाम्त्रधम दानाकी ओर लोगाकी अनास्था बन गजी। म मानता हू कि सगय-वाद और नास्तिकता सामाय मनुष्यके लिअे लगभग अपरिहाय ह। जवानीके साथ जमे मुह पर मुहासे निकलते ह वमे ही विचार जागृतिके साथ मनुष्यमें सगयवाद और नास्तिकता आते ही ह। आगस्टम काट ह्वट स्पेसर जान स्टुअट मिल जोर जान मोर्गे जैसे बुद्धिवादी तथा जीरवर विमुख पडिताकी रचायें पन्नेके वाद यदि नास्तिकता अधिक जोर पकड ता अिमम आरचयका कोजी दात नहा। मनुष्यक जीवनमें नास्तिकता और सगयवादकी गहर जुटे ता जिसम म बोअी खतरा नहा देखता। खतरा है अुसक साथ जानवाली अलबुद्धिम और अुद्दाम अहकारक। वचनक सस्कार यदि अच्छे हा अयवा यदि मत्यनिष्ठा और धम जिज्ञामा अुत्पट हो तो नमता और गुद्धता अवय वनी रहेगी। मेरा सगय-वाद और बुद्धिवाद महामनि रानडेकी रचनाआमे दूर हा गया। अुसी अरसेमें डॉक्टर भाडारकरका अेक भापण मुने मुतनेको मिला। अुनके भापणमें मुझे तुगरामके जसी हृदयकी गुद्धता श्रियाभी दी। लेखक और वक्ता अधिकतर बलाकार होत हैं। वे अपनी साहित्य-छटासे लाग़ा पर विगेष प्रभाव डालनेका प्रयन करते हैं। परन्तु डा० भाडारकरमें असा कुछ नहा था। नग्न बालककी म्वा भाविकतासे व अने विचार प्रकट करत थे। अिम प्रकार जुहाने श्रोताआके सामने अेक मुन्दर आदग प्रम्नुन किया। राजनीतिक क्षेत्रमें जुनक विचार अुन्नति या स्वाभिमानके पापक नही हैं यह मैं जानता था। किन्तु जिस कारणसे अुनकी दूमरी अच्छी बातानी अुपेक्षा करने जितना मनाप मैं अुम समय भी नही था।

प्राथना-समाजकी अनी नाव पर मरे त्रिभ स्वामी विमान' तथा राम वृष्ण परमहंसर लगाने अपनी अिमागत गडी का और मर रिक्तता अक प्रकार या आश्वामन जोर प्रोगाहन मिलन ग्या। १००८ म म 'लॉ टम' भरनर त्रिभ बम्बयीमें रहा। अुन त्रिना म प्राथना-समाजकी जुपागगारा मयागभव शूकता नही था। अुख जरनेमें बहाक जब अुपागगान त्रिभियम जेम्सारी वरापरीक आक रिलीजियस अेक्मपीरियम नामर पुस्तक मुग पढ़नेरो दी। धर्मानुभवरा विरलेपण करने तथा अुमका मूयावन करनेका दृष्टिगे यह पुस्तक बडी अुपागी है। बुद्धि और भावना श्रद्धा जोर रावल्प अिन गयरा सुन्दर समवय स्वामा विवकानदक लखा द्वारा मुक्त वदातमें मिया। द्रत-अद्रतक शागड ध्यय ह यह म आसानीमे समझ गया। हिंदू सामाजिक जीवनमें और धम-व्यवस्थाम हम अपन सत्त्वतानके प्रति बफागार नहा रह यह बात ध्यानमें आनस धामिनतान आधार पर सामाजिक सुधार करनेकी आवश्यकता मरे मामन अधिकाधिक स्पष्ट हाने लगी। भगिनी निवेदिता और आनंद कुमारस्वामी आदि प्रतिभावान लखाकी रचनाआरु कारण धमका सामाजिक पहलू अधिकाधिक स्पष्ट हान लया। जीवनकी समग्र कल्पना करनेके लिए जो दृष्टि चाहिय अमका मुझमें विनाग होन लया। अितनी तयारीक बाद गीता जुपनिषत् तुनाराम बनीर आदि आध्यात्मिक शक्तियाका स्वरूप जोर सामग्य भेरे समक्ष अुत्तरोत्तर अधिक प्रकट होने लया।

हिंदू धममें अय धमोंके प्रति तिरस्कारका भाव है ही नहा। तुम्हारे लिए तुम्हारा धम और हमारे लिए हमारा धम — यह कुरानका वचन सम्प्रदाय-बहुल हिंदू धमका प्राण है। जेक सत् विप्रा बहुधा वरुति। प्राथना समाज सभी धमोंसे समान रूपमें प्रेरणा ग्रहण करता था असलिये हिंदू धममें निहित सवधम सदभाव अधिक स्पष्ट हुआ और जिसे आधुनिक लोग धार्मिक अुदारता कहते ह तथा म जिसे जागृतिकी स्वाभाविकता कहता ह, अुसका दगन मुझे हुआ। अब भेरे मनमें यह विचार भी स्पष्ट हो गया कि वद और स्मृति बाअियल और कुरान ग्रास्त्राके सस्कार और लोगामें रूढ बनी हुअी विधिया — अिन सबको किस दृष्टिसे देखना चाहिये जोर किम दृष्टिसे अिनकी परीक्षा करनी चाहिये। अिमसे मुझ हिंदू धमस भी अधिक विगाल भारतवर्षीय सावभौम धमका साक्षात्कार हुआ। वचनसे मिली हुअी प्राथना समाजकी यह अुदार सहायता मरे त्रिभे अनेक प्रकारम अुपकारक सिद्ध हुअी है और असलिये प्राथना समाजके प्रति मरे मनम सग कृतज्ञता बनी रही है।

अिसक बादकी मरी प्रवृत्ति अस नूतन विवमित दृष्टिसे भारतक सव धमों और सम्प्रदायाका निरीक्षण करनेकी थी। प्राथना समाज अथवा ब्राह्म समाज आय ममाज और देव समाज रामवृष्ण मिगन जोर यियासाफी चतय सम्प्रदाय और स्वामीनारायण सम्प्रदाय—सबकी ओर जितसी दृष्टिसे देखनेका मन हाने लया।

जिस दृष्टिसे देखने पर मालूम हुआ कि प्राथना-समाज भारतवर्षीय घम-परिवारक संगीतका तानपूरा है। आत्माकी अनतताको यत्न करनेवाला भाववाही संगीत चाहे जितने सप्तक चढ़े अथवा अतरे आराह-अवरोह तथा आलापके चाहे जितने विविध विलास दिखाये फिर भी जिस तानपूरके साथ तो उसे अपना मेल बैठाना ही होगा। अर्थात् सभी घमोंको प्राथना-समाजके साथ सुमेल साधना चाहिये। तानपूरके अभावमें संगीत बिल्कुल नहीं सक्ता, किन्तु सारा संगीत तान पूरेमें ही नहीं समा जाता।

प्रत्येक घममें बुद्धि, दिय अनुभव, श्रद्धा अतःकरणकी भावनायें, काय कल्पना और कला रसिकता होती है—होनी ही चाहिये। साथ ही व्यक्तिका समाज और विश्वके साथ सम्बन्ध, जीवन-व्यापी सध स्थापित करनेकी वृत्ति और आवश्यकता तथा क्षेमवृत्ति (conservatism) और परिवर्तन-वृत्ति (radicalism) ये दोनों पहलू घममें स्वभावतः होते हैं और होने चाहिये। जिनमें से अेक भी अगको यदि हम कम कर दें, तो घम विकलाग हो जायगा और मनुष्य जीवनके लिये अपयान्त सिद्ध होगा। घममें श्रद्धाकी मात्रा बढ़नेसे घम विगडता नहीं। भावना और कोमलताके बढ़नेसे घम कमजोर नहीं बनता। काव्य कल्पनाओके बढ़नेसे वह असत्यका प्रेरक नहीं होता और कला रसिकताके बढ़ जानेसे वह हीनताका संप्राहक नहीं बनता। विश्वके साथ अपने सम्बन्धको पूणतया स्वीकार करनेसे वह असावहारिक नहा हो जाता। क्षेमवृत्तिको अगीकार करनेसे वह जड नहीं बन जाता। और न परिवर्तनशीलताका स्वागत करनेसे वह विनाशक हो जाता। घमकी मृत्यु अनान विलासिता और बाह्य सत्ताके कारण होती है। भ्रममूलक सत्यमे सत्य ढक तो सकता है, परन्तु असका नाश कभी नहीं हो सकता। जिसका कारण यह है कि असत्यके पेटमें भी सत्य ही छिपा रहता है। सत्यकी पराजय सत्तामें है। कोअी भी घम जब अनानको बरदास्त करता है विलासिताके साथ समझौता करता है, अथवा सत्ताकी भुपासना करता है तब पहले वह घम सुलभ हो जाता है रोचक बनता है विशाल होता है और अतमें जलके बड़े बुलबुलेकी तरह फूट जाता है। शासनकी सहायतासे फला हुआ घम क्षीणवीर्य और क्षण-जीवी बनता है जिसका सम्राट अशाकने भी अनुभव किया था और अकबरने भी अनुभव किया था।

प्राथना-समाजने ओश्वरके अद्वत पर विशेष जोर दिया है। यह अिस्लामकी देन मानी जायगी। राजा राममोहनरायने अिस्लामका गहरा अध्ययन किया था। ओश्वरके अद्वतका जाप्रत भान अिस्लामकी असाधारण सुदरता है। सर्वोपरि सत्ताकी पूजा करनेवाले यहूदी लोगका ओश्वर ओपर्लु 'Jealous God' हा तो अिममें कोअी आश्चर्य नहा। यह विरासत अिस्लामको और ओसाओी घमको समान रूपमें मिली है। भारतवर्षमें जीव-ब्रह्मत्वका विचार पहलेसे ही चलता

आया है अमलित्रे हमारे देगमें 'अेक या अनेक' का शगण अुत्पन्न नहा हुआ, हमारे मागमें बाधक नही बना। अीश्वर है वह अन्तीय है गव-गमय है और प्रेममय है यह भावना अथवा अनुभव प्रत्येक धमकी पूजी है। वह अीश्वर जतर्यानी है आत्म स्वरूप है सब-मह है अपार धय रगनेवाग है जाग्रत है और भवनानुकूल है यह गोध वादमें हुजी है। अस शोधक अभावमें मनुष्यने धार्मिक जीवनमें बडे बडे कष्ट भोगे ह बडी बडी आपत्तियाका मामना दिया है। परतु वादमें हुजी अस शोधका विम्नार करनेका यह स्थान नहा है। अस गोधवे कारण धमकी पूजी बढी है। जो मनुष्य यह मानता है कि अीश्वर अनेक ह अेक नही जुसका नाग निश्चित है। मत्या ग मृत्युमाप्नानि य अिह नानेव पश्यति।

छोटे छोटे देवाकी अुपासनासे जो नुबमान होता है जुम दूर कग्नक वा ही अुपाय है (१) मुरय देवको रहने देकर बाकीवे सब देवाकी हया कर अाली अेवेश्वरवादकी लकडीसे अुनका स्पग करक अुह अपने स्थानासे नीक गिरा दा, (२) अथवा यह समझी कि अेकके ही वे अनेक हय ह अनेकसे अुस जवका जवत्व कभी नष्ट होता ही नही। भारतवय पहलसे ही अिम दूसरे माग पर चलता आया है। सब पूठा जाय तो जिस अीश्वरकी अुपासना हम अपने ढगम करते ह वह भी परमेश्वरकी मानवीय आवृत्ति है। हमारा अीश्वर मनुष्यका बनाया हुआ ता नहा कहा जा सकता परतु मनुष्यका पहचाना हुआ जरूर कहा जा सकता है। अीश्वरके स्वरूपवे माते हम जिसे पहचानते ह वह मनुष्यक अंतिम प्राप्नयका स्वरूप है। मनुष्य स्वयको पहचान कर ही अीश्वरका पहचानना सीखा है। अिमलित्रे हम अीश्वरको अतयामी कहते ह आत्माराम कहते ह। अुपनिषद कालीन अथियाने अीश्वरके स्वरूपका जो चिंतन किया है अुसी चिंतनको प्रायना समाजने पुन प्रचन्ति किया है और रुडिधमस अुमने आग्रह पूवक कहा है

तदेव ब्रह्म त्व विद्धि नेद यदिदमुपासते।

प्रायना-समाजने पहलसे ही मूर्तिपूजाका विरोध किया है। मुने लगता है कि हिंदू धममें मूलत मूर्तिपूजा नही थी सभवत वह बाहरसे यहा आजी होगी। आजकी मूर्तिपूजाका विराध भी बाहरसे ही आया है। भारतके सभी धर्मोंने मूर्तिपूजाका कला रसिकतावे अुत्साहसे स्वागत किया है अिसलिअे हमारे यहा मूर्तिपूजाका विरोध करना आसान बात नही है। मूर्तिपूजाकी अपेक्षा मूर्तिपूजाके आमपास जो जाडवर और अनाचार लिपटा रहता है वह अधिक घातक होता है। प्रायना समाजने मूर्तिपूजाका जो विरोध किया वह आरभमें बहुत जोगीला था। आरभमें प्रायना-समाजकी यह मायता थी कि मूर्तिपूजा असत् माग है अीश्वर का अपमान करनेवाली है मनुष्यमें नीचता पदा करनेवाली है और जुसे दुय

चारकी जार ल जानेवाली है। डॉ० भाडारकरने अिममें परिवर्तन करवाया था। अुहाने प्रायना-समाजमें यह मन दृढ किया कि मूर्तिपूजामें पाप नहीं है, लेकिन वह निरयक्त है। आगे चकर कहा वही मूर्तिपूजाका विरोध जितना मद पड गया कि प्रायना-समाजकी अपनी अपामनाक समय मूर्तिका अपवाग न करना ही काफी माना गया। मूर्तिपूजाके निषेधका दिया गया अल्पधिक महत्व भीतरसे ही कम हाने लगा यद् अेक तरहस अच्छा हुआ है। मूर्तिपूजामें काअी स्वाम रहस्य तो है ही नहा। मूर्तिपूजा मनुष्यकी कगवतिका सन्तुष्ट करनेवाला अयवा गिलौनाके साथ वेल्नकी बालवतिका पापण करनेवाला अेक प्रकार है। मूर्तिपूजाका त्याग प्रोत् या पम्पिकव वृत्तिक मनुष्यके लिअे स्वाभाविक होना चाहिये। लकिन आजकी परिस्थितियामें अिस छोटीसी बात पर विस्तृत चचा करना जरूरी नहीं है। प्रायना-समाजमें मूर्तिपूजाके निषेधका जोग कम हा गया अिसलिजे प्रायना-समाज निधिल पड गया है अँसा माननेका म काअी कारण नहीं दखता।

प्रायना-समाज द्वारा किया गया सुधारका तीसरा काय है जातिभेदका विरोध। जातिभेद काअी धार्मिक सस्या नहीं है परन्तु मानवके स्वभावमें गहरी जमी हुनी मनुह-वतिका ही अेक रूप है। मैं मानता हू कि हिन्दू धमने अिसे अुन्न करके वण-अवस्याका रूप देनेका सतत प्रयन किया है। प्रायना-समाजने जातिभेदका मवन्न अेकसा विरोध नहीं किया। बगालने अुमका अधिक विरोध किया महाराष्ट्रका विरोध नहीं-जमा ही कहा जायगा और गुजरातकी त अुसका विरोध करनेकी हिम्मत ही नहा हुअी। जातिभेदकी सस्या मनुष्यक प्रवृत्तिसे पदा हुअी है अिमलिअे अुसका विरोध करना कठिन है। भारतमें अुने धमकी मायना मिल जानेसे अुसकी गक्ति पहागे किलेमें धुमकर बैठी हुअी मनावे समान मुद् हा गअी है। बाहरी विरोध या आक्रमणसे यह प्रया मर नहीं सकता। अिमका भीतरसे ही अन करना चाहिये। आजकी परिस्थितिया औ-राजनीतिक आकाशमें यह काम कर रही हैं।

आज तक अनुभवम माअूम हाता है कि प्रायना-समाजने अेक आर जीवन विमुख बराग्य तथा दूमरी आर अनाचारपूण विलासिता दानाका सातमा क लिया है। प्रायना-समाज स्वभावस गृन्स्थाग्रमा है। प्रोटेस्टेंट आमाअी लागक अपेअी गिगा पाकर हम बडे हुअे हैं अिमलिअे पिछली आधी गतादीमें न ता हा अरने जावनमें अलौकिक त्याग और बराग्यकी दृढ कर मन और न बल्यना गक्तिका अुन्न बनानेवाडे नये अुल्यवा या त्यागराका ही आयाजन कर मव। यह कारण है कि प्रायना-समाजमें अनेक आरणीय सन्पुग्प तो अुने हैं परन्तु अुस भन्य पुण्याकी शीष परम्परा हम नहा पाते। जीवन-मुगल लोग जीवन-वीर हात हैं हे अनो बात नहीं। प्रायना-समाजक लिअे अब अध्यामके क्षेत्रमें वीरवतिक विकास करनेका समय पव गया है।

मेरी दृष्टिमें प्रायना-समाजना मुख्य बाय ता यह है कि भुगने धमप्रयावे प्रामाण्यका अत पर निया। वस ता नास्तिव तन्नादी और धमपूय राग राग ही गस्त्रप्रयाको अस्वीकार करते रहे ह परन्तु समाजक मानग पर भुगना बाभी अच्छा असर नही हुआ। धम परायण सास्त्रिन लोग जब बुद्धि, अनुभव और श्रद्धा पर आधार रखकर गस्त्रप्रयावे प्रामाण्यका स्वीकार करनेग अनकार करते है प्रयावे अधीन होनेसे अनकार करते ह, तमी समाज बौद्धिक और धार्मिक स्वातन्त्र्य प्राप्त कर सकता है। प्रायना-समाजने यह बाय पर दिसाया यह अुसकी सबसे कीमती सेवा है।

प्रायना समाजने भाडारकर तथा रानड जसे आग्नि-मुर्याने गस्त्रा और सत वचनाके प्रति आदरका भाव बनाये रखा परन्तु बुद्धिको स्वतन्त्रता देकर ग्राह्य और अग्राह्यका विवेक मनुष्यने ही हाथमें रखा। कबल मरे धमव ही गस्त्र प्राय सच्चे ह' अिस सकुचितताको दूर करके अन्हाने समाजको यह अुदार वृत्ति सिखायी कि सत्य जहासे भी मिले वहासे उसे ले लेना चाहिये सत्य हमारी ही खोयी हुयी वस्तु है हम अधिकारपूर्वक असे ले सकते ह; अग्नि सीतल है — अैसा सी श्रुति-वचन कहें तो भी हम असे स्वीकार न कर यह गकराचायने कहा है। अपने पूवजाने हमें सिखाया है कि सत्य गान बननाचार्योस भी ग्रहण किया जा सकता है। हमारे सुभाषित कहते ह कि अुत्तम विद्या किसी भी मनुष्यने सीखी जा सकती है। फिर भी हम प्रयावे प्रामाण्यसे चिपटे ही रहते ये। अिसके फलस्वरूप हमारी बुद्धिको प्राय परतन्त्रताकी रधी हुयी हवामें रहना पडना था और बेचारे गस्त्रप्रयाको ताकिको द्वारा की जानेवाली गान्त्रायकी चमत्कारपूण कसरतका शिकार बनना पडता था।

सत्सारमें मनुष्यको वकील डाक्टर और पुरोहितक बगर अपना काम चलाना चाहिये। अेक जभन दासनिक्ने कहा है कि मनुष्य स्वय ही अपना वकील बने स्वय ही अपना डाक्टर बने और स्वय ही अपना गस्त्रन धमगए बन यह जरूरी है। मानव स्वातन्त्र्यकी अिन त्रिविध शिक्षाआका अक भाग प्रायना-समाजन पूणनया सिद्ध किया है। और सौभाग्यसे अिस सम्प्रदायमें आरभसे ही मत बविध्य दाखिल होनेसे आप्तवाक्यका जुआ भी अिसके सिर पर नही लदा। राजा राम मोहन रायने अुनिपदा और अिस्लामके प्रभावको स्वीकार किया। महर्षि देवेद्र नायने अुनिपदा और बौद्ध साहित्यसे प्रेरणा ग्रहण की। यायमूर्ति रानडे और भाडारकरने अुपनिषदोके साथ साधु-सतकी वाणीका छूटसे अुपयोग निया। केशव चद्र सेनने जीमा मसीहकी विनोप अुपासना की। और रवीद्रनाथ ठाकुरने कबीर पय तथा लोकगीताम फळे हुअे अनेक स्वतन्त्र लोकधर्मोका प्रभाव समाज पर पडने निया है। यह सब प्रायना-समाजकी अुत्तरताका हितकारी फल है। महाराष्ट्रके प्रायना-समाजन मराठी साधु सताके भजना और गीतोको कुछ परिवतनाके साथ

अपना लिया। भोजनाय सारामाजीका 'अभंगमाला' में महाराष्ट्रका प्रभाव दिखाती देता है। और माहिपूर बगालने ता गद्य और पद्य इतिहास और विवेचन प्रत्येक क्षेत्रमें एक नया हा माहिपूर निर्माण किया है।

प्रायना-समाजने समाज-सेवाका काय भी काफी किया ह परन्तु उसमें नजी दिशा अथवा अलौकिक त्याग जैसा कुछ नहा है। अनाथालय, स्त्रालय विद्यालय, पुस्तकालय या चंचालय चलाना कात्रा विश्व-व्यापी धार्मिक प्रवृत्तिका पर्याप्त फल नहा माना जा सकता। प्रायना-समाज यह भी नहीं कह सकता कि अमुने संपूर्ण जनताका मंत्रमुग्ध करनेवाली धार्मिक पुस्तकें बड़ी सख्यामें प्रकाशित की हैं। प्रायना-समाजकी संपूर्ण प्रवृत्ति मध्यमवर्ग पर-चार और अमुके रहन महनकी, अमुकी धमवृद्धि और सेवावृद्धिकी गुद्धि करनेमें ही समाप्त हो गयी है। अक्षर-निष्ठा और मदाचार प्रायना-समाजका मुख्य स्वर माना जायगा। यह सच है कि बगालके बहूतसे गिन्नागामी ब्राह्मण-समाजी ह परन्तु हमार देगमें राष्ट्रव्यापी जीवन-संगर्ष स्वतंत्र और प्राणवान गिन्नाका प्रचार प्रसार करनेका तो प्रायना समाजने विचार तक नहीं किया। जिस प्रवृत्तिक प्रभावस संपूर्ण समाज देखते ही अक्षत द्विज नहीं बन जाता, अमु प्रवृत्तिमें धमबल है अमा नहीं कहा जा सकता।

The religion of a thorough-going gentleman तक ही जिसका स्वरूप सोमिन है वह प्रवृत्ति मनुष्यके हृदयका आकर्षित नहीं कर सकती। केवल धीर धमका ही प्रसार और प्रचार होगा है।

अक जमाना आया था जत्र मनुष्यका संपूर्ण जीवन — व्यक्ति और कौटुम्बिक सामाजिक और राजनीतिक — धम-व्यवस्थाके अधीन था। अमुक समग्र जीवन पर धमका साम्राज्य था। आज वह जमाना चला गया और वह सरकारण गया। अमुके स्थान पर आज लोकमाय राज्यसत्ताका जमाना आया है। राज्यसत्ता अक व्यक्ति हाथमें रह अथवा अनेक व्यक्तिपाने जिस सवाल पर लाग चाह जितने लडे नगडे हा परन्तु समग्र जीवनका राज्यसत्ताक राजनीतिक सत्ताका हाथमें सौंप देनेका बलि तो जट जाती ही जाती है। अक राष्ट्र और दूसर राष्ट्रके बीचका व्यवहार सस्कृतियाका सत्याग विभिन्न वर्गके बीचका सम्बन्ध, गिन्ना व्यापार जुदाग धम-व्यवस्था, परिवार-सत्ता — जितना ही नहा, स्वास्थ्यकी रक्षा और मार-मभाग सब कुछ सरकारक द्वारा हो और कानूनक नियंत्रणमें रह जिस तरहकी बलि आकर बर्नी जा रही है। जगतमें नितनी भा गतिवा है समाजमें जितने भी चल ह, व सत्र आज राज्यसत्ताके अधीन रहते हैं अमीकी सेवा करते ह और अमीकी कृपाने परिपुष्ट होते हैं। परन्तु यह न्यति दोष का तक नहा बनी रह सकता। जिस जमानेका अत दर-सवेर जाना ही चाहिये। दरने नहीं बन्कि जली हा जिसका जत्र आना चाहिये। अक

समय धम-व्यवस्था गावभीम थी आज राज्य-व्यवस्था गावभीम है। परन्तु हमें यह समझना चाहिये कि भविष्यमें शिक्षा-व्यवस्था ही सामभीम बानेवागी है।

प्राथना समाज शिक्षा का वाय घोड़ा-बहुत किया है। परन्तु शिक्षामें स्वतंत्र विचारकी दृष्टिसे दीध तपस्याकी दृष्टिसे जयना व्यापक सगठनकी दृष्टिसे प्राथना समाजकी कौश्री दन नहीं है। प्राथना-समाजका अपनी जीवा-दृष्टिवा प्रकाश फलकर शिक्षाका जेव स्वतंत्र सपूर्ण जोर समथ दान निर्माण करता चाटिय था। वह चाहे तो आज भी जसा कर मरता है। आजक सन गाधारण धमका प्रसार शिक्षाके द्वारा ही हा सकता है। गाधीजीने जर बार अिसी स्याा पर कहा था कि प्राथना समाज गुणित लोगाना धम है। 'गाधीजीक जिम वचनम प्राथना-समाजकी विशेषता जोर दाप गक्ति जोर अगतिन दाना ही प्रतिविम्बिन होनी ह। हम चाह ता अिस स्थितिको बदल कर अपनी नत्री गक्ति नत्री प्ररणा और नत्री शिक्षाका निमाण कर सकते ह।

“अतर्पामी परमात्मा ही मेरा स्वामी है मेरा आधार है सवात्मवय और सबसदभाव ही मेरा परम पुरपाथ है। शिक्षा—सर्वांगीण शिक्षा—ही जसकी साधना है। यह है भविष्यका ब्राह्मधम यही प्राथना समाज है। अिस नूतन शिक्षामें पाच बाताना समावग हाना चाहिये प्राथना बोध धय सेवा और बलिदान—
Prayer, Persuasion, Patience, Service and Sacrifice

शिक्षाका प्रथम क्षत्र मनुष्यका हृदय है। हृदयका यदि पूरा विकाम हुआ हागा तो ही बुद्धिका विकाम यक्ति और समाजक लिअे हितकर आगीवाद रूप सिद्ध होगा। हृदयका यदि सुदर विकास हुआ हो बुद्धि प्रगल्भ बनी हो और गरीर नीरोग और बसा हुआ हो तो ही धमका जीवन जीना मनुष्यक लिअे सभव होगा। जब जसी गुद्ध धम प्रधान शिक्षा प्रत्येक मनुष्यको मिलगी तभी यक्ति जोर समाजका परस्पर सम्बन्ध मगलमय बनेगा। समाजकी सर्वांगीण सेवा ही जात्मोन्नतिका जेकमान जुपाय है।

अब हम भलीभाति यह समय सकेंगे कि आत्मा सोशियालिज्म ही जगनवा भावी धम है। सोशियालिज्मका अर्थ है समाज सेवाका धम। जाज जिस सोशियालिज्मकी चर्चा अनेक देशमें होती है जोर अुमक सम्बन्धमें जो प्रयोग होते ह अुनमें जनक पहचुजासे सशोधन जोर पग्विधन करना आवयक है। आजके सोशियालिज्मने तीन गलतिया की ह। जुसन केवत्र सपत्तिशास्त्रका आधार लिया यह जुसकी पहली गलती है। अुसका दूसरी गलती है राजनीतिक सस्थाआ पर जुमदा अपार विश्वास। जोर अुसकी तीसरी गलती यह है कि धम-व्यवस्थाको तोन्नेक प्रयत्नम अुसने मू धार्मिकताक प्रति ही घणा बढाओ है जोर अुमका विरोध किया है। सोशियालिज्म मानता है कि ये अुसकी गलतिया

नहीं ह, परंतु यहां भविष्यके लिये उसका कीमतीसे कीमती योगदान है। जिसके बिना साशियालिङ्गकी स्थापना जगतमें हा ही नहीं सकती।

यदि सच्चे सोशियालिङ्गका पूरा पूरा अमल हा, तो केन्द्रित राज्यसत्ताका अन्ते जाय नाग या रूतानर हो जायगा। यहां तक कि गारीरिक् बल पर टिकने वाली राज्यसत्ताका भी अंत आ जायगा। जिस समय जीवन अितना सादा, जितना स्वावलम्बी और अितना परस्परवलम्बी हो जायगा कि आजका अटपटा अधशास्त्र निक ही नहीं सकगा, और लोगामें सबत्र असी सम्बारी शिक्षा फल जायगी कि अुसमे गुद्ध आध्यात्मिक ज्योति प्रकट हुअे बिना नहीं रहगी। साशियालिङ्गकी शोध सच्ची है, अुसकी प्रेरणा गुद्ध है और अुमका समय भी आ चुका है, जिसलिअे दोषमुन्न होनेमें जिस बहुत समय नहा गेगा। गरीबाका देव अब जाग्रत हो गया है। शिष्याशास्त्रियाको अपने अपने ढगसे अब अुसके जुपासक बन जाना चाहिये। सत्य और अहिंसा ही अुनकी प्रतिना हा सकती है, सत्य और अहिंसा ही अुनके जीवन मत्र हो सकते ह यह समझ कर जुह लोकसवाना काम अपने हाथम रना चाहिये।

सरकारका शिक्षा विभाग आज तक निर्वीय सिद्ध हुआ है। धम और समाजने तथा राजनीतिक प्रचारकाने लाक शिक्षणका जितना काय किया है अुतना शिक्षा विभागने नहीं किया। सच्च शिक्षका और अध्यापकाको गुद्ध धमसे प्रेरणा लेकर और शालाकी चारदीवारीस बाहर निकल कर लोक शिक्षण और लोकसेवाका काय करना चाहिये। आज धमका सस्करण, समाजका सस्करण परिवारका सस्करण — सक्षेपमे सपुण जीवनका सस्करण करनेका समय आ गया है। आ क्या गया है वह कभीका आरभ भी हो गया है। अब हम अुच्च वर्णके, शरीर-श्रम न करनेवाल सुरक्षाक जुपासक मध्यमवर्गको मस्कारी बनानेके पीछे थाडी-बहुत शक्ति खच करके ही सतोप नहा मानेगे। हमे दीन, अनाथ, पतित और परित्यक्त लोगाके हृदयमें बसे हुअे नारायणकी अुपासना करनी है। आज तक धार्मिक गेगाने पार्थिव मूर्तिमें प्राण प्रतिष्ठा करनेक मत्राका खूब अुच्चार किया है। अब हमें दलित मूर्ति देगवासियोमें स्वातय स्वावलम्बन और स्वाभिमानकी प्राण प्रतिष्ठा करनी है। हमें स्त्रिया, मजदूरा किसाना कारीगरा और चारकुना का जीवन सुवासित और मारयुक्त बनाना है। जातिभेद ताडनका यह अध कभी न किया जाय कि हम केवल मध्यमवर्गक अुच्च वर्णवाले लोगाके लिअे हा राटी-बेटी व्यवहारकी अनुविधाय दूर करना चाहते ह। अितना तो अनाचारी और स्वच्छदी लाग भी कर सकते ह। आज पिछ्ने हुअे और पतिताने केवल हितेच्छु आश्रयदाता बननम भी बडी बहादुरी नहीं है। यह ता सात्त्विक लोगाका आनद और अुदात्त बिना कहा जायगा। सच्ची धार्मिकता जिस बातमें है कि हम गरीबाके साथ, पतिनाके साथ अनाथ और असस्कारी लोगाक साथ जेवताकी भावनास धुलमिल

जाय। जुहूँ हम अपना बनायें हम अंनके बन जाय और अहूँ अपन नाथ लेकर जुनतिक पहाड पर चरें। अिन तरहकी वीरवृत्तिके बिना धार्मिकता सभव ही नहीं हो सकती। वीरत्व ही सच्चा धर्म है। हमें केवल दूसराको मार कर वीर नहीं बनना है परन्तु निर्वैर वृत्तिसे स्वार्थी सङ्कुचितताको मार कर वीर बनना है।

यह हमने जिम ब्राह्मधर्म और धर्म समाजके दशन किये ह वह तो अेक अलग अलग धर्मकी तरह रहनेसे अिनकार ही करेगा। वह धर्ममात्रमें आतप्रात होकर रहेगा। विभिन्न सब धर्म समाजकी अुन्नतिके लिअे ही प्रवृत्त हुअे ह। अिन सब धर्मोंको अूँचा अूँठानेवाले लीवर'की — अुन्नयन-दडकी गरज पूरी करगा यह ब्राह्मधर्म। अिसके आधार पर धर्ममात्रकी अुन्नति होगी। यह ब्राह्मधर्म किसी भी धर्मका नाग किये बिना सबत्र अपना साम्राज्य स्थापित करेगा।

यह श्रद्धा रखकर हम प्राथना करे कि परम मंगल परमेश्वरकी कृपासे प्रत्येक हृदयमें जमा धर्म प्रकट हो और अुसीका विकास हो।

२८

दोनों धर्म अनादि

मरी भाषणाक अनुसार जन धर्म और वण्णव धर्म दाना अनादि ह। जयात दोना धर्म कान्हे जितने ही प्राचीन ह। दोना धर्मोंके मुख्य मुख्य सिद्धान्त जुसी कान्हे हैं जब मनुष्यक हृदयमें धर्मकी स्फुरणा जागी थी। भागवतम ता जपभ देवता बगन है ही। अकिन म अहिंसा धर्म अयात् जन धर्मको जग्वेदमें भी देखता ह। आज जिम रूपमें जन धर्म हमारे देगमें विकसित हुआ है जुमका निमाण ता महावीरसे आरभ हुआ था। यह अितिहाससे सिद्ध होता है। महावार गीतम बुद्धम ममरागीन थे यह भी सज काअी जानत ह।

म मानता ह कि महाभारतक युद्धमें जा महान सहार हुआ जुमीक पण्डित रूप आय जानिन मन पर यह बात जम गयी है कि हिंसा यथ है हिंसासे किसी ना पाना नया नहा हाना हिंसामे काअी भी स्थायी काय सिद्ध नहा हाना। कितनी धर्मराज पञ्चात्तापम जकर बहने ह कि जयोऽपि जयानारी भगवन् प्रतिभाति म। भगवत यह विजय तो मुये पराजय जसा ही लगती है। महाभारतक युद्धका यह कडवा अनुभव राष्ट्रक हृदयमें गहरा जुतरा जुमक बाँ हा भारतमें बीड धर्म और जन धर्मका अधिक प्रचार हुआ।

बग ता दाना ही धर्म व्यापक सनातन हिन्दू धर्मकी ही शाखाय है। दाना धर्मोंक मध्य सिद्धान्त बातममें पण्डित हा हिन्दू धर्मम मौजूद ह। परन्तु ये सिद्धान्त राष्ट्रक हृदय पर व्यापक रूपमें अकित ता महाभारतक युद्धक बाँ ही

हुं। अिसलिये अुन्हा सिद्धान्ताके आधार पर जीवन क्रम रचनेका आग्रह रखनेके कारण ये दा पद सनातनियाने जीवन प्रमत्त थोडे अलग पठ गये ।

जा लाग आभामें अथवा किमी अज्ञाद्विय अमर शक्तिमें विदवास रखते हैं और अुसके सम्बन्धमें पुनर्जन्मकी कल्पना करके अुसके द्वारा कम धर्मकी व्यवस्था करत हैं वे सब आप अथवा हिन्दूधर्मो ही हैं । मैं नहीं मानता कि दार्शनिक वाद विवादमें पुनरनेस यह वात अधिक समझमें आवेगा ।

१९३०

२९

सुधारक धर्ममें सुधार*

आपका आमन्त्रण स्वीकार करके मैं यहा आया अिसमें अेक अुद्देश्य यह था कि अिस निमित्तसे अेवाथ अिस परमानन्द भात्रीक साथ रहनेका आनन्द मिला । अमी अमी अुनके अहमदाबादक भाषणक विरुद्ध अेक बडा पगडा सडा हुआ है । मुझे बार बार आश्चर्य हाता है कि परमानन्द भात्रीके समान सौम्य और सन्तुलित व्यक्तिके भाषणमें लागाकी जसा क्या मिला गया कि वे अुहें मार्टिन लूथर बनानेके लिये तयार हो गये हैं । तीव्र विचार रखनेवाल प्रत्येक मित्रका अस्तुका दूमरा पहलू बताकर अुस सौम्य और जिम्मेदार बनाना ही आज तक परमानन्द भात्रीका प्रिय काय रहा है । अुनका पूरा भाषण पढ बिना ही मैं कह सकता हू कि अुसमें अुन्नात मचानेवाला अथवा विनाशक काजी तत्त्व नहीं है । अुसका अय अितना ही है कि आतिशारी या सुधारक युग परमानन्द भात्रीके समान सौम्य मूर्तिके द्वारा भा अपनी आवाज प्रकट कर सकता है ।

म गुनता हू कि अमुक समाजने अथवा समुत्थापने अुनका बहिष्कार कर लिया है । अिसलिये मैं पहलू अिस बहिष्कारक बारेमें ही दा गद्य करूंगा ।

बहिष्कार प्रत्येक मुनस्कृत और मगठित समाजका स्वानादिक अधिकार है । व् गन्ध समाजके हृषमें अेक प्रभावगाता और सार्विक अस्त्र है । अकिन यह गन्ध दुपारी सलवार है । अिनके विनाक अिसका अुपयोग किया जाता है अुहें तो अब यह मारणा तक मारेगा, परन्तु जा लाग अिस अस्त्रका अुपयोग करने हैं व म् अुचित अवसर, अुचित पद्धति और स्वानादिक मयागका न जानें तो यह पहलू अुन्हीका भाग करता है । अेक समय हमारी आतिव अेक सयाने यड पुराने बहिष्कारकी जा मामाता का थी अुस अिस समय मैं अपनी भाषामें

* मवत् १९२४ पन्थान-गवक अवसर पर बम्बयीमें किया गया भाषण ।

आपका मुना दू। सत्याग्रहाश्रममें जाकर मने हरिजनक हाथका राना साया पा। असलिये जब म अपने गाव गया तो मने अपने जातिवालासे कहा कि म जिस तरह व्यवहार करता हू। गुजरातने जमी जातियाकी रचना और जातिया द्वारा खडी की जानेवाली परेगानी हमारे प्रदामें बिल्कुल नहा है। फिर भी जातिक लाग चाहते तो मेरा बहिष्कार कर सकत थे। मने हरिजनान साथ भोजन करनेकी बात अनुके सामने बबूल की तो कुछ भाओ वाग अुटे बठा बठा। हम पूछने जायें तब तुम असी बातें हमस कहना। अिसी तरह समथनमें जेक बद्ध पुरुषने कहा कोओ बडा अमीर आदमी होता है तब तो अुमका बहिष्कार करनेकी हम बात भी नही करते। दमी आत्मी समाजम पासड चलात ह लेकिन हम अुह अपने शिकजेमें पकड नही सकते। तब यदि अेकाध मनक गुद्ध और सज्जन आदमीका ही हम बहिष्कार कर ता क्या यह हमें शाना लेगा? जसा करनेसे समाजका कल्याण भी नही होगा। अिनक जसे लाग रू आचारको जरूर तोडते ह परंतु वे अनाचार नही करते। असलिये जाति अनुके बिलाफ हो जाय तो भी अनुकी प्रतिष्ठाको कोओ धक्का नही पहुंचना। अुलटे बहिष्कार करनेवाले लोकाकी ही बदनामी होती है। यदि निमल और गुद्ध हृदय लोकाका बहिष्कार करके हम अुह खो देंगे ता फिर जातिमें रह ही क्या जायगा? असलिये समझारीका माग यही है कि जसे लोकाका हम नाम ही न लें। यह कलियुग है जिसमें जो कुछ हो अुसे हम चुपचाप देखते रह। अिन बद्ध पुरुषकी मुख्य दष्टि सच्ची थी यद्यपि कलियुगकी अनुकी दलील निरथक थी।

यह जरूरी है कि समाजके आचाराकी (रहन-सहनकी) प्रत्येक युगमें जाच की जाय। अनुमें आवश्यक परिवतन होना भी जरूरी है। शरीरको हम रोज नया पोषण देन ह और गदगी भी रोज शरीरसे बाहर निकालते रहते ह जिससे शरीर नीराग रहकर अच्छी तरह अपना काम करता है। यही बात समाज शरीरको भी लागू होती है। जिस प्रकार साये हुअे आहारका कुछ समय बाद खत बनता है और अुसका निक्म्मा भाग गन्गीके रूपमें शरीरसे बाहर निकल जाता है अुसी प्रकार अच्छीमे अच्छी प्राचीन व्यवस्था अपन अपने समयको पोषण देनके बाद सडाधके रूपम बचा रहती है। अुस यदि हम समाजसे निकाल न फेंकें तो समाज शरीर बन्धू करता है और रोगी हो जाता है। प्रतिदिन होनेवाले विषामको जब हम राक देने ह तो किसी समय सन्निपातकी तरह समाजमें अेकाअेक जाति पूट पडनी है। विकासको रोकनेका अर्थ है जातिका निमत्रण दना फिर यह जाति विन्शेगी आक्रमणके रूपमें हा या भीतरी विद्रोहके रूपम।

मामयिक मुधाराके बिना धार्मिक जीवन टिक ही नही सकता असलिये सामाजिक मुधार—सामाजिक प्रगति—के सावभौम नियमाको हमें जान लेना

चाहिये। जिन लोगोंके पास हजारों वर्षोंका अनुभव और इतिहास है, व यदि धर्म विकास और जीवन-परिवर्तनका शास्त्र न रचें, तो वे अपि मुनियोंकी परंपराको कलंकित कर देंगे। हमारे स्मृतिकार समय समय पर धर्म-व्यवस्थामें परिवर्तन करते ही आये हैं। अब हमें असे परिवर्तनका एक संपूर्ण शास्त्र बनाना चाहिये। सभी हम अपने समाजका जहाज जीवन सागरमें सुरक्षित रूपमें चला सकेगे। जिस प्रकार जीवन-व्यवस्थाकी बार-बार परीक्षा करके जीवनक तत्त्वज्ञानका नये निरमे रचनेवाले लोगोंमें भगवान महावीर एक अग्रगण्य महापुरुष थे। अब हम देखें कि उनका युग क्या था।

*

महाभारतके युद्धकी घटना आयोंक जीवनमें बड़ीसे बड़ी त्राति करनेवाली सिद्ध हुआ। जज्ञेजा और जमनाके बीचके भानुद्वेषका विग्रह जिस तरह विद्वेषायपी बनकर आजकी दुनियाका अभी भी परेगान कर रहा है, उसी तरह कौरव पांडवाके बीचका वह सवनागी महायुद्ध भारतकी प्राचान सस्कृतिके लिख घानक सिद्ध हुआ। जिस भारतीय युद्धके पहले रतिनेव जैसे सम्राट अिन प्रकारक महायन करनेमें जीवनकी सायकना मानते थे जिनमें प्रतिदिन पचीस पचीस हजार पशुआका वध होता था। अुम समयक राजा लग सम्राट बननेके लिअे प्रतिस्पर्धा करके एक दूसरेका नाश करते थे और एक दिग्विजय सिद्ध करनके लिअे किये गये राज-संहारका पाप धोनेके लिअे अुतना ही हिंसक दूसरा यज्ञ करत थे। अिसी कारणसे भीष्माचार्य तथा धर्मराजके समान पुण्य पुण्यने क्षात्रधर्मको पापपूर्ण मानकर अुमे धिक्कारना चाहा। मनुष्यकी अखड सेवाके कारण अुसक कुटुंबी बने अुसे असंग्य पशुआका — गाय, बल और घोडाका — यनके नाम पर संहार करनेकी सिफारिश करनेवाल वेदासे सत्रस्त होकर एक अपि यह विद्राही वचन बाल अुठे 'धिग वदा।' बदिक् सस्कृतिके सुवर्ण-कालमें असा वचन कहना अुतना ही साहमपूर्ण था जितना वरूनका युद्ध लड रह हिंडनवगने समक्ष युद्धका निषेध करना। हमार बदिक् धर्मके अभिमानी पूवजाने यह वचन भी लिख रखा है। यह वान अुनकी अितिहासिक प्रामाणिकताको सूचित करती है साव ही यह अुम कालकी अुवी अुत्री धर्मबुद्धिकी भी द्योतक है।

भारतीय युद्ध, काठियावाडकी भूमि पर परस्पर लडा गया यादवाका संहारक युद्ध तथा आस्तिक अपि द्वारा बद कराया हुआ राजा जनमेजयका सपसत्र — अिस सारे वातावरणका जिन लोगोंका स्मरण था अुहाने संपूर्ण जीवन-दष्टिमें परिवर्तन करनेका निश्चय किया।

यह विचार धीरे धीरे परिपक्व और दृढ होता गया, छह सौ वर्ष तक यह प्रक्रिया चलती रही और अुसमें से आय परम्पराके दो पयाका जन्म हुआ। जिन पयाको हम बौद्ध धर्म और जन धर्मके नामसे पहचानते ह।

नहि वेरेण वेराणि मम्मन्तीथ बुणाघन।
अवेरेण च सम्मति अंस धम्मो सनतना ॥

अस प्रकार कहकर बुद्ध भगवानने अवरका मत्थे दिया। 'दुस सने पराजितो — प्रजाका यह अनुभव होनसे बुगने अिम मत्थाकी अपना लिया। बुद्ध भगवानने मासाहारका निषेध भले ही न किया हो किन्तु यह बुन्हाने स्पष्ट कहा है कि जब मानव-जाति यन्त्रे नाम पर पगुहत्या नहीं करती थी अुस समय मनुष्यामें रोग नहीं-जस ही थे। पगुहत्याके फलस्वरूप ही मानव जातिको अनेक रोग लग गये ह।

और नातुपुत्र वधमान महावीरने तो अहिंसाको ही परम धम कहकर मानव जीवनके सम्पूर्ण आधारको ही बदल डाला। बदिक् कालमें अवर अहिंसा जीर गौरमाकी बल्पना थी ही नहीं जसा नहीं परतु धमका पूण साक्षात्कार भी तो अनुभवसे ही होता है। बुद्ध और महावीरके समयमें ही अपि-दृष्ट अहिंसाका प्रेमधम एक दष्ट हुआ। यह तो नहीं कहा जा सकता कि अुनके समयके बाद भारतमें यन हुआ ही नहीं, परन्तु राष्ट्रधमके हृदयमें यन अप्रतिष्ठित बन चुके थे। वे प्राचीन सस्कृतिकी गूजकी तरह सुने गये और अनादरके मौनमें बिलीन हो गये। जहा तहा जन हृदय पूछने लगा कि वक्षाका सहार करनेस, पगुआकी हत्या करनेसे और रक्त मासका कीचड फलानेसे यदि स्वर्गमें जाया जाता हो तो फिर नरकमें जानेका माग कौनसा है?

जब अनुकूल और प्रतिकूल तटो पर बसनेवाले किसानोंमें बीचकी नदीके पानीके लिअे मुद्ध होनेका अवसर खडा हो गया तब बुद्ध भगवानने दोनोंके नेताओंको अिकटठा करके पूछा 'पानी कीमती है या भाअियोका खून? पानीके लिअे भाअियाका खून बहाना कहाकी बुद्धिमानी है?'

राजा ययातिने अपने और अपने पुत्रके यौवनका अनुभव करके सम्राट-के लिअे सुल्भ सारे भोग भोग लेनेके बाद यह अनुभव-वचन कहा कि जगतमें जितने भी चावल और तिठ ह जितने भी अश-आरामके साधन ह अुन सबको काअी अपना बना ले तो भी अैकके सुखापभोगके लिअे वे पर्याप्त नहीं होंगे, वे अुमक मनमें तपित अुत्पन्न नहीं कर सकते। जिसलिअे स्वय वासनाका ही त्याग करके सतोष माननेमें जीवनकी सफलताकी कुजी है। भगवान महावीरने भी लोगोमे यही कहा। हिंसाके द्वारा दूसराको दवानेकी अपेक्षा तपके द्वारा अपनी वामनाआको दवाना ही विश्वजित् यन है। अिसीमें जीवनकी सफलता जीर वृता यना है। मनुष्यका जीवन अपने आसपासके लोगोके लिअे गापरूप और त्रासरूप बननेक बन्ने जागीर्वाण बने अिमोमें धम निहित है। तपके मूलमें यही बात है। तपके बिना मनुष्यका जीवन निष्पाप नहा बन सकता।

जिम प्रकार यन्के जसे भव्य जीवन सिद्धान्तको अुस समयके लोगाने पगु-हत्या करके ध्रष्ट कर दिया, अुसी प्रकार अुसके बादके लोगाने तपके सवमगलत्व-का मूलकर अुसे निरखक दह-दमनका रूप दे दिया । सचमुच हमार देशके लोगाने महानस महान धम सिद्धान्ताका अथ-विहीन यात्रिक त्रियाका रूप देकर बहुत बडा बुद्धिद्राह जोर समाज द्रोह किया है ।

आहारशास्त्र, जीवनशास्त्र, प्राणीशास्त्र, समाजशास्त्र, अथशास्त्र, मानस शास्त्र, तक्शास्त्र आदि मनुष्यापयोगी शास्त्राका जिन्हाने अुत्तम और अचावधि (up-to-date) अध्ययन किया है, अुन समाज हितपी लोगाको धमशास्त्रा पर बार-बार विचार करना चाहिये और अपने जमानेके स्वजनाका मागदान करना चाहिये ।

यदि यह सनातन आवश्यकता न होनी तो भगवान बुद्ध और महावीर जसे महापुरुषाको पुरुषाथ करके जनताका सनातन धमकी नये सिरेस दीक्षा देना आदश्यक नहीं लगता । धम कितना भी अुज्ज्वल क्या न हो मानवीय बुद्धि अथवा अबुद्धिकी जटताके कारण अुस पर राख चढ ही जानी है । जिस राखका हटाकर तथा प्राचीन धमतत्वाका सस्कार करके धमका नये सिरसे गति देनेका काम प्रत्येक युगमें हाता आया है इसीलिअे धम टिका है । धमके ग्रथ धमके मंदिर तथा अहिंसा सत्य और क्षाति सबको मूलकर धमका ही द्रोह करनेवाले धमाथ आचाथ धमकी रक्षा नहीं कर पायेंगे । क्षाति तितिक्षा और अुदारता जिनमें है, विरोधी पक्षके तक्में रहे सत्याग और गुम हनुका समथने और स्वाकारने जितना स्याद्वाद जिनके गले अुतर गया है, असे धम-नरायण लोग ही धमके रणक होते हैं । अुच्च धममें जम पानेसे मनुष्य अुच्च नहीं होता, परंतु अुच्च जीवनसे ही वह अुच्च बनता है यह बुद्ध और महावीरने अनेक बार कहा है ।

धमका अथ ही है जीवन-सुधार । प्राकृत मनुष्यका जीवन सामान्यत आहार-निद्रादि आवश्यकताअके, राग-द्वेषादि वासनाअके तथा दभ-मत्सरादि विवृतियाके अनुमार ही बहता रहता है । जिसमें सुधार करके जीवनको सु-मस्वृत बनाना ही धमका मुख्य काय है । जिस प्रकार जीवन पर जग चढता है अुसी प्रकार धम दचन और धार्मिक सस्थाआ पर भी जग चढना है । जिस जगको दूर करनेका काम यदि धम स्वय न करे ता दूमरा कौन करेगा ? सामाजिक सुधार ही धमका प्रयोजन है । यदि कोअी यह कह कि बुद्ध और महावीरके बाद समाज सुधारकाकी आवश्यकता नहा रही तो जिससे यही सिद्ध होगा कि बुद्ध और महावीरकी भा अुनके जमानेमें कोअी आवश्यकता नहीं था । प्रत्येक धम सस्थापकका यही याय लागू हाता है भले ग्रथ दचन कुछ भी कहें । 'अमा अेक भी देग नहीं है और अमा अेक भी युग नहीं है जिसे समाज-सुधार करनेके

लिखे धर्म-मस्यापक प्राप्त न हुंजे हा।' जिसलिखे हमें धर्ममे ही समाज-मुधारक सिद्धान्त मिल सकते हैं। जोर अन्त सिद्धान्ताका अनुपाय सत्रप्रथम हम प्रगति सिद्ध करने धर्मसस्याको मुधारनेक लिख ही करना चाहिये।

प्रगति का अर्थ क्या है? — यह प्रश्न हमका अठना है। जहा जीवनन आन्त वार वार बदलते हैं वहा प्रगतिकी दिशा निश्चित करना अमान नहीं होता। सामान्यत यह कहा जा सकता है कि प्रत्येक समयक लागका तात्कालिक जा कुछ वाछनीय मान्य हो अुसकी आर जानेके लिखे आवश्यक परिवर्तन करना प्रगति है। लोगको जो लिखा पसन्द हागी अुसी लिखामें वे जायग। जेव समय हमारे लोगान सगीन जोर नत्यकी लिखा की थी। अुन्हाने अन्त दाना कर्णभावा सामाजिक बुराओ मान लिया था। अुस समयक कुछ लागाने लिख कर्णभावा लिखक जोरका आदोलन किया था। आज अुसी सगीत जोर नत्यका अपनी मस्तिष्ककी विपत्ताआके रूपमें हम सोखते हैं और अुनका विकास करते हैं तथा दुनियाको अुनकी बदर करनेके लिख निमन्त्रित करते हैं। जब जमानम अपने बालकाको खैरकृदमें समय विगाडनेके लिखे हम सजा देते थे आज खैरकृदमें जा विद्यार्थी भाग नहीं लेते अुनमे हम नाराज होते हैं। हमारी पागाकक वारमें भी यही बात लागू होनी है। हमारे दामें जब अमा जमाना भी हा गया है जो मास जोर मदिराके सेवनमें ही प्रगति मानता था। आदम सदा झूठकी तरह दो सिराके बीच झूठत रहत है। फिर भी प्रगति जसी कानी स्थायी चीज अवश्य है। जोर सभी जमानाको वाछनीय लग असे कुछ तत्वाका भी विकास होता चाहिये। अिसका विचार हम आगे करेंगे।

सामान्यत यह देखा गया है कि समाजको स्थिरता और प्रगति दोनों तत्वाकी रखा करनी होनी है। यदि स्थिरता न हो तो सामाजिक सम्गुणाकी पूजा अेकत्र नहीं हो सकती चरित्रका विकास नहा हो सकता जोर मनुष्यका सामाजिक जीवनमें विश्वास भी नहीं उठ सकता। अुन्त यदि हम अपरिवर्तन वाली बन जाय तो जीवनको जग रग जायगा जीवन सड जायगा और सारे जीवन रस मूल जायग। स्थिरता और प्रगति ये अेकसाथ रहनेवाले तत्त्व कभी कभी धर्म और विधामकी तरह अके वान अेक आते हैं। यह भी प्रगतिका अेक बडा सिद्धांत है। जिन दोनोंकी अपरिहायताको ध्यानमें रखकर ही सामाजिक जीवनके नियम बनाये जाने चाहिये। धर्मशास्त्राने समय समय पर सामाजिक नियमकी रचना की है। हमारे समाजकी मायता जसी बना दी गयी है कि नियम जोश्वरक लिखे हुंजे ह जयवा सामान्य बुद्धिसे परे रहनेवाले अलौकिक दृष्टिके आ ही नियम बना सकते हैं। प्रत्येक व्यवहारमें तो सभी लोग परिवर्तन करते हैं किन्तु मान्यतामें सब लोग अन्त विचारको ही प्रोत्साहन देत हैं कि धर्मकी दो हुओ समाज-व्यवस्थामें कोअी परिवर्तन करनेका अधिकार समाजको

नहा है। समाज-व्यवस्था प्रत्यक्ष अनुभव, अथवा अनुभवके आधार पर हानेवाला विचार समानकी भावनायें और समाजमें विकसित हानेवाली सनातन श्रद्धा— जिन्होंने सब पर आधार रखती है। जिनमें से श्रद्धा प्रत्येक समाजका मूल धर्म है। जिस धर्मकी रक्षा करना सामाजिक गतिकका मूल मंत्र है।

यदि हम प्रतिक्षण परिवर्तन करते रहेंगे, तो समाज बालूके ढेर जमा हो जायगा। अथवा घृति (cohesion) का गुण आयेगा ही नहीं। और यदि हम किसी भी तरहका परिवर्तन न करनेका निश्चय कर लें, तब तो समाज मुट्टीकी तरह सड़ी लगेगा।

समाजमें आवश्यक परिवर्तन करते पर भी कोशिश परिवर्तन नहा किये गये ह जसा मानने मनवानेमें प्रत्येक समाज अपना धर्म समर्थता आया है। याया-धीन प्रत्येक मुक्त-धर्ममें अपना नियम देने समय कानूनमें परिवर्तन करते हैं, परन्तु अतः प्रयत्न यह स्थानेका होता है कि कानूनमें कोशिश परिवर्तन नही किया गया है। जैसे 'legal fiction' कहते ह। समाज-व्यवस्थाके धर्मशास्त्रके हाथमें सौंपनेके बाद अथवा अथवा कोशिश परिवर्तन नही किया गया, असा दिखाना पटता है। जिसके लिये भाष्यकार भाष्य रचते हैं और अथवा ही शास्त्रमें श्रद्धा रखते हुए ही अलग अलग भाष्यकारोंके अथवा अनुसार लोगोंके गुट बन जाते हैं। लोग शास्त्र-वचनके प्रामाण्यकी रक्षा करके अपने स्वीकृत भाष्यकारके वचनको अधिक महत्त्व देने हैं। सब देगाके आज तकके इतिहासको देखते हुए प्रगतिका यह भी एक सावनीय नियम कहा जा सकता है।

सामाजिक प्रगतिका अथवा दूसरा महत्त्वपूर्ण सिद्धांत भी सबके दखा गया है। अथवा जमाना धर्म-व्यवस्थाके बाह्य आवारकी रक्षा करके अथवा आकारमें पूर या भरे जानेवाले मसालेमें परिवर्तन करता है। पणके मासका यत्न करनेके बदले वह मासका (अथवा) पण बनाकर अथवाकी वधि देता है और मानता है कि मास-यत्नकी रक्षा हा गयी। जिस प्रकार भीतरका मसाला पूरी तरह बदल जानेके बाद नये लोग तक करते हैं कि मुख्य चीज मसाला है आकार तो गौण चीज है। जिसलिये भीतरकी चीजकी रक्षा करके अथवा कसा भी आकार देनेमें धर्मद्रोह नहा होता तत्त्वकी रक्षाका ही वास्तविक महत्त्व है। जिस प्रकार आकारके बदल जानके बाद नये आकारको ही महत्त्व प्रदान किया जाता है। अथवाके आकारके पण बनानेके बदले गेहूके आकारके पिंड बनाये जाते ह और फिर अथवामें नया मसाला स्वीकार करनेकी तैयारी हा जाना है। अथवा प्राचीन वचन है चलयै-वेन पादन तिष्ठत्यैवेन पणित्त। अथवा परकी उठाकर आगे रखनेके लिए दूसरा पैर अडिग और स्थिर रखना होता है। अथवाया हुआ पर आगे स्थिर हा जाय अथवाके बाद पीछे अडिग पैरके डिगनेकी या अथवा डिगानेकी चारी आनी है। अथवा

तरह समाजकी प्रगति हाता आजी है। जो लाग अिस मिददातकी जान लने ह, अनुनी समाज-सवा करनकी शक्ति पूव बढ जाती है।

आजका जमाना चचावा है। प्राचीन नियम यह था कि जिम मानव लिअ मनम परम आदर हो, जुसकी चर्चा नहा की जा सरती। माता, पिता या गुरुकी आज्ञा पर कोथी विचार किया ही नही जा सकता था — आभा गुरुणा ह्य विचारणीया।' गुरुजनाके आचरणके काजी हम न बने व जा कुछ करत ह वह अुत्तम ही है वढास्ते न विचारणीयचरिता अिम वृत्तिका भी पूव विकास हुआ था। आज अेक भी वस्तु अितना पवित्र नही रही जिसकी चर्चा ही न की जा सक। सभी लोग सभी वस्तुआजी चर्चा कर जिसमें अक प्रवारकी गिफा भी है और अनधिकार चेष्टा भी है। अिमसे समाजना नेतृत्व शुद्र वत्तियाको अुत्तेजित करनवाल गर जिम्मेदार लोगाक हाथमें आमानीसे चला जाता है। परन्तु अिम दोषमे वचनेके लिअे यदि यह नियम बना लिया जाय कि अधिपारी पुरप ही चचा करने याग्य माने जाने चाहिये, तो जिसके भी अपने अलग गुण-दोष ह ही। असा करनेस समाज हितका विचार अक तरहसे परिपक्व रूपम हाता है लोगामें बुद्धिभेद जुत्पन्न नही हाता स्थिरता बनी रहती है और समाज प्रचण्ड सामय्यका विकास कर सकता है। परन्तु असी स्थितिमें लाक गिषण बहुत बार रक जाता है और नेताआकी ही अेक जाति खडी हो जाती है। समाजकी कायशक्ति बन्ने पर भी अुसकी मूस-बूसकी शक्तिको जग लग जाता है और नेतावगका नैतिक अध-पतन होन पर सारा समाज टूट जाता है।

*

धार्मिक सुधार करनवाल लोग परम धार्मिक और त्रिकाल्प हाने चाहिये। जो लोग धमके विधि विधानमें और बाह्य प्रयाआमें त्राति कर सकते है अनुके पास धमकी आत्मा अखण्ड जागत होनी चाहिये। जुह धमतत्वका आकलन स्वय करना चाहिये। असे लोग हर जमानेमें और हर देशमें अथवा समाजमें अुत्पन्न होन ही ह यह धमप्रथायें लिखा हुआ है और अितिहासमें देखा गया है।

त्रिकाल्प शंका अथ हमें भलीभाति समझ लेना चाहिये। लाखो वष पहले कौन-कौनसी घटनायें घटी ह और लाखा वष बाद कौन-कौनसी घटनायें घटनेवाली ह प्रत्येक यक्ति क्या क्या कर चुका है और आगे क्या करनेवाला है यह सब विस्तारने जाननेवाला मनुष्य त्रिकाल्प है'—असी जड मायता समाजमें फली हुआ है। अीस्वरकी आरसे सदेग प्राप्त करनेका दावा करनवाले मुहम्मद पगम्बर कहते ह कि दूमर क्षण क्या हानेवाला है यह न ता खुदाने अपने नविपासे यह रखा है और न अपन फरिश्तास। भविष्य सम्बधी ज्ञान खुलाने अपने पास ही रखा है। कहनका मतलब यह है कि सर्वोच्च मनुष्यको भी भविष्यका ध्यारेवार ज्ञान प्राप्त नहा हो सकता। तन त्रिकाल्पका अथ क्या है?

जो मनुष्य दीर्घकालीन इतिहासके अध्ययनसे भूतकालके स्वरूपकी अच्छी तरह जानता है और लोकस्थितिका सूक्ष्म और व्यापक निरीक्षण करनेके फल-स्वरूप वतमान कालकी वस्तुस्थितिसे पूरा परिचित होता है उसे — यदि उसने शास्त्रीय बतिका विकास अपने भीतर लिया हो तो — समाजशास्त्रकी रचना करता आता है और जिस शास्त्रके बल पर वह आसानीसे यह समझ सकता है कि भविष्यका प्रवाह — विचार प्रवाह तथा घटना प्रवाह — किस दिशामें बहेगा। जने शास्त्रीय दृष्टिवाले मनुष्यको हम त्रिकालीन कहते हैं। प्रत्येक देशके और प्रत्येक युगके सर्वोच्च नेता जिस प्रकार कम या अधिक मात्रामें त्रिकालीन होते ही हैं। और जो लोग जिस अयमें त्रिकालीन रहे ह वे ही समाजकी मौकाकी जीवन सागरमें भलीभांति चला सके हैं।

असे मनुष्यमें अके विशिष्ट शक्तिकी आवश्यकता होती है। वह है भविष्यके आदर्शकी झांकी करनेकी शक्ति। जिस प्रकार जहाजका कप्तान अपने पासके नक्शेके अनुसार जहाजको चलाता है जिस प्रकार मकान बनानेवाले लोग अपने नकशेके अनुसार मकानकी सारी रचना करते हैं जिस प्रकार महाकाव्यका कोठी कवि निश्चित किये हुए अदृश्यके अनुसार अपने काव्यका विस्तार करता है, असी प्रकार समाजकी धुराकी धारण करनेवाला, समाजका नेता अपने मनमें निश्चित किये हुए आदर्शकी दिशामें समाजको निश्चिन्त भावसे ले जाता है। उसके सामने अपने आदर्शका चित्र जितना स्पष्ट और जावत होगा अतने ही विश्वासके साथ वह समाजका मार्गदर्शन करेगा। बुद्ध और महावीर जैसे ही समाज-सुधारक थे इसीलिये वे अपने पीछे अतनी समय सस्मृति छोड़ गये हैं।

लेकिन वादके लोग धर्मके रहस्यकी भूलकर केवल रूढ़ि और अपनी प्रतिष्ठासे चिपटे रहते हैं। अहिंसा धर्मकी सत्र विजय देखनेकी अच्छी रखनेवाले जनोंमें जब धर्मके नाम पर भार पीटा होती है तब धर्म क्लृप्त होता है। शम-दमका जुपदेश करनेवाले आचार्य जब क्रोधित होते हैं और किसीका सवनाध करनेकी प्रतिना लेते हैं तब जिस धर्मके नाम पर उनको प्रतिष्ठा मिली है वह धर्म गहरे सोचमें पड़ जाता है कि अब मैं कहा जाऊँ? जिनके आधारकी मने मुख्य माना था वे मेरे रक्षक होनेका दावा ता करते हैं, परन्तु अपने जीवनस ही मेरा गला घाटते हैं! महाराष्ट्रमें नागपुरके पास रामदेव नामक एक स्थान है। वहाँका एक जन मंदिर देखने में गया था। उसके द्वार पर बंदूक, तलवार आदि गस्त्र रखे गये थे और सिपाही उस मंदिरकी रक्षा करते थे। जिस तरह मंदिरमें जेकर को हुयी धन-दौलतकी रक्षा जरूर हाती थी लेकिन अहिंसा धर्मकी तो निरन्तर विडम्बना ही होती थी।

धन-दौलतक भंडार और अहिंसाका मेल कभी बठ ही नहीं सकता। यूरोपमें अहिंसावादी क्वेकराको और भारतमें अहिंसावादी जन लोगाकी काकी

धनी देखकर मेरे मनमें शका हाती है कि अिन लोगकी समझमें अहिंसा पम अच्छी तरह आता होगा या नहीं? गरीबाका युतिच्छे किये बिना काजी धनवान हा ही नहीं सकता। और वसिच्छेमें गिरच्छेसे कम हिंसा नहीं है। यदि धर्माचाय धमकी विजय देतना चाहत हा ता अुह समाजकी अयाय मूलक व्यवस्थाको बदलना ही होगा और असी स्थिति रानेका प्रयत्न करना होगा जिसमें प्रत्येक मनुष्यका अुसकी महत्तवा पूरा प् मिले।

यह अच्छा ही हुआ कि प्राचीन कालमें आहारशास्त्रक मूलम नियम बनाये गये। परन्तु आज के नियम बदलन ही चाहिये। नया आहारशास्त्र बडी तर्जीसे विकास कर रहा है। धमकी दृष्टिसे अुसका लाभ अुठाकर धर्माचायीका चाहिये कि वे अपने समाजकी नया रास्ता िखायें। मेरी समझमें यह बात नहीं आती कि प्याज, आलू धगन या टमाटर न खानेम धम माननवाल लोग काडाको अुवाल कर तयार किये हुआ रेगमक कपडाका घरमें और अुपाश्रयमें कस अुपयोग करते हागे। लकिन यह ता तुलनामें जक गौण बात हुआ। आज स्त्रिया हरिजना गरीबा, बिमाना और मजदूरकाे प्रति जा जीवन-व्यापी अमाय चल रहा है अुसे रोकनेके लिये धमवीराको कटिवद्ध होना चाहिये।

जनका अय है वीर। अुसे तो सदा लडनेकी तयारी रखनी ही चाहिये। अुसका गहन अहिंसा है लेकिन अिस कारण कम वीरतासे अुसका काम नहीं चल सकता। जिस धमकी स्थापना अक महान सुधारकन की अुसक अनुयायी स्वय ही सुधारका विरोध कर यह अेक आचमजनक घटना है। बुद्ध जीर महा वीरने जातिभेदका विरोध किया था अस्पश्यताकी अवगणना की थी फिर भी अुनके अनुयायी जातिके अभिमानसे अीतप्रीत ह और अस्पश्यताको िकाय रखनमें धम समपते ह!

यह स्थिति देखकर ही अेक मित्रने कहा है 'सत लोग धम चलात हैं और रूडि पूजक आचाय अुस धमका खून करते ह और बादमें अुसकी 'नमी' (सुरक्षित शक) को पूजा क्यते ह।' म नहीं मानना कि अंसा होना ही चाहिय। अिमीलिअे मेरी यह आशा है कि धर्माचाय अपनी प्रतिष्ठाको नहा परन्तु धमको जीवत रखनेके लिये अपना सबस्व न्योछावर कर देंगे।

धर्म-संस्करण १

कुछ लोग कहते हैं कि हमारा धर्म प्राचीनसे प्राचीन है, जिसलिये वह अट्टा है। कुछ लोग कहते हैं कि हमारा धर्म अतिमसे अतिम है, जिसलिये वह ताजा है। कुछ और लोग कहते हैं कि अमुक पुस्तक आद्य धर्मग्रन्थ है जिसलिये उनमें सब कुछ आ जाता है। दूसरे लोग कहते हैं कि अमुक ग्रन्थ अक्षरशः द्वारा जगतका दिया हुआ अतिमसे अतिम धर्मग्रन्थ है, जिसलिये उसे स्वीकार करना चाहिये।

मनातन धर्मों अिन वारेमें दूसरी ही दृष्टिसे विचार करते हैं। आजकी सृष्टिका आदि और अत हो सना है। धर्मग्रन्थाना भी आदि और अत हो सना है। परन्तु धर्म अनादि और अनत है जिसलिये वह सनातन कहलाता है। सनातनका अर्थ क्या है? जा जिस सृष्टिके आरम्भसे पहले भी था और जिस सृष्टिके अन्तक बाद भी रहगा वह सनातन है। जिस अर्थमें केवल आत्मा और परमात्मा ही सनातन माने जायगे।

लकिन सनातनका अर्थ दूसरा अर्थ है। जो स्वभावमें ही नित्य-नूतन है, वह सनातन हाता है। जा जीव होता है वह मर जाता है, जो बदलता नहीं वह मड जाता है जिसकी प्रगति नहा हानी अुसकी अघागति हाती है। रुधी हुआ बूझा बढबू करती है। न बहनेवाला पानी स्वच्छ नहीं रहता। पहाडके पत्थर बदलन नहीं, जिसलिये धारे धीरे अुनका चुरा हो जाता है। घास बार बार अुगी है जिसलिये वह ताओ रहती है। जगलकी वनस्पति हर साल सूख जाती है और हर साल फिरसे अुगती है। बादल चाली होते हैं और फिर पानीसे भर जाते हैं। प्रकृति नित्य-नूतन बननेकी कला प्राप्त हा गयी है जिसलिये प्रकृति सना नवयोजना दिवायी दनी है।

जिस सिद्धांतका जाननेक कारण ही सनातन धर्मके व्यवस्थापकाने युगधर्मक अनुसार भिन्न भिन्न धर्मोंकी व्यवस्था का है। कालकी महिमा जाननेके कारण ही वे कालका जान सक हैं। धर्मक आध्यात्मिक सिद्धांत अचल और अटल हैं। परन्तु अुनक व्यवहारका रण-कालके अनन्तर बदलना पडता है। जिसका जान हानेके कारण धर्मकारान हिन्दू धर्मकी अुनयादी रचनामें ही परिवर्तनका तत्व रख दिया है। जिसलिये वह धर्म सनातन पर प्राप्त कर सका है। अनेक बार क्षीणप्राण होने पर मां वह निष्प्राण नहा हुआ है। मनुष्यकी जडताके कारण अनेक बार जिस धर्ममें सहाय पठा है, फिर मां किमा प्रकारके विप्लवके बिना अुनका पुनरुद्धार हुआ है।

सामाजिक व्यवस्थामें अथवा धार्मिक विधियाके रिवाजामें गमयक अनुकूल परिवर्तन होना चाहिये, परन्तु जबसे हिंदू समाजमें अवृद्धिने जड़ जमाओ है तबसे असे परिवर्तनाकी ओर हिंदू लोग गंजाकी दृष्टिमें देखने लगे ह। पूजनाकी अपेक्षा हमारा सयानापन बढ़ ही नहीं सक्त। पूजना तो त्रिकायका विचार करने वाले थे अतःकी रची हुआ व्यवस्थामें यदि हस्तक्षेप करण ता पना नहा सौनमे सक्तमें हम पड जायगे—जसा कायर भय अथवा नास्तिकता हमार भीतर घुस गयी है। सच पूछा जाय तो परिवर्तनका भय सनातन धर्मक स्वभावके विरुद्ध है। गहरे विचारके बिना चंचलताक कारण किये जानवाल परिवर्तनकी कानी हिमायत नहीं करेगा, परन्तु अनानताक कारण प्रगतिसे डरकर निष्प्राण स्थिरता खोजनेमें पुरुषार्थ नहीं बल्कि मृत्यु ही है।

अपने धर्मका त्याग कर दूसराका धर्म ग्रहण करना अथवा बात है, और अपने तथा दूसराके धर्मकी जाच करके अपने धर्ममें आवश्यक परिवर्तन और सुधार करना दूसरी बात है। जीश्वर प्रत्येक युगमें हमारे सामन नयी नयी परिस्थितिया खडी करके हमारी बुद्धिबलको सश्रिय बनाये रखता है और अस प्रकार धर्मके मूल सिद्धान्तके हमारे परिचयको जाग्रत रखा है। यदि धर्मक बाह्य आकारमें परिवर्तन न हो तो अुसके भीतरी सत्त्वका गुड आकलन हा ही नहीं सक्त। हमारे जमानेमें यदि पूजनाकी ही नकल करनका काम रह जाय नया कुछ भी करना, जानना अथवा खोजना बाकी न रह जाय तब ता कहा जायगा कि हमारी शतादी निरर्थक और बध्या ही सिद्ध हुआ है।

हमारे देशमें प्राचीन कालसे हर तरह एक-दूसरेसे अलग पडनवाल धर्म और बंध साय साय रहते आये ह। जसे सहवासक कारण हमें हर समय धर्म प्रवचन अलग अलग ढंगसे करना पडा है। जिस प्रकारकी शका दूर करनी हा जिस प्रकारके दोष मिटाने हा अुसीके अनुसार हम अक ही धर्म सिद्धांतका नयी नयी भाषामें और नये नये रिवाजके रूपमें प्रस्तुत करना पडता है। अिमीप्रकारे हमारा धर्म अनेक पहलुआवाले तेजस्वी रत्नक समान दिव्यसे दिव्यतर बनता रहा है।

जब हम विदेशी सत्ताके अधीन रहत ह तब धर्मको अत्यंत धृष्टिम और हीन वातावरण सहन करना पडता है। जब किसी देश पर विदेशी लोगका आक्रमण हा रहा हा अुस समय धर्म-संस्करणमें स्वाभाविक विकास नहीं रहता। हम काओ परिवर्तन करने जाय और हमारे विरोधी हमारी कमजोरी देखकर ममस्थान पर आपात कर तो ? — यह भय हमें बना रहता है। विदेशी सत्ता स्वभावत समभावसे गूय होती है। वह हडियाको तो टिफे रहने देती है अकिन हमारी गतिबल बरदास्त नहीं कर सक्त। अिसीप्रकारे विदेशी सत्ताके कानून कहते ह तुम्हारे जो रीति रिवाज परम्परासे चले आये ह अुन्हीको संरक्षण मिलेगा। तुम नये रिवाज धारू नहा कर सक्त। तुम जहा ही बहासे हट नहीं सक्त। पुराने

बलेवरका हमारा अभय-दान है। लेकिन यदि हम तुम्हारे प्राणको, तुम्हारी शक्तिको राज्यकी भायता दें, तब ता हमारा प्रभुत्व तुम्हारे देगमें टिक ही नहा सकता। जसी समभाव-शून्य तटस्थतामें सड़ी भुमी रुडिया भी वानूतकी इन्मि सहायतासे टिक सकती है।

ब्रिटिश राज्यके कारण हमारे यहा हिन्दू ला के अमलमें यह स्थिति बदम बदम पर बाधक सिद्ध हुआ है। 'पायमूनि' तेलग अक्सर जिस स्थितिके विरुद्ध अपनी नाराजी और खीज प्रकट किया करत थे। प्रत्येक धम और प्रत्येक समाज-का अपनी व्यवस्थामें चाहे जसा परिवर्तन करनेका अधिकार होना ही चाहिये। परन्तु असा करनेके लिये जो स्वतन्त्रता, शक्ति और योजना शक्ति आवश्यक है वह असा अम समाजमें हानी चाहिये। वहीसे बड़ी बीमत्त चुका कर भी हमें अिन गुणाका विकास करना चाहिये। हिन्दू धमको यदि टिकाये रखना हो और जगतमें अमका स्वाभाविक स्थान अमे फिसे दिलाया हो हिन्दू धमको यदि समाजके लिये कल्याणकारी बनाना हो, तो हमें साहसक माय असाका मल घो डालना चाहिये। असे कितने ही रिवाज और अघविश्वास हमारे समाजमें धुस गये ह जा धमके मनातन सिद्धान्तके विराधी ह और जिनकी बजहसे समाजकी सारी प्रगति रक जाती है। अिन सबका तुरन्त जलाकर भस्म कर दना चाहिये।

अस्पश्यता अेक जमा ही बुराजी है। जानिक विषयमें अल्पज्ञ हानेवाला अहकार और प्रेमकी सकुचिनता व्यापक आत्मीयताका अभाव—यह दूसरी बुराजी ह। जहा रूचि नाम पर दयाधमका खून होता है जहा आत्मा अपमानित हाती है जहा धमप्रीतिक स्थान पर लालच और भयका स्थान दिया जाता है, वहा धमका अिन सबके खिलाफ अपनी अधिकारपूण बुलद आवाज बुठानी चाहिये। हर जगह सरकारी अधिकारिया और कमचारियाका रिश्वत देकर अपना मतलब निकालना सीखे हुअे लाग अक श्रीश्वरको छोडकर अमके स्थान पर अनेक भयानक शक्तिशाली प्रलोभन दनेमें अपना धम समझने लये। निरकुश, श्राधी, तरगी और खुशामद-पसद अधिकारियाक जुलममें रहकर नामद और कायर बने हुअे लागाने देवी-देवताका स्वभावक बारेमें भी बनी ही निरकुशता शोध आदिकी कल्पना करक अुनसे प्रति भी अपने भीतर डरपाककी वृत्ति बडा ली। अिस प्रकार हमने धममें ही अधमका साम्राज्य स्थापित कर दिया। सत्यना रायणने लेकर गीनला माता तकके सब देवी-देवताका हमने डरानेवाल गुडो (bullies) का रूप द दिया। आकाशक तारे और ग्रह, जगलक पड-पौधे और बनस्पतिया हमारे भाओवद जमे पशु और पक्षी, बुपा और सध्या, अतु और सक्तर—सबमें हमारे पूजक अधि-मुनि परम मागल्यकी प्रेममय विभूतियाके दान करत थे आर अुनक माय आत्मीयता तथा अेकताका अनुभव करते थे, लेकिन हमें आन अिन सबमें पापका और कोपका भय ही भय दिखायी दता

प्रज्वलित रखनेका काय केवल धम-परायण व्यक्ति ही कर सकते हैं। यह व्यक्ति न तो धमप्रयामें होती है, न धार्मिक रीति रिवाज या सम्कारामें होती है न धार्मिक सस्थाआमें होती है और न धमका सहाय देनेवाली राज्य-व्यवस्थामें होती है। शास्त्रप्रथ सस्तर, रीति रिवाज और धार्मिक तथा राजकीय सस्थाप धार्मिक जीवनके लिये कम-अधिक मात्रामें अपयोगी ह जहर यह भी सच है कि धार्मिक वातावरणको स्थिर बनानेमें अनुकी सेवा बहुमूल्य सिद्ध हुआ है। परन्तु मूल गन्ति ता धमप्राण अपियाकी, सताकी और महात्माआकी ही हाती है। पवित्र मनुष्य-हृदय ही धमका अंतिम आधार है। अपनिपदका यह वचन बिल्कुल यथाथ है 'धमशास्त्र महर्षिणा अत करण-सभूतम्।'

धम जिनासा और धम चित्तन मनुष्यका स्वभाव ही है। अिम कारणसे प्रत्येक युगमें और प्रत्येक प्रदामें अप्रतिकी कक्षाके अनुमार मनुष्यक हृदयमें धम का आविभाव होता ही रहा है। यह हृदय धम वित्तना ही कल्पित वित्तना ही मलिन क्या न हा जाय फिर भी मूल वस्तु तो शुद्ध ही रहती है। अशुद्ध साना पीतल नहीं है और पीतल चाह जिनासा शुद्ध, धमकीला और मुडौल हो, फिर भी वह सोना नहा है। अिमी प्रकार केवल बुद्धिके जाय पर सदा किया गया, लोगान हृदयमें रहनेवाळ राग-द्वेषसे लाभ जुठाकर आरभ किया गया और थाडे या वहतमे सामध्यवान लोगाक स्वाथका पापण करनेवाला धम सच्चा धम नहा है। अमस्कारी हृदयकी क्षुद्र वासना और दमसे अपुत्पन्न होनेवाली विवृत्तिका ढकनेवाला गिष्पान्चार अथवा चतुराअीसे भरे तक द्वारा किया हुआ असका समथन भी धम नहीं है। अनान (अथात् अल्पानान) भालापन और अधश्रद्धा — अिन तीन दोषसे कल्पित बना हुआ धम अधमकी कक्षाको पहूच जाय यह अंक वान है, और मूलमें ही जो धम नहीं है वह कवल चालाकीसे धमका रूप धारण कर ले, यह दूसरी वान है। मनुष्य-ममाज अब अितना प्रौढ और अनुभवी हा गया है कि मानव अितिहासमें धमक अपूर वह गये दाना प्रकार व्यापक रूपमें पाये जात ह। परन्तु अिन दाना प्रकाराका पथकरण करने अिनके सन्धे स्वल्पकी पहचाननेका कष्ट अभी तक मनुष्यने नहा किया है।

हृदय धम जब बुद्धि प्रधान लागामें अपना काय आरभ करता है गिष्ट लागे द्वारा माय किया हुआ धम बनता है और अिसलिये जब वह सम्था बद्ध हा जाता है तब असक शास्त्र रच जाते ह शास्त्राका अय लगानेवाली मीमासा पद्धति अपुत्पन्न हाती है और अंतिम निगय देनेवाळ शास्त्राका अंक वा कल्प होता है अथवा पाप या शकुराचायक समान अधिकार हद्ध व्यक्तियाका मायता प्राप्त होती है।

धमका शास्त्रबद्ध और सस्थाबद्ध बनानेका काय बुद्धि प्रधान और व्यवहार कुशल लोगाक हाथा होता है अिसलिये धमका स्वाभाविक भविष्योमुख दृष्टि

क्षीण हो जाती है और भुस पर भूतबालकी ही परतें चढ़ जाती ह। भूतबालमें सग्न अग्निकी अपना भस्म ही अधिक हाता है अिमलिअे धमनज मग्ण जाता है। यही कारण है कि प्रत्येक धमका समय समय पर सस्वरण या परिष्करण करना जरूरी हो जाता है।

सत तुवाराम जब बाजार जानेका निरलत थे तत्र भुनकी मज्जनताका लाभ अठानेके लिअे कधी लग अपनी अपनी सलकी नली तत्र लगव लिअे अहें सौप देते थ और तुवाराम भी सतोपके साथ भुन नलियाकी भारी मालाका गलमें डालकर सौपा हुआ काम नियमित रूपसे पूरा कर देते थ। जन-म्वभाव ही असा होगा है। कोअी बालक या कोअी आत्मी किमीकी बात मुनता है यह मालूम होते ही निक्म्म लोकाका समाज अुसमें अपना काम करवानेक लिअे तयार हो जाता है। काअी नाव या जहाज नियमित रूपसे और तेजीसे अपन नियत स्थान पर पहुंचता है, असा पता चलने पर साग अुसीमें अपना माग्ण भरनका आग्रह रखते ह—और यह भी जिन ह्ण तब कि अुसकी गति मग्ण पठ जाय और अत्यधिक बोधसे वह डूबने लगे। धमकी भी अिसी तरह। गावभौम अपुयागी गवितको देखकर हर गरामद आदमीन अपनी गरजका निसा न किसी रूपमें धमके गग्णमें लटकाया है। अित कारणस भी धमका तेज बार-बार हीन और क्षीण हाता आया ह।

जिस प्रकार कोअी चालू दुकान अपनी तरबकीको बनाये रखन और बगानेके लिअे पुराना और निक्म्मा हा चुका माल बार-बार हटाया करता है और कबज पड रहनेके कारण विगड हुआ मालको साफ-स्वच्छ करव जुजग और चमकीला बना देती है अुसी प्रकार धमका भी बार-बार सस्वरण और परिष्करण करना चाहिय। परंतु यह सस्वरण असे कुगल और धमन समाज सेवका द्वारा ही होना चाहिये जिनमें खरे सोनेका परखन और जुस मुरगित रखनेकी गवित है। आज दुनियाम यडी हुअी अधिकतर प्रचलित नास्तिवताका मुख्य कारण धम सस्वरणका अभाव ही है।

२

किसी भी समाजके वड्ड अथवा क्षीणवीय होनेके मुख्य कारण वा ह अिद्रिय-वरायण विलासिता और धम जडता।

समाज जब विलासा वन जाता है तो जुसके पासकी धन-मौलन जुसके लिअे पर्याप्त नहा हाती जुसका पुरुपाथ अपने आप घट जाता है और असा हो ता भी क्या और बसा हो तो भी क्या? किसीमें कुछ नहीं है अिम तरलकी निष्क्रियता और आलसीपन अम पर मवार हो जाता है। अुमके बाद नये नये अनुभव लनके वजाय वह प्राचीन अनुभवके बारेमें वृथिम तथा दभपूण आदर और आग्रहको बगानर जुहें डालव रूपमें अपने सामने रखता है।

दूमरी ओर जब मनुष्यमें बौद्धिक जागृति मद पड जाती है और प्रयोगकी अपेक्षा प्रामाण्य पर ही अधिक भार देनेकी वृत्ति बढ जाती है तब ममाजमें अेक प्रकारकी धम-जडता उत्पन्न होती है। यह धम जडता दिखती ता है धमा भिमान जैसी ही, परन्तु वास्तवमें अुसका रूप लापरवाहीका हानेने वह अेक प्रकारकी नास्तिकता ही होती है। अनुभव यह नही बताता कि अभिमान और आप्रहृक् मूलमें सच्चा आदरभाव अथवा मच्ची थड्डा होती ही है।

आज भारतमें ग्रामीण समाजकी दुदगाका काशी पार नही है। गहगस विदेगी माल और मीज शीककी चीजें गावामें पडूचती ह, लेकिन अुद्योग धधे नहा पडूचते। गहराका अुडाअूपन असस्वारिता तथा अय समाज धातव दुगुण गावामें तेजीसे फैलने लगे ह। लेकिन गहरामें जा धार्मिक विचार-आगति राजनीतिक प्रगति और समाज-मुधार कुछ अगामें दिखाओ दता है जुसका प्रभाव वणुत ही कम मात्रामें गावामें पडूचता है। जिस हिदू धमसे और आय तत्त्वानसे आज हम जगतको प्रभावित और चकित कर दते ह वह धम और वह तत्त्वान जिस विकृत रूपमें आजक ग्राम-समाजमें प्रचलित है अुसे देखकर यही कहना पडेगा कि 'नेद यदिदमुपासते। देग-दगातरमें प्रासा पानेवाग हमारा धम और गावामें पाला जानेवाला धम अेक है ही नहा। गावामें कल तक सच्ची धमनिष्ठा, पवित्र आस्तिकता और जूचा चरित्र-बल था, आज भी कहा कही अिनक अवगोप लिवाओ पडत है। परन्तु अमुदि जडता और छिपी नास्तिकताका ही साम्राज्य बहा सबन्न फलता दिखाओ दे रहा है। अिम कारणसे गावके समाज मानसमें बडत्व अधिक मालूम होता है। गावामें अान है रोग है, गरीबी है। अिन तीनाको यदि गावसे हटाया नहा गया ता ग्राम-समाज अब टिक ही नही सकगा। परन्तु प्रश्न यह है कि पान स्वास्थ्य और अुद्याग बाहरसे गावके लागा पर कहा तक लाद जा सक्ते ह? बाहरसे लाद जानेवाल अुपायाकी अेक मयादा हानी है। जिस तारक त्रिपुटीका स्वीकार गावके लागाका स्वच्छासे ही करना चाहिये। और तीनाका स्वच्छासे स्वाकार हो जिसके पूव ग्राम-समाजका बडव दूर हाना चाहिये। अुस समाजमें अुत्साह और जागृति आनी चाहिये। धम-संस्करणके बिना यह बात सभव नही होगी। अत दूमरी सब बातासे पहल गावान धम-संस्करणका समुचित प्रयत्न हाना चाहिये।

गावामें जिस धमका पालन हाता है जुममें भय रिदवन दबवाद और जतर मतरका कमकाड ही मुख्य हाना है—फिर वह धम हिन्दुआका हा मुसलमानाका हो या जीसाभियाका हा। गावके लागाको अपना दुबलताका, अानाका, भोलेपनका और अनाय स्थितिका अनुभवस अुत्पन्न अितना कडवा पान होना है कि वे स्वाभाविक रूपमें ही गत्रिके अुपासक बन जात ह फिर नल व लोग जन हा या लिगायत हा। अिस अान-मूलक चकितपूजासे ही जादू-टोने और

जनर मतर पर लोकाकी आस्था जमती है। धम यानी बलवानकी आराधना अथवा खरीग हुआ अनुरा सरक्षण — सामान्य जनता धमका यही अर्थ समझती है।

धमके द्वारा माग्य पर मनुष्यकी श्रद्धा बढ़ानी हानी है चर्चित्री तज स्वित्ताकी स्वाभाविक बनाना हाना है। ससारक अनुभवमें पण पण पर जा विषाण प्राप्त हाना है असे दर करनेमें समय दबी आश्वासन प्राप्त करता हाना है और जावनर जगभूत प्रयेक तत्त्वना तूतन दुष्टिम नया ही मूल्यावन करना होता है। सफरता और निष्पत्ताक गयालाकी ही बल कर जिस भौतिक जगतमें आध्यात्मिक स्वातन्त्र्य मिद्ध करना होता है।

सदातिक विवेचनकी दृष्टिसे यह दृष्टिभेद बहुत बटिन मालूम होगा। एकिन जहा हृदयक साथ हृदय बात करता है वहा अुभ्रत भूमिकाया आमत्रण हृदय पर गहरा असर करता है और अेक बार हृदयमें परिवतन हा गया कि फिर जिनी भी अुपायने अुससे पीछ नहा हटा जा सवता। हृदयका अमा आमत्रण देनवाल यवितके अपने हृदयमें किसीक बारमें तुच्छताका भाव नहा हाना चाहिय। हमारा आमत्रण अमोध है, असी अमर आस्तिकता अुसमें होनी चाहिय। साथ ही मनुष्य मात्रक हृदयके बारेमें अुमके दिलमें प्रेम और आस्था — आदर होना चाहिय।

[धमज्ञान देते या लते समय अुसे ग्रहण करनेवालक अधिकारके विषयमें जाज तब अपार चचा हुजी है। एकिन अब धमज्ञान देनवाले व्यक्तिके अधिकारकी गहरी चचा करनेके दिन आय ह। अुपर बताओ दुधी आस्तिकता जिन लोगामें हो अुहीकी धमबोध और धम-सरक्षणका काय अपने सिर लेना चाहिये।]

आज गावामें धमाघताक रूपमें नास्तिकता कितनी फली हुओी है अिसका सच्चा खयाल होने पर माको गहरा आघात ही लगना चाहिये — और लगता भी है।

प्रयेक धम अेक तरहके जीवन कायसे भरपूर होता है। सच पूछा जाय तो धमज्ञानका समय याहन दलील या युक्ति और तक नही है अुमका सच्चा वाटन काय है। अिसात्रिअे काय विहीन धम हो ही नहा सवता। परतु जहा जहां समाजमें अज्ञान और जडताका साम्राज्य होता है वहा धार्मिक का दवे गदाधकी ही मच्चा मान लिया जाता है। और अपने अज्ञानके कारण मनुष्य जहा न हो वहा भी गूढता और जाडूका आरक्षण करने लगता है। जिस वक्तिसे अधिव धम विघानत्र वक्ति काओ हा सवती है या नही अिसमें मुचे गका ही है। अिसके विपरान धमके विषयमें बन्नेवाले जिस पागल्पनसे अूवे हूअे तोग असे मौका पर धममें भर हुअे कायका जडसे मिटा देनका निरधक और निष्फल प्रयत्न करते ह। सच्चा अुपाय तो यह है कि लोगोकी बुद्धिका तीत्र बनाया जाय और अुनकी काय रमिकताका विवेकपूण बनाकर धममें काव्यकी वृद्धि की जाय। लोकाकी काय रमिकता दन्ने पर ये धमको जामानीसे समझ सकगे और धममें घुस हुआ अथ विवामाकी भी पहचान सर्वेग।

परन्तु यह सब करनेके लिये पानमान लगाकर गहरी आदतें छाड़कर गावाकी जनताके श्रममें पवित्र और प्रकृतिसे मधुर बने हुए दैनिक जीवनमें आन प्राप्त हो जाना चाहिये। ग्रामवासियोंके जीवनमें अलग रहकर अनाथ मरणम्त, आश्रयता बननेसे अब काम नहीं चलेगा।

कोभी भी समाज युग-कल्पनासे पीछे रहकर सफ नहीं हो सकता। आजका युग केवल सदातिक मानव-समानताका युग नहीं है। स्त्री-पुरुषकी समानताका और जातियाकी समानताको आज अमली रूपमें स्वीकार करना होगा। अतना ही नहीं सब धर्मोंकी भा समान प्रनिष्ठा और समान आत्म मिलना चाहिये। आज सब धर्मोंके प्रति अेकम अनादरकी समानता पम की जाती है, और अुनके प्रति अेकसी अनास्था अथवा अेनसे अमानताकी भी समानताका अेक भाग समझा जाता है। लेकिन यह भाग घातक है। आजके युगमें समाजमें रहनेवाले प्रत्येक मनुष्यका मुख्य मुख्य धर्मोंका सामाय पान होना चाहिये। परन्तु असा पान देने या देनेमें कवल ताकिक आलाचनात्मक अथवा अतिहासिक दृष्टि रखनेमें काम नहीं चल सकता। प्रेम, आदर और महानुभूतिके साथ आगत जिनासा-बुद्धिसे सब धर्मोंका परिचय प्राप्त करना चाहिये। गावाका धमपान बहुत पिछता हुआ होता है अुनकी दृष्टि सकुचित हाती है और अुनका जीवनका अनु बहुत अुन्नत नहा होता। आजके जमानेमें दुनियाके विभिन्न धर्मोंके सत्पुरुषाने और चरित्र-भरायण मघाने जा प्रयत्न किये हैं अुनकी जानकारी अुहें बडे प्रेमसे देना चाहिये। अिममें ध्येय धम जागनिका और लोक कल्याणका हाना चाहिये केवल पढिनाअु बहुश्रुतताका नहा।

आजके समाजका अेक महान दाप है वग विग्रह। लगाका भीष्या द्वय या मत्सर करनेके लिये कासी ध्यानमूर्ति चाहिये। स्त्रियाका पुरुषाके खिलाफ नौजवाना-को बढाके खिलाफ गरावाका अमीरके खिलाफ हिन्दू-मुसलमानाको अेक-दुमरेके खिलाफ और गार लगाको काल और पील लगाके खिलाफ लटना है। अिम प्रकार सबत्र विग्रहका — लडाआफा वातावरण पया हुआ है। कम या ज्याण लगाको समठित करके अुनका नेतत्व ग्रहण करनेकी नीयत हा ता अिमके लिये अुन सबकी द्वेषबुद्धिको केन्तित करके अुह द्वेषक आलम्बनके लिये अेक ध्यानमूर्ति देकर सगयका और परायेनका वातावरण सज करना बहुत आसान है।

यह रोग धममें बडी जल्दीसे घुस सकता है। आजका जिस दिगामें प्रबल प्रयत्न भी चल रहे ह। अिन भवका परिणाम परम्पर हत्या और अतमें आत्म हत्यामें ही आयेगा। हम जिस धम-संस्करणका विचार करत है, अुसमें अिम रागसे मुक्त रहनेकी पूरी भावधानी रखनी चाहिये।

धमके दूरे तत्त्वाको दूर करत समय अितना ध्यानमें रखना चाहिये कि अुनके म्यान पर गुम सात्त्विक और ठोम तत्त्वाका धममें प्रवेश हो। कया गूयना रिक्तता भयकर सिद्ध होती है।

लिखे की है। समाजकी विविध प्रवृत्तियोंके साथ मेरा परिचय सीमित ही है। जो है वह ज्यादातर विद्यार्थियों और अध्यापकोंके साथ है। बीदवरने मुझे दूधे अच्छे मित्र दिये हैं। परन्तु अिनने परिचयके आधार पर मैं संपूर्ण समाजके बारेमें कसे बाल सकता हूँ ?

मनुष्यका परिचय कम हो या अधिक, उसके साथ उसे अपना अभिप्राय ता बनाना ही पटता है क्योंकि अभिप्राय बनाने विना जीवनमें व्यवहार सम्भव ही नहा हाना। परन्तु समा अभिप्राय णामें व्यक्त नहीं किया जा सकता। अपने मनमें भी जुमका विस्फरण नहीं किया जा सकता। अभिप्राय निश्चित हो तो भी वह अव्यक्त ही रह सकता है।

अपने अनुभवके आधार पर मैं अितना कह सकता हूँ कि कोअी भी समाज अपने लिखे श्रेष्ठ होनेका दावा नहीं कर सकता। मैं ता यहा तक कहूंगा कि अय जातियामि अधिक अहिंसक हानेका दावा भी जनाका नहीं करना चाहिये। तफमीलामें या रीति रिवाजामें भले ही भेद हो लेकिन गुजरातकी सभी जातिया समाज रूपमें अहिंसक हैं। आप चाहें ता अितना दावा जरूर कर सकते हैं कि जैन धर्मके प्रचारके कारण और आपक सहवामके कारण लगामें अिननी अहिंसा आजी है। अस दावमें तथ्य जरूर है।

जिसी भी व्यक्ति या समाजके बारेमें बोलत समय अेक और अनुविधा भी बाधक होती है। अगर गुण बताये जाय तो वह खुशामद अयवा अपरी गिष्ठाचार माना जाता है मानो मनुष्य दूसरके दोष बताते समय ही सच बोलता हा। और दाप बताते समय मनुष्य तटस्थ बुद्धि रखे, ता भी कोअी अुस पर विश्वास नहीं करता। मेरे जितने भी जैन मित्र हूँ अुनकी अुदारता और सहिष्णुता पर मैं मुग्ध हूँ। कट्टर जन समाजमें अुनकी प्रतिष्ठा कितनी है यह मैं नहीं जानता। किंतु मेरी दष्टिमें वे मित्र अहिंसाके सच्चे अुपासक हैं। जनाकी सकुचिनाके बारेमें मने बहुत कुछ सुना है वे दान करेंगे तो वह अुनकी अपनी जाति तक ही मर्यान्त रहेगा मदद करेंगे तो वह अपनी जातिक नौजवानाकी गिक्षाके लिखे ही होगी, फड अेकत्र करेंगे या छात्रालय खोलेंगे तो भी वह अपनी जातिके प्रति रही भावनाके कारण ही होगा। अिस विषयमें मैं अितना ही कह सकता हूँ कि मेरा अनुभव अिमने मित्र है। मैं जिस राष्ट्रीय विद्यापीठमें काम करता हूँ अुसका विागल भवन अेक जन सज्जनने बनवाया है। समस्त धर्मोंके धमप्रयामि अहिंसा गान्धकी गोष करनेकी सुन्दर सुविधा जेक अय जन सज्जनने बहा कर दी है। देगकी दुदगाकी त्वाके रूपमें हमने अमी अमा ग्रामसेवाकी जिम योजना पर अमर गुरू किया है अुसका आर्थिक बाध भा जेक अुनार हृदयवात्र जन सज्जनने ही जुठा लिया है। असे कितने ही अुनारण मैं आपक मामने रत सकता हूँ।

परन्तु आप कहें कि 'प्रत्येक जातिमें अमे अन्तर्गत मजदूर ही सन्त है, आप अके जातिके नाते हमारे कुछ दाप ता बतलाजिये।' म दाप बतला मन् जितना निक्कट परिचय जमीन जन समाजक साथ मरा नहीं है। किन्तु जा गवामें मर मनम जुठी ह जुह हा यहा प्रश्नके रूपमें पूछ लू।

गुजरातक जन अधिकतर गावामें रहते ह या गहरामें? यदि व गहरामें ही रहते हा तो आपका असि विषयमें गहरा विचार करना चाहिये। जन लाग अधिकतर खेती करते ही नहा। क्या यह बात सच है? यदि सच हा ता मुझे कहना चाहिये कि यह स्थिति गभीर है। यदि जसा ही हो ता म कहूंगा कि आपको अपने अस्तित्वके बारेमें और अपनी प्रतिष्ठाक बारेमें जितनी सावधानी रखनी चाहिये जितनी आप नहा रखते। अतिता हा नहीं म तो यह भी कहूंगा कि आप अहिंसा धमके पालनकी पूरी तयारी नहीं करते। आहार पर जीनवाला मनुष्य खेतीसे विमुख रहे यह काजी साधारण दाप है?

समाजशास्त्रके आज तकके अपने अध्ययनके आधार पर मने जब अचूक नियम ढूँ निकाला है। जिस जातिने जमीनके साथ अपना सीधा सम्बन्ध नहीं रखा है अुसने अपनी जग्ग कमजोर बना ली ह। म यह मानता हू कि जो अनाज हम खाते ह वह कसे और कहा अुत्पन्न होता है यह हमें अनुभवस जानना चाहिये। कही कहा खतीमें होनवाली हिंसाके कारण खतीस दूर रहनका बात कही जाती है। लेकिन मेरा अनुमान है कि जन लोग जसा तक नहा कर सकते, क्योकि जनमतन ता किय हुजे कराय हुअे और अनुमोन्ति कायम समान दाप बतलाया है। जो अनाज खाया जाता है जुससे सम्बन्धित खतीका दोष खानवालाको लगता ही है। जितने पर भा यदि आपका धम असिसे भिन्न कुछ कहता हो तो म अचार हू। मुने जो कुछ अुचित लगता है जुसे आपके सामन रखना मैं अपना धम मानता हू।

धनी हानेन दा ही माग ह (१) व्यापार-अुद्योग और (२) लूटपाट। व्यापारी व्यापार करते ह और खूब धन अिकटठा करते ह। सरकार कानूनन् लूटपाट करती है और धनके भंडार भरती है। सरकारस मरा मतलब केवल अंग्रेज सरकारसे ही नहा आजकी प्रत्येक सरकार यही काम करती है। वह ब्यक्तियाको चूसती है और पण्डितसे सबत्र राज्य चलाती है। व्यापारसे समाजमें पसा जाता है परन्तु जमीनके साथ सम्बन्ध रख बिना समाजम स्थिरता नहीं आती। पसा गहरकी चीज है। असिमें कोअी गवा नहीं कि हमने गहरमें ही रहनक कारण अपने अनेक गुण खा गिये ह। कुदरतके साथ सीधा सम्बन्ध तो गावमे रहनसे ही स्थापित हो सकता है। जो मनुष्य गावमें रहता है वह अतुक परिवर्तनाका, खुली हवाका खुली धूप ठंड गरमी और बरसातका भय आकाग तथा पशियाके मीठे कलरवका अनुभव कर सकता है। जिसे खती करनी होती है वह आकागकी

और टक्करी लगाकर बछटा है जोर रातके तारा तथा दिनके मूय प्रकाशके साथ अक्षरूप होकर जीवन बिताता है। आत्म रक्षक बस्तिया विवास करनेके लिये भी सेना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि विमानको कुदरतक तथा पशु-पक्षियोंके अनेक आक्रमणोंके सामने निरन्तर जूझना पड़ता है। इसी दृष्टिसे मैं कहता हूँ कि क्षत्रिय जोर क्षत्रिय (किसान) में मैं बहुत भेद नहीं करता। गावोंके विमानाने मत्त ही आम रक्षक बस्ति दिवाजी है। गिवाजीने और बारडालीके किसानाने यह बात सिद्ध कर दिवाजी है। जब सत्ताधारीका आदेश निरलना है कि 'you shall yield (तुम्हें झुकना ही पड़ेगा) तब विमान ही यह उत्तर दे सकता है कि 'I shall neither break nor bend' (मैं न तो टूटूँगा और न झुकूँगा)।

असि विस्वमें अहिंसाके समान दूसरा काजी धम नहीं है। जिस आप जार मैं दाना मानने हूँ ! फिर भा असि गरीरके साथ असि जीवनमें संपूर्णतया अहिंसाका आचरण करना किसी भी मनुष्यके लिये संभव नहीं हो सका। भविष्यमें भी कभी यह संभव नहीं होगा। हमारे जीवनका अद्यय अपनी वर्तमान प्रवृत्तियोंमें हिंसाका यथासंभव कम करना ही हो सकता है। जिसका अर्थ यह हुआ कि जब तक हमारा सांसारिक प्रवृत्तियाँ चलती रहें तब तक अहिंसा-धर्मियोंका अहिंसाके नये नये प्रयाग चालू रखने ही होंगे। जिसा प्रकार हमें यह भी दखना चाहिये कि खेतीके काममें अहिंसाकी जार बढ़नेकी कितनी सम्भावना है। क्योंकि खेतीका हम जितनी अहिंसक बना सकेंगे संपूर्ण जगत अतना ही अहिंसक बनेगा। बाह्यक जीवनमें हम अहिंसाकी चाहे जितना बातें कर, परन्तु असि अन्नक बिना हमारा और गणतका जीवन जेक दिनके लिये भी नहीं चलता जुमे अल्पक करनेवाले खेतीको जय तक हम विगुद्ध नहीं बनायेंगे तब तक अहिंसा धम हमारे जीवनके मूलको स्पष्ट नहीं कर सकता। मयासी समस्त प्रवृत्तियोंमें दूर रहकर स्वयं बड़ा अहिंसक होनेका दावा कर सकता है, परन्तु अस्वके दावकी बहुत कीमत नहीं है। अहिंसा धम जीवित और जाग्रत विश्वधम है जोर जिसका पूणता हम जीवनमें कभी सिद्ध कर ही नहीं सकें। असि अहिंसा धमका आचरण हिंसक मानी जानवाली प्रवृत्तियोंमें दूर रहकर तथा दूर रहते हुए भी अन्न प्रवृत्तियोंके फलका लाभ अठाकर हम कभी कर ही नहीं सकत। मैं असि बातकी आर जन मित्राका खास तौर पर ध्यान खीचना चाहता हूँ कि हमारा कर्तव्य समाजकी स्थितिके लिये अनिवाय प्रवृत्तियोंमें हिंसाके तत्त्वको यथासंभव दूर करनेमें निहित है।

जिस तरह विचार करने पर मैं यह मानता हूँ कि जन समाजको आर्थिक सामाजिक, राजनातिक बौद्धिक, स्वास्थ्य विषयके दृष्टि अथवा अन्तमें माक्षकी दृष्टिसे भी जमीनके साथ अपना सम्बन्ध बनाना ही चाहिये। मैं यह कहनेकी

परन्तु आप कहेंगे कि 'प्रत्येक जातिमें उसे अन्तार सज्जन हा सक्त ह, आप अक जातिके ताते हमार कुछ दाप ता बताविय।' म दाप बता सकू अितना निकट परिचय जमी जन समाजक साथ मरा नहा है। किन्तु जा गवामें मरे मनमें अुठी ह अुह ही यहा प्रदनक रूपमें पूछ लू।

गुजरातके जन अधिकतर गावामें रहते ह या गहरामें? यन्ि व गहरामें ही रहते हा तो आपका अिस विषयम गहरा विचार करना चाहिये। जन लाग अधिकतर खेती करते ही नहा। क्या यह बात सच है? यदि सच हा ता मुझे कहना चाहिये कि यह स्थिति गभार है। यदि जसा ही हो ता म बहूगा कि आपको अपन अस्तित्वके वारेम और अपनी प्रतिष्ठाक वारेम जितनी सावधानी रखनी चाहिये अुतनी आप नहीं रखत। अितना हा नहा, म तो यह भा बहूगा कि आप अहिंसा धमके पालनकी पूरी ल्यारी नहा करते। आहार पर जानबाला मनुष्य खेतीसे विमुख रहे यह कीअी साधारण दाप है?

समाजशास्त्रके आज तकके अपन अध्ययनके आधार पर मने अक अचूक नियम ढढ निकाला है। जिस जातिने जमीनके साथ अपना सीधा सम्बन्ध नहीं रखा है अुसने अपनी जमें कमजोर बना ली ह। म यह मानता हू कि जा अनाज हम खाते ह वह कसे जोर कहा अुत्पन्न हाता है यह हमें अनुभवस जानना चाहिये। वही वही खेतीमें हानवाली हिसाके कारण सतीसे दूर रहनका बात वही जाती है। लकिन मेरा अनुमान है कि जन लोग जसा तक नहा कर सक्त, क्याकि जनमतने ता बिये हुअे करामे हुअ और अनुमोदित कायम समान दाप बताया है। जो अनाज साया जाता है अुसस सम्बन्धित खेतीका दोष खानेवालाको लगता ही है। अितने पर भी यदि आपका धम अिससे भिन्न कुछ बहूता हा तो म लचार हू। मचे जो कुछ अुचित लगता है अुमे जापके सामन रखना म जपना धम मानता हू।

धनी हानक दा ही माग ह (१) यापार अुद्योग और (२) लूटपाट। व्यापारी यापार करते ह और खूब धन अिकटठा करते ह। सरकार कानूनन् लूटपाट करती है और धनके भंडार भरती है। सरकारस मरा मतलब केवल अग्रेज सरकार-से ही नहा आजकी प्रत्यक सरकार यही काम करती है। वह व्यक्तियाको चूमती है और पगुबलसे सबत्र राज्य चलाती है। यापारसे समाजमें पसा आता है परन्तु जमीनक साथ सम्बन्ध रखे विना समाजमें स्थिरता नहा आता। पसा गहरका चीज है। अिसमें काअी शका नहीं कि हमने शहरम ही रहनक कारण अपने जनेक गुण खो दिये ह। कुदरतके साथ सीधा सम्बन्ध ता गावमें रहनस ही स्थापित हो सक्ता है। जा मनुष्य गावमें रहता है वह अतुके परिवतनाका, खुली हवाका, खुती धूप ठड गरमी और बरसातका भय आकाग तथा पक्षियाक मीठे कलरवका अनुभव कर सकता है। जिन खेती करनी हाती है वह आकागकी

ओर टक्करी लगाकर बठता है और रातके तारा तथा दिनके सूर्य प्रकाशके साथ अक्लमय हाकर जीवन गिताना है। आत्म रक्षक बक्तिका विकास करनेके लिये भी खेती अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि विमानका कुन्डरतके तथा पशु-पक्षियोंके अनेक आक्रमणके सामने निरन्तर जूझना पड़ता है। इसी दृष्टिसे म कहता हू कि क्षत्रिय और क्षेत्रिय (किसान) में म बहुत भेद नहा करता। गांधीके किसानाने म्ग ही आत्म रक्षक बक्ति लिखाआ है। गिबाजीने आर बारटालीक किसानाने यह बात मिद्ध कर दिखायी है। जब सत्ताधारीका आदेश निजलता है कि 'you shall yield' (तुझे थुचना ही पड़ेगा) तब विमान ही यह उत्तर द सकता हू कि 'I shall neither break nor bend' (म न ता टूंगा और न झुक्गा)।

जिस विश्वमें अहिंसाके समान दूसरा काजी धम नहीं है। इसे आप और मैं दाना मानते हू। फिर भी अिम शरीरके साथ अिम जीवनमें सपूणतया अहिंसाका आचरण करता किसी भी मनुष्यके लिये सम्भव नहीं हो सका। भविष्यमें भी कभा यह सम्भव नहीं हागा। हमारे जीवनका अुद्देश्य अपनी वतमान प्रवृत्तियामें हिंसाका यथासम्भव कम करना ही हो सकता है। अिमका अथ यह हुआ कि जब तक हमारा मानारिक प्रवृत्तिया चलती रहें तब तक अहिंसा पक्षियोंको अहिंसाके नये नये प्रयाग चालू रखने ही हागे। इसी प्रकार हमें यह भी दखना चाहिये कि खेतीके काममें अहिंसाकी आर बढनेकी कितनी सभावना है, क्योंकि खेतीका हम जितनी अहिंमक बना सकेंगे सपूण जगत अतना ही अहिंमक बनेगा। बाहरके जीवनमें हम अहिंसाकी चाहे जितनी बातें कर परन्तु जिस अन्नके बिना हमारा और जगत्का जावन जेक दिनके लिये भी नहीं चलता, अुमे उत्पन्न करनेवाली खेतीको जब तक हम विगुद्ध नहीं बनायेंगे तब तक अहिंसा धम हमारे जावनके मूत्रको स्पश नहीं कर सकता। सचासी समस्त प्रवृत्तियामें दूर रहकर स्वय बडा अहिंमक होनेका दावा कर सकता है परन्तु अुसके दावकी बहुत कीमत नहीं हू। अहिंसा धम आवित और जाग्रत विश्वधम हू और अुसका पूणता हम जीवनमें कभी मिद्ध कर हो नहा सकन। अिम अहिंसा धमका आचरण हिंसक मानी जानेवाली प्रवृत्तियामें दूर रहकर तथा दूर रहत हुअे भी अुन प्रवृत्तियाक फलाका लाभ अुठाकर हम कभी करा ही नहीं सकत। म जिस बातकी आर जन मित्राका खास तौर पर ध्यान खीचना चाहता हू कि हमारा कतय समारकी स्थितिके लिये अनिवाय प्रवृत्तियामें हिंसाक तत्त्वकी यथासम्भव दूर करनेमें निहित है।

अिम तरह विचार करने पर म यह मानता हू कि जन समाजको जाधिक, सामाजिक राजनीतिक, बौद्धिक स्वास्थ्य विषयक दृष्टि अथवा अतमें मापकी दृष्टिसे भी जमीनके साथ अपना सम्बन्ध बनाना ही चाहिये। मैं यह कहनेकी

अिजाजत लता हू कि जब तक जन लाग असा नही करेंगे तब तक अुनकी प्रतिष्ठा स्थिर भूमि पर टिकी हुआ नही मानी जा सकती ।

जन समाजक साथ मेरा बहुत गहरा अथवा विस्तीर्ण परिचय नहा है । मेरा परिचय है पंड पीथा और पनु-भक्षियाके साथ तथा जिन लोगकी सवाका म सना लाभ भुठता रहता हू अुनमे से कुछ गरीब भाअियाक साथ । मेरे जीवनका मुख्य काय है शिक्षा । विद्यापीठ मेरे साथी, मेरे विद्यार्थी और म — यही मेरी दुनिया है । अिन सबके होते हुआ भी मुझ जो चाँसे जन मित्र मिठे ह व बडे अच्छ — प्रमल, अुदार और पूरे सहिष्णु ह और अुनके कारण मेरा जन समाजक विषयमें हमेशा बहुत जचा खयाल रहा है । मने ता अुन मित्रामें थूचा जनत्व और अहिंसक वृत्ति देखी है । यहा अहिंसकताका अथ म अुदार सहिष्णुता करता हू । मेरा विश्वास है कि यही अक असी चीज है जिसकी आजकी दुनियाका बडी आवश्यकता है और जन लोग यदि चाह तो दुनियाको यह चीज दे भी सकते ह । आज आप दुनियामें प्रचलित मासाहारको नहा रोक सकते क्यकि आज तो कुछ स्थानामें अिसके विपरीत बडी विचित्र हवा बह रही है । जन गस्त्राका सबब खूब अध्ययन हो, अिसके लिअे जन मित्र बहुत आवुर रहते ह । मुझे कोअी भी जन पुस्तक छपवानी हो तो अुसके लिअे पस प्राप्त करनेमें मुये बहुत कठिनाअी नही हो सकती । लकिन आज हमें यह काम नही करना है । आज ता हमें दुनियाकी पीडा जाननी है और अुसे दूर करनेका अुपाय सुझाना है । यह अुपाय अहिंसामें है और यदि जन धमका समुचित निरूपण किया जाय, तो दुनिया अुमसे बहुत स्वस्थता प्राप्त कर सकती है ।

आज जब म जन गदका प्रयोग करता हू तब जन नाम धारण करने-वाल्का जन मानकर म अिस गदका प्रयोग नही करता अिस गदका प्रयोग में अने लोगके लिअे करता हू जिनमें जन भावना अीतप्रोत हो गअी है । 'Hindu view of life' के लखक श्री राधाकृष्णनूके शदामें म भी यह मानता हू कि धम-निरवान करानेका प्रयत्न जब तक रुकगा नही तब तक जगतमें शांति नहा हागी । प्रयेक धममें अपना विकास करनेकी पूरी गुजाअिग और पूरी सामथी हाती ही है । प्रयेक धम कम या अधिक मात्रामें अहिंसा परायण है और अुनने अगमें अुममें जनव है ।

मुझे ता आपसे दो ही बात कहनी ह आप सहिष्णु बनिय और जीवनकी जरूरताका यथामत्रव कम कीजिय । आप अपनी जरूरत कम नहा करने तब तक आप मच्चे अहिंसक बन हा नही सक्ने । हमारा माधारण जीवन तरह तरहके दाहाते भरा है । धन-अपत्ति अद्राहस मित्र ही नहा सकती । अपनमें से कुछ लोगके लिअे आप जन-रूप करनेकी मुक्तिधायें अुग दें और बाकीक लाग जा

कुछ करते हा वही किया करे, तो अिससे समाज कमी अद्राही अयवा अहिंसक बन ही नहीं सकता ।

हिंदू धमने अेक ही बात कही है — और जन धम अुसमें आ जाता है, वह यह है कि कोअी भी धम झूठा है अैसा नहीं कहा जा सकता, प्रत्येक धमके सत्यागका आश्रय लेकर मनुष्य परम काटिको प्राप्त कर सकता है और अिसलिये धम-परिवतन करना व्यथ है । अिसी विचारमें स्यादवादके तत्त्वका सार आ जाता है । 'दूसरे लोग जो कुछ कहते ह वह विलकुल झूठ कहते ह , असा कहनेवाले लाग पहले तो स्यादवाद-मूलक जैन धमका ही द्रोह करते ह ।

आप पसा खच करके जो पडित अुत्पन करेंगे अुनमे आपका साहित्य तो खूब बढेगा, परन्तु धमका या जगतका अुद्धार नहीं होगा । गाधीजीको कितने ही लोग अुत्तम जन — अुत्तम हिंदू — के रूपमें स्वीकार करते है । अिसका कारण गाधीजीका पाडित्य नहीं है, परन्तु अुनका चारित्र्य अुनका अनुभव और अुनकी तपस्या है । वे ही गाधीजी कहते ह कि अिनमें से कुछ अच्छी अच्छी बातें मुझे श्रीमद् राजचन्द्रसे मिली ह । और अिन राजचन्द्रमें भी असाधारण पाडित्य नहीं था, अुनमें था तपोमय जीवन और विश्वव्यापी विशाल भावना । अिन दोना सद्गुणाको अपना कर आप जगतको जन धमका सच्चा दशन करा सकत ह । आज कुछ पाश्चात्य विचारक यह मानते है कि भारतने अपना सदेग जगतको सुना दिया है और जगतने अुसे ग्रहण कर लिया है । अब भारतके पास जगतको देनेके लिये कुछ रहा नहीं है, और अिसलिये अब भारतका जीनेका कोअी अधिकार नहीं है । यदि अब हमें जगतको कुछ नहीं देना है और यदि हम मृतप्राय बन गये ह तो हमें अूपरका अभिप्राय स्वीकार कर लेना चाहिये । यदि अैसा न हो तो हमें अपनेमें प्रेरणा अुत्साह, अोजस्विता और नव निमाणकी शक्ति दिखानी होगी, अपनी विरासतको अुत्तरोत्तर बढाना हागा और अपने अस्तित्वसे जगतको समृद्ध तथा गौरवावित्त करना होगा ।

‘प्रबुद्ध जन’

यूरोपियन लोग इस दगमें आय तरंग जुड़ान अंग र्णाका पञ्चानना प्रयत्न किया है। वड बड विद्वानान भारतमें घाप करव त्रि धा जीर त्रिद्व ससृति पर प्रकाश डाला है। जुमन वा मडम इक्वत्सा बन आल्कांट और निगड अनी बसट तस प्रतिभागाली यत्नियान भारतरा प्रशिक्षणा अध्ययन करनक लिअ थियासाफिर सागायगीना स्थापना बी। परतु नागतको अपनी अस्मिताका अपन स्वाभिमानका भान ता स्वामी निवसानका अमरिका यात्राक वा ही हुआ। स्वामी विवकानन् जय अमरिकाग नागन गे तय जटाने बिस्तर पर लातत हुआ किनु नादम जाग हुआ भारतका दसा। जाग हुआ भारत को सडा करल जीर अपन परा पर सड रहकर चलन लायक बनातर त्रिअ स्वामी विवकानन् प्रबुद्ध भारत नामक मामिक गरु किया। अमम स्वामाजीने वेदात धमकी नाव पर सामाजिक धार्मिक गक्षणिर जीर सामृतिन जागुनिवा नया भवन सडा करनका प्रयास किया। वनात वास्तवम पढिताका घना मन्गीमें केवल छान-बीन करनका विषय नहीं है वह गुफाम पन्थी मारकर सीध बटकर और नाक पकड कर सो जानकी सुविधा कर देनवाला हटयाग नहा है। जिसके विपरीत वेनात अक सावभौम जीवन गान है और जीवनन विषयम जटनवाल सारे प्रश्न हल करनकी गुरुकुजी (master-key) है — असा स्वामाजान अनुभवसे दसा और बुसके अनुसार भारतका प्ररणा दा। ब्रह्म-समाज और आय-समाजमें भी हमें यही प्ररणा दिखती पडती है। यही प्ररणा हमें अरवि घापमें और रवीन्द्रनाथ ठाकुरमें लिखाजी देती है। और जिसी प्ररणाके अद्विताय बिस्तारका अनुभव हम अहिंसावादी गाधीजीक समस्त कार्योंमें करते ह।

जन-दगन भी असा ही अक जीवन-यापी सावभौम दगन है। स्यादवाद-की भूमिका पर अहिंसा और तपके साधनसे सारी दुनियाका स्वरूप बलनकी शक्ति और अभिलापा जन-दगनमें है अथवा होनी चाहिय। विनाशक विनारे पहुँचे हुजे जगतको यदि अतिम क्षणम भुससे बचना हा तो असे स्यादवाद हपी बौद्धिक अहिंसा स्वीकार करनी ही चाहिय समय हपी नतिक साधनाका आचरण करना ही चाहिये और तपके द्वारा सकल्पका सामग्य बना कर अपरानत साधनाकी पूण तयारी करनी ही चाहिये।

रुडिप्रस्त शास्त्री और ग्रथ परामण पडित दुनियाको घट सदेश नहा द सवते कयाकि दुनियामें बुनसे अधिक बुद्धिशाली जीर कम पामर बितने ही लाग ह।

शब्दजड जीर ग्रन्थ-परतत्र बने हुअे साधु मुनि और आचार्य यह सदेश नहा दे सकते । अिमका कारण यह है कि वे अधिकतर अपने समाजके, अपने अनानके तथा अिन दानाना पापण करनेवाली म्गियाने अनुयायी हाते ह । वे पढी हुअी और सुनी हुअी बात कहते ह अनुभव की हुअी बातें नही कहते । अुह सिद्धात्ताके अर्थोका दान भठ ही हुअा हा, लेकिन विगल और गभीर मानव-जीवनका दशन अह गाय ही होता है ।

भूतकाको यथाय रूपमें न समझनेवाल, भविष्य कालको न देख सकनेवाले तथा वतमान कालक सकुचित स्थल और कालसे मर्यादित रहनेवाले आजकलके लखक जीर सपादक जाति भूपण और ममाज-सुधारक भी यह सदेश नही द सकत क्याकि अुनकी श्रद्धा अुनक जीवन जसी ही गिथिल और छिछली हाणी है । वे जीवनके विचार्यो तो बन सकते ह, परन्तु जीवन-वीर नही होते । प्रयाग-यरायणतामे वे डरत है । वे महासागरमें अपना और अपने समाजका जहाज चलानेवाले और एकमात्र ध्रुवके आधार पर चाहे जैसे पानीमें अकुतोभय — पूरी निभयतामे — सचार करनेवाल साहसी नाविक नही होते ।

परन्तु यह मत्न दुनियाक सामने रखा गया है । महावीरकी वाणीके प्रति जिन लागी निष्ठा है अुनका यह कतय है कि वे अिस सदशको समर्पे, आचरणमें अुतार जीर अुसका विस्तार कर । प्रबुद्ध जन जन समाजका और अुसके साथ भारतीय ममाजको जगा हुअा देखकर अुसे बठा दे और अुठकर चलनेकी प्रेरणा दे तो कहा जायगा कि अुमने जन-ज्ञानको जीवन-दशन बना दिया है ।

अुस सदेशक मत्र जिन लागाने सुने ह, अुम सदेशकी आवाजसे जो लोग अस्वस्थ और अशात हुअे है, असे लागीको अकथ करनेवाला स्थान यदि यह प्रबुद्ध जन बन जाय तो अुसका अस्तित्व सफल हागा ।

‘प्रबुद्ध जैन’

यूरोपियन लोग जिस दशमें आय तबम बुटाने अिस दगाका पहचाननका प्रयत्न किया है। बडे बड विद्वानान भारतमें शोध करके हिंदू धम जोर हिंदू ससृति पर प्रनाग डाला है। जुसके बाट मडम ब्लवटस्की बनल जाल्वाट और मिसज अनी बसेंट जस प्रतिभागाली यन्त्रितयान भारतकी ब्रह्मविद्याका अध्ययन करनेके लिअ थियासाफिकल सामायटीकी स्थापना की। परतु भारतको अपनी अस्मिताका अपन स्वाभिमानका भान ता स्वामी विवेकानन्दी अमरिका यात्राके बाद ही हुआ। स्वामी विवेकानन्त जब अमरिकाम भारत गेट तब जुटाने विस्तर पर लोटते हुए किंतु नौदस जाग हुए भारतका दसा। जाग हुए भारत का खडा करने और अपन परा पर खड रहकर चलन लायक बनानक लिअ स्वामी विवेकानन्त प्रबुद्ध भारत नामक मासिक गुरु किया। बुसम स्वामाजीने वेदात धमकी नाव पर सामाजिक धार्मिक दक्षणिक और सासृतिक जागृतिक नया भवन खडा करनका प्रयास किया। वन्त वास्तवमें पंडिताकी चर्चा मडलीमें बवल छान-बीन करनका विषय नहीं है। वह गुफाम पल्थी मारकर सीध बटकर और नाक पकड कर सो जानकी सुविधा कर देनवाला हठयोग नहा है। अिसके विपरीत वेदात अक सावभौम जीवन दान है और जीवनके विषयम जुटनवाले सारे प्रश्न हल करनकी गुरुकुजी (master-key) है—असा स्वामाजीन अनुभवसे देसा और बुसक अनुसार भारतका प्ररणा दी। ब्रह्म-समाज और आय समाजमें भी हमें यही प्ररणा दिखानी पडती है। यही प्ररणा हम अरविन्त धापमें और रवीन्द्रनाथ ठाकुरमें लिखायी दती है। और अिसी प्ररणाके अद्वितीय विस्तारका अनुभव हम अहिंसावादी गाधीजीक समस्त कार्योंमें करते ह।

जन-रसन भी असा ही अक जीवन-न्यापी सावभौम दान है। स्यादवाद की भूमिका पर अहिंसा और तपक साधनस सारी दुनियाका स्वरूप बल्लनकी गकित और अभिलाया जन-दशनमें है अथवा होनी चाहिय। विनागक किनारे पहुचे हुअे जगतका यन्त्र अन्तिम क्षणम बुससे बचना हो ता जुसे स्यादवाद रपी बौद्धिक अहिंसा स्वीकार करनी ही चाहिय समय रूपी नतिक साधनाका जाचरण करना ही चाहिये और तपक द्वारा सबल्पका सामध्य बना कर अपरोक्त साधनाकी पूण तयारी करनी ही चाहिय।

रुचिग्रस्त गारनी और ग्रय-परायण पन्थि दुनियाको यह सदेश नहा द सक्ते कयाकि दुनियामें बुनसे अधिक बुद्धिगाली और कम पामर कितन ही लाग ह।

गर्जड़ और ग्रन्थ-परतत्र बने हुंजे साधु मुनि और आचार्य यह सदा नहीं दे सकते। अमिका कारण यह है कि वे अधिकतर अपने ममाजके, अपने अमानके तथा अिन दानाका पापण करनेवाणी रदियाके अनुमायी हाते हैं। वे पढी हुअी और सुनी हुअी बात कहते ह अनुभव की हुअी बातें गही कहते। अुह सिद्धात्ताके अर्थोका दान भठ ही हुआ हा, लेकिन विगाल और गभीर मानव-जीवनवा दान जुह गावद ही हाता है।

भूतकालका यथाथ रूपमें न समयनेवाले, भविष्य कालको न देख सकनेवाले तथा वतमान कालके सकुचित स्थल और कालमे मर्यादित रहनेवाल आजकलके लखक और मपादक, जानि भूपण और समाज-सुधारक भी यह संदेश नहीं दे सकत, क्याकि अनुकी श्रद्धा अनुके जीवन जमी ही गियिल और छिल्ली हाती है। वे जीवनके विद्यार्थी तो बन सकते ह परन्तु जीवन-वीर नहीं होते। प्रयाग-परायणतामे वे डरते हैं। वे महामागरमें अपना और अपने समाजका जहाज चलानेवाल और जेकमात्र ध्रुवके आधार पर चाहे जमे पानीमें अकुतोभय—पूरी निभयनामे—संचार करनेवाले साहसी नाविक नहा होने।

परन्तु यह संदेश दुनियाक सामने रखा गया है। महावीरकी वाणीके प्रति जिन लागाकी निष्ठा है उनका यह कतम है कि वे अिस संदेशको समने, आचरणमें अुनार और अुसका विस्तार कर। ‘प्रबुद्ध जन जन समाजको और अुसके साथ भारतीय समाजका जगा हुआ दखकर अुसे बठा दे और अुठकर चलनेकी प्रेरणा दे ता कहा जायगा कि अुमने जन-शानको जीवन-दान बना लिया है।

जुम संदेशके मत्र जिन लागाने मुने ह अुम संदेशकी आवाजसे जो लाग अन्वस्य और अगात हुअे ह, असे लागाका अेकत्र करनेवाला स्थान यदि यह ‘प्रबुद्ध जन बन जाय, तो अुसका अस्तित्व सफल होगा।

महावीरका जीवन-संदेश*

आज ससारकी विचित्र स्थिति है। हिंसासे यदि कभी अधिकस अधिक डरते हो तो वे आजक युरोपियन ह। २५ वष पहले प्रथम विश्वयुद्धम हुआ सहार और नागको वे आज भी भूल नहीं ह। बुद्धे भय है कि यदि फिरम युद्धकी ज्वाला भडक बुठी तो हमें अपने सार बमब सारे मौज गौब भोग विनास और अंशवयस हाय धाने पडेंगे। यूरोपका मनुष्य यह सोचकर बाप बुठता है कि आज ससृष्टिके नाम पर जिस बमब विलासका आनद हम भोगते ह यह मुड हान पर नष्ट भ्रष्ट हो जायगा। युद्धको टालनके लिअ वह सब कुछ करनका तयार है। जिसके लिअ वह दिय हुआ वचनाका भग करेगा किये हुआ कौन-कराराको भुला देगा अपमानाका बडवा घूट पी जायगा, अपन साधियाको धागा देगा और कसे भी अत्रिय लोगक साथ मित्रता बाधगा। युद्धका टालनक लिअ वह अपन जीवन सिद्धान्ताको भूसीकी तरह हवाम जुडा देगा। लेकिन अितना सब करनेके बाद भी वह युद्धको टाल नहीं सकगा। अिद्रिय-परायण जीवन भाग विलास वासनायें लोभ भय महत्वाकाक्षा और परस्पर अविश्वास जुसे गातिस बठन नहीं देंग। हिंसासे भयभीत बना हुआ यूरोपका मनुष्य सारी दुनियाका हिंसाकी दीक्षा दे रहा है और मारनकी कलाका विकास करनके लिअ जीवनकी कभी अच्छी गाकितियाको नष्ट कर रहा है। आज वह जिस युद्धको टालना चाहता है बुसी युद्धको जोरासे सीचकर अपन निक्कट ला रहा है।

असी विचित्र परिस्थितियाम आज हम अब बार फिर भगवान महावीरके सदेगको अजबल बनाना चाहते ह।

अस धार्मिक सदेगको ग्रहण करनके लिअ आजकी दुनिया तयार नहीं है। वह गातिका माग तो है किन्तु अस माग पर चलनमें मनुष्यका अभी आनद नहीं आता। पहले वह दूसरे सारे माग जाजमायगा और सब तरहस हारनके बाद ही लाचारीसे अस सच्चे माग पर आयगा।

मनुष्यका यह स्वभाव है कि वह असे अपाया पर विश्वास रखकर बुद्धे पहल आजमाता है जिनमें कौसी सार नहीं होता। आज यूरोपम जो अनेक माग मुझाये जाते ह, उनसे हमें आश्चय होता है। हमार यहांके पुरान लोग जब जब तक और चाय दशन और मीमासाका वातको ले बठत ह और घटत्व तथा पटत्वका और अवच्छेदकाव छद्मका पिष्टपेपण करते ह तब हम उन पर

* ता० १४-९-३९ को बम्बयीमें दिये गय भाषणसे।

हमारे हैं और कहते हैं कि जिनका जीवनक भाग बोझी सम्बन्ध नहीं तत्त्वसे जो सबका दूर है, उसी निरर्थक बानाकी चर्चामें ये लोग क्या पढ़ते होंगे ? हम कहते हैं कि उनका जिन बातोंमें जीवनका स्पर्श करनेवाला थोड़ा भी अंग नहीं होता । यूरोपमें भी जब लोग व्यक्तिवाद और समष्टिवाद समाजवाद और साम्यवादकी चर्चा करते हैं तब मनमें विचार आता है कि जिन अनेक 'वाद' से क्या लाभ होनेवाला है ? मनुष्य जब तक अपने स्वभाव और जीवनमें परिवर्तन न करे तब तक हम कौसी भी 'वाद' (ism) क्या न चलायें, अतमें हम वही आ पढ़ेंगे जहां पहले थे । स्वामी विवेकानन्दने कहा था कि जगतका दुःख सधिवात (गठिया रोग) जैसा है । जूएके लेपसे वह मिटनेवाला नहीं है । सिरसे उसे निकालो तो वह परमें पैठ जाता है । पैरसे उसे निकालो तो वह कंधेमें घुस जाता है । वह अपना स्थान तो बदलता रहगा, लेकिन शरीरको नहीं छोड़ेगा । आप यदि व्यक्तिवादका चलायेंगे तो दुनियाको एक प्रकारका दुःख भोगना पड़ेगा । व्यक्तिवादके स्थान पर यदि आप समष्टिवादको स्वीकार करेंगे, तो पुराने दुःख मिटकर उनके स्थान पर नया दुःख पैदा हो जायेंगे । जगतका टालनेके लिये रातभर जगलमें भटकनेके बाद सबेरे गाड़ी जब रास्त पर आती तो ठीक जगत-नायकें मानने ही । जगतके पैरों तो चुकाने ही पड़े अतमें रातभर जगलमें व्यथ भटक सो अलग । यही दगा आजकी दुनियाकी है । आचार्य जे० पी० जेम्सने ठीक ही कहा है कि आजकी दुनिया सपत्तिका सामाजिक बनाना चाहती है, रायसत्ताको सामाजिक बनाना चाहती है किन्तु मनुष्यका और उसके स्वभावको सामाजिक बनानेकी बात उसे नहीं मूल्य । जब तक यह नहीं जाना तब तक किसी भी 'वाद' की मन्ची स्थापना नहीं होगी और यदि मनुष्यका चरित्र सुधर गया तब तो किसी भी 'वाद' से हमारा काम चल जायेगा । जिसका एक सुन्दर अुदाहरण मैं आपके सामने रखता हूँ ।

गराबकी बुराहीसे सारी दुनिया श्रुत है । अमेरिकाने कानून बनाकर जिस बुराहीका दूर करनेका प्रयत्न किया । जिन लागाने कानून बनानेकी सम्मति दी, कुछ स्वयं गराबवदीकी काजी परवाह नहीं थी । समाजमें प्रतिष्ठा भोगनेवाले बड़े बड़े स्त्री-पुरुष भी खुले आम कानूनका भंग करनेमें बहादुरी मानने लगे और अंत-दुमरक मानने जिस बातकी डाग हावने लगे कि अन्हाने गराबवदीका कानून कैसे तोड़ा है । जिसी गराबवदीका हमारा इतिहास अमेरिकासे मिल है । हमारे देशमें घग्नेवाली सारी ही आत्माके दिलमें गराबके लिये नफरत है । नियमित रूपमें और खुले आम गराब पीनेवाले लोग ना मह स्वीकार करते हैं कि गराब बुरी चीज है । जूमने छूटनेकी गक्ति मले ही उनके नीतर न हो, किन्तु जिसमें काजी अुनकी मन्त्र करे तो व निरिधत रूपसे गराबकी लतने मुक्त होना चाहते हैं । संपूर्ण राष्ट्रका चरित्र गराबवदीक पथमें होनेके कारण हमारे

दोम गरावक दीका कानून बनाना जासान साबित हुआ। कुछ आधुनिक वक्ति वाल निवृत्त लाग गरावक पशमें दलील करत ह सही। एनिन अम लाग ता अनिगिन ही ह। और जुनम स कुछ ता यह बटत भी ह कि हमारा पार्टीकी नीतिन नाते ही हम जसी दलील करत ह।

जम लागकी बात हम छाड नें। मुझे कहता ता यह है कि यदि हम राष्ट्र चरित्रका विकास कर सके ता किता भी वाद की समाज रचनाम हम मनुष्य जातिको सुखी बना सकेंग।

महावीर जस सत पुरपान ससारको यह माग लिखाया है। चरित्र-बल बनाया समय सिद्ध करो वासना-जाको जीता असामाजिक वक्तिपाका नाग करा और राग-दुपम निहित हानताका पहचान कर दानाका हृदयम निवाल फकी ता हिमाका माग अपन आप क्षीण हा जायगा। यदि हिमाका टालना है और बहिमाकी स्थापना करनी है तो कवल राज्यतंत्रका बदलनस यह ध्यम सिद्ध नहा हागा राष्ट्रसघ रचनस यह ममस्या हल नहा होगा। असक लिख ता मनुष्यक स्वभावम सुधार करना हागा समय-रूपी तप करना होगा। यही सच्चा साधना है। काशी पामर मनुष्य यह काय नहा कर सकता। वाहरी श्रुम लना आमान है कि तु भीतरक विकाराका नाग करना कठिन है। असक लिख वीरत्वका आवश्यकता हाती है। महावीरन जपन भीतर अिम गतितका विकाम किया और दुनियाको खुस दिखा लिया।

महावीर स्वभावसे ही प्रयाग वीर थ। बुहान जा जनक प्रयाग क्रिय थ बुन तप करते ह। खुस तपका माग सबक लिख जकसा नहीं हा सकता। प्रत्यक मनुष्यका अपना प्रयोग करना चाहिय और अपना माग साज लना चाहिये। जा मनष्य प्रयोग वीर नहा है वह यदि बिना सोच विचारे महावीरक वचनाक अनुसार बत्रल बाह्य जीवन ही जीवनका प्रयत्न करेगा ता जमे महावीरकी मिद्धि नहा मिन्गी। असक विपरीत जा मनष्य महावीरस प्ररणा लनर और अनक प्रयोगाके रहस्यका समझ कर अनक मुख्य जीवन सिद्धाताक अनुमार अपना जीवन बनानक लिख निजी ढगका स्वतंत्र प्रयत्न करेगा वही महावीरकी परम्पराका माना जाया और भगवान महावीर असीका अपना आमीय जन समथग।

जाज जब ममार अनक लिखियामे "गडुल" हा जटा है तप जिस व्यापन जीवनकी मुख्य अलङ्गनका हल बुनना जरूरी हा गया है। असक लिख महा वीरानी आवश्यकता है प्रयाग-वीरकी आवश्यकता है। असे लाग अपना थद्धा का दू बनानक लिख महावीरक जीवनका समथग और स्वय ही जूब बुढनका प्रयन करेग। महावीरक स्मरण जोर चितनम हम जसी प्ररणा प्राप्त कर और अपन यक्तिगन तथा सामाजिक जावनका जडार कर।

जेनेतर*

जेक वार जेक पुस्तक मरे हायमें आजा। अमुका नाम था 'जेनेतर' दृष्टिमें जन।' जुममें मर नी जा लय थे। अनेक बटे बड लागका पक्तिमें अपना नाम दखकर मुझे अच्छा ता लगा लेकिन विशेष गार ता अमु कि मने यह की जि हम जनेतर ह। जुमक पहलू में अमा कुठ जानता नहीं था।

जितर गद बटे मजेका है। यह गद मने पहले-पहले मुना था बलिजमें पणये जानेवाले तकाश्रममें। मनुष्येतर निज मनुष्य — अमी गाम्बुद्ध तकाश्रम परलु नाममें गुरुका वृद्धि करनेवाली व्याख्यायें तकाश्रममें आती थीं। 'जा मनुष्य नहा है जुमने जा निज है वह मनुष्य है।' त्रिमूर्ति धार्मीक बन्की तरल घुम फिर कर जहाम चलने वहा फिर आना हाता था। तकाश्रमकी भावना बलिजारी है कि जिस प्रकारकी व्याख्यायें दकर वह पानमें वृद्धि करना चाहता है।

जिमक बाद जितर गद मुनेमें आया मद्रामका जारत ब्राह्मणेतर' पशक नाममें। म यह मानता था कि ब्राह्मणेतर लाग हिंदू वा हागे ही। जेक वार म मद्रुगक जेक श्रीसात्री मित्रक घर ठहरा था। म अमुका महमान था त्रिमूर्ति घरक सब लागका गाम्बुद्धार करना पन्ता था। मने जुमने मजाकमें कहा 'गाकाहारी बनकर आप कुछ समयक लिखे ता हिंदू हा हा गये। लेकिन बादमें पना चग कि व वास्तवमें ब्राह्मणेतर पशक माने जात ह। मने यह भा जेना कि वहाक ब्राह्मणेतर पशका नेता भी दूमरा जेक जीगजा ही है। जा मनुष्य ब्राह्मण नहा है वह आमाजा हा या पाग्मी ब्राह्मणेतर क्या नहीं माना जा सकता? तका दृष्टिका जुपयोग करक मने पूछा 'यह टवल ब्राह्मणेतर माना जायगा या नहीं? यह लागटेन भा ब्राह्मणेतर है न

जा लाग हमन निज ह अमुक वारमें कुछ न जानता और अमुक मुयका जेक ही नामक नीच लाना यह मनुष्य-ममाजका पुगना रिवाज है। वदमें भा यह दिवाजा नहा है। जा आय नहीं है वह दास या अनाय है। जिम प्रकार आयेंतराम आयेंस निज मपूय तष्टि या मुक्ता है। जा मनुष्य त्रिमूर्तिमा स्वीकार नहीं करता व मुमन्मानाका दृष्टिमें बाफिर है। जा मनुष्य यदुनी नहा ह अमुके यदुनी लाग 'जेनेतर' मानत ह। 'जेनेतर' मत्र अर्पावत्र और अमुचि

* पत्रपत्र सबक अमुकमें अमुकवातमें आयोजित व्याख्यान मालामें ता० १०-०-० का दिया गया नापक।

माने जाते हैं। जीमाअियाकी दृष्टिमें जो जीमा मसीहकी गरणमें नहीं गया है यह 'हीन' है, भुगत जीवन ही पापमय है। दक्षिण भारतमें लिगापन लाग हात है। व मंदिर नहा बनात लिन निर्वाणका मलमें बांधकर धूमने है। जो लाग अनुकी जातिने नहीं हाने अह व भयो' कहते हैं। भयो माणक अधिचारी तहा होने। व राय भव-भागरक प्रवाहमें व जानवाउ हैं। धीक लागाम भा यही वृत्ति पाजी जाती है। जो लाग धीक नहीं ह व राय असस्वारी बावैरिया है।

जिस सारी मनोरचनाएँ पाछे अक प्रकारका समूह धम है। आप समूहक धमकी मारें, तो आपका अद्वार हागा। समूहको बाहरक गच लाग जदली ग मल अथवा विचित्र है। असा समूह धम अि 'जमसे जाति क गुणका मानन थाल हमारे सनातनियाम हा, ता अुने समझा जा गयता है। यदुनियामें भी अुने समझा जा सकता है। लेकिन जन धममें यह क्या हाना चाहिये' कि भी जनको भी जिस समूह धमकी छूत लगी है। महाराष्ट्रक जा गुण गुणमें ता सनातनियामकी तरह ही रहत थे। व गणपतिकी पूजा करत थे और पुत्राछून भी पालते थे। वास्वक जानवार किसी मुल्लाके मिलने पर जिग प्रवार मुल मानामें धमका जोग पदा हो जाता है असी प्रवार किसी जन पणितक मिलने जीर कहनेसे हमारे यहाक जनाने गणपतिकी अस्तव बनाना छाड लिया। तभी हमें पता चग कि जैन नामका काजी खनन पय है। अूस समय तक हम अितना ही जानते थे कि जा लोग रातमें भोजन नहीं करत और अपने मण्डिमें दूगराको जाने नहीं देते व जन ह। यह जन जीर जनेतरका भेद जनतर दृष्टि जन नामक पुस्तक मर हाथमें आभी अम समय फिरसे ताजा हा गया।

सामायत धम दो प्रकारके होत ह सामाजिक धम और माणधम। सामाजिक धममें अिह्लाक जीर परलाकका विचार ता हाता है किनु माणका अितना आपह नहीं होता—अुतावली तो हाती ही नहा। सनातनियाम कव सयास धममें ही मोक्षकी अुत्कठा लिखाभी दती है। बाकी सबको भुनि (भाग) भी चाहिये जीर यथासमय भुनि (भाग) भी चाहिये। सनातनी लाग दूगराको अपने धममें निमंत्रित नहा करत पारसो भी नहा करते और यदुना ना नहीं करते। लेकिन जिन लागाका मो तदा निर्वाणका अथवा कवत्यका माग मिल गया है अह तो सभीका निमंत्रित करना चाहिये। अनुके यहा सत्रवा स्वागत होना ही चाहिये। किसी धमकी दीक्षा मिलन पर ही वास्तवमें मनुष्य अम धमका अनुयायी माना जा सकता है। जिस धममें सबका स्वागत होना है जसमें अस्पृश्यताके लिये काओ स्थान नहीं हा सकता। अिस्लाममें अस्पृश्यता नहा है। जीसाजियामें नहीं है बौद्धामें भा नहीं है। जनामें भी नहीं हो सकती। लकिन निरीक्षण करनसे पता चलता है कि सनातन धमका असर जना पर भी हा गया है। मुसलमाना और जीमाअियाको भी जिस बुराअीकी छूत लग गयी है।

सिधमें अेक मुसलमानसे मेरी बात हो रही थी । अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करनेके लिये हिंदुआके अनेक दोष दिखाकर अतमें अुसने मुझसे कहा “म ता हिंदुआके हाथका पानी भी नहीं पीता । ’ अुसकी बात चुपचाप मुन लेनेके बाद मने कहा तब तो हिंदू धमकी विजय ही हुआ न ? सनातनियोंमें यह रिवाज है कि वे अपनेस नीची कक्षाके लोगाके हाथका पानी नहीं पीते । जिस बातको आप जिस हद तक स्वीकार करे अुस ह तक आप हिन्दू हो गये । मुझे आप नीची कक्षाका आदमी भले कहें, लकिन यह अूच-नीचका भेद तो हिंदू कसौटीमें ही मापा जायगा न ? और अेक बार आपने हिन्दू कसौटी स्वीकार की फिर तो अूचा कौन और नीचा कौन यह अपने आप सिद्ध हो जायगा । ”

मजाककी बातको छोडकर मैं कहूंगा कि जनाको जिस अूच-नीच भेद तथा जिस अस्पृश्यताको अपने समाजमें नहीं घुसने दना चाहिये था । मेरी दृष्टिमें ता जो अस्पृश्यतामें विश्वास रखता है वह जातिसे भले ही जन हा लकिन वास्तवमें जनेतर ही है । मोक्षधममें अस्पृश्यता कसे हो सकती है ? जो मनुष्य अुत्साह-पूर्वक आत्माका विकास करना चाहे, कवल आत्माके कल्याणकी दृष्टिसे हा जीये, वह जन है । दूसराक प्रति जनूनी होनेके बजाय स्वय अपने प्रति जनूनी होना और तपोमय जीवन व्यतीत करना नितना अुत्तम है । सनातनियाने अेक आसान रास्ता खोज निकाला है । जो लोग मोक्षक लिये आतुर ह अुन्हाके लिये अुसने माक्षधम रख छाडा है । सयास धमकी दीक्षा लकर यदि काअी अुसक पालनमें सिधिलना दिखाये तो सब काअी अुसे धिक्कारते ह । मोक्षकी लगन न हो तो काअी सयासी बनेगा ही क्यों ? मैं तो मानता हू कि जिसे मोक्षकी, कवल्य-पदकी लगन लगी है वही जन है । काकीके सब लोग जनेतर हैं । अुह सनातनी भले ही कह लीजिये । सनातनियामें सबके लिये स्थान है । समूह धमकी कसौटीका सामने रखकर यदि जन और जनेतरका भेद हम कर तब तो जन धम टिक ही नहीं सकता ।

अेक बार म नागपुरकी ओर रामटेककी पहाडी देखने गया था । अुसकी तलहटीमें अेक जैन-मदिर है । अुस मदिरके पास धन-दोलत हागी, अत अुमकी रक्षाके लिये सिपाही बडूक, तलवार सब कुछ रखा गया था । म तो वह मत्र देखकर दग रह गया । मने पूछा ‘ क्या यह गावत मदिर है ? यहां म दुगापाठ कर ? ’ मद्रिके पुजारियाने मुझसे कहा ‘ नहीं, नहीं यह तो जैन मदिर ह । ’ मेरी बात वे शेष समझे नहीं, और अुमकी बात मैं नहीं समया । म बहास गैट आया । मनमें विचार अुठा जहा धनका सग्रह है और अुमकी रक्षाक लिये जहा राज्यसत्ताकी सहायता ली जाती है जहा हिंसाक हथियार खुले तौर पर रखे जाते हैं वहा जैन धम कसे हो सकता है ? आखिर समूह धमन जन धम पर विजय प्राप्त कर ली है । आत्माको भूल जानेके बाद और अनात्माका अूचा माननक बाद छोटे-छोटे आचाराका पालन किया तो भी क्या और न किया तो भी क्या ?

आज तिनका अणुपाण हृदय मुद्रिक लिअ किया जाना चाहिये। हृदय मुद्रि ता हागी तब होगी लरिन हम विचार मुद्रि ता कर ल। जा मनुष्य जात्मा जीर जनामाका बिसेर नहीं करता जा मनुष्य बवल आत्माका ही पट्टचानन जीर अुसका रणा परनका प्रयत्न नहीं करता वह पामिव नहीं है। अन्त्यामम अक सिद्धान्तका बड जागग अणुण विता गया है। अीचर अक * अन्तीय है जुमन साथ विभी दूगर मनुष्यका या पणपका मिलाया नह जा मरता गरीब नहा किया जा सकता यह अिस्लामका अक महान गिद्वार है। अीचरस साथ दूमरे निसीको मिलानक गुनाहना गिब कहा जाता है। जा मनुष्य गिबका गुनाह करता है व मगरिव है—बाफिर है। अिस्लामका पट सिद्धान्त मुझे अच्छा लगता है। हम अपनी परिभाषायें अित सिद्धान्तका विचार कर। जनर्यामी परमात्मा ही हमारी गुड आत्मा है। जन साथ हम अनात्माका मिला दें ता यह गिब'का गुनाह हागा। जा मनुष्य बवल जात्मान प्रति ही सच्चा है आत्माकी अुप्रतिके लिअ ही जीता है अनात्माका माट्टजालम नहा पमता बहा जन है। बाकीके सब लोग जनतर ह। अित गड्ड निचारकी दृष्टिम क्या हम मभी जनतर नहीं ह? कौन आत्म-नरापण है और कौन नहा है यह ता मनुष्यका अपना अतर ही अुससे कह सकता है। बाहरी जीवनसे ता लगता है कि म भी जनतर ह जीर जाप लोग भी जनतर ह। फिर भी यन् अित समाजमें कौभी जन हो तो अुस भेरे हजार हजार प्रणा ।

३६

गायके साथ मधुमखली

बलामें गायका अ या कहा गया है। मारे पणुआस गायका अल मानकर बलकामें ही यह नियम बना लिया गया था कि गायका कभी नहीं मारना चाहिये। गायका दूध अत्यत पीष्टिक गुपाच्य और निर्दोष आहार है। अुमना दूध मित्तक वाट ही मनुष्यका मासालार कम करनकी बात सूझी। दूधकी प्राप्ति न हुअी होनी तो मासाहार छोडना मनष्यक लिअ कटिन हा गया हाता। गाय-बलको जगत्से लाकर मनष्यन जुट अपन पारिवारिक जीवनम स्थान लिया। गायन दूध देकर और बलन हल खीचकर मनष्यक आहारम बहुत बडी क्राति कर दा। हलकी मल्लस मनष्यन खती गरु की और अनाजका अुत्पादन बनाया। गायको पालकर मनुष्यन असे भयमुक्त बनाया और विणप सुराक पिला कर अुमना दूध बनाया। अिस प्रकार गाय और बलन अपनी सेवासे मानवके लिअ आहारके विषयमें अहिंसा धमकी सभावना पदा की। जगली गायको गावका

पशु बनानेके लिये मनुष्यका हजारों वष तन प्रयत्न करना पडा हागा। गाय, बैल, घाटा, गधा, झूट हाथी—अिन सब पशुआका मनुष्यने जब पाशु' बनाया अुत समय मानव-ससृति जेकदम अूची जुठ गयी।

अब जेन कदम और आगे बढानेका अवसर जाया। घामका दूध बनानेका काम गाय करती है। अर घामके फूलामें जा बिदुमान अमन रम रहता है अर अिने अेकत्र करके अुपयागमें लेनेका काम मानवक लिये अमभव है जुन सन बिदुआका जेकत्र करके जुनका गहद बनानेका काम मधुमक्खियाका गहा ह। मधुमक्खियाका मार कर या अंग कर अुनके छतको लूटनेका काम मनुष्य-जातिने जीवनके आरभस ही किया है। गहद जमा स्वादिष्ट जीन मुन्दर वस्तुका मनुष्य कमे छाड ससता है? लेकिन अितनी महनत करके गहद लाने-वाला मधुमक्खियाको मार डालना, अुनके अडा-बच्चाका नाग करना और गहदक साथ अुनक अवाका भी निचाड लेना अत्यत क्रूर मूखनापूण गदा आर महगा काम है। आज भी हमार दामें यह प्रथा चाडू है। परंतु अब अुममें अहिमक परिवतन हा रहा है। मधुमक्खियाकी अमुक जातिने समूहका पकड कर अुनिम घरामें (छतामें) रखना अुनक लिये आवस्यक खान-पानकी व्यवस्था करना अर अुनक लिये तथा जुनके बच्चाके लिये अहरी गहद रख लेनेके बाद बचा हुआ गहद अपने अुपयागमें लेना—यह मानव-ससृतिका प्रगति-सूचन कर्म है। गहद मनुष्यके लिये अत्यत अचिकर गमप्रद और मुन्दर आहार है। यदि हम मधुमक्खियाका पाल सके ता कहा जायगा कि हमने गारक्षाके बाद मानव-ससृतिक विकासका अगला काम अुठाया है। अिन मधुमक्खियाका पालनेका खच बहुत हा कम आता है। जुनक स्वभावका पहचाननेमें आनन्द आता है और अिस घ-घेम कमाअी तो घाक घ-प्रेम भा ज्यादा होनी है। गाय और मधुमक्खियाके पालनका घ-प्रा अहिमावानियाके लिये कवल लाभकारी ही नहा परंतु जीवनमें अहिमाकी नजा दिगा सूचित करनेवाला और धम-शरायण बनानेवाला मिद्ध हागा।

गहद अिकटठा करनेमें हिमा होती है, अिनना जानकर जैनेने यह निश्चिन कर दिया कि हर तरहका गहद निषिद्ध आहार है। यह निश्चय अुम समयके लिये ठीक रहा हागा। लेकिन हमें धमगासथाको जीवन बनाये रखनकी जरूरतकी समसभा चाहिये। यदि गहद न खाये तो हम मधुमक्खियाको भारतकी हिगामे बच जाने हैं। लेकिन मनुष्य-जाति मधुमक्खियाका छोलेवाली नहीं ह। और यदि मानवनापूण ढगसे हम मधुमक्खियाका पालन नहीं करेंगे ता मधुमक्खियाकी जगली ढगकी हिमा टलेगी नहा। अत जनाको अपने शास्त्रामें बद्धि करनी चाहिये। अुहें शास्त्रामें यह वचन जाड देना चाहिये कि न केवल मधुमक्खियाका पाशुकर अहिसक ढगसे अेकत्र किया हुआ गहद निषिद्ध नहीं है बल्कि अुतका सेवन करनेमें लाभ है और पुण्य भी है।

जाता है। यह अष्ट मागकी माधना है। अतः वात हम ममता का अंगारा माग हमारी समझ आ जायगा। भाग तोषकर हम अवश्य कहें कि अयोग्यता मना दान भी अयोग्य ही है। यही ममाने अगर हम प्रायः १०० का नाम असे पात हाना ही पडगा। अणु पविता वद्वि स्वयमभ्यासमपि — १०० रत्न म्यानम पदा हूभी आग अने आप वृत्त जाती है।

आज हम अहिंसक वाचकत्व ह। अहिंसक विचार विचार वही धीरे धीरे अबूट गाहकरी जफरत ह। माग का है। ममाने अहिंसक विचार वाचकत्व आरम्भ है। अहिंसक विचार जनक महापुरुष चायग आग माग विचारग।

कदाचित् हमारा राग पवाप्त नहा होगा। जग धनक का जमा ही गप है वहा जगता वाचक विचारग पाप है — हिंसा है। अहिंसक वाचकत्व मप्रदायक राग अहिंसक ही धनी भी है। भागम जन राग अहिंसक हाथ मकारण दावा करत ह फिर भी व धनाप्य ह। डाक विना धन नहा मित्ता। अहिंसक मरी ममजम नहा आता कि अहिंसा और धनका मल का बट मरता है। आप चाटियाक करव सामन आटा डालें रात्रि भाजन न कर आता न मारें — यह सब ता अछा है। परन्तु यह आरम्भकी क्रिया है। हमें ता अहिंसा मममें आग बढ़ना है। जगतमें जब मड का रण हो तब हम पात कम बट मरत ह? हमें तुम राकतका माग राजना चाहिये। हमारे विचारामें पश्चिमकी वाचकत्वना है। कभी राग कहत ह कि युद्ध ता मुरामें उठा जा रहा है हमारे देशमें तो गाधीजीके प्रतापम सब ठीक चर रहा है। अहिंसक वाचकत्व हू कि हमारे देशमें प्रत्येक प्राणम भीतर ही भीतर फट फटि हुआ है हर जग अविश्वास फट हुआ है। म सब हिंसाक हा प्रतीक ह। मुरामें पास अन्ध राक्ष ह अहिंसक वहाके लोग मड करत ह। हम अन्ध-दूसरक पर लीचकर अन्ध-दूसरको नीचे गिराने ह। वसिम तो दोना जेकसे ही ह। वहा समझारी मन्धाधारी विज्ञा चलती है, महा असमझीकी अविश्वास द्वय निद्रा और दोह मूलक हिंसा।

अहिंसक वाचकत्व के बल पक्षक द्वारा अनाय दूर कराना और अनाय करवाल्को अपना बनाकर सुखी गडिका प्रयत्न करना — अहिंसक प्रचारकी अहिंसक माधनाका विकास विचारपूर्वक अभी तक हमन नही किया है।

सरकार अनायक विरुद्ध सत्य विचार करतक बजाय सत्याग्रह करनकी अहिंसक साधना हमार जमानमें गाधीजान हा बनाआ है। राक्षके विरुद्ध किय जानेवाल पुराने 'त्रागा (घरना) या अम ही दूसरे विद्राहमें अहिंसा नहा थी। गायद असा कहा जा सकता है कि अंसमें अहिंसक पद्धतिके बीज थ।

राष्ट्रके बीज जा मड लगे जाते ह जूनक बजाय चण्डी करनवाले गधुका अहिंसक पद्धतिके प्रतिकार कमे किया जाय यह माचन या मुझानेवा मीका गाधीजीको भी नहा मिला है।

अमेरिकामें या अफ्रीकामें गोरे लोग काले लोग पर जो जुल्म ढाते हैं, अुह दूर करनेका अहिंसक माग दिखानेकी जिम्मेदारी अहिंसाके अुपासका और आचार्योंकी है। परंतु आज तो ये लोग शास्त्र-वचनाकी व्याख्या करनेमें और परम्परागत मागसे अपने तप या प्रतिष्ठाको बढ़ानेमें ही मगगूल हैं।

आज दुनियामें बढीसे बढी हिंसा शोषणकी चल रही है। दूसराकी कठिन परिस्थितियाका लाभ अुठाकर अुनकी सेवाआका दुस्प्रयोग करना और अुन पर अुनुचित अत्याचार करना अघात अुनके जीवनका शोषण करना बहुत बढी हिंसा है। जिस तरहकी हिंसा परिवारामें भी चलती है। जमीदार और कास्तकार, खेतमें काम करनेवाले मजदूरके मालिक और खेतीहर मजदूर कारखानेगर और कारखानेके मजदूर, अुच्च वर्गके लोग और श्रमजीवी लोग—जिन सबके सम्बन्धामें शोषणकी, दबावकी और जुल्माकी हिंसा सतत चल ही करती है। ग्राहकार मनमाना व्याज लेकर कजदारका चूसता है यह भी हिंसा ही है।

अन समाज तथा अन साधुआ और आचार्योंको यह साधना चाहिये कि जिस सारी हिंसाका सामना कैसे किया जाय और जिस दृष्टिसे समाज-जीवनका परिवर्तन करनेके लिये कौनसे कदम अुठाये जाने चाहिये।

अब हमारा समाज धमप्राण था अुस समय हमारे धमाचार तत्कालीन विज्ञानकी मददसे साहसपूर्वक जीवन-परिवर्तन करनेमें हिचकिचाते नहा थे और समाजकी पुरानी रूढ़ियाका विरोध करनेमें भी डरत नहीं थे।

गरीर शुद्धिके लिये पथगव्यमें गोमूत्रका भी प्राण करनेकी प्रथाके पीछे वनानिक साहस स्पष्ट दिखायी देता है। पानीमें भूम कीटाणु होने हैं जिसलिये पानीको गरम करने और अुसे तुरन्त ठडा करनेकी आ प्रथा जनाने चलायी अुनमें आजके डॉक्टरों आग्रहमें कम हिम्मत नही थी। अन साधुआका बेग-लुचन तथा मुम पर बाधी जानेवाली 'मुहपत्ती' भी सामाजिक शिष्टाचारकी परवाह न करके अेक प्रकारके विज्ञानसे छिपटे रहनेकी हिम्मतका ही प्रतीक है। बहुवीज वनस्पति न खाना रात्रि भोजन न करना अित्यादि सुधारका प्रचार जिन आचार्यों और साधुआने किया, वे आजके जमानेमें विज्ञानका अनुसरण करके यदि चिंतन कर और नये आधारका प्रचार कर तो काशी यह नहा कह सकेगा कि आजके जैन आचार्य धम-परायण न रहकर रूढ़ि-परायण हो गये हैं और आजके जन साधु अघ-परम्पराका निष्प्राण जीवन जीत हैं।

जो चीज बुरी मानी जाती है वह कितनी ही सुखकर, प्रिय अथवा प्रतिष्ठित क्या न हो, तो भी अुमका त्याग करनेके लिये तयार होना और अद्यतन विज्ञान तथा धममान आज जो नयी दृष्टि प्रदान करें अुसका अनुसरण करनेके लिये तयार हाना जीवत और प्राणवान रहनेका लक्षण है। जो व्यक्ति जीवन पर विजय प्राप्त करता है वह जिनेश्वर है। अब असे अनेक जिनेश्वर अुत्पन्न

हान चाहिये। उनके आनेकी हम तयारी कर और उनके स्वागतके लिये लोक-मानस तयार कर।

३८

राजचन्द्र-जयती *

१

आज हम अक गानी और तपस्वी पुरुषकी जयती मनातके लिये यहा अकत्र हुआ ह। श्रीमद् राजचन्द्रका समय हमारा ही समय है। वे यदि जीवित रहते ता आज ६४ वषक हाने। मनुष्यकी सामान्य आयुका विचार कर तो जिह आज प्रत्यक्ष जीवित दपनका हमारा अधिकार था अनकी मृत्युको ३३ वष ही जानना बुलान हमें करना पड रहा है यह हमारे देगकी जयाति हमारी जनताकी दुगतिका सूचक है। सौ वषकी आयु मागतवाले हमारे पूवजान यह भी पहलस कह गिया है अतिगीर्षे जीविते को रमत? बहुत लम्ब जीवनम क्या स्वाद है? मूर्त ज्वलित श्रय न च धूम्रायिन चिरम्। घडी भर ज्योति जलाकर बुझ जाना अछा है क्यों तक धयुवाने रहना अच्छा नहीं। किन्तु यह ता वैवज आस्वासन-की बात है। सपूण पुरप १०० वष तक क्या न जिय? श्री रामचद्र और श्रीरुष्णा महानीर और बद्ध कम नहीं जिय थ परन्तु हमारे भाग्यमें तो शकरा चाय अपवा तानस्वर जसे ३०-३५ वषके भीतर ही अपनी जीवन-लीला समाप्त करतवाल धार्मिक पुरुषाकी सग्या आनी है। स्वामी विवेकानन्द चालीस वष भी पूरे न कर सके।

आजके दिन राजचन्द्र विषयमें वीरनका अधिकार अही लोगका है जिहान थाम राजचन्द्रको स्वय दत्ता हो अनमे वाप प्राप्त किया हा तथा उनक तपस्वी जीवनद प्ररणा प्रण की हा। और जये त्राग बहुत ह। लकिन श्री पूजा-भाभीन राजचन्द्र-जयतीका भाग आज मेर निर पर डाल गिया है। उनने अिस आप्टरा में अनुग्रह रूपमें स्वागत करता ह। राजचन्द्र कविको मने देता नहा था। व जाकि थ अम समय मन मजगतका लान भा नहीं किया था। उनक सारमें ५ आना ता अक प्रति आरपित होना था नहा अिम वारेमें भी मुन मन् ५। जम समय तो मर मनमें जिम गकारा अण्य हा रहा था कि धम, ताति मगवार आन्विकी गू कपनाआता किन ह तत्र पागन करता चाहिये।

* ता० १ - १ - १ का थान्द राजचन्द्र जयताम अकवर पर अध्ययन पत्रस लिना स्या भण्ण।

अनुभवके बिना प्रचलित बानाका स्वीकार करनेके लिये मेरा मन तैयार नहीं होता था। अममय मनमें इस प्रकारकी वृत्ति स्फुरित होनी थी कि हर बातकी स्वयं जांच करनी चाहिये अनुभवमे हर बानकी छाननी करनी चाहिये और जुड़ते रास्ते जानेकी भी हिम्मत करनी चाहिये। सबसे पहले मने श्रीमद राजचंद्रके विषयमे गांधीजीके मुहस सुना था। १९१६के अरमेमें आश्रमकी प्राथनामें श्रीमद राजचंद्रके वचन पठे जाने थे। गांधीजी अनुका अय करके हमें समझाते थे। मूठ गुजराती मे समझना नहीं था, अुसमें भी कविकी भाषा जन पारिभाषिक गठ्नामे भरी होती थी, जिसलिये गांधीजी अपने विवेचनमें जितना कहते थे अतना हा समझमें आता था। गांधीजी जिस पुरुषको महापुरुष मानते ह, रस्किन और टाल्स्टायसे भी बड़ा समझते ह, अुस पुरुषकी विभूति असाधारण होनी चाहिये, यह साचकर मने श्रीमद राजचंद्रके पद्य और पत्र पढ़ना गुरु किया। पद्यमें तो मेरा चंचु प्रवेश भी नहीं हो सका। बीच-बीचमे कोसी रत्न जसा सुभाषित हाथ लग जाता, तो मनको आनंद होता था। अुनके पत्र ही मुझे विशेष आकषक लगे। पत्र साहित्य सदा ही आकषक लगता है क्यकि वह व्यक्तिगन सभाषण जसा पवित्र हाता है, अुसमें अेक हृदय दूसरे हृदयसे बातें करता है। और जब कोसी अुन्न हृदय मोक्षाया हाकर सच्चे लक-कल्याणकी भावनासे 'हित-काम्यया' अय हृदयाक साथ बातें करता है, तब तो अिन पत्रामें आध्यात्मिक भाव अितन स्वाभाविक रूपमे खिलता है कि कभी कभी ये पत्र दीक्षाकी गरज पूरी करते ह।

राजचंद्र-जयती पर गांधीजीने जो अुद्गार प्रकट किये थे वे स्वाभाविक थे। अुह मने अनेक बार पढा है और अुनका मनन भी किया है। लेकिन राजचंद्रके भक्त जब हर अगह अिन अुद्गाराको अिस तरह अुद्धत करते हैं मानो वे राजचंद्रको गांधीजी द्वारा दिये गये प्रमाण-पत्र हा, तब मुझे जरा विचित्र लगता है। अुपनिषदाके विषयमे गापेनहारके अुद्गार और शानुतलके विषयमें जमन कवि गटेके अुद्गार जग विश्वात ह। परनु हर अवसर पर जब अुह अचूक रूपमें अुद्धत किया जाता है ता अुनका अलग ही असर होता है।

रस्किन और टाल्स्टाय आध्यात्मिक वृत्तिक पुरुष थे। आज लोग अुनका आदर करते ह अुनके माहियके कारण। परनु यह साहित्य अुनके अुदात्त जीवनमे अुपन हुआ था। राजचंद्रक प्रति गांधीजीकी जा भक्ति है, वह राजचंद्रक साहित्यकी अपक्षा अुनके पारमार्थिक जीवनके प्रति अधिक होनी चाहिये। रस्किनकी जीवन साधनाके बारेमें अधिक कुठ कहने जसा है ही नहीं। टाल्स्टायका जीवन साधना अवश्य ही आकषक है परनु अुसमे जहा तहा दुबलता और गामद धम-अधमके निणयके बारेमें अुलचन भी दिखायी पडती है। धम विचिकित्ता तथा वृत्ति विचिकित्ताका निणय करते समय वे परेगानी

जीवन-ध्ववस्था

महसूस करते हैं। राजचंद्र अपनी जीवन साधनामें तेजीसे आग बन्ते सिन्नात्री देते ह। जितना कुछ जानें भुतनकी जीवनमें भुतारनका आग्रह — यह भारतवपके सच्चे जीवनकी कसौटी है। अिस कसौटीकी ध्यानम रखकर ही अेक वार स्वामी अभेदान दन कहा था कि अमरिकामें अक ही अमसन पदा हुआ लकिन भारतमें तो दस दस बौस पर अक अक अमसन बठा है।

धार्मिक जीवनके इतिहासकी जाच करनसे हमें पता चलता है कि कुछ विशप लोग ही अनुभव परायण होते ह आम जनता ता श्रुति-परायण ही रहती है। शास्त्राने लिखा है पूवजान माना है बुजुग कहते आग ह अिसी कारणस अमुक मापतायें मजूर रखना अमुज रिवाज पालना और अमुज समुदायम रहना मानवके लिअे आसान और स्वाभाविक होता है। साधना साक्षात्कार और मोक्ष चाहे जितन सामाय और रोचक शान ही परतु वे साधारण मानवके लिअे नहीं होते। जो लोग शास्त्राको स्वीकार करते ह वे और आजकल जो लोग शास्त्राको स्वीकार नहीं करते वे भी अधिकतर रुद्धिग्रस्त ही होने ह। जो लोग शास्त्राको स्वीकार करते ह व परम्पराकी वजहसे अुह स्वीकार करते ह और जो लोग शास्त्रासे अिनकार करते ह वे अधिकतर अक नअी फान तथा बौद्धिक सहूलियत अयवा सरलताकी दसकर असा करते ह। अिन दोनाना जीवन बिल्कुल छिउग तो नहीं होता परतु अिह प्रयोग वीर नहीं कहा जा सकता। शास्त्राम मूल महत्वकी जा बातें लिखी ह उनका प्रयोग और अनुभव किये बिना रहा ही नहीं जा सकता अिस तरहका आग्रह रखनवाल जो थोडसे लोग होते ह व ही वास्तवम धमके विषयमें जीवत कहे जायग।

श्रीमन् राजचंद्र अिसी कोटिक पुरुष मान जायग। उनकी रचनाआसे स्पष्ट होता है कि उनमें वचपनस ही धार्मिक जीवन जीवनका आग्रह था उनका मनोमयन सतत चला ही करता था। जनका यह विश्वास था कि अक प्रयाग वीरके नाते अपने प्रयोगाकी रिपोट समय समय पर अपने मित्रोको तथा सह धर्मियोको त्रेक लिअे वे वध हुआ है। अिसलिअे राजचंद्रके पत्राम अनक वार उनके सम्बपमें अुल्लख आता है।

अध्यामशास्त्रके अनुभव विविध प्रकारक होते ह और बहुत वार व अकागी भी होते हैं। गुद भावसे अपन हून्यकी जाच करनस मनुष्यको अपने दोषा और विकाराका पता चल जाता है अिसलिअे जब अिस जाचक फलस्वस्व जुस मानूम होता है कि साधनाक अनुपातमें अुमकी प्रगति नहीं हुआ है ता वह अपनी अयाग्यताका पूरी तरह स्वीकार कर लता है। दूमरी ओर जहा विकाराक खिलाफ महान सधप अनिवाय होनका भय रहता है वहा अुहे आसानीस पार कर लने पर मनुष्यको स्वामाविक रूपमें असा लगता है कि म मजिलके नजदीक

पहुँच गया है। जो मनुष्य अक्ल साधना करनेवाला है, उसे आत्माका सतत भान रहना ही चाहिये।

आत्माका भान भौतिक विज्ञानकी जानकारीका तरह तटस्थ नहीं रह सकता। उसका सार जीवन पर प्रभाव पड़ता है। आत्माका भान ही हमारा यथाय जीवन है। अन्तर्मुखी मनन तथा अक्ल जागृति अथ अलौकिक रसायन (कीमिया) है। जिस मनुष्यमें आत्माका भान जाग्रत है, विद्यमान है अन्तर्मुखी जीवनका नियंत्रण देवता ही देखते बड़ जाना चाहिये। निश्चयकी गति ता अन्तर्मुखी सदा मिलनी ही चाहिये। अतः जीवनको आत्म-स्वीकृतिया अथ्यात्म-शास्त्रका आधार हानी है। अथ्यात्म-शास्त्रके व्यापक सिद्धान्त अथी प्रामाणिक आत्म-स्वीकृतियाका आधार पर ही बनाये हुए होने हैं। शास्त्रका अर्थ करनेकी अन्तिम कुञ्जी ये आत्म-स्वीकृतिया ही हाती हैं। धर्मकी जागृति अन्तर्मुखी असे धार्मिक पुरुषा द्वारा किये जानेवाले जीवन प्रयोग पर ही निर्भर करती है।

जिस प्रकार काशी जीहरी अन्तर्मुखी सभी हुञ्जी आत्मसे हाथके कीमती हीरेके सारे पहलुआका निराक्षण-परीक्षण करता है, अन्तर्मुखी प्रकाश ध्यानकी ओर प्रकाश-वीर मनुष्य जीवनक सारे पहलुआका प्रथम जीवनमें अथवा 'scientific imagination'—वैज्ञानिक कल्पनामें अथवा ध्यानमें दखता है अन्तर्मुखी कीमती करता है और अन्तर्मुखी मूल्य आकता है। जीवनके विस्तार और गहराईका अन्तर्मुखी दान जितना अधिक हागा अन्तर्मुखी ही अन्तर्मुखी ध्यान, निरीक्षण और परीक्षण अचूक हागा। कवि राजचन्द्रकी रचनाओंमें आरम्भसे ही जीवनके अन्तर्मुखी पहलुआ पर नजर डालनेकी जीहरी-वृत्ति दिशाओ देती है। आगे चलकर अन्तर्मुखी दृष्टि अधिकाधिक अन्तर्मुखी बनी हुञ्जी मातृम होती है और तबसे भावनात्मक सिद्धान्त प्रतिपादन करनेकी ओर अन्तर्मुखी रुचि अधिक दिशाओ देती है। मनुष्यको जब समग्र जीवनकी कुञ्जी मिल जाती है तब वह अपने आन्तर्मुखी अन्तर्मुखी ही ध्यानको बार-बार अन्तर्मुखी प्रकारसे कहता रहता है। यह प्रभाव भी हम कविकी रचनाओंमें देखते हैं। अन्तर्मुखी राजचन्द्रका कविपद विज्ञान अन्तर्मुखी साधक हाता है। कविका अर्थ है अनुभवकी, कविका अर्थ है विजयी, कविका अर्थ है अन्तर्मुखी, कविका अर्थ है वह व्यक्ति जिसे जीवनके सारे महत्वपूर्ण प्रश्नोंका हल मिल गया है।

जिन लोगोंकी दान-शास्त्रमें अन्तर्मुखी नहीं है अन्तर्मुखी प्रति अन्तर्मुखी अर्थ है, व अन्तर्मुखी लम्बे समय तक अन्तर्मुखी राजचन्द्रकी रचनाओंका आनन्द नहीं ले सकेंगे। परन्तु राजचन्द्रकी पारमात्मिकता, जीवनक तत्वाको अन्तर्मुखी अन्तर्मुखी और जीवनके सत्यका सरल बनानेका आग्रह—ये तीन बातें अन्तर्मुखी अन्तर्मुखी विना नहा रहेंगी।

आम-सयमके माथ अहिमा — यह भी कवि राजचंद्रके अचल विश्वासका एक विषय था। अहिमाका अर्थ कितना व्यापक है यह गांधीजीने हमें बताया है। अब यह बात भी हमारी समझमें आती है कि ब्रह्मचर्यमें भी अहिमा ही समाग्री हुआ है। यह अहिमा कायरका घम नहीं परन्तु गूर-वीरका घम है, यह समझनेकी बड़ी आवश्यकता है। प्रत्येक फिजिमफीक दा परस्पर विराधी अुपयाग होने ह। यह दुनिया फानी है जगन नवर है हमारे साथ कुठ भी आनेवाला नहीं है — यह सनातन मत्य विराटमे विराट अनुभव पर रचा हुआ है। अिम मत्यका आधार लेकर अेक मनुष्य कह सकता है कि तब तो अिस नवर जगनमें स्वराज्य और स्वातन्त्र्य सब व्यथ है। दग और देगकी दौलत सगे मन्वधी और अुनका सुख-मताप समी कुठ फानी है। जा जानेवाग है और अिनलिअे जिसकी कीमत कौडीकी भी नहा है जुमके लिअे लडनेमें आघ्या अिक साधनाके लिअे अुपयागी गरीरको खनरेमें टालनेमें और अिम दगकी दौलत पर लोभकी नजर डालकर अुमे अपने अधिकारमें रखनेवाल पामर लागको दुग्नी करनमें क्या लाभ है? दूसरा मनुष्य दुनियाके फानी हानेकी दलीलको ही सामने रखकर मनम मावेगा घन-दौन और जमीन जायदाद ता क्या हमारा यह प्यारा शरीर भी फानी है। तब अिजतर लिअे अहिक मानक लिअे लडनेका गरीरका बलिदान करनेका परम अहिमा घम हम क्या चूकें? गरीरको हम बचावेंगे भी तो आविर बह कहा तक टिकगा? बाल-बच्चाक लिअे घन-दौन रखकर हम अुनका कौनसा बन्धाण करेंगे? गरीब समर्थे या न समर्थे, अुनक अनानका या अुनकी निपम स्थितिका लाभ अुठानेमें स्पष्ट और भयानक हिमा है। अिसके बजाय गरीबको मुखी करनेके लिअे, अुनके हृदयका जन्मको दूर करके जुह आत्मिक सताप देनेके लिअे हम श्रमका जावन क्या ा पमल कर? और देगका स्वातन्त्र्य — सामाजिक मोक्षकी पहणी मखिल — सिद्ध करनेमें यदि अिम फाना गरीरका अुपयाग हो ता अनिय द्रव्यसे नित्य वस्तु प्राप्त करनेका परम लाभ होगा। यह लाभ अहिमा घमका अुत्तम फल है।

‘अिस फन्की सिद्धिके लिअे हम श्रीमद राजचंद्रकी निष्ठासे सतत प्रयत्न कर।

जीवन-व्यवस्था

तीसरा खण्ड

आस्तिक्य

ओश्वरकी कृपा

[अेक प्रवचन]

दीनन दुखहरन देव, सतन हितकारी ।'

ओश्वरके नाम अनन ह, परन्तु जीश्वरकी यदि अनमें सबसे प्रिय काजी राम हा ती वह 'दीनन दुखहरन' ही होगा 'सतन हितकारी' ही होगा। दीन जनाका दुख दूर करनेमें ही परमात्माका आनंद हाता है। जिन प्रकार माताका अपने बच्चाकी सेवाम सारा समय वितानेमें, अनकी सेवामें स्वयका मूख जानमें ही आनंद आता है असा प्रकार परमात्मा सदा मनाके हितमें लगे रहनेमें हा प्रमत्तना अनुभव करता होगा।

परमात्माके जिन स्वभावका जिनने दक्षा? अक जवे सामुने। दुनियाके प्रति जा अभा हा वही न जमी निव्य वस्तुको देख सकता है। दुनियाका दृष्टि साये बिना अमी निव्य दृष्टि आ ही नहीं सकती। व्यावहारिक दृष्टि साये बिना पारमार्थिक दृष्टि निर ही नहीं सकती। दिनमें अेक सूय अुगता है। असक आधार पर हमारा सगुण व्यवहार चन्ता है। परन्तु अुमी कारणस अमन्य तार और नक्षत्र हमारे लिजे लुप्त हा जात ह। व्यवहारका यह सूय डूवता है तभी अनेक तार जोर अनेक सूय निव्याआ देने लगत ह — असा समय हमें सृष्टिके अनन विस्तारका ध्यान भान हाता है और असके रहस्यका कुछ जान हाता ह।

व्यवहार कहता है स्वायमें और असके लिजे चलाये जानेवाल बलहमें ही जीवनका मफलता है। जिसने स्वायका छाड दिया अुम डूवा हुआ हा ममना, रसानका गया आ हा ममना।' अनुभवका प्रकार भा जिसका सामी बनकर कहता है हा, अभा ही है। हमेगा अभा ही हाता दक्षा गया है। जिन सफ व्यवहार तथा असके ठाम अनुभवके बारमें जा अघा बन गया वही यह कह सकता है कि ओश्वर परोपकारी सताका पक्षपानी है दीन जन ही अुसे प्रिय ह। ओश्वरका कृपा अुन्हीके लिजे है।

परन्तु ओश्वरका यह कृपा किसीको मुफ्त नहीं मिलती। ओश्वर काजी सरान घाटनेवाला दानगूर सेठ नहीं है। याचकी बठिनाअी दूर करके अुम मिधारी बनाना, असका आत्मामें ग्लानि पैदा करना — ओश्वरका उग नहीं है। ओश्वर ता कपाध्य है। फाडा भी सत्कम यदि मनुष्य करे तो भी जीश्वर अुने फल दता है। तपस्वकाकी याडी-बहुन परीणा किये बिना वह परमजता ही नहा। सकके समय भी वह गान-नजीका अेक पता ही मागनेके लिजे हमार

द्वार पर खड़ा रहता है। और कमका नियम जसा है कि थोड़ा भी गुम कम करनेसे भुसका विशाल फल मिलता है। जिसमें आश्चर्यकी कौसी बात नहीं। हम सदा पापको मानते आये ह पापका विस्तार ही देखना सीख ह परन्तु सच पूछा जाय तो जो पाप असत्य रूप है — मायारूप है भुसकी शक्ति कितनी हो सकती है? पुण्य ही बलवान है। पुण्य ही वीरवान है। प्रकाशकी अंक किरण जैसे धन अधकारको चीर देती है वैसे पुण्य — शुभ कम — कम-रागिको चीर कर सात्विकताका भुदय कराता है। यही बात कविन कही है कि भीश्वर सतन हितकारी है दीनन दुख-हरन है। जो मनुष्य दुनियाकी दुष्टिस अधा है वही अिसे समझ सकता है जा मनुष्य दुनियाकी दष्टिसे अधा है वही दुनियाको रास्ता बता सकता है।

फरवरी १९२६

४०

आस्तिक कौन है ?

जो कहता है कि है वह आस्तिक है। जो कहता है कि नहीं है वह नास्तिक है। आस्तिक और नास्तिककी यही सरल यास्या है। लेकिन किम चीजक अस्तित्व या नास्तित्वका प्रश्न है यह हमें निश्चित करना होगा। धर्मास्त्रके गान्य पर जो विश्वास रखता है वह आस्तिक है। धर्मास्त्रके वचन मनुष्यके नहा ह किन्तु जीश्वरके कठसे निकले ह असा जो कबूल करता है वही आम्तिक है — जिस तरहकी व्यास्या करनके दिन अब नहीं रहे ह। भीश्वरके अस्तित्वको जो मानता है वह आस्तिक है। भीश्वर नहीं है असी जिनकी थदा है वह नास्तिक है — असी यास्या आजकल की जाती है।

थदासे ही भीश्वरका अस्तित्व माना जाता है। भीश्वर नहीं है असा विवामपूवक कटनके लिअ भी अब भुलटी किन्तु जररदन्त थदा चाहिय। जिन किसीन दया नहा जिसक वानूनका आज तक पता भी नहीं चला है जिनकी जिअजे बारेमें कौसी भी दो भक्त अकमत नहीं ह जम स्वर्गीय भीश्वर को माना तो क्या और नहीं माना तो भी क्या? स्वर्गीय भीश्वरके और भुसके राज्यक इतिहास भूगाल हर धमके पुराणामें पाय जाते ह लेकिन भुनमें भी अबकावयता नहीं है। दूसरा अंक भीश्वर है जिसे अन्तर्पामी कहते है, आत्माराम कहते ह, हृदयस्य नारायण कहते हैं जिसका अनुभव जिसका साक्षात्कार हरअंक आदमी-

को अल्पकाल रूपमें हाना ही रहता है। आस्तिक भी उसे पहचानता है और नास्तिक भी उसीके बल पर अपनी सोंज चलाता है।

जिम अन्तर्दामीका प्रेरणाको जा प्रमाण मानता है वह आस्तिक है। अम प्रेरणाका ना ठुकराना है वहा नास्तिक है दाही है।

जिम दुनियामें थैक परम मगल गकिन अपना काम कर रहा है और जहा तक अमकी सफरता है वहा तक ही जावनका सफरता है—जनी जिसकी श्रद्धा है वही आस्तिक है।

माच १९४१

४१

श्रीश्वरकी अस्तित्वता

श्रीश्वरक अस्तित्वक बारेमें बहुत कुछ लिखा जाता है। और सुरेश्वर लेखक मानता है कि अमुने श्रीश्वरका अस्तित्व निर्विवाद सिद्ध कर दिया है। यह हुआ श्रीश्वरक अस्तित्वक बारेमें। लेकिन श्रीश्वरक अस्तित्वक बारेमें किसीने विचार ही नहीं किया है। 'आस्तिक' और 'नास्तिक' दाना विरोध मनुष्यको हा लगाये जात हैं। बालबालकी भाषामें आस्तिक वहा है जा श्रीश्वरका मानता है। श्रीश्वरके अस्तित्वक बारेमें जिसे विश्वास नहा है वह नास्तिक है। अमा हालतमें श्रीश्वरका अस्तित्व कहना लागेका अचम्भेम डालना है। फिर भा श्रीश्वरका अस्तित्वक जेक सच्चा चीज है और अमामें मनुष्यका सबम बडा आवामन मित्र सकता है।

भक्ताने आज तक श्रीश्वरका किसी बाल्गाहक जैसा माना है। अमुहाने अमुने सब-समय बनाया है। कनुम् अकनुम् और अपयाकनुम् गकिन ता अमोकी है। वह जिम वक्त जसा चाहता है वसा हा जाता है अमुकी अच्छाका राक्नेवागी काजी चीज है ही नहा। भक्ताक मुहसे अस अस बुसाह-वचन हम हमगा मुनत्रे रहने हैं। व मूर जाते हैं कि भगवान सब-समय हात हुये भी अपने सामर्थ्यका कदम कदम पर काममें नर्ती गना चाहता। वह चाहता है कि मनुष्य अपना सामर्थ्य स्वय बढाये। विटा (veto) और सर्टिफिकेशन (certification) की सत्ता हमगा हाथमें हात हुये भा अमु काममें न लानेमें ही श्रीश्वरका आनद है। वह सब-समय ता है गकिन सर्वसद रहनेम हा वह अपने अस्वयका अनुभव करता है। भगवान सब कुछ सहन करता है और धयक साथ वह अनन काग तक राह देखता है। अनन-वीथ हात हुये भी वन्कि अनन-वीथ हानेके कारण ही, वह अनन धय धारण करता है और मनुष्यका

स्मरण अवश्य हागा। आज जिस रास्ते वह जा रहा है अमुमें जुते आनन्द आता है सही। तबिन वह मना हमेगाक लिअे टिकेगा नहा। अमुम वह ब्रूव जायेगा। अतमें मरा ही शरणमें आयेगा। अिन समय वह साता है। लेकिन मैं सोया नहा हू। मैं जागता हू। अिस समय अुमन्द मनमें मेरे प्रति कोत्री भक्तिभाव नहीं है। तबिन मैं अुसे चाहता हू। मरे मनमें अुमके प्रति भक्ति है। (हा भगवानका वात्सल्य अतमें अेक प्रकारकी भक्ति ही है।) वह मनुष्य अपने अूपर अिनना विन्वाम रखता है अुमसे अधिक विदवास जुसक वारमें मरे मनमें हैं। और यही मरा विश्वास अुमका अुद्धार करेगा। अपनी हरजेक वामना द्वारा और हरजेक कृति द्वारा आज भल ही वह मुझे परास्त करता हा, अिन्तु मैं निराग नहा हाअूगा। आखिरवार वह है ता मरा ही। वह किसी भी क्षण मुझसे दूर जानेवाला नहीं है और मैं कभी भी अुस अोनेवाला नहीं हू।

जीश्वरकी यह वृत्ति, भगवानकी यह निष्ठा ही अुमकी नास्तिकता है। अीश्वर नास्तिक है, जिमी कारण यह अनिया टिकी हुआ है और अिसी कारण दुनियाक सामने अुनतिका साधना अम मौजूद है। अगर सच पूछा जाय ता नास्तिकता ही अीश्वर है।

जनवरी १९४१

४२

नास्तिकता

अमुक वान पर मनुष्यकी अद्वि न जमे तो वह अेचारा क्या करे? अद्वि न हाने पर भी वह कैसे कहे कि मेरी अद्वि है? असा करना क्या असयके साथ-साथ कायरतापूर्ण दम भी नहीं होगा? आप जिसे नास्तिक बहते हैं वह नम्र होकर आपसे कहता है

‘जिस बात पर आपकी अद्वि जमती है, वह मरे हृदयको जरा भी स्पग नहा करती। अिमसे मैं प्रसन्न नहीं हू। मुझे अिमका दुःख है। आपका समाधान और सन्तोष मुझे मिला होता तो मुझे खुसा हाती। मरी परगानीका समय कर आप मुझ पर तरस साअिये। आप प्राथना कीअिये कि मुझमें अद्विका अुदय हा। आप मुझ पर चिन्तन क्या ह?’

‘आपका तो यह विन्वान है न कि मुझमें भी अमर आमा है? ता फिर मर वारमें आप निराग कसे हा नकने ह? आमा यदि मर भीतर हा ता अुमका अुन्य हाना ही चाहिये। मुझमें यदि अगान हा तो किसी न किसी समय वह दूर हाना ही चाहिये।

पाननी शक्तिमें ता आपना विश्वास है न? सर्वथा — सत्य-विश्रामा —
 पान यदि मरे अपानना नाग न कर सके ता यह पानना परामय ही माना
 जायगा। यदि आप मरी नास्तिरता पर पुत्र हा मुझम द्वय कर भीर मृत
 त्याग्य मानें तब ता मरी कहा जायगा नि माता आत्मा और परम मगन
 पानक विषयमें आप निराग हो चुक ह। फिर आप आश्रित कय मात जायग?
 आस्तिरता और आस्तिरता जैम ग... अजिनता हम चलने निरना बिना

साके विचारे प्रयाग करत रहत ह। सच पूछा जाय ता य सच अितन गरल
 नहा ह। अिन दो गलाना मूल अय अित प्रसार है है अगा जा मानना है
 वह आस्तिर नहा है असा माननबाग तागित। दुनियामें बहुतरी वस्तुने ह
 और नुनस भी अधिक सरयावी वस्तुने नहा ह। भूत नहा ह अगा यदि म मानू
 ता भूताके बारेमें म नास्तिर ह। हिगाग निसी भी प्रसार मनुष्य तागित
 कल्याण नही हागा असा मेरा दुःख विवास हा तो हिगाग बारमें म तागित
 ह। विदेशी सरकारके शिक्षणसे पानना भार कितना ही क्या न बढ़ना हा परन्तु
 चरित्र बल अथवा दशप्रमको दृष्ट बनानमें वह जरा भा गहायक नही हागा
 बुलट अिसमें वह गिगण विघ्नरूप ही सिद्ध हाता है — अगा मरा दुःख मत हा
 तो सरकारी गिगणके बारेमें म नास्तिर ह। मुझम अिनना मत भिन्न है य साग
 जरूर कह सकते ह कि मरे विचारामें दाय है विद्वति है। अुनरी आस्तिरनाय
 बारेमें मेरी राय भी असी ही हा सगनी है और हाती घाटिप।

आस्तिरता और नास्तिरता अिन दो गलाना असा व्यापक अय करने
 बाद नास्तिर कहनसे न तो किसीना गानी दी जाती है और न आश्रित बनने
 किसीकी प्रससा की जाती है। दाना स... तटस्य ह।
 परन्तु भाषामें नास्तिर स... अय अितना व्यापक नही है। प्राचीन
 लोगान अिसना अय असा किया था व... विद्वाम न रगनवाला मनुष्य
 नास्तिर है। नास्तिरको वेदनि... अस कालमें नास्तिर स... कीमन
 म्लच्छ बाकिर ही... स... नास्तिर गदका अधिक सास्त्र
 पुत्र तथा पापक अय है परलाकके विषयमें अथडा रगनवाला।'

न सापराय प्रतिभाति बाल
 प्रमाद्यन्तम् वित्तमोहेन मूढम्।
 अय लोको नास्ति पर' अिति मानी
 पुन पुनवगमापद्यते मे ॥

सापराय अर्थात् परलोक नही है परम मगन तब नही है अिद्रियातीत
 वस्तुको जाननका साधन नही है भागस्वयस परे सताप प्राप्त करनका अय
 कोभी तत्त्व नही है — असा जिस मनुष्यका विश्वास है वह नास्तिर है।

सामान्य व्यवहारमें अुसी मनुष्यका नास्तिक कहा जाता है, जो खुले आम यह कहनेकी हिम्मत करता है कि जीश्वर नहीं है और जो हिम्मतके साथ समाज द्वारा माय की हुजी ँडियाको ताडना है। जो लोग जिस व्याग्यामें नहा आते, वे सब आम्निक कहते ह। जिस मायताके अनुसार जितने लोग आस्तिक माने जाते हैं व सब यदि वास्तवमें ही आम्निक होते तो यह कहनेमें जरा भी अतिशयोक्ति न होनी कि आज सत्ययुग है। जमा कि समथ रामदास स्वामीने कहा है

देवा बेगळें काही नाही। जैसेचि बाल्ती सबही।

परंतु त्याची निष्ठा काही तसीच नसे।*

आज कुछ लोगऱ लिये धमनिष्ठा और भीदवरनिष्ठा राजनिष्ठा जसी हा औपचारिक बन गयी है। जीश्वर नहीं है जसा कट्टर समाजम ददनाम हाने और अपने चित्तका अस्वस्थ बनानेके बनाय भीदवर है असा मानवर ही चथा ग! जिसमें हमारा क्या विगडना है? — यही वृत्ति आज हर जगह दिग्गामी दना है। जीश्वर है' असा जो मनुष्य मानता है जुमके जीवनमें अमुक परिवर्तन अवश्य ही दिग्गामी देने चाहिये। अमुक गावमें ँग है अमुक कमरेमें माप है, वकमें मरे अितने रूपये ह अथवा काटमें 'यायायीग बठे ह — जिस मायताक माय ही अिन म्यानामें हमार आचरणमें जमा फक पडता है, धसा ही फक 'भीदवर है' य् विदनाम रखनेसे अिस पथ्वीके हमारे जीवनमें पये तो हा हमारी यह थडा निष्ठा या आस्तिकता सच्ची कही जायगी।

बहुन धार जीश्वर नहीं है' जसा कहनेवाके प्रामाणिक जीर नम नाम्निकमें सामान्य आम्निकाकी जपना अधिव निष्ठा हाती है। जमा कट्टर किन्तु गुड नास्तिक जब कहता है कि जीश्वर नहा है तब अुसका अथ अितना हा होता है कि मने जीश्वरकी खोज की है अुमना स्वरूप अगम्य है, अुमकी माया अगाध है अुमना आकलन करनेमें मानवीय शक्ति समथ नहीं है, म तो अुमने विषयमें कुछ नहा कह सकता। 'आश्वरकी खोज करके जो मनुष्य अितना अनुभव प्राप्त कर गया, अुने आस्तिक कहनेमें क्या आपत्ति हो सकती है? 'यस्यामन तस्य मतम।

परन्तु भीश्वर है या नहीं अुमका स्वरूप कसा है अिस बातकी दानिक चवामें अुतरनेकी जरूरत ही क्या है? हृदयमें निरंतर स्फुरित हानेवाले आत्म तन्त्र पर अिस मनुष्यका विद्याम है वह आस्तिक है। प्रयेक मनुष्यके हृदयमें आत्मारामना धाम है प्रत्येकके हृदयमें कम-ज्याना सजनता रहती ही है, पापीमे पापी मनुष्य भी हृदयकी गहराअीमें पुण्य और पवित्रताकी ही रत्न ग्याये

* अथ — मभी लाग यह कहने हैं कि भीश्वरसे अलग कुछ नहा है। परंतु अुनकी निष्ठा भी असी ही होनी है यह नहीं कहा जा सकता।

सामान्य व्यवहारमें भुमी मनुष्यका नास्तिक कहा जाता है, जो खुल आम यह कहनेका हिम्मत करता है कि जीश्वर नहीं है और जो हिम्मतक साथ ममाज द्वारा भाव की हुआ रूढ़ियाका ताडता है। जा लोग जिस व्याख्यामें नहा आते वे सब आस्तिक कहलाते ह। जिस मायताके अनुसार जितने लोग आस्तिक माने जाते हैं व सब यदि वास्तवमें ही आस्तिक होते, तो यह कहनमें जरा भी जतिगयोक्ति न हाती कि आज सत्ययुग है। जना कि समय रामदास स्वामीने कहा है

देवा बगळें काही नाही। असें र बोलता सरहीं।

परंतु त्याची निष्ठा काही तमीच नसे।*

आज कुछ लोगके लिये धमनिष्ठा और ओश्वर निष्ठा राजनिष्ठा जसी ही औपचारिक बन गयी है। 'ओश्वर नहीं है' असा कहकर समानम बदनाम होने और अपने चित्तका अस्वस्थ बनानेके बजाय 'ओश्वर है' जसा मानकर ही चला न! जिसमें हमारा क्या विगडना है? — यही बलि आज हर जगह दिग्गभी देता है। जीश्वर है जसा जो मनुष्य मानता है भुमके जीवनमें अमुक परिवर्तन अवश्य ही दिखानी देने चाहिये। अमुक गावमें प्लग है अमुक कमरेमें माप है बकमें भरे जितने रुपये ह अथवा कोटमें यायापीण बडे हैं — जिस मायताके माय ही जिन म्यानामें हमारे आचरणमें जसा फक पडता है वमा ही फक 'ओश्वर है' यह विश्वास रखनेसे जिस पथीके हमारे जीवनमें पडे ता हा हमारी यत् श्रद्धा निष्ठा या नास्तिकता सच्ची कही जायगी।

बहुत बार जाश्वर नहा है' जसा कहनेवाले प्रामाणिक और नम नास्तिकमें सामान्य आस्तिकाकी अपक्षा अधिक निष्ठा हाती है। जसा बट्टर किन्तु गुड नास्तिक जब कहना है कि ओश्वर नहा है तब जिसका जय जिनना ही होता है कि मने ओश्वरकी खोज की है अमुका स्वरूप अगम्य है, अमुकी माया अगाध है, अमुका आकलन करनेमें मानवीय शक्ति समथ नहीं है, मैं ता अमुके विषयमें कुछ नहीं कह सकता। 'ओश्वरकी खोज करके जा मनुष्य जितना अनुभव प्राप्त कर सका, उसे आस्तिक कहनेमें क्या आपत्ति हो सकती है? 'यस्यामन तस्य मनम।'

परंतु ओश्वर है या नहा अमुका स्वरूप क्या है, जिस बातकी दार्शनिक चर्चामें अंतरनेकी जरूरत ही क्या है? हृदयमें निरन्तर स्फुरित होनेवाले आत्म तत्त्व पर जिस मनुष्यका विश्वास है वह आस्तिक है। प्रत्येक मनुष्यके हृदयमें आत्मारामका वास है प्रत्येकके हृदयमें कम-ज्यादा मज्जन्ता रहती ही है, पापीसे पापी मनुष्य भी हृदयकी गहराईमें पुण्य और पवित्रताकी ही रटन आपमे

* अर्थ — सभी लोग यह कहन हैं कि ओश्वरसे अलग कुछ नहा है। परंतु अमुकी निष्ठा भी असी ही होती है, यह नहीं कहा जा सकता।

रहता है — जिस प्रकारकी थड़ा ही जास्तिकता है। दुनिया चाहे जितनी पास्तिक रहती हो भले ही कदम कदम पर माधु-गताकी हार हाती हो भले ही दुज्ज जु मत होकर जविकार जीर सत्ता भागत हो फिर भी जतमें धमकी ही विजय होगी, प्रत्येक हृदयम मज्जनाका ही अन्त्य होनेवाला है जमी थड़ा ही जास्तिकता है। पवित्रतास प्रेम करना हृदयकी शुद्धताका जातर करना और मन्नाचारम प्राप्त होनेवाली स्थितिमें मताय मानना प्रत्येक हृदयका धम है। अिग धमका चाहे जितने समय तक ग्रहण लग जाय फिर भी वह खयास कभी नहा होगा जीर अिस धमका संपुण अस्त भी कभी नहा होगा — जिस तरहके दृष्ट विश्वास का ही नाम जास्तिकता है। माके हाथमें जिस प्रकार बाणक अपनको मुर्ति न मानना है अुसी प्रकार मत्यकी गोतमें हम सत्ता सुरभित ह जमी थड़ा ही जास्तिकता है। मत्यका द्राह किसीने हो ही नहीं मकता सत्य पगु नहा है — दुबल नहीं है सत्यकी सदा विजय ही होने है सत्य किमीसे अपनी रक्षाकी जागा नहा रखना अने जमात्र सामय्यक कारण सत्यक पाम अखूट धीरज है जीर अिस धीरज ही असकी विजय है — जिस प्रकार मत्यक प्रति मनुष्यकी दत्त भक्ति परम जास्तिकता है।

भेद बकरियाको मारकर खा जानवाला बाघम भी भूतदया मुण रूपम रहती है जसी थड़ा जास्तिकता है। धणिव या हजार युग तक टिकनेवाल स्वायके बग हाणेवाली मानव जातिमें भी भूदय प्ररव तव तो प्रेम ही है और अतम जिसी प्रेमका सामान्य विश्वास चाग तरफ स्थापित हातवाला है — अिस तरहका सूक्ष्म रूपम चमकती रत्नवाती तथा बटवस कान् अनुभवाकी परम्पराक बाण जी बुझ न जानवाला जदभुन थड़ा ही भूदय जास्तिकता है। मह थड़ा यदि जानन है तो फिर माण अथवा निगण जीवरमें विश्वास रखने या न रखनेक कोणी फत्त नहीं पत्ता। जाप जीस्वरको विभूति जेक मान या अनेक माने जासनाका भूतिपूजा कर अथवा जु ह जग डाट जिसका अधिन महत्त्व नहा।

सब पूछा जाय ता जास्तिकता और नास्तिकता जसा भेद करना पय है। प्रत्येक मानवने हृदयमें जास्तिकता रहती ही है। महत्त्वका प्रदन यही है कि वह किस हृद तक मुण है जीर किस हृद तक जाग्रत है ब्यापक है तीव्र है। शिक्षन जब किमी विद्यार्थिने कहता है कि यह चीज तुम कभी नहीं सीख सकागे तब ममज्ञना चाहिय कि शिक्षक नास्तिक हा गया है। भय लालच या बाहरी रम चनाप बिना लक उटकिया शुद्ध पान पिपासास जरा भी पडनेवाले नहा ह जमा गिणक जीर माना पिता मानें ता भी वे नास्तिक ही ह। हम सनिकारा प्रगसा न रर जानी पर लमाक लिअ अुहे रग बिरगी पट्टिया न द ता अुनमें गीप प्रकट नहा हागा जैसा माननेवाला सेनापति भी नास्तिक है। सेनापति बटा मनापति यानक लिअ मुद्धमें लडता होगा परन्तु सनिक देगक

मानिर स्वधर्मके पालनके लिये लड़ते हैं, यह सनापतिके ध्यानमें नहीं आता। बाह्य दम और आचारका आडंबर दिखाये बिना लोगो पर मेरी धार्मिकताका प्रभाव नही पड़ेगा जसा माननेवाला धर्मोपदेशक धर्म पर जीनेवाला होते हुअे भी नास्तिक है। अमुक लगामें कभी क्षात्र तेज पैदा ही नही होगा अमुक प्रजा जयवा बग सदा गुलामीमें ही रहनेके लिये पदा हुआ है असी मूढ मायता भा नास्तिकताका ही जेक रूप है।

यह मायावी नास्तिकता कितने हा रूप धारण करती है। बीमार आदमी अपय्यका जानत हुअे भी अमुका सेवन करके जब मनका समझाता है कि जिनसे काशा नुकसान नही होगा, तब वह नास्तिकताको ही बढ़ाता है। गुप्त रखा हुआ पाप मझे या दूसराका कपट नही दगा असा माननेवाला प्रतिष्ठित व्यक्ति नास्तिक ही है। सद्गुणा और योग्यताका प्रधानता देनेवाला काशी कदरदान न मिला ना व सद्गुण 'यज जान ह' असा माननेवाला कृपण भी नास्तिकताका ही पुजागी है। और आज सारी दुनियामें सबत्र फली हुआ नास्तिकता तो यह माननकी वृत्ति है कि धूतना लुच्चाओ कपट और दुष्टताकी ही विजय होती है। दुनियाको दीन और सहनशील प्रजायें अनत काल तक अयाय सहती ही रहगा व कभी भी अयायका विरोध नही करगी जीश्वरक जा अवतार अब तक ना गये व हा गये, अब आश्वर मर गया है या कमसे कम कुभक्षणकी निद्राम ना पडा ही है अब जुममे डरनेका काओ कारण नही है — जिस तरहकी जा 'यावहारिक' मायता सत्ताधारियामें धर कर बठी है वह भी नास्तिकताका ही नया अवतार है। समययुगका अपने आप जुदय हागा जिसक लिये हमें काओ प्रयत्न करनेकी जरूरत नही असा यागा रचना भी अेक अलग प्रकारकी नास्तिकता ही है यह भूलना नही चाहिये, क्याकि वह मूढ विश्वास है।

असा सूक्ष्म अयान् गुड दृष्टिसे देखने पर जिस बातकी घाडी कल्पना हागे कि मनुष्यक हृदयमें नास्तिकता कितनी 'चापक' हा गयी है। परंतु जिस बातकी पूरी पूरी कल्पना हो जानेक बाद भी 'ब्रिटिश साम्राज्यसे अधिक बडी' जिस नास्तिकता'का आखिर अंत हागा ही जसा विश्वास यदि हममें न हो ता हम नास्तिकताकी मनाके मिपाही नही बन सकत। नास्तिकता औषधके ढेरक समान है और नास्तिकता आगकी चित्तारीक समान है। औषध माला होगा तथा तब वह तिका। मानव जातिकी लापरवाही नास्तिकताका गोलपन है। जुमफ मिठने पर आयनरा हागी जरूर जलगा। अेक जलनेवाली लकडी दूसराका तगती है और जिस प्रकार अपने भीतरसे ही अग्निका भाजन दकर स्वयका भस्ममान् करती है।

श्रद्धा और धय अग्निमें डाल जानेवाला घी है।

रहता है—अस प्रकारकी थडा ही आस्तिकता है। दुनिया चाह जितना पांडित रहना हां भक्त हां कदम कदम पर साधु-सत्ताकी हार हाती हां भक्त ही दुजन जु मत्त होकर अविकार जीर सत्ता भागते हां, फिर भी अतमें धमकी ही विजय हांगा, प्रत्येक हृदयम सज्जनताका हां जुदम हानवाला है असा थडा ही आस्तिकता है। पवित्रतास प्रेम करना हृदयम गढ़ताका जात्र करना और सगाचारन प्राप्त होनवाली स्थितिम सतोप मानना प्रत्येक हृदयका धम है, अिन धमका चाड जितन समय तक ग्रहण लग जाय फिर भी बट सप्राण कभी नहीं हांगा जीर अिन धमका सपूण अस्त भी कभी नहीं होगा—अिस तरहने दुद विद्वान का ही नाम आस्तिकता है। माके हाथमें अिस प्रकार वाक्क अपनेका मूर्ति त मानता है अुसा प्रकार सत्यकी गामें हम सदा मुरक्षित है असी थडा ही आस्तिकता है। सत्यका प्राह किसीमे हां ही नहीं सकना सत्य पगु नहा है—दुबल नहा है सत्यकी सगा विजय ही होनी है सत्य विसास अपना रक्षाकी आगा नहा रखना अरत अमार सामर्थ्यक कारण सयके पास अलूट धीरज है और अिस धीरजमें ही असकी विजय है—अिन प्रकार सत्यक प्रति मनुष्यकी दड नकिन परम आस्तिकता है।

भेड वक्रियोंकी मारकर खा जानवाले बाधम भा भूतदया गुण रूपम रहती है असी थडा आस्तिकता है। क्षणिक या हजार युग तक टिकनेवाले स्वार्थक वग हानवाली मानक नातिमें भी मुत्य प्ररक ताव ता प्रम ही है और अतमें अिमी प्रमका साम्राज्य विरवम चारा तरफ स्थापित होनेवाला ह—अिस तरहकी सूक्ष्म रूपम चमकता रहतवाली तथा कण्डस बडव अनुभवाकी परम्पराके बाद जी युष न जानवाली जडभन थडा ही मुख्य आस्तिकता है। मह थडा मति आपन है तो फिर मणुण अथवा निगण आत्ररम विद्वान ग्यने या न रखनेमे काभा फल नहीं पत्ता। गण जात्ररकी विभूति अत्र मान या अनक माने गास्वाकी मूर्तिपूजा कर अथवा सु ह गण ठाँ अिसका अधिक मत्त्व नहीं।

सब पूछा जाय ता आस्तिकता जीर नास्तिकता जसा भद करता अथ है। प्रत्येक मानकने हृदयमें आस्तिकता राती ही है। महत्वका प्ररत यही है कि बट किस हृद तक मुक्त है जीर किस हृद तक जाग्रत है ब्यापन है नीर है। शिक्षा जय किमी विद्यार्थीम कहता है कि यह चीज तुम कभी नहीं सीख सकाग तब समजना चाहिय कि शिक्षा नास्तिक हा गया है। भय, लालच या बाहरी रस बयाय बिना कक ककिया गूढ जग पिपासासे जरा भी पडनेवाले नहा ह असा गि त्र जीर माता पिता माने ता भी वे नास्तिक ही ह। इम सनिकामी प्रगसा न कर छाती पर गगानेने लिखे अु ह रग बिरगी पट्टिया न द तो जुनमें गीप प्रकट नहा होगा, असा माननवाला सेनापति भी नास्तिक है। सेनापति बडा सेनापति बननेने लिख मुडमें लडता होगा परतु सनिक देगक

साथि स्वधर्मक पालनके लिये लड़त है, यह सेनापतिके ध्यानमें नही आता। बाहरी दम और आचारका आडंबर दिखाये बिना लागू पर मेरी धार्मिकताका प्रभाव नहा पड़ेगा असा माननेवाला धर्मोपदेशक धर्म पर जीनेवाला होते हुअे भी नास्तिक है। अमुक लोगमें कभी क्षात्र तेज पैदा ही नही होगा, अमुक प्रजा जयवा वग सदा गुणमाम ही रहनेके लिये पदा हुआ है, असी मूढ भायता भा नास्तिकताका हा अंक रूप है।

यह मायावी नास्तिकता कितने हा रूप धारण करती है। बीमार आदमी अपव्यक्ता जानते हुअे भी धूमका सेवन करक जब मनको समझाना है कि जिननेम काश्री नुकसान नहा होगा तब वह नास्तिकताका ही बढाता है। गुप्त रखा हुआ पाप मुये या दूसराको कष्ट नही दगा असा माननवाला प्रतिष्ठित व्यक्ति नास्तिक ही है। सदगुणा और योग्यताको प्रधानता देनेवाला काश्री बदरदान न मिया ता व सदगुण यय जाने ह असा माननेवाला कृपण भी नास्तिकताका हा पुजागी है। और आज सारी दुनियामें सबत्र फणी हुअी नास्तिकता ता यह माननेकी वक्ति है कि धूतना, उच्छाओ कपट और दुष्टताकी ही विजय होती है। दुनियाको दान और महनगीठ प्रजायें जनन काल तक अयाय सहती ही रहगा व कभी भी अयायका विरोध नहा करगी, जीस्वरके जा जवतार जय तब हा गये वे हा गय, अब औरस्वर भर गया है या कमने कम कुभक्वकी निद्राम ता पडा ही है अब जुममे डरनेका काश्री कारण नही है — जिस तरहकी जा यावहारिक भायता सत्ताधारियामें घर कर बठी है वह भी नास्तिकताका ही नया अवतार है। तयदुगका अपने आप जुन्य हागा जिसक लिय हमें काजी प्रपन करनेकी जरूरत नहा, असी भागा रखना भी अंक अलग प्रकारकी नास्तिकता ही है यह भूलना नहा चाहिये, क्याकि वह मूढ विश्वास है।

असी नूदम अयात गुद दृष्टिस दवने पर अिस बातकी घाडी कल्पना होगी कि मनुष्यक हृदयमें नास्तिकता कितनी प्रापक हो गअी है। परन्तु अिस बातकी पूरी पूरी कल्पना हो जानेके बाद भी 'ब्रिटिश साम्राज्यमे अधिक बडी अिस नास्तिकता' का आधिर अत हागा ही असा विश्वास यदि हममें न हा, ता हम नास्तिकताकी मनाने मिसाहा नहा बन सकते। नास्तिकता जीधनके डेरक समान है और नास्तिकता जागकी चिन्तारीक समान है। अधिन गीला हागा नभी तब वह टिकगा। मानव जातिकी गपटवाही नास्तिकताका गीलापन है। जनके मिम्ने पर अधनरी हागा जरूर जलगी। जेरु जलनेवाली लकडी दूसराका गगती है और अिस प्रकार अपन भीतरस ही अमिका भाजन दकर स्वयका भस्ममातु करती है।

श्रद्धा और धय अग्निमें डाल जानेवाला घा है।

हमारे ओश्वरका स्वरूप

'ओश्वर गतात्म्यासे हम कष्ट दता आ रहा है अब जुमे पेगन दे दें ता कसा र्' अब हम विनाम जीर अतिहासकी सहायतासे अपन जीवनका अच्छा तरह विकास कर सक्ये। मनुष्य जातिके बाल्यकालमे जीश्वररूपी चालन गाडी की जरूरत थी। जिस रूपमे ओश्वरन मनुष्य जातिकी बहुत बड़ी सेवा का है। जिस सेवाके लिये हम सदा भुक्तकृत्य रह्ये। परन्तु अब हम अपना व्यवहार अपने ही हाथमें ल ले ता अच्छा होगा।

'ओश्वरके धारमें जेव जीर कठिनाओ है। जीश्वर स्वतंत्र नहा ह। गान्धकार धर्मगुरु, जुपुगव और हर प्रकारका ब्रूड चरानवाग चालान लाग ओश्वर पर अपना अधिकार करके बठ गये ह। जिसलिये ओश्वरका जुपुगव आम जनताके लिये न हातर प्राय भुन्ही गंगाके लिये होता है जिनका प्राचीन काउता टिकामे रखनेमें स्वाभ है। जिस तरह गुगबक साथ भुक्तकृते जाये विना नहा रहने, जिस तरह अमरुतम भुक्तकृती अग्य करना बठिन ह भुमां तरह ओश्वरके माय जुमक नाम पर रब गय गान्ध जुमक नाम पर पट भालेवाल साथ ओर फरीर भुम पर जकाधिकार स्थापित करके बठ हुअ पहिन मुनि, पात्रां और मुग्रा भुमक नामे पड बन हुअ सयासा जीर नक्त तथा भुमकी पूजा ह्ये कर जानवाउ मरिज जीर मठ—सभी आ जाने ह। जिस प्रकार यमें लभकका बलि चडानेके लिये भुमक साथी इत्रकी भी बलि चडानी ही पड़ती है भुमां प्रकार मानव जातिके अपन अधविश्वास सहु विनाम अनुद्धि और गाड फगनेवाउ जिस समय चण चक्रा लाग करनके लिये यि ओश्वरकी बलि बगनी पड ता जरूर बना देनी चाहिये।

आश्वर है या नहा जिस सद्दान्तिक चर्चामे भी हम पडना नही चाह्ये। यह विषय भुवना हा नाग्य है जिनकी धर्मशास्त्राकी चर्चा। हम ता जिना बानना विचार कर्ये कि आश्वर जगदीश्वरी प्राणी है या नहा। हमें यह प्रतीति हा लगी है कि अब ओश्वरका काओ भुपुगव नहा रह गया है। अब ओश्वरका अब हम अपने जाउनमें स्थान दनके लिये तयार नहा है। प्राचीन काउर अके नास्तिकन कहा या ओश्वर न हा ता नी समझना चालनके लिये नके काल्पनिक जीश्वरका पाजता करना चाहिये। वं नाम गन्ना पुक्ति है। जिसलिये गान्धका लिये ओश्वर नहा है यह गिड हार पर भा अगदीश्वरी लिये हमें ओश्वरका सेवा कर लेना चाहिये।

लेकिन आज तो हमें अलसके ठीक विपरीत ग्रह लगता है कि अश्वरके होने न हानेका प्रश्नको अुठाय़ा ही न जाय, और यदि अश्वरका अस्तित्व सिद्ध हो जाय ता भी अुसका अिनकार करनेमें ही हमारा कल्याण है। मानव-जीवनके क्षेत्रमें जब अश्वरको बाहर निकाल देना चाहिये। आज वह प्रजावा पुलिस नहा है परन्तु सामाजिक असमानता, लोगाकी अनानता और बुद्धिनाशक जन्ता पर ही जीनेवाले विभिन्न वर्गोंका अेकमात्र आश्रय बन गया है। असे तक्षकाके साथ जिस जिद्रकी भी बलि चडानी ही चाहिये।

अपर मने आजके जमानेको नये नये विचार देनेवाल कुछ विद्वानाके मताका सार मक्षम प्रस्तुत किया है। जिस प्रकार रामायणी प्रजाके वीच देवी सीताकी गुद्ध वार वार चचाका विषय बनती रहती थी अुसी प्रकार वेचारे अश्वरका अस्ति व आज वार-वार खारेमें पठ जाता है। अक यह कठिनायी तो है हां कि अश्वर दिखाओ नही देता वह हा भी तो कभी पवरता या अकुलाता नहा। लेकिन जितने ही कारणसे अश्वर खतरेमें नहां पड सकता था। जो लग अश्वरको जाननेका दावा करत ह जिहोने अश्वर पर अपना अधिवार जमा किया है व अश्वरके वारमें जा माणी देते ह अश्वरके वारमें जो कान्दाप हमारे सामने रखत ह अश्वरका जा जीवन चरित्र या रेखाचित्र प्रस्तुत करत ह व मव अिनने बेहूत ह कि अुनने आधार पर अश्वरका स्वीकार करनम भारी आपत्ति खडी होती है। असे लगाने ही अश्वरके अस्तित्वको मनरमें गल दिया है। अम्स्टन कहता है कि कयालिक धमके निदकोके ग्रथ पठकर ही बैथोलिक धम पर मेरी श्रद्धा जमी है।' जिसी प्रकार अश्वरका अिनकार करनेवाल 'पारमायिक' लग यह कहते ह कि अश्वरका पथ ननेवाले साहियको पड पडकर ही हमारी नास्तिकता दृढ हुजी है।

अश्वरका साभात्कार सिद्ध कर चुने अेक जपिको अश्वरका कवल समधन करनवा लोगाकी विवनास अश्वरको वचानेकी जमी ही आवश्यकता पडी गयी जिमार्ति अे अुहाने कहा था "अश्वरके तत्त्वको म जानता हू, तुम मुअसे वह तत्व जान लो। अुमका वधन कस किया जाय यह म नहीं जानता। पर तु आज लग जिसकी अुपामना करते ह वह ता अश्वर है ही नहा। सच्चे अश्वरको जिस जन्मम यति तुमने जान लिया ता तुम वच गये वरना तुम्हारे भाग्धम महानाग ही लिखा हुआ है।

नव यह सच्चा अश्वर कमा है? और हमार जीवनेके साथ अुसका क्या सम्बन्ध है? हमारे समस्त प्रिय आदर्शोंका वह पापण करता है या शोषण? क्या वह प्रजाका सहायक है? क्या वह प्रजाका रक्षक है? क्या वह प्रजाका तारक है? और यति अश्वर अंसा ही हो, तो अुने पहचाना कसे जाय? अुसका अुपयोग

हम कैसे कर ? भीश्वरके अेकाधिकारियास हम भुस बचा सक तो ही वह हमें बचा सकता है।

तो भीश्वर है क्या चीज ? अितना तो स्पष्ट है कि यदि जीश्वर जसा कुछ है तो वह हमारे हृदयमें ही है। भीश्वरका सर्वात्कृष्ट नाम 'अन्यामी' है। हमारे हृदयम अनेक बार अनेक प्रकारकी मगल आकाशाय जम लता ह व हमें कवल कल्पना जसी नहीं लगती किंतु 'यवहारकी अस दुनियाकी अेशा अधिक सच्ची और अधिक महत्त्वपूण लगती ह। खाना पीना और राज करना यह हमारे जीवनका मुख्य भाग नहा है परंतु जा परम मगल कानाय तथा आदश हमारे हृदयम बसते ह और हमारे जीवनका मागान करते ह वे ही हमारे जीवनका मुख्य भाग ह। मनुष्य जाति अनात्ि कालसे आदर्शकी अुपासना करती आती है। य आदर्श भिन्न हाने हुआ भी अकरूप ह असा अनुभव हाता है। जहा भद लिखाती दता है जहा विरोध लिखाती पढता है वहा गुढीकरणकी क्रिया अकदम प्रका करती है और फिर समक्यकी वति जिन भिन्न भिन्न आदर्शकि बीच मुमल करा दता है। य जाण्य गढी करणकी य क्रिया और अिन सबका मुमल — यह सब अकरूप ह जसा अनुभव हाता है। हमें सतत यह प्रताति हाती रहती है कि यह सपूण दिव्य अयवा दूसरे गानमें कह तो हमारा समग्र मनुष्य जीवन किसी गय पर रचा हुआ है। कात्री भी फिलासफी (तत्वज्ञान) वास्तवम अिस प्रतानिका अिनकार नहा कर सकी है फिर ताकिव भाया कुछ भी क्या न कह ' हम असा लगा करता है कि भुस परम सत्य पर अस अमर अखड सनातन मत्य पर रचा हका जा कुछ भी है वह गुढ हा हाता चाहिय अुमक स्वभावम मल ही हाता चाहिय और अमम अनत विविधता हानक कारण जटना ता अुमक भीतर हा ही नहीं सकती।

यट जो हमारी अमर भावना है जिमामें हम जीश्वरीय तत्व मिलन वाला है। मनुष्यने भीश्वरकी रचना की है या भीश्वरन मनुष्यकी रचना की है अिम मवाग्ना काभा अथ नहा रहता क्यानि दानामें भू ही नहा है। है अिम मवाग्ना काभा अथ नहा रहता क्यानि दानामें भू ही नहा है। मनुष्यमें भीश्वर है और भीश्वरमें मनुष्य है। फिर किने किसकी वृत्ति माना जाय ? हम ता भीश्वरका स्वरूप जानना चाहते ह और अुमकी जपयागिता आन लि मिड करना चाहत ह। यदि जीवन साथ हा तो आश्वर साथ है। यदि जीवनमें कात्री सार या रस्य है ता भीश्वर परम मगलमय है। यदि तावन यदि जीवनमें कात्री सार या रस्य है ता भीश्वर परम मगलमय है। यदि तावन में तूनि और अतूनि दोना ही तव हा ता आश्वरकी अस्तित्व है। आश्वर वास्तविक बन्नु है। मनुष्य-जीवनका परम अकरूप सब आश्वरकी वृताथना सब प्रकारक विराना अन सारी अगातिकी गानि समग्र यात्राकी अन्तिम मजिल और फिर भा समस्त आकाशायाकी चिरतन अतूनि ही भीश्वर है। यदि

ओम्बरकी सपूण प्राप्ति हो जाय तो वह जीम्बर न रह जाय । जिसेओम्बे ओम्बरका सच्चा नाम अनत है ।

अमे जीम्बरसे अिनकार करनेका अथ है अपने जीवनसे अिनकार करना प्रत्येक अुच्चता और जुगत्ततासे अिनकार करना । और सारे प्रामाणिक अिनकारक पीछ जो मत्यकी शोष है जो प्रामाणिकता है जो अुत्कटता जीर अेकाप्रता है जुमसे भी अिनकार करना ।

अिस ओम्बरका अपना कोओ नाम नहीं है हमने जुसे मनमाना नाम दिया है अिसा तरह अुसका अपना कोओ रूप भी नहीं है हम ओम्बरको जा रूप दते है अुसे धारण करनेका सामथ्य जुसमें है । प्रत्येक गरीरमें अिस प्रकार परिवतन होता रहता है जुसी प्रकार जीम्बरके रूपमें भी मनत परिवतन हाना ही चाहिये । बालक सूयकी किरणका अपना मुटठीम पकडनका प्रयत्न करता है फिर भा सूय किरण अुसकी मुटठीमें कद नहीं हाती अुसी तरह जब मनुष्य अपने स्वभावके कारण अपनी मुविधाके लिजे ओम्बरका जेक रूपमें बाधनेका प्रयत्न करता है तब ओम्बर अुस रूपमें बाधनम र्ध जानेस अिनकार ही करता है । जब तक हम अुम बाधनेका प्रयत्न नहीं करते तब तक जह हमारा ही है, और तभी तक हमारा है ।

तब क्या मनुष्यका आत्मा ही अुमका ओम्बर है ?

आदम ही ओम्बर है, जमा कहनसे ओम्बर बहुत सरल और सस्ता हो जाता है । जीम्बर जिसेसे अधिक बडा है । जीम्बर ही मनुष्यका आत्मा है यह बात सच है । और आदमके बारेम हम अपनी कल्पनाका गढ और व्यापक बनायें, तो आदम ही जीम्बर है यह भी सच है । किन्तु परम आदम मनुष्य कृत नहीं होता वह स्वयभू हाता है । वह मनुष्यका आदम अवश्य है, परन्तु अुस आदमके कारण ही मनुष्य मनुष्य है । मनुष्यके कारण आदमका जम नहीं हुआ है । आत्माके कारण मनुष्य-जीवन सत्वपूण होता है । परन्तु आदमका सपूण आवलन कभी मनुष्यको ही ही नहा सकता । जिस आदमका सपूण आवलन हो जाय वह आदम नहीं रह जाना क्याकि वह सात ही जाता है । आत्मा त्त अनत ही हाना चाहिये ।

‘प्रभु जागत है तू सोयत है’

आमारा बाओ कि गहा हाता बाओ जाति गहा हाता । पाह ता हम जुग पुनिंग कह रातो ६ ओर पाह ता स्थांग भी कह गता ६ । दाना ही लिगामें आत्मा गमान है । सरहाम या मराठी अथवा गुजरातमें आमारी पुनिंग मात जात है । जब कि पाह भागत तथा अर्यागारा और जुम भी जुसे स्थांग मात गय है । लिगामें बाओ आत्माका पुनिंग बताना है ता बाओ स्थांग ।

बपनार भक्ति-गम्यतायमें परमात्माकी श्रीरूपता गामें और जीवात्माका गपीर रूपमें बपनार करत भरिने स्थांग और अरवी अरुताको गपन किया गता है । यह दगा गया है कि जयत प्रम अबाध निष्ठा तथा सगुण जाय-गमपग य तीन गुण स्थांगतिमें विगप गगने बचत हात है अिगति-जावात्माका परमात्माकी ओर हातवाग आवपण गपीरवी रूपभरिब रूप द्वारा ही गतीभानि बचत हो सता है ।

बज पुन्य जिस प्रकार स्त्रीकी प्राप्तिन लिअ प्रयत करत गता है गुमा पकार परमात्मा भा जीवात्माका अरत पास गाचरर गुमरा अडाग करत व लिगे अपना आरग सतत प्रयास करत हा गता है । अिगमें यदि बाओ भा रावत हो ता यह है जीवात्माकी अरुतरारा अभाव आगकपाता या अगानता । और प्रमगति परमात्मा जायात्माकी स्थांगताकी रशार लिअ गिना अत्मुग रहता है कि यह अपनी अतीतिन आरुताका नी जेक ओर रावत जीवात्माक हृथम मुमुक्षा जागत हात तज धमक माध प्रतागा करना हा पग करत है । जाका दृष्टिम गता आरुताकी गुती कामत गहा हाता जितनी जीवात्माकी स्थांगताकी होनी है ।

बहुत बार यह गता अठता है कि जीवर प्राप्तिन लिअ जावात्माका आरुता अधिक हाती है या जीवात्माको अरने पास साचनका भगवातकी साधना अधिक होती है ।

यहा बाओ मतम यह गता न गाय कि पण पुन्य, निगुह और नित्य सप परमात्मा स्वय ही साधना करनेवाग साधक कसे बन सकता है ? परम वागनिक और सज-बुछ सहनेवाग परमात्मा साधक हा है और जुसका साधना अनत और अतड रूपम चता करती है । जीवर यदि साधक न हाता तो मनुष्य का साधना कसे सुअता और अुस करनकी शक्ति भा कस मिलता ? साचनस

जिम वातना विश्वास हो जाता है कि जिम प्रकार बालककी भातभक्तिकी अपक्षा माताका अपत्य प्रेम अधिक गहरा होता है अथवा पिप्यकी गुरुभक्तिकी अपक्षा गुरुका पिप्य-वात्मल्य अधिक अरुक्त और अधिक नानपूण होता है उसी प्रकार मनुष्यकी दान-त्यागसाकी अपक्षा श्रीशिवकी भक्तनिष्ठा अधिक होनी ही चाहिये। असह्य वार अपने अनेक जम मनुष्यने जीशिव विमुख कम करनेमें विनाये हा तो भी श्रीशिवका धय कभी नहीं खूटता।

जीवात्मा धार निद्रामें सोया हा तब अने श्रीशिवके सात्प्रिध्यका भान कम हा सकना है? परतु जम अुसकी धार निद्रा दूर हो जाती है और जब वह प्रभातका भीठी, गुलाकी और हकका नादमें हाता है तब अुसे श्रीशिवके अस्तित्वकी और अुसकी प्रेमल साधनाकी अस्पष्ट धाकी समय समय पर हाने लगता है। कविवर रविवावूने नीरव भजनम जिस न्यितिका मुन्दर वणन किया है।

गापी स्वयकी लख्य करके कहती है

जम वह तेरे पाम आकर वठा तब तू जागी नहीं। हे हतभागिनी, तुझे कसी पीद जागी थी? गान और स्तव रात्रिकी बलामें वह आया था। अुने हायमें वीणा थी। जुमका सगात मुनकर म जागी नहीं परतु मेरा स्वप्न वचन अुमके गभाग रागमें अोनप्रात हा गया और मेरा स्वप्न अमाधारण रूपमें सुवमय बन गया।

जाम कर देखनी हूँ ता अपनी मुगधमे पागल बना देनेवाला दक्षिणका मन्थानिल अधकारकी रिकतताको भर कर सन-सन वह रहा है।

मेरा यह कमा दुभाग्य है कि मेरी सत्र रात्रिया अिसी प्रकार व्यथ चली जाती ह। वह मेर पास होने दुअे भी मेर पास नहा हाता। जुमका सगात मुनाजी देना है, अुसकी मुगध मस्तिष्कका भर देती है और फिर भी अुसकी भागका स्पग मेर हृदयकी प्राप्त नहीं हाता। म क्या करूँ? कसी बालनिद्रा मुझे घेर लती है!'

जिन लागका जीशिवके अस्तित्वका भान ही नहीं है तथा जा लाग करल जेक निरपवाद गिवाजक रूपमें ही श्रीशिव पर विश्वास रखने हैं और श्रीशिवके विषयमें बोलते हैं कि जिम गायनके भमका नहीं समग सकत। मनुष्य जम मम तरहमे हार जाता है तभी गायन अुने अेकाध क्षणके लिजे श्रीशिवका मन्चा स्मरण हाता हागा। वना प्रतिष्ठिन नियममे श्रीशिवकी पूजा करने पर भी और मुबह गाम श्रीशिवका नाम गनने और गूजाने पर भी अस लागके जीजनमें श्रीशिवका प्रवग नहीं होता। जैसी धार निद्राकी अवस्थामें यदि अुहें श्रीशिवके सात्प्रिध्यकी असह्य निगानिया मिग तो भी अुनके किम कामकी? आगे चलकर जब मनुष्य अतमुख हाता है और अुसके जीवनमें श्रीशिवका योगसा

प्रवेश ही जाता है तभी सच्चा शगडा गुरू होता है। भीखरकी जड़ यदि मनुष्यक जीवनमें घाटी भी पड़ूँ जाय ता फिर वहाँ य पर रिप बिता न ही नहा सतता। साधनाक अभावमें मनुष्य कितना ही अभावपात क्या न रह औद्वरक मात्प्रिष्यकी निगानिया अुसकी नजरमें आय बिता रह हा नहीं मक्ता, औद्वरकी वृत्ताका अनुभव भूत समय समय पर अवश्य होता है। वाग्म ता मनुष्य यह मोक्कर विद्मन लगता है कि म अितना साधना-सुर्वत क्या ह और वह अरती भक्तता करन लगता है फिर ता यह आत्मनिग ही अर प्रसारकी साधना बनकर मनुष्यस प्रगति कराना है।

जड़ जीवनका यदि रात्रिकी अरमा दा जाय ता भूगर वगित ककी मीठी ताक ममपका ब्राह्म मुहूत ही बहना पालिय।
अब नीरना जार कम हा गया है अर पाह ही समयमें हम जाग जावेंग और जापुतिका मुप भावेंग अिन विषयम गना रगनका बोधी कारण नहा है।

२०-१०-४०

४५

जीवनका शास्त्र

न जान क्या आजका जमाना धमम धवराया हुआ रहता है। धमक नाम पर ससारके गेग परस्पर लह ह। धमक नाम पर अब वगन दूग वग पर निरकुग सता चलायी है। धमक नाम पर गानक गणका घसा कर जान और अनजान दुनियामें अतान और अधनिद्वामाग अणकार सुब कल्याण गया है। धमके नाम पर कभी कभी जीवनका नारगुय और सट्टा बना दिया गया है। धमके नाम पर मनुष्यकी प्रगतिका सफरताप्रवक राका गया है। यह मय है कि शास्त्रधम और हृदिमन पढयम रचकर बहुत वार हृदय धम प्रमधम मानवनाका धम तथा विश्व मागल्परा धम — अिन सब अुच धमोंका अचछ कर डाला है। परन्तु यह सारा अुत्पात मचानवाला धम वास्तवमें धम नहा है मनुष्यकी सकुचितता मनुष्यकी धमधिता तथा मनुष्यका अतान धमक नाम पर जो अधम फलाते ह वही अिन सारे अुत्पातकी जड़ है। धम अितनी प्रभावगाली और तेजस्वी वस्तु है कि अुसकी गकितका देवकर प्रत्यय क्षद्र बत्तिवाला मनुष्य अुसके आश्रयमें अपना काम निकालनका प्रयत्न करे तो आचब्य नहीं होता चाहिय। परन्तु मानव रोही बत्तिया धमका आश्रय लेती ह अिसलिअ अुस आश्रयको ही नष्ट कर देवते सारी अगुम बत्तिया नष्ट हो जायगी या भूयो मरगी असा मान लनका बोधी कारण नहीं है। अिसका परिणाम तो अितना

ही होगा कि हम धर्मके जसा कल्याणमय वस्तुका गवा बढेंगे। ओश्वर आत्मा परलोक पुनजम आदिके बारेमें हम आज अकमत नहीं हा सकत अस कारणसे अिन सबका समाप्त करनवाला धर्म ही त्याज्य है जसा अनेक लोग साचने लाने ह।

धर्मके विषयमें जूपर जा अन्तय परम्परा अथवा नदिग्धता बताजी गयी है वह सब ता विज्ञानशास्त्रका भी अन्धी तरह लागू हाती है। परन्तु जिन कारणसे किमीने विज्ञानका त्याग नहा किया है। जसे जसे विज्ञानके दाप मामूम हान गय वसे वसे अुन दापाका सुधार लनेकी बार ही सपाने लोगका प्रयत्न रहा है। विज्ञानका बचाव करनेवाले लोग वन्त ह कि विज्ञान किमी प्रथम चिन्ता नहीं रहना। वह ता अनुभवसे मिद्ध हुआ वस्तुका ही ग्रहण करनेवाला मत्पनिष्ठ और मत्पन्थापण शास्त्र है।

मच्च धर्मका भी यहा ज्ञान लागू हाती है। आज तकके विज्ञानशास्त्रियां ग्रन्था पर विज्ञानका जिनना आधार है अुमम तरा भी अधिक आधार मच्च धर्मका धर्मशास्त्रा पर नहा है। वह भी अनुभवसे मिद्ध हुआ वस्तुका पकडने वाला मत्पन्थापण मत्पनिष्ठ शास्त्र ही है। दातामें भेद ही दखना हा ता कहना हागा कि धर्मशास्त्रकी मत्पनिष्ठा भीतिक शास्त्रास कुछ अधिक ह।

प्राचीन कालमें राजाशके नाम पर अनेक युद्ध हुजे ह। राजाका विषय सामनाका तप्त करनेक लिजे बडी बडी मैनायें किमी राजाकी राजक्याका चूटनेके लिज निकली ह और ज्ञान सनाशका महार हुआ है। यह काशी नहा कह सकता कि राजा महागजा और राजगण मदा प्रभाव लिजे आगावाद रूप हा मिद्ध जुजे २। परन्तु जिस कारणसे काशी यह नहीं कहता कि साधनत्र हा नहा रहना चाहिये — समाज-व्यवस्थाका ही नाश कर देना चाहिये। अिमक विपरीत शासन-मस्यामें अतरातर सुधार किये जान हैं और अुसे अुच्च नमिना पर पञ्चातक प्रयत्न किये जाने हैं। यही बात धर्मक विषयमें भी हाना चाहिये।

आत्मा ओश्वर परलोक और पुनजम धर्मकी पूजी ह — यह बात नन् ही सच हा किन्तु धर्म जवा दनकर अिन्हीसे चिन्टे रहनेको नहा कहना। धर्मका अय है जीवन-व्यवस्था। सधान लोग मदा यही कहते आये ह कि जिनम प्रजाका धारण हो सक, जिनसे प्रजा परस्पर सहयोग साधकर अपना अुत्कप कर सक वही धर्म है। जिस किमी व्यवस्थासे, विचार पद्धतिसे और आचार-व्यवहारसे प्रजाका सब प्रकारसे अुत्तम कल्याण हा सक, अुसे धर्म कहा जाता है। धर्मका अय है जीवन मोमाया जीवन-व्यवस्था जीवन-दृष्टि। जिन प्रकार स्वयमें रहनेवाला जीवन रस वशका टिकायें रखता है अुसे कृताय करता है, अुसी प्रकार मनुष्य-समाजका टिकानेवाग और अुन्नतिके माग पर ल जाने

वाला जो तत्व होता है, जो सजीवनी रूप जीवन रम होता है वही धम है। जिम हेतु या प्रयोजनके विरुद्ध जो कुछ भी मिद्ध हा वह धम नहीं है। वह यदि धमक नाम पर चलता हा तो नी असे धमक तिकाल फटना चाहिये। प्रमवाचाम भूताना धमप्रवचन इतम्। धमका अस्तित्व मार प्राणियाक विराम क लिअे अुदयके लिअे जीर प्रगतिक रिअ है। 'धारणाद धमम् अित्यात् धमों धारयते प्रजा। यही धमका सच्चा स्वरूप है। धमका अथ ही ससृति है। धमका अथ ही व्यापक समाजशास्त्र है।

जहामे मनुष्यमे समस्त सर्वाच्च वतिया आनी ह वहीस धम भी आया हुआ है। धम मनुष्य मानके स्वभावम वसी हुआ वस्तु है। धमका विरोध करव मनुष्य जुसक स्वात पर जो कुछ स्थापित करनेका प्रयत्न करता है अुमम भी धमक हा तत्ता होत ह। मनुष्य धममे भाग कसे राखता है?

यह सब है कि धमक नाम पर बोनेवाले मभी लागानी दृष्टिम धमका गिता विगाल और विगुद्ध अथ नहा होता। आज धमक नाम पर समाजमें अमग्य बल काम कर रह ह। जुनमें स अधिकतर बगका नाग करना गुद्ध धार्मिकाना तथा प्रामाणिक धम विराधियाना समान वतय है। अत सबसे पहल धार्मिकाना चाहिय कि वे नास्तिक शब्द छोड देन और धमविगविधाकी भी यह भ्रम छोड देना चाहिय कि जितने भी गेग धमके हिमायता ह व सब अधविश्वासा ह स्वतंत्रता और प्रगतिव विरोधी ह उनताने कपाणके गनु ह।

आजकी समाज-व्यवस्थामें जितन डाम जीर पाखड चलन ह जीर राजके समाजशास्त्रम जितना गन्गडा है, जतने ही गग पाखड जीर गडवडी धमके विनयमें भा पाया जाता है। अत हम सबका मुरय काय यह है कि जिन दानाकी गुद्ध बनाकर जीवनमें जिनका अधिकस अधिक अुपयोग कर। जीर गित विगी वस्तुकी शद्ध बनाता हो जसका अुपयोग करना ही अुसकी गडिका मच्चा प्रारभ है।

समान क्या है समाजकी व्यवस्था कसी हाना चाहिय वह व्यवस्था जिन तबारा आधार पर हो और जिन तन्त्रान हायमें वह व्यवस्था र अिन सब दानाका प्रत्येक यगका स्वतंत्र रूपसे विचार करना चाहिय। परंतु यह मय निश्चय करनेसे पहले अिस बातका निश्चय होना चाहिय कि गायन क्या है जीवनका अरुथ क्या है मनुष्य जातिक कशा जाना है और क्या प्राप्त करना है। कुछ लग काने ह कि यह सब निश्चय किये बिना भा हम जी मरन र। जीना और जीनमें सफर हाना ही हमारा जीवन हेतु है। पनु आज तक अिमा नरह रहत आये ह। लेकिन पनुआका और मनुष्याका माग अक नती है। पनु आने आप विगडने भी नहीं और सुधरत भा नहीं। मनुष्यम ये दाना

शक्तिया ह । और यदि सोचने विचारनेके जतमें, खोजके अतमें, यह निश्चित हो कि जाना जोर सफ़र होना ही मनुष्य जातिका भी आदश है, तब ता यही हमारा पुरुषार्थ होगा । अिमके आधार पर जा जीवन श्रम निश्चित हा बहा हमारा धम होगा । व्यक्ति परिवार और समाज अिन सबका विचार करके जो भी पुरुषार्थ हमने निश्चित किया हा, अुस सिद्ध करनेका अुपाय ही हमारा धम है । जिस जगतमें हम आये हैं अुसका समग्र परिचय करा कर अुसमें हमारा स्वान जोर अतिम प्राप्तव्य जा निश्चित कर दे तथा बहा तक पहुचनेका माग बताये वही धम है ।

धमकी इस कल्पनाके अनुगार अनेक धमोंका विचार करना हागा । काल माकमने भी जेक धम बताया है । लेनिनने अुभी धमका रूपान्तर कर दिया है । गाधीजी अिससे सबया भिन्न धम बताते हैं । अोना धमोंक आदशमें बहूत साम्य है, परंतु अोनाके साधनमें बडा भेद है । जमन दाशनिक नित्तोने भी अक धमका ही विस्तार कर लिखाया है । अिन सब धमाकी जाव करके मनुष्य को पहले यह दखना चाहिये कि कौनसा धम मानव जातिके लिये हर दष्टिमें शोषक है कौनसा धम मानव-जीवनमें अुतर सकता है और सबका कल्याण कर सकता है । हम धम ही नहीं चाहिये असा कहकर भी धमगे भागा नहीं जा सकता । यह कथन या नीति भी अेक प्रकारका धम ही बन जाता है । और अुकि यह भूमिका अुतावलीमें और धवराहटमें ग्रहण की हुअी हानी है अिसलिअे डर रहता है कि यह धम कहा अघूरा कच्चा अमुविधापूर्ण और मूल अुद्देश्यका नाश करनेवाला सिद्ध न हो । धम जीवनका सपूर्ण ग्राह्य है अिमलिअे अुस पर गहरा विचार हाता चाहिये ।

अधभक्ति

जब बायीं राजनैतिक, सामाजिक अथवा धार्मिक चर्चा चलता है अथवा नमय विरोधी पक्षके किसी भी आदमीको देन लायक अब गाँधी बालबालमें खूब बठनवाली है। कोश्री आत्मी दूसरेना समथन करे या अमुक एडिम चिपटा रट, तो फिर अतक व्यवहारके पाछ चाह जितना चिन्तन हा चाह जितनी स्वतंत्र दलील हा ता भा अुस अधभक्त कहनम काजी बाधा नहा पाता। जितन अनुयायी हात ह अुतन सब अध ह जितन धमका कर्तव्यमान पालन करनवाँ हाते ह अुतन सब अध ह, और गाल्वात विश्वास करनवालाका ता अधारा भा अध माना जाता है। यह गाल्वा सुधारवात्तियान भाषाम दाखित रिया ह परन्तु प्राचीन मानानिमानी लोग नी अिस गाल्वा कम अुपयोग नहा करत। तकरा अुपयोग कर व नास्तिक और भावनाका प्रधान मान के अड्डागड। टीका करनकी अना सरल युक्तिकी खाज हातके बाद हमारा मावजनिय जावन यदि निष्पल निड हो तो अिसमें आश्चर्यको कोश्री बात नही। आमन सामन चक-दसरको तू अरा तू जथा' कहकर आज तक हमने क्या पाया? स्वाथ द्वय या मनकरक कारण दशमें फला हजा फूँमें अक यह डर और बढ गया है कि अधपनका आरोप वही मुझ पर न लग जाय। जार समाजका ता माना यह जेक नियम नी बन गया है कि नासौ मुनियस्य मत न भिन्नम'। जा मनप्य जपना अलग मत न प्रकट करे वह बद्धिमान कभी कहा ही नहा जा सक्ता।

तब क्या तिस दुनियामें अधभक्ति अथवा अध अनयायित्व जसी काओ चीज है ही नहा? नही असा नहा है। हमारे दगम अथवा किना भा दगम अधभक्ति जितनी ज्यादा है कि जहा अधभक्ति न हो वहा भी लागको अधभक्तिका आभास हात लगता है। छापनकी गाल्वा आविष्कार हुआ अुस त्तिमे दुनियामें लागका और विचारकाकी अेक रडी फोज निवृत्त आभी है। अकिन अुनके विचाराकी हम बारीकीसे जाच कर ता पता चल्गा कि किसा अेर सुगम अधिनम अधिक दा-नान ही नभी कल्पनाआका अदभव हुआ है। गाँधीके सामाय गेग ता पुगती कल्पनाका अथवा दूसरका कल्पनाका लरर स्वयं नियम लमें अुन समन हा पुम रूपम प्रस्तुत कर देन ह। मनप्य यत्ति अरने मनका निमल बनाकर अपन विचारा और मतारा जाच करे अतका मूल खोजनेका प्रयत्न करे तो यह दखनर बट लज्जित हुआ विना नहा रहगा कि अनमें अुतका अपना हिस्सा कितना कम है।

जो चीज — फिर वह दूसरासे सुनी हुयी हो या अनेक लोगके मताका जेकर विचार करके निष्कप रूपमें प्रस्तुत की हुयी हो — हमारे गले अतर गयी हो उसे अपनी कहनेमें कोयी हज नहा । युक्लिडने हजारों वर्ष पूर्व अपने भूमितिके सिद्धान्तको सिद्ध कर दिखाया था फिर भी प्रत्येक विद्यार्थी जब अपने आप जुन सिद्धान्तकी शुद्धताको स्वीकार करता है तब कायी जुस युक्लिडका अध अनुयायी नही कहता । हा, जैसे-तैसे मटिककी परीक्षा पास करनेके लिये युक्लिडक प्रमाणाको बिना समझे ही घोट डालनेवाले विनायी कीडेको आप चाह तो अध अनुयायी मान सकते हैं ।

गास्त्रमें अमुक वचन है अिसलिये अुमे मानना ही चाहिये, यह कहने-वाला अध अनुयायी है । गकराचायक मुखसे अमुक सिद्धांत निकला है अिसलिये अुसकी मीमासा हो ही नहा सकती जसा माननेवाला मनुष्य अध अनुयायी है । गास्त्राकी चचा हो ही नही सकती, यह प्रतिपादन करनेवाला अध अनुयायी है । राजाकी गद्दी पर कोयी मनुष्य चढ बठा अिसलिये अुसमें संपूण राजत्व आ गया यह माननेवाला लोग अध अनुयायी है । सरकारने कोयी कानून पास किया अिसलिये वह यायपूण हाता ही चाहिये अिस तरह माननेवाला अध अनुयायी ह । गोरी चमडीवालाने कोयी वचन दिया है अिसलिये अुमका पालन किया ही जायगा, असा माननेवाले अध अनुयायी ह । सरकारी रिपोर्टमें छपी हुयी हकीकतमें गलती हो ही नही सकती असा जो मानता है वह अध अनुयायी है । स्मृतियामें जो जो लिखा हुआ है वह सब निष्कारके लिये है जिस तरहकी दलील करनेवाला भी अध अनुयायी है । गोखलने तिलकने गकराचायने अथवा गाधीने कायी बान कही है कवरु जिमोलिये अुस स्वाकार करनेवाला भी अध अनुयायी ही है । आय गकराचायने कभी यह नही कहा था कि मैं कहता हू अिमोलिये मरी बान मान लो जाय । बान अपनी प्रस्थानशयीके प्रत्येक वाक्यमें जुहाने तक न किया हाता । अग्नि गीतल है असा सा श्रुतिया कह, तो भी हम अुमे कम मान सकते ह ? यह स्वयं गकराचायने ही स्पष्ट कहा है ।

मन्थपुगण कहता है 'जिनामा नास्ति नास्तिक्यम् ।' तिलक और गाधीने भी हमगा यही कहा है कि आप हमारे विचाराके दाम न बनें । हम गा कहते हैं अुम पर पूरा विचार करने वाला यदि वह आपके गले अुतर, तो ही आप अुसे स्वीकार कर । दग बाल और बनमाका विचार करनेके बाद जा सिद्धान्त आपके गठ अुतरे अुसीको आचरणमें अुतारिये । आपके विचार और आपके आचारमें कोयी भेद नही होना चाहिये । आप असा नही करगे तो आपमें कायरता आ जायेगी आप दीन बन जायगे आप अधमों हा जायगे ।

श्रेष्ठ पुष्प, चानी पुरुष अथवा तपस्वी पुरुष जो कुछ कहने हैं वह आमानीसे अुडा देने जसा नहा हाता, अिस प्रकारकी मायता श्रद्धा है ।

सत्यवादी सज्जन अपन अनुभवक रूपम जा कुछ कहत ह अंग पर व्यापक विचार करना श्रद्धा है। हमारी मन स्थिति जब विचार और ग्राह्य मुक्त ह। अंग समय अंतरकी गुद आयाज जा कह अंगरा अनुकरण करानी प्रति श्रद्धा है। सत्यना कोओ आच तहा आता गुद प्रम जोर गद परनाग विगीता कर्नी नुक्सान नहा हाना जीदरर किता भी समय विगीता त्याग तहा करना — जसी जसी मानव दृश्यकी जा विवर्जनीन तथा सावनीम भावनायें ह अंगरा दः प्रतीति श्रद्धा है।

आद्य धर्माचार्याकी वाणीको आग पीछका विचार त्रिय बिना अध परनक रिज केवः व्याकरणके हायमें सीप दनकी वृत्ति अधश्रद्धा है। इन्द्रियाका यति अथवा नीतिकी कर्मोती पर वमनस जिनकार करना अधश्रद्धा है। अंगवाका माग नीतियुक्त होने हुआ भी वह राजमाय है या नहा अंग विचारम अल्लाना अध श्रद्धा है। जा आज तर नहा हुआ वह भविष्यमें भी कभी नहा हागा अंग तरः मनम गाठ बाध रना अधश्रद्धा है। हम कुछ भा न कर स्वाधत्याग अथवा पुण्याथ का नाम भी न त ता भी स्वराज्य मूयका अपन जाप अंग्य हागा — यः मान रना अधश्रद्धा है। बाजारमें काः-चहरीमें हाःगम या मरवारा मूःगमें अत्यजाका छूतमें कोओ हज नहा परतु राष्ट्रीय गाःगाम अत्यजान माय पडनम सनातन धमका सनातनत्व मिटकर वह डूब जाता है — असा माना नी अधश्रद्धा है। हमार अखवारामें गराव आदि माःक पत्थी और काम विगममें अःक करनवाली दवाअियाके विनापन धनलाभम छपते रहन पर भी यःि हम यः मान कि हमार लिख हुआ समय जोर प्रहाचय-सम्बधी लयाका समाज पर प्रभाव पडगा ता यह हमारी अधश्रद्धा है। अिनानि दगकी आधिक अवनति हान पर भी यह मानना कि देग समृद्ध और सम्पन्न हो रहा है अधश्रद्धा है। और गीराक अधिकाधिक अुद्धत वनते जानका प्रतिक्षण अनुभव हान पर भी यह मानना अधश्रद्धा ही है कि धारासभामें बठकर देगा हित किया जा सनता है तथा स्वराज्य भी प्राप्त किया जा सनता है।

अिस प्रकारकी अधश्रद्धासे मुक्त हाना प्रत्येक मनुष्यका सब प्रथम कतय है। समाजक नताओ राजनीतिना तथा धमगुरुआका असी अधश्रद्धासे मुक्त होना विगप आवश्यक है कयाकि यदि वे अध बन रहें तो समाजकी दगा अधनव नीयमाना यथाधा जसी होगी। अितिहास और तःक य शास्त्राकी दा आखें ह। अिनके अध्ययनके बिना यःि कोओ धर्मोपदेशक बन जाय तो वह अध कहा जायगा और असे धर्मोपदेशकके पास धम निपायके लिजे जानका अध होगा 'दष्टिकी खोजमें निक्लते समय अघापन स्वीकार कर लेना'।

अधविश्वास और श्रद्धा

एक लाकड़िया कहती है कि 'काशी चौदसकी रातमें—ठीक आधी रातके समय यदि नाक काटी जाय, तो दूसरे दिन सुबह सोनेकी नाक निकल आती है।' भगवद्गीतामें कहा गया है कि 'जो मनुष्य कल्याणकारी है उसकी दुर्गति नहीं होती।' सामान्य मनुष्यका अिन दोना वचना पर अेकसा अविश्वास होना है क्योंकि दाना वचनाका प्रत्यक्ष अनुभव किसीको भी नहीं होता। भोल-भाला आदमी बचावमें कहगा कि 'नाक न निकले तो दोष हमारा है। ज्योतिषके अनुसार काली चौदसकी तिथि निश्चित करनेमें भूल हुआ हागी या ठीक आधी रातका क्षण पकड़में नहीं आया हागा अिसीलिअे सोनेकी नाक नहीं निकली। पूवजाके वचन तो कभी चूठे हो ही नहीं सकते। हमारी ही काशी नूल हा गयी हागी। श्रद्धालु मनुष्य कहगा 'यह ठीक है कि कल्याणकारी धमराज पर आपत्ति आ पडी थी। परन्तु वह सच्ची आपत्ति ही नहीं थी। बाहरी लाभालाभकी कीमत ही क्या है? धमराजको निरन्तर भगवााका सहवास मिला। अिससे भिन्न भदगति भला क्या हा सकती है? कष्ट-सहनको तो बायर लोग ही विपत्ति मानेंगे। भगवानने यह वचन दिया है कि कल्याणकारीकी दुर्गति कभी हो ही नहीं सकती।

प्राकृत मानव अिन दोना बचावसे असनुष्ट रहना है। अुमका दष्टिमें अिन दाना वचना पर रखा जानेवाला विश्वास समान रूपसे अधश्रद्धाकी निगानी है। दमका आवरण हटा दें और औपचारिक धमनिष्ठाको दूर कर दें ता आजकी दुनियामें अस प्राकृत लागाकी सख्या ही अधिक दिखानी पडेगी।

फिर भी क्या अुपयुक्त दाना वचन और अुन पर रखी जानेवाली श्रद्धा अेकसे ही माने जा सकते ह? पहला वचन भौतिक जगतके बारेमें अेक चूठा नियम प्रस्तुत करता है जब कि दूसरा वचन अेक आध्यात्मिक सिद्धान्तका प्रतिपादन करता है। पहल वचनकी सत्यताकी जाच करनेके लिअे अिम प्रकारकी कमीटी आवश्यक है वसी दूसरे वचनके लिअे आवश्यक नहा है। मनुष्यको नअी नाककी जरूरत ही क्या होनी चाहिये? वह नाक सोनेकी क्या हानी चाहिये? काली चौसक साय सोनेकी नाकका क्या सम्बध? आधी रातमें असा कौनसा जादुजी प्रभाव है? ज्योतिषके अनुसार काला चौसका दिन निश्चित करना और आधी रातके क्षणको बराबर पकडना ये दोना वानें कठिन भल ही हा किन्तु असभव विलकुल नहीं। प्रत्यक्ष अनुभवके बिना असी बातको सत्य माना

अनुभव करनेवाले लोग अतने कम हैं कि ब्रह्मचय-सम्बन्धी अपरोक्त वचनका अतिगणितपूर्ण लाना आश्चर्यजनक नहीं होगा। परन्तु जिन लोगों ने जिन दिगानों कुछ ठोस और लंबा अनुभव प्राप्त किया है वे अपने अनुभवसे अनुमान लगाकर जिन वचनका पूर्ण रूपसे स्वीकार करनेके लिये तयार होते हैं। वे कहेंगे कि जिस प्रकार घण्टा रहित यंत्र तयार करना कठिन है परन्तु कमसे कम घण्टावाले नये नये यंत्र अधिकाधिक सफ़ातासे तयार किये जा सकते हैं उसी प्रकार मनुष्य ब्रह्मचयकी कोटिना पहुँचा हुआ मनुष्य दुर्लभ होने पर भी ब्रह्मचय-सम्बन्धी अपर्युक्त वचनका कोटिना तक नहीं जा सकती। जिस प्रकार गणितमें अनन्त-श्रेणी सम्बन्धी सिद्धांत निर्विवाद सत्य होने हैं उसी प्रकार सरल कोटि विषयमें आध्यात्मिक सिद्धांत भी सत्य ही होने हैं।

अधविश्वास तथा श्रद्धाके बीचका समानता और विरोधको ध्यानमें रखकर हमें प्रमत्तता सरकरना और परिष्करण करनेमें प्रवृत्त होना चाहिये। जिस प्रकार मनुष्य जगत् पर राख जमाने लगती है और वह राख धीरे धीरे उस जगत्की बुद्धि दत्ता है उसी प्रकार धर्ममें घुसे घुसे अस्वस्थ अधविश्वास धीरे धीरे धर्मका गला घाट कर देता है। अधविश्वास जनानमें उत्पन्न होता है। नानके विषयमें, सत्यके विषयमें प्रवृत्त जिज्ञासा न होनेसे ही वे टिकते हैं। अधविश्वास निरी नास्तिकता है। जिन प्रकार अभावधान धर या डाक्टर बेवकूफी या लापरवाहीसे चाहे उसी प्रकार चाहे जिस बीमारका द देता है उसी प्रकार सत्यकी, सच्चा धार्मिकताकी परवाह न करनेवाले मूल्य लाग ही अधविश्वासका बलाते हैं और मूठे आश्वासनाने गाने पानेके अिच्छुक्त दुःख हृदय मानव जैसे अधविश्वासको टिकाये रखते हैं। जिन आत्मिकों अपनी तवीयत सुधारना है वह अपनी तवीयतके साथ दगाक गुण-दापाकी भी पूरी जाच करता है उसी प्रकार जिसे धार्मिकता-या विकास करना है मत्स्यपी म्वास्थ्य प्राप्त करना है जैसा प्रत्येक मनुष्य हरभक्त मानवताका बुद्धि और अनुभवको कसौटी पर कसे बिना नहीं रहता।

समाज समाज धर्मके विषयमें जितना लापरवाह हो गया है कि न तो लागाना गानाने श्रद्धाभासा विकास करनेकी वाञ्छी चिन्ता है और न समाजकी गाना-कित और प्राण-कितको धुनकी तरह धीरे धीरे नष्ट करनेवाले असत्य अध-विश्वासकी निन्दा करनेकी चिन्ता है। समाजमें और साम करके निष्पाप और भद्रकी मानान्य लागाने जा अन्तमप्यता निराशा और बदहवा आ गये हैं उनका कारण जिनको भुवनरो है उनको ही अथडा और अधविश्वास भी है। जिन सबका दूर करके जब तक धर्मकी बुद्धि नहा की जाता तब तक समाजको मजीवन प्राप्त न हो पाया। भुवनरोका हम निगयेंगे तो ही लोग हमारी बात मुननेका तयार होंगे। परन्तु जब वे हमारी बात मुननेको तयार होंगे तब हमें अन्त

अधविद्वांसोका नाश करनेवाली और धृष्टा उत्पन्न करनेवाली सत्यकी अमृत वाणी सुनानका तमार रहना चाहिये। अथा अधेको रास्ता नहीं दिखा सकता।

२४-७-२७

८८

चिट्ठीका निणय ?

धमनिष्ठ और जिम्मेदार मनुष्यके लिभे भी कभी कभी किसी प्रश्न पर स्पष्ट निणय करना कठिन हो जाता है। कौजी समय असा भी आता है जब मनुष्यका वह चाज, जिसके बारेमें वह निणय करना चाहता है अपने जीवनसे भी अधिक महत्वपूर्ण लगती है। असे समय मनुष्य समवत यह ध्याकुलता भी अनुभव कर सकता है 'त्रितवी महान वस्तुका आधार भीश्वरने मुच जमे अल्प शक्तिवाले सामान्य मानव पर क्या रखा होगा ?'

जिस विषयमें मनुष्यकी अपनी बुद्धि नडा चलता अुसमें अपनम श्रष्ट विभूतिकी सलाह लनके लिअ अुसका प्ररित होना स्वाभाविक और अुचिा है। जिसके पास श्रेष्ठ बुद्धिमत्ता और निष्पक्ष हृदय होता है अुसका सलाह लनके लिअे अतक लोग दौडेंगे ही। असे आय लोग सलाह देने समय या ता अपना अधिचारपूण निणय स्पष्ट णाडामें देकर णात और अलिप्त हो जाते ह अथवा यदि अुनमें शिक्षककी वसि हो ता अपन निणयके साथ व निणय करने समय क्रिय ह्र असाधक अथवा बाधक विचार भी कह सुनाते ह। कभी कभी व दाना पणाने विचार प्रस्नुत करव अतम अपना निणय दनसे अिनकार भी कर लेते ह। अस आय पुष्प शब्दकोणकी तरह सदा हमारे पास नहीं रहन। जिसलिअे वटून बार मनुष्यको अपनी ही बुद्धिवा — फिर वह कसी नी हो — अपयोग करके किमी प्रश्नके विषयमें निणय करना पडता है।

कभी कभी निणय करते समय कष्टनायी दुविधा मनुष्यके सामने लनी हो जाता है। और वह दूर हाती ही नहीं। किसी समय निणयमें दा पण अस खड हो जाते हैं कि मनुष्यका मन दाना ओर समान रूपस अुक्न लगता है। दाना आरकी दलालें अकसा अहम हाती है लान और हाति अेकम दीकत ह प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष परिणाम भी अेकमे ही महत्वपूर्ण लगते हैं। असी परिस्थिति जब सडा हा जाती है तब मनुष्य लाचार बनकर चिट्ठीका डालनका अुपाय आजमाता है। मै मानता हू कि यह अुपाय मनुष्यकी बुद्धिको महत्ताका आर अुसकी भीश्वर निष्ठाका साभा नहा देता।

बुद्धिका बाटा बिल्कुल सतुलित रह, सवधा मध्यस्थ रहे, असा क्वचित् हा होता है। लेकिन अुसके तटस्थ हो जानेके कारण ही मनुष्य बुद्धिगुण, अक्स्मात् मूलक चिट्ठीयाकी शरण ले तो यह ठीक नहीं है। अमुक निश्चित परिस्थितियामें मनुष्यका स्पष्ट निणय करना आना ही चाहिये। गहरा विचार करके किसी निश्चित अभिप्राय पर पहुचनेके लिये बुद्धिकी अंकाप्रता और निणय करनेका साहस दोनोंकी जरूरत हाती है। यह बात बहुतेसे लोगोंके ध्यानमें नहा आती कि विचार करनेमें भी श्रमकी आवश्यकता होती है। कुछ लोग विचार करनेमें ही आलसी होते हैं। जिस प्रकार विदेशी तयार माल आसानीसे मित्र जानक कारण ही मनुष्य दुकानसे अुसे खरीद लेता है अुसी प्रकार सोचने-विचारनेकी झकटके कारण मनुष्य येन कन प्रकारेण किसीके भी मतकी अपना मत बनाकर काम चलानेके लिये प्रेरित हाता है।

निणयकी जिम्मेदारी लनेकी हिम्मत न करनेवाला मनुष्य भी दूसरे मनष्यकी, और दूसरा कोश्री मनुष्य न मिले तो चिट्ठीकी, शरणमें जाता है। विचार करनेका आलस्य और जिम्मेदारीमे कम-ज्यादा बचनेकी नीयत — दाना ही धमक विरुद्ध हैं। अिन दोनोंकी श्रद्धा, भक्ति अथवा नम्रता जैसे देवी गुणाके साथ मित्र देना ठीक नहीं है। चिट्ठीकी शरणमें जानेवाला मनुष्य औदवकी शरणमें नहा जाना परन्तु अक्स्मात्की शरणमें जाता है। देव और अक्स्मात् अन्त ही चीज हैं। दाना अदृष्ट हाते हैं। जिसका कारण दृष्ट नहीं होता वह अन्ष्ट है अक्स्मात् है।

मान लीजिये कि बुद्धिका बाटा बिल्कुल तटस्थ है परन्तु अेक ओर या दूसरी ओर कोश्री न काशा निणय करना अनिवाय है। अंसे समय मनुष्यको अपने हृदयका शरणमें जाना चाहिये। अपि कहते ह 'हृदयेन हि सत्य जानाति।' मनुष्यका निणय गकिन साहस जिम्मेदारी और स्वतंत्रता हृदयमें ही प्रतिष्ठित हान ह, और हृदय कभी तटस्थ नहा रह सकता।

सना हि संहपत्सु वस्तुषु प्रमाणम् अन्न करणप्रवृत्तय ।

अवसर कितना भा गर्भीर और महत्वपूर्ण क्या न हा, मनुष्यकी अुनता अथा अठना या अुडना ही चाहिये। अपने हृदय पर विश्वास रखकर मनुष्यका प्रसंगानुसार बडा बनना ही चाहिये।

चिट्ठीयाके तिलाफ हमारी मुख्य दलाल यह है कि वे मनुष्यका अपनी जिम्मेदारीमे मुक्त करके अुसे नाम्निक् और कायर बनाती हैं। चिट्ठी डालकर मनुष्य जा कर्म अुठाना है अुमके लिये कौन जिम्मेदार है? समाजके सामने ता वह गुरू ही जिम्मेदार है। परन्तु मनमें वह देवकी शरणमें गया है, मनके सामने यह गुरू जिम्मेदार नहा है। अंमा म्पितिममें आप्यात्मिक दृष्टिसे अुमके

अस निणयकी कीमत दून्यसे भी कम है। अतनी ह तक अुसका मानव जावन यय गया।

अक तक यह है कि जीस्वरकी दुनियामें अकस्मात् जसी बाआ पात्र है ही नही हरअक चीजके लिअ काय कारण भाव होता है और असलिअ विग्याके निबलनम या अुछाले हुअ पनेके गिरनम ओस्वरकी अिछा अवस्य हा प्रनट होनी है। पहली दृष्टिम यह तर सच्चा मालूम होता ह परतु वह निरा जम है। दुनियामें अकस्मात् जसी काओ चीज नटा है। प्रत्यक घटना काय कारण सम्बधसे जुडी हुआ है यह भी सच है। परतु असक लिअ हम भ्रमवग चाहा जने काय कारण सम्बध स्थापित करन वठ जाय तो यह कम चल सकता = ? मरो बात त् मानगा तो तू बद्धिमान है बना तू मूल है — असा हम कियो आदमीसे कहें तो भी अुसकी बद्धिमानी या मूलता असकी जागाकारिगान नहा समा जाती जिसकी जीभ नाकक गिरे तक न पडुव असे अपन मान, निता प्रिय नहा ह — असा बालकास हम कहें ता असके जाधार पर बालका प्रमकी परीक्षा नही होनी आज मेरे मित्रना पत्र आयगा तो ही म मानुगा कि वह आदमीके सकल्प पर अुसके मित्रका आय अवलवित नहा हातो जसा प्रचार चिटिठया डालनम बुद्धिमानी अयवा गुद्ध निणय नही जा सकता। मनव्यके गराव पीकर धमबद्धि या डरपीत्रपनको मिटानम जितनी बुद्धिमानी या बहादुरी है जतनी ही बद्धिमानी और जीस्वर निष्ठा चिटिठया डालकर मनका साथ अयवा दुविधा मिटानमें है।

अक बार अक सज्जनन किसी अनसर पर कोओ निणय न कर मरनके कारण चिटिठया डाली। चिटिठीका अुत्तर ही जीस्वरकी प्ररणा है असा व मानते य। चिटिठीका अुत्तर अुह मिला। अुस निणयके अनुसार चलनकी तयारा जुहान की अितनमें अपन अक बुजगका पत्र अुहें मिला। अुसमें लिखी तफनील और सलाहक मुताबिक अुहें अपना चिटिठीका निणय बदलना पडा। अिस मामलम यदि यह कहा जाय कि घट भर पहल चिटिठीका निणय ठाक था लेकिन अब अधिक तफनील और सलाह मिल गयी है असलिअ त्रिवाग्याँ सबत जीस्वर पहलेका निणय रद कर लिया है ता वह हास्यास्पद ही माना जायगा।

कुछ लोग यह मानते ह कि पसेके मिक्केको हम जसका वसा जछाल तो भीनिष शास्त्रके नियमके अनुसार वह गुलाट सावर बिना चूने शास्त्रसिद्ध रातिस ही अुलटा या मुलटा जमीन पर गिरेगा। अुछालते समय दी गयी मूत्र प्रणा यानी जार हवाकी गति आनि निश्चित कारणान फलस्वरूप अुसका अनर ही पटलू अुपर आयगा। अनिश्चितता मुख्यत पसको अुछालत समय कामम ला गयी गनिनक माप और गिगामें ही रहती है। परतु जब मनुव्य विगय सकल्पन साथ

गरपागत होकर सिक्का जुछालता है तब कोयी दबी शक्ति वीचमें पडकर अुमकी अगुलियाको विरोध प्रेरणा देती है।

भातेभाल लागाना अपनी बात सिद्ध करनी है अथवा मनवानी है, जिसलिये अुहें बुद्धि पर अत्याचार करके जसी दलाओं करना सूझना है। मान लीजिये कि दा भाजियाकी किसी गाव जाने या न जानेका निणय करना है। स्थिति अमी है कि दोना साथ जायें ता ही जुनका काम हो सकता है। किसी जेक्के जानेमे काम नहा चल सकता। जम मौक पर मान लीजिये कि दाता अेक-दूसरमे क- बिना स्वतंत्र रूपमे अपने अपने कमरेमें जात ह और बीश्वरका गरणमें जाकर चिट्ठिया द्वारा जाने या न जानेका प्रान ह- करत ह। जिसमें अेक भात्रीका अुतर मिलना है कि 'जाओ और दूसरको अुतर मिलता है कि मत जाओ'। अब वह दबी या अदबी गूढ गभिन कहा गयी ? भोले लाग अिमका अन्तर देंगे कि 'आश्वरत जान-बूझकर अुहें अुपनमें टाला था, बीश्वर चाहता था कि दोना मिलकर अेक ही चिट्ठी डा- और अपना निणय प्राप्त कर। 'स्थितस्य गतिश्चिन्तनाया। अिम-िने किना भा चीजका दगीलाकी टागा पर उडा दिया जा सकता है। परन्तु जमी दलाओं बुद्धि और आस्तिकताका दिवाला सूचित करता ह। अपने हृत्तक विश्वासको छानर हम आश्वर पर कभी अपना अिन्तम बडा नहा मवन। पाडा देर साचकर और समय न हा ता क्षणभरके अि- बुद्धि और हृदयका मागपुत्र बनाकर निणय प्राप्त करना चाहिये और अुमके अनु गार मुग-दु-गे सभे वृत्त्या आचरण करना चाहिये तथा यह समचना चाहिये कि मन्वा क- बाहरी बात्रामें नहा है किन्तु हृदयक विकास और बुद्धिक जुपयोगमें है अिन्तमें मानव भावनकी मायकता है।

हम यह नहा बहना चाहने कि चिट्ठा डा-नेका कोत्री गभ ही नहीं ह जहा गीना पक्ष समान रूपसे महत्त्वरहित हा, काजी न काओ निणय देना अनि वाय हा तथा किसी एक पक्षक निगमका दूसरा पक्ष स्वीकार न कर वह चिट्ठिया टागी जा सकती ह। अुगहरणक अि- अे, अेल-बूदमें कौनगा पक्ष पहल- र-ना आरभ कर यह तय करनेक अि- अे यदि चिट्ठिया डाली जाय या पैस जुछाला जाय ता पक्षपातकी गरा न रह और अे-बूद गुरु हा जाय। दा जेक- पुस्तकामें स अक्का पुन्ठा गल है और दूसरारा हरा है। दा लडक अिनमें काओ पुस्तक पड- नहीं कर पाव और आपसक समझौते भी किना निण पर आना नहा चाहत। जमे मौके पर काजी आदमा आयें बद करक दा पुस्तकारो अवन हायामें - और दोना लडकास आग बद करक अेक जे पुस्तक - जानेका कह ता पुस्तकारका बटवारा हो सकता है। यह मजेकी वा है। रंगक साथ पुस्तकारा काओ सम्बन्ध नहीं है- और लडकास अगडा निय जाना है। परन्तु अिस मामलमें निगमका पाग भा महत्व हा जुसमें बु

और हृदयका अुपयोग करना चाहिए और जिसका अधिकार हा खुदे हें जिम्मेदारीके साथ निणय करना चाहिए । अिगोमें मानव-जीवनकी महत्ता है और बुद्धिगता अतर्यानी प्रभुके प्रति हमारी निष्ठा है ।

१९२१

४९

धर्म-सकटमें क्या किया जाय ?

हमारे सामन धम-सकटके अनक अवसर आते ह । अुन समय हमें भूमता नहा कि क्या किया जाय ? अिस बारेमें गहरा विचार करने का मैं अेक निणय पर पहुचा ह ।

जब तक मनुष्य निचली भूमिका पर रहता है तब तक दो मागोंमें अक ही माग विहित होता है परन्तु ज्या-ज्या मनुष्य अुपर अुठता जाता है त्या-त्या कपकी बाहरी सूक्ष्मता-असूक्ष्मता (योग्यायोग्यता) का महत्व घटता जाता है । अनक माग समान रूपसे अुचित हाते ह । अुस समय किस वृत्तिसे प्रति हाकर हम कोअी जेक माग पसद करते ह जिती बात पर सारा आधार रहता है कयाकि अस समय प्रेरक वृत्ति ही कमका सार होती है । अिस मायावी जगतमें कमका परिणाम अन्धा कया और बुरा कया ?

यहा मुझ हिमालयके अर सयासीना वचन याद आता है सत करे सो छाज — सत करे सो अन्धा । नीतिकी सीमासा अिससे अधिक गहराअीमें नही जा सकती ।

अूचा कला अूची रसिकता और अूची नीतिमत्ताकी कलाकारसे रसिकते जीर सतमे अलग किया ही नही जा सकता । जिस कला रसिक पर हमारी श्रद्धा हो जयात् जिस कला रसिकने हमारी श्रद्धा प्राप्त करनेक लिये पर्याप्त तपस्या की हो वह जब कहता है कि यह चित्र सुंदर है तब हम तुरत ही किसी प्रयत्न अथवा विलम्बके बिना अुस चित्रमें सुंदरताका दान कर सकते ह । स्वादमें अिष्ट कया है और अनिष्ट कया है — अर्थात् कौनस स्वादको रचिअर मानना चाहिय और कौनसे स्वादको रचिअर नहा मानना चाहिय — यह बात अेननी हम कुंदरतस सीखते ह अुतनी ही मास भी सीखते ह ।

[मुझ अक घटना याद है । अुस समय म वच्चा हीं था । हम लग मडुगमें रहते थे । मेरी मान गुलाबका अेक सुंदर सुगंधित फूअ मुझ सूषनेकी था । मुझ अुसकी गंध अन्धी नही लगी । मान मुझे अुलाहना दिया और त जिसकी सुगंधका अनुभव नही कर सकता ? तुझ अिसकी सुगंध प्यारी

ही 'गती' क्या 'वनमानुष है !' बस, असी क्षणसे म गुलाबको हृदयसे गवित फूल माननेवाला बन गया गुलाबको सूँघकर मुझे अपूर्व आनंद आने गा। म आशा करता हू कि आप लोग मुझे दुनियासे निराला (freak) आदमी हा मानेंगे।]

सत — जीवित सत हमें जो माग बतायें वही योग्य माग है। जिस हृद क हमारे भीतर सतके गुण आये हामे अस हृद तब हमारी जागति ही धर्मा-रण है। अस मायतामें अराजकता नहीं है अयवम्या नहीं है। बाहरी बधन हानेका अथ यह नहीं कि व्यवस्था नहीं है। जीवनमें सभी जगह कहा बाह्य नियमन और नियन्त्रण होता है ?

जीवनकी व्याख्या करना असभव है। जीवनको नियम-बद्ध करना अस-भव है। जमे जीवन स्वतंत्र (स्वबद्ध) है वसे नीतिधर्म भी स्वतंत्र है। नीतिको अनुप्यस कभी अलग नहीं किया जा सकता। 'Morality is subjective' अस रचनका यह नया अथ है।

तब क्या सामाजिक नीति जसी कोओ चीज है ही नहीं ? जसी बात नहीं। समाज जेक अध-जीवित रचना है। जिस हृद तक अुसमें आत्माका प्रवेश होता है जुम हृद तक अुसकी अपनी नीति अवश्य होती है। परंतु 'यक्तिगत नीति, मनाकी नीति और सभ्य समाजकी नीति परस्पर विरोधी नहीं होती — अेक ही होती है।

नीतिकी यह मीमासा पाश्चात्या द्वारा विकसित की हुओ नीति-मीमासा जमा लगता है परन्तु तत्त्वत यह अुससे सवया भिन्न है।

पाश्चात्य नीतिके पीछे इत है। द्वितीयाई नीतिस्सभवति' यह अुनका सूत्र है। अदनमे नीतिके लिअे कोओ स्यान नहीं है। 'Morality is the law of conduct towards others' यह पाश्चात्य तत्त्वज्ञानकी व्याख्या है। हम कहें 'Morality is the law of self-realisation' अस व्याख्याको ध्यानमें रखें और आ-मानुभूतिके स्वरूपको समझें तो धर्म-सङ्घट कभी नहीं आयेगा।

सता हि सदेहपदेपु वस्तुपु।

प्रमाण अत वरणप्रवृत्तय ॥

मरणोत्तर जीवनकी स्पष्ट कल्पना

स्वर्ग नरकके अतिहास और भूगर्ग पुराणामें खूब पढ़नका मित्र ह। नम भारतक अम पार तिब्बत है दक्षिणम ल्का है, मान समुद्रान पार जप्रेजान बन द्वीप ह वसे ही चान्लाक अम पार आवागमें स्वर्गभूमि अयात् बाजा दग गुगा जीर वहा दवगण रहते हगे यह कल्पना पुराणाक वणनाक आधार पर मतमें पदा हाती है। पृथ्वी पर स्थित रग अुसवी सतह पर पाग पाम ह, जय रि स्वाक जिद्रलोक चद्रलोक गालाक, विष्णुलाक आदि जहाजाक डेक या कश्चिनाकी तरह अथवा रेलगाडीके अिटर बगमर डिगाम लगी गीटाकी तरह या बग्गी की चाशकी मजिठाकी तरह ऊपर नाथ ह जितना ही पक है।

नागलोककी बान जिसस जरा जलग और विचित्र है। पानामें दुका लगाकर नागलाक पहुचा जा सकना है। यह नम हाता हागा कुठ मनपमें नहा आता। जार नरक पृथ्वीके नाच ता है परन्तु वहा होगा जीर वग वने पहुचा जाता हागा भिनरी बानी कल्पना ही नहा आती। पृथा गग के जसा निश्चित हा जानेके बाद हम कहने लगे कि अमेरिका पानाकी भूमि है। तय फिर यमलोककी स्थापना कग की जाय ?

ये सब लोक काल्पनिक ह जसा बार बार सिद्ध करनेके दिन अय ल वर ह। ये सारे लोक विचारणील लागाके मनस कभीके अुड चुके ह। तिनु जिन बातका स्पष्टीकरण हमारा मन राज राज मागता है कि मरणोत्तर जीवन कसा हागा। यह कहनेमें बोधी हज नहा कि सामान्य विलासा लागाको अिह्गकमें जो सुखोपभोग चाहिये जुसीका सगाधित मस्करण हमारे पुराणाका स्वर्गाक है। आखिर मनुष्यकी कल्पना भी बेचारी जा जाक वहा तक पहुचनवाग था ? जो कुछ जाखास देखा हो अनुभव किया हो जुसीके विभिन्न अगाका रेकन करनेमे स्वर्गादि लोककी बाह्य रूपरेखा तयार होती है। पृथ्वी पर मनप्य तरह तरहक मधुर पेय — शरबत और आमव पीता है स्वर्गमें अिन सबके प्रतिनिधि क रूपम मनप्यने माधुपवी पराकाष्ठा जसे अमतकी कल्पना की। पृथ्वी पर बिगसी लोग यदि सबभोग्य वारागनाजाना जुपभोग करते ह ता स्वर्गम जुनके स्थान पर असराआकी योजना का गजी है। पृथ्वी पर विषय मवन वगनवाले मनुष्याको याधि जरा और मरणना शिकार हाता पडता है। स्वर्ग काय प्रदेशक समान काल्पनिक होनेके कारण वहा ये तीना अजटें नहा ह अमा स्वर्ग विधाता कल्पकाने निश्चित किया है। पीराणिक भूगालास्त्र वत्ता कहत ह

कि स्वर्गमें आधिया नहा ह और आधिया अथात् मानसिक चिन्तायें ना नहा ह । परन्तु वहाका अतिहास असक विरुद्ध प्रमाण देता है । स्वर्गका राजा अिद्र भागशील नपालाकी तरह सदा डर डर कर जीता है । किसीने भी तपस्या आरभ की कि जुसका मिहासन डालन लगता है । कौजी भी बलवान पक्ति जुठ कर खडा हुआ कि जुसके सामने अिद्रका यह प्रस्ताव तयार ही रहता ह । 'तू ही अिद्र बन जा । और गुप्त रूपमें अपने सुकुमार गस्त्रा (अमराजा) का नेजनेक लिजे भी अिद्र सदा तयार ही रहता ह । राज नये नये दाव-पच चलाकर स्वर्गमें अुमे अपना स्थान सुरक्षित रखना पडता है । बिसमे बडा आधि दूमरा क्या हा सकतो है ?

आर, वाकीक दव भी क्या किसी ह तक निश्चिन्त रहते है ? नहीं । व अमरता पान करते है और अप्मराभावा नत्य दन्वत ह । गाना-बगाना और मारा अिद्रियाका तप्त रखना यही स्वर्गका अखड तम ह । परन्तु अमा मिडामने सिग जानेवाग मूटका पिर स्लादवाला बनानेके लिजे ही माना स्वाम माठक ताक चरपरे गड्डू भा रखे गये ह । स्वर्गक देवामें जेकसा दजा नहीं है । प्रयत्न दवकी अरने अपन पुग्यके अनुसार अ व या 'क वग मिलता है आग स्वा नामक हाटमें अिमका अितना पुण्याश जमा हाता है जुसक अनुसार अुम नुच भागनेका मिलता है । वकमें जभा रकम खतम टुओ कि स्वर्गक मालिक प्राणाका नोबे धरुन ही त्त है । दवाका सबसे बडी चिन्ता अपन दरजेका हाता ह । जिनका प अपनम नीचा हा अुनकी ओर तुच्छतास देखता और जिनका पद वूचा हा अुनस ओप्या करना — अिम तरहकी मत्सरका पाषण करनेवाग तीमो चरपरा व्यसत्या यि स्वर्गमें तहा हाता तो स्वाका अपड सुखमय जीवन मि-कुन भूमनेवाग बा जाता ।

राजा महाराजाआके दरबारी भाग विलासाकी दखकर जस मनुष्यका स्वर्ग को कन्तरा नूसी बस हा दाराशामरी सातनाआक अनुभवसे जुस नरकका कल्पना सूसी । नरकक वारमें भी मनुष्यकी कल्पना प्रत्यक्ष अनुभवसे दहुत आगे नहा जा सका । काग पहवान या दगा लेनेके लिजे जा जा अुपाय अिस गकमें तिये पात ह, जुन्हाका आरोग्य सगाधन और परिवधनक साथ नरकमें किया गया है । अिम गकक सुखापभागमें जिन प्रकार राग बुडाप और मयुकी जेक बडी कठिनाओ है अुमी प्रकार यातना देनेका अुमग पूरी करनेमें भी जेक कठिनाओ है । मारनेवाला आत्मी कब कब जायगा या अुमके मनमें कब दवा अुमड पडेगी यह कहा ना जा सकता । यह अेक बडी कठिनाओ तो है ही । फिर भा पातना देनेमें मनुष्यका मन जोर गरीर जेरुम और दड बन सकत है । परन्तु मारपीट और निरस्वारके अतिरकये अिस पीठा पटुधानी है वह बेसुध हाकर गिर जाय अवश मर भी जाय तो अुसका क्या अिन्तज हा सकता है ? दाना हा

स्थावर और जगम संपत्ति, अिन मुख-दुःखाका भोक्ता अहंकार (अस्मिता) और गरीर टिके अुतने समयमें मर्यादित आयु — अिन सबमें ही अुनका मारा जीवन समा जाता है । परन्तु अिन सबको मिलाकर हमारा जा व्यक्तित्व बनता है वह हमारे जीवनका केवल अेक अल्प अंग है । वास्तवमें काल दंग (याप्ति) और आधारका विचार करने पर मालूम होगा कि हमारा जीवन अत्यंत विशाल है । यह सत्य जिसने समझ लिया है और जिसके गल अुनर गया है वह निश्चित रूपसे निष्पाप और अमर होगा ।

३ असा मनुष्य यदि सत तुकारामके शब्दोंमें कह कि 'मरण माझें मरोनि गेलें झाला मी अमर' — मरी मृत्यु मर गयी और म अमर हा गया हू तो असका अथ समझना कठिन नहा है । जीवनकी दृष्टिसे गरीरिव मृत्यु बिल्कुल तुच्छ है अितना तो आसानीसे हमारी समझमें आ जाना चाहिये ।

१९३३

५१

सृष्टिकी सहार-लीलाका बोध

राजा रुठ नगरा रखे अपनी

म हर रुठधा कटा जाना ?

— भीराबाओ

यूरोपमें अेक भयंकर सहार लीला विश्वनाशका सकल्प करके केवल मूहत की ही प्रतीक्षा कर रही है । जबिसानिया चीन स्पन वगराके अनुभव अभी ताजे ही ह । मनुष्य जब नाश करनेके अिधे तयार हो जाता है अुस समय प्रत्यक्ष हिंसासे जितना नुकसान हाता है अुमके बनिस्वत हिंसावृत्तिके बन्नेसे हृदय नागके रूपमें जो नुकसान हाता है वह कहां अधिक होना है । फिर भी य सब मानवीय आपत्तिया ह । मनुष्य चाहे तो अिनसे बच सकता है । शत्रुकी गरणम जाकर युद्धसे भाग कर या दूसरे देगम जाकर मनुष्य अिन आपत्तियासे खुत्का बचा सकता है । परन्तु यह भाग कायराका है बीराको यह पसंद नहीं जाता ।

बीराको भी मानवीय सहारसे बचनेका अुपाय मिल सकता है । शत्रुम अधिक तयारी करके और अनेक बहादुराका बलिदान देकर बाकीके लाग बच सकते ह । मनुष्य सत्याग्रहके द्वारा भी युद्धका अिलाज कर सकता है और बहुतेसी प्राणहानिको टाल सकता है ।

परन्तु जब दुर्रतका काप होता है जब हरि रुठता है अुस समय बचने का कोअी अुपाय नहीं रह जाता । भूकप बाढ कालरा प्लेग वगरा रोग और

अकाल वगरा कुदरती आपत्तिया जम टूट पडती ह अुस समय जा मानव महार हाता है अुमसे कोभी कस बच सकता है? जा लाग वीर है व ही बच सकते हैं जैसा हम नही बच सकत । और जो लोग कायर हैं व ही बच गवने, असा भी कोभी नियम नहा है । कुदरती आफत वीराको खा जायेगी और स्त्रिया तथा बालकाको छाड देगी, असा नियम भी कहा नही है । यह भा वही देखनेमें नही आता कि पवित्र लाग असी आफनोसे बच जाते ह और अविव्र लोग ही मरने है । जब द्वारका डूबनेवाला थी तब भगवान श्रीकृष्णने अपने कुछ श्रेष्ठ भक्ताको द्वारका छोडनेका आश देकर बचाया था । सज्जनाके प्रति बताये गये भगवानके अिस पशुपातको हम अुचित मानें या न मानें, परतु भगवानने दुवारा असा पशुपात कभी नही किया । आज तो जब जब भी कुदरती आफत आती है तब तब वह किसी तरहके भेदभावके बिना अपना अधकाय कर ही डालती है ।

अभी अभी तुर्कीके अगोरा नगरमें भयानक —जिससे भय भी भयभीत हो जाय अितना भयानक — कुदरती कोप हुआ है । महायुद्ध कितना ही भयकर क्या न हा अुगमें अेक दिनमें, अेक ही क्षणमें ६५,००० मनुष्याका सहार आसानीसे नहीं हा सकता ।* युद्धमें लाग कमस कम अेक-दूसर पर त्राय करत ह । गुर-वीर गग गनुसे बदला लेते ह सकट कहामे आया यह जानकर अुसका उपाय करत ह । प्राचीन काये धमयुद्धमें क्षत्रिय यादवा साथे हुजे गनुको जगाकर, अुसक हाथमें गन्ध न हो ता अुस दस्त्र दवर और अुमन पास रख न हो ता स्वय रख अुतर कर पहा समानता पशु करते थे और फिर अुसके साथ युद्ध करत थे । लकिन कुदरतने धमयुद्धका यह नियम न ता कभी माना और न कभी पाला । भूकप कभी यह नहा दखता कि दिन है या रात, लाग घरमें है या बाहर घूमत है । व ता अेक ही क्षणमें बडे बडे अूचे अूचे महगको जमीदोस्त कर दता है । शहरक छाटे-बडे सभी भकानाका अिस तरह जडमे हिला नेता है माना व सब तागक मह ह ।

भूकपक कारण कभी कभी कितने ही मवान अपना मह घुमाकर अुन्टी ज्गामें दखने लगत है । नगीका पाट अूचा हाकर नगीका कहाकी कहा धकेल दता है । कभी कभी जहा जगल हाता है वहा तागव बन जाता है और जहा लागल हाता है वहा हिमालयके जसा पवतराज सडा हा जाता है । कहा जाता है कि अिसी प्रकार प्राचीन कालमें अेक पूराका पूरा महादीप अटलाटिक महा सागरक प्नेमें विगान हा गया था । भूमध्य समुद्रके बारमें भी अभी ही बात कही जाती है ।

* यह लख ज्गिया गया अुस समय हिरोगिमा और नागासाकी जसे शहराको पन्धरमें नष्ट करनेवाल अणुबमका जम नहा हुआ था ।

परतु जिस समय तुका पर जो आपन आ पडी है वह ता बजाड है। अ पूव भूकपके कारण वहा हजारा मकान बठ गय ह और हजारा लाग जमीनमें दब गय ह। अितनमें पानीन सोचा कि म थाडे ही किसीने कम हू। म भी अपना चमत्कार दिव्याभूगा ! और पानीकी जसी भयकर बाड आओ कि रह सह अनक मनुष्य और डोर अुममें वह गय। अगोराक लाग प्राण बचानेकी चिन्ताम पडे थे अितनम वहा पागल कुत्ताकी अेक फौज खडी हो गओ।

पुराणाम दी गओ महान आपत्तियाकी सूधीमें चूहाका अुल्लेख है टिट्टियाका अुल्लेख है और अनाजके खतोको बरबाद कर डालनवाले ताताका भी अुल्लेख है

अतिवष्टि अनावष्टि गल्भा मूशका गुका ।

प्रत्यासनाश्च राजान पडता जीतय स्मता ॥

पाठांतरमे कहा गया है

स्वचक्र परचन च सप्तता अीतय स्मता ।

स्वचक्रका अर्थ है आतरिक विद्रोह और परचक्रका अर्थ है विदेशियाका आक्रमण। अिन जीतिया आपत्तियामें ओश्वरने अब कुत्ताकी अेक आपत्ति और जोड दी है।

अगोराके अुत्तरमें काग समुद्र है। अुस पर भी यह पागलपन सवार हो गया। अुसने जसा तूफान मचाया कि जीवन (पानी) पर विहार करनवाली अनेक नौकाओको मत्युकी शरणम भेज दिया।

अब अिस भयकर प्राणनाशके लिये किम पर क्रोध किया जाय ? अिसका अिलाज भी क्या हो सकता है ? अिस मानव ससृष्टिके हम अितने अभिमानी भक्त ह और अिसकी रक्षाके लिये हम प्राणाकी बाजी लगानेको तयार हो जाते ह अुम ससृष्टिकी कुदरतकी नजरमे कोओ कीमत नही। मधुमक्खियाका छता दीमककी बाबी समुद्रमें होनेवाल प्रवालके कीडाके वक्ष जैसे घर और मानवीय महानाम्राज्य — अिन सबका मूल्य प्रकृतिकी दष्टिमें समान है।

ग्वालका लडका मधुमक्खियाके छत्तेको अितनी आसानीसे तोड देता है अुतनी ही आसानीसे अितिहास विधाता बडे बड साम्राज्याको अेक क्षणमें मिट्टीमें मिला देता है। अितिहास कहता है कि समरकंद और बुखाराके प्रवेशमे अमु दरिया और सिन्दरियाके किनारे ताना महाद्वीपका व्यापार चन्ता था और महान आतर राष्ट्रीय ससृष्टिका वहा विकास हुआ था। परतु जहा भगवानने अेक फूक मारी और भयकर आधी आओ कि रेतकी बाल जाकर सारी आधादी — मपूण ससृष्टि — अेक क्षणमें असक नीचे दब गओ ! पाम्पी शहर अिस प्रकार ज्वालामुखीकी अग्निम जलकर भस्मीभूत हो गया असी प्रकार मध्य अेगियाका अेक समद गहर रतके समुद्रक सूखे तलम डूब गया और सदाके लिये नष्ट हो गया। वहाका अयाचारी राजा भी रेतक नीचे दबकर मर गया

और ग्राहकत्व लिखे लखनेवाले ग्राहनेवा भी दबकर मर गये। यायी और अयायी, प्रामाणिक और अप्रामाणिक, स्वपक्षी और परपक्षी सब कोभी धरतीम समा गर। समूचा आनन्द और समूचा दुःख सदाचार और अनीति, जीवन और मृत्यु—सब अन्तर्म गात हा गये। हजारों वर्षोंमें मनुष्य जातिने जो पुण्याय किया था वह माराका मारा देखते देखत स्मृतिगोप बन गया। परतु स्मृति भा बन रह सकती थी? स्मृतिका रखनेक लिखे भी कोभी मनुष्य जीवित ता रहना चाण्डिये न? यह महान सम्झति रेतके समुद्रमें डूब कर विस्मृतिकी खाशामें लुप्त हा गयी।

हजारों वर्षोंके बाद भगवानने फिर अब फून मारी और आधी अल्टी चलन लगी। रतके समुद्रमें भाटा आया और सब तरहके प्राचीन अवशेष प्रकट हा गये। जिन ससृष्टिकी स्मृति भा नष्ट हो गयी थी, उनके बहुतेमे वचे हुअे अवशेष लुप्त हानर हाय लग गये।

जा भूकंप अगोरामें हुआ वही यदि भूमध्य समुद्रमें हुआ होता, ता शायद अम मागरक तलकी भूमि अचो हा। तातो मुसोलिनीका अिटली, अतानुक्का टर्की फ्रान्सा अन्जोरिया और नेगमका अेविसीनिया सब पानीमें डूब जात और आज जहा महाराका रगिस्तान है वहा फिरमे अब विगाल समुद्र गजना करना हाता। अम स्थितिमें तो यूरापक सारे प्रदन ही अबदम बदल जाने। और यदि मारे यूरापमें असा कुदरती अुयल-भुयल हो जाती ता। ग्रासिस्टवाद और नाबोवा सम्पवा और पूजोवाद—गभी वाद चिरकालके लिखे निद्रा-धीन हा जात। मनुष्य-जावन अितना ज्यान कुदरतके अधीन है अितना क्षण-भंगुर है कि अममें क्षत्र काम हानिक लिखे राग-द्वपके ज्वरमें फसे रहना मनुष्यके लिखे बना तब अुचिन है अिम बातका विचार करनेका समय अब आ गया है। यूरापक मद्रमुद्रके नाम ही माना विश्व नियतान अपना अुपहासपूर्ण व्यग तथा एार मद्रन् मिट हास्य करनक लिखे अगोराका भूकंप भेज लिया। मनुष्यने जा पद लडा है अुस पर भगवानन माना अपना यह भाष्य कर लिया है।

मानव पिता मनु भावान कहते हैं कि न धन देमाधित्य धर कुर्वित केनचित्।' अनी क्षण भंगुर कायाक महारे रत्कर अभिमान करनका और किसीक प्रति वर रखनेका काजा अय नहा रह जाता।

प्राचीन लग अनन्य मद्रमुद्र अडनक वा जा बोधपाठ सीचे ये अुने पुन गातनर लिखे मनुष्याका प्राचीनोंक चितनी या अुसगे वहा अधिक कीमत पुजाना पड़ेगा। वहा है मनुष्यका बुद्धिमत्ता!!

अित मुनिमें नीतिना मागाय है या बन अथे अदृष्टका? मनुष्यको या अुग रहना पडन है वह अुगक दुराचारका परिगाम है या बवल आक गिनक पटना है? निरा सपना है? य प्रदन वार-वार मरे मनमें पदा होन

हैं और जब अगोरा जैसे भीषण सक्क अवस्मात् टूट पड़ते हैं तब तो य प्रश्न अधिक तीव्रतासे मेरे मनमें जुठने लगे हैं। बिहारके भूकंप बाद जब गांधीजीन कहां कि 'अस भयानक प्रकोपके पीछे म भारतके महापापकी सजा दगता है तब सारे बुद्धिवाली लोगाने आश्चर्य प्रकट किया था। रवीन्द्रनाथ ठाकुरको भी दुःखके साथ कहना पडा था कि 'गांधीजीवा यह कथन युक्ति-सगत नहा है। म असे अधविश्वासके साथ सहमत नहा हो सकता। जितना ही नहा गांधीजी जैसे महापुरुषके असि प्रधारका जनता पर जो अनिष्ट असर हानेकी सनायना थी, असे दूर करनेके लिये अुहे (रवीन्द्रनाथ ठाकुरका) अपना मत मावजनिक रूपमें प्रकट करना आवदपक मालूम हुआ। गांधीजीन अिन सब लागाम अक ही प्रश्न पूछा 'क्या दुनियाम अगत नीतिका राज्य है और अगत अन्ष्टका राज्य है? जो भी कुछ होता है अुसका यदि काओ न कोओ कारण हाना ही चाहिये और प्रत्येक कारणका कोओ न कोओ परिणाम होना ही चाहिये, तो क्या असि महान प्रकापक पीछे भी मानवीय अपराधका कोओ न काओ कारण नही हो सकता?'

बिहारके भूकंपने आकर गांधीजीसे यह नही कहा था कि म अस्पयता रूपी पापका ही फल हू। गांधीजी भी यह नही मानते थ कि अस्पयता कवल बिहारमें ही है और दूसरे प्राताम नही है—और न के यह मानत थ कि बिहारका भूकंप बिहारके ही पापाका फल है। कुदरतम सारी बात अक दूसरेसे जुडी हुयी होती ह। पेट ठीक न हो तो सिरम दद होता है। राग्यकताआकी नीयत बिगडनेसे प्रजाको दुःख भोगना पता है। महामारीके अक रोगीक सपकमें आनेसे सारे गहरको कालरा या असी दूसरी किसी बीमारीका शिकार बनना पडता है। हाथस चोरी करन पर भी काडे पीठ पर पडत ह, क्याकि हाथ और पीठ अेक ही गरीरके अग ह। कुदरतकी सजाय भी मानो हमें सावधिक सम्बधका पाठ सिखानेके लिये ही कही भी प्रकट हो सकती ह। कुदरतकी असि रचनाको हम पूरी तरह समझ नहा सकत। फिर भी नीतिके सावभीम तत्वाम हमारी श्रद्धा हानेक कारण असि बातका हम अनुभवसे सिद्ध नहा कर सकत तथा जिते विरोधी तक्से हम काट भी नहा सकते अुसे श्रद्धासे मान लते ह।

गांधीजीने समझ लिया कि बिहारका भूकंप अेक असाधारण सक्क है। अुसका सम्बध देशके सक्डा वर्षोंसे चले आ गेहे किसी पुराने और असाधारण व्यापक पापक साथ हो सकता है। असिलिये अुस समय गांधीजीन अपनी असी श्रद्धा प्रकट की।

और हम जरा सोच कि अन्ष्टका अय क्या होता है? अकस्मातका अय क्या होता है? दक किन कहा जाता है? जिमका कारण तो है परंतु जो दिखता नही, वह अन्ष्ट है। जिस घटनाका कस्मात अयवा कारण हम

नहा साज सकने परन्तु जिसका कोओ न कोओ कारण तो हाता ही चाहिये, अउ घटनाका हम अ-कस्मात कहत ह।

अिन घटनाके मानवीय और कुदरती कारणाका विचार करनेके बाद भी कुछ कारण बाकी रह जात ह। 'अधिष्ठान', 'वता', 'नाना प्रकारके करण' और 'विक्रिध व्यापार' — अिन चारा प्रकारके कारणाका हिसाब ही जानेके बाद जा कारण राकी रहता है असे दब कहा जाता है। अूपर बताये चार कारणमें काओ न कोओ नतिक प्रयाजन तो रहता ही है और केवल 'अज्ञात' कारणमें ही 'नतिक हनुका अभाव है' असा निश्चित रूपसे कहना युक्ति-सगत नहीं है। परन्तु यदि किसी कारणके बारेमें हम अितना भी नि सदेह कह सके कि वह सवया 'हेनुहीन' है तो फिर वह पूणतया 'अज्ञात' नहीं रहता।

वर! बुद्धिमानी तो अिसमें है कि हम प्रत्येक महान घटनासे काओ न कोओ बोध सीख और अघे तथा अज्ञान बने रहनेमें ही बुद्धिकी सफलता न मानें। जब यूरापमें महायुद्ध चल रहा है जब पचास पचास हजार लोग कुदरती दुघटनासे वम ही मर जाते ह तब अिसमें मनुष्यक लिअे काओ भी बाध नहीं है असा मानना बसाओखानेके पास आनदसे घास चरनेवा जानवराकी स्थितिमें रहने जमा है। मनुष्यका अिन सद याता पर विचार करके कमसे कम अपने युद्ध जवरकी तो दूर करना हा चाहिये।

माच १९४०

५२

कालकी महिमा

कालके माहात्म्यस सब कुठ समय पर अपने आप हागा, आप क्या जल्जाना करत है? और, अिन्यामें चिपटी रहनेवाली जनतामें बुद्धिभेद क्या पदा करते है? अिस तरह समाजके कुछ गग सुधारकाके सामने दलील करते ह। 'काल बढा बलवान है। दुनियामें जा परिवर्तन होना चाहिये असे का स्वय करा लेता है। आप सब कुछ असी पर छोड दीजिये। अवारण जन्माजी निखा कर आप सुधारका मिथ्या प्रयत्न क्या करते ह? अस्पृश्यता आज अिम रूपमें है अम रूपमें वह टिकनेवाला नहीं है, यह हम भी जानते ह। हम यह भी नहा कह सकते कि आज अस्पृश्यताका जो रूप है वही सौ दा सौ बर पहल था। यह सब कालबलस बदलनेवाला ही है। अिसलिअे काल को आप अमकी अपना गतिसे चलने दीजिये। व्ययमें समाजको छेड कर आप दूरे दूरे समाजक और अधिक् दुकडे क्या करत ह और नये नये क्षगडे क्या

अपने सिर लेते ह? इस तरहकी दलील आजकल कितने ही लोग दग्न ह। परतु थोडा सोचनेस भी समझमें आ जायगा कि इस दलीलमें काआ मार नहा है। वह जडताका ही लक्षण है।

लेकिन इस दलीलके पीछ भी सनातन हिंदू धमका अेक विशिष्ट ँक्षण जग्नर मालूम होता है। सनातन हिंदू धमन कालका महिमाको पहचाना है। जस जसे काल बदल वसे वसे हमारा कलेवर बालना चाहिये यह जावन धम है। यदि इस सिद्धातक अनुमार हम न चल ता कालके शिकार बन गते ह। यह सब जाननेक कारण ही सनातन हिंदू धम नित्य-नूतन और चिरजावी बना है। सनातन धम जानता है कि अेक दिनमे गम नही पक्ते। मनानन धम यह भी जानता है कि जो एक गये जुह मरा हुआ ही समझना चाहिय। सायकल चलती है तभी तक वह सीधी खडी रह सकती है। अुसकी गति रुकी कि वह गिरी। दवाके राजा इद्रने कहा है कि जो मनुष्य बठा रहता है जुगका भाग्य भी बठा रहता है जो अुठता है अुसका भाग्य भी जुठता है जो साया रहता है अुसका भाग्य भी सोया रहता ह जो चलने लगता है अुमरा भाग्य भी चलन लगता है। अिमलिअे तुम चडा चगे चलन लगा। जो चलता है वही अपन स्थान पर पहुचता है। हमार अपि मुनियान जावनका यात्रा कहा है क्याकि जीवनमें जाना चलना हा जरुरा हाता है। सनातन हिंदू धम गगा नदीके समान निरतर बहता आया है। अिसी कारणस बह सदा ताजा बगवान और चिरतन रहा है। सनातन हिंदू धम वदावो प्रमाण मानता है आधार मानता है परतु वह वदाक पास ही रुका नही रहता। वदाका ही नया सस्वरण जो स्मृतिया अथवा धमशास्त्र ह जुनका भी वह स्वीकार करता है। लेकिन वहा भी वह ठहरता नहा। अितिहास पुराणाको पाचव वेदक रूपमें स्वीकार करके जिहें भी अुसने धमका नजी प्ररणा दनरा काम सापा। पुराणाके बाज जो तत्र आये अुनका भी हिंदू धममें स्थान है। अिन सब परिवतनामें बहूतमे परिवतन अच्छे थे ता कुज बहूत बुरे भी थे। हर जमानकी परगागिया और कठिनाअिया अेकसी नही हाता। वृद्धि भी अेकसी नहा हाती। और जिन्नाज भी अकम नही हान। कभी कभी किसी रोगको मिटानक लिअ हम जा दवा करत ह बह दवा ही मूज रागसे अधिक बुरी मावित होता है। जोर बादमें ता अुग दवाकी दवा करते करत ही हमारा दम निकल जाता है। तत्रमागमें अिननी मडाध घुग गयी कि अिम वातका बहूत बडा भय पन्ना हा गया कि धम और गन्गचाररा ही कहा अिमकी गन्गीमें दम न घुट जाय। अिस मारी मडाधका दूर करनका काम धम-मुषागक सनाने किया। वण्णव धमकी मारी प्रशति पुरानी मडाध और गन्गीका जडमे मिग कर धमका भक्तिव अुगवज आमन पर बढानेक लिअे थी। अिमीलिअे मनवाणी भी सनातन हिंदू

आधार रूप मानी जाने लगी। जिस किसी सतवा धर्मानुभव हुआ है वह धर्मके लिये प्रमाण है। और प्रत्येक अनुभव किसी भी समय और किसी जगह पर अकेला ही होना चाहिये। जल जब कोभी नया व्यक्ति अनुभवकी लहर आता है ता सनातनी लोग पुराने अनुभवके साथ अमुकी तुलना देख लेते ह। हर जमानेकी भाषा अलग हाती है, विचार-पद्धति अलग ह। किसीका अनुभव कच्चा हा सकता है, किसीका जधूरा हो सकता अकेला ही सकता है। कुछ लोगमें अपने अनुभवको शदीमें अच्छी तरह तो क्षमता नहीं हानी और कुछ लोग तो श्रौताआकी शक्तिका समय बर पनी बात कहनेवाल हाते ह। इसी कारणसे अक अनुभव और दूसरे अनु भेद दिखाआ देता है। जिस भेद तक अनुभवकी ममानता दिखानकी, अनुकी जयता मिद्ध करनेकी जिम्मेदारी धर्म भाष्यकारोकी है।

जिस प्रकार सृष्टिमें विकासका तत्त्व सबन लागू होता है, अुसी प्रकार साक्षात्कारमें भी विकास जसी वस्तु अवश्य है। अीश्वर हमें, मनुष्यका आ देता ह व ह क्रम क्रमसे ही ाता है। मुक्ति भी मनुष्यकी क्रम क्रमसे ही ती है। धर्मके अिम महान तत्त्वका ही वात् माहात्म्य कहा जाता है।

जो लोग यह कहते ह कि आदवरने हमारे पुरखाको सारा ज्ञान द दिया था, वन ये अिमालिये हम अपने पुरखास आगे बड ही नहीं सकत, वे सनातनी नहा जा लोग सब्च सनातनी होते ह व शक्तिगील धर्म प्रवाहमें विश्वास रखत वे यह माननेमें अिनकार करत ह कि अीश्वरने अक बार अपि मुनियों और ारको प्ररणा दी और फिर अीश्वर सी गया। अीश्वर सबके हृदयमें प्रति ा है। सब्च सनातन धर्मका यह विश्वास है कि अीश्वरकी आवाज मुनने नी अत करणकी गुडि कर ली हो तो कोयी भा मनुष्य अीश्वरकी आवाज सकता है। अिमालिये धर्मशास्त्राक अक्षरायसे चिपटे न रहनेवाले पुस्पाको म्क या अ्रष्ट कहकर सूली पर चाने जला डालने या अीट पत्थर चला मार डालनेकी मूल हमारे सनातन धर्मने कभी नहीं की। सनातन धर्ममें की महिमाका बडा महत्वपूण स्थान है। काल महिमा सनातन धर्मकी गेष्टता ही है।

*

अत जो लोग काल-माहात्म्य पर निभर रहनेकी बात कहते ह, व सना धर्मकी नाडीको ममच कर सनातन वृत्तिमें ही बोन्ते हैं। परन्तु काल हात्म्यके अूपर रहनेवाला यह विदवाम दो प्रकारका होता है अक आस्तिक ारा नास्तिक। अकका विश्वास आमा पर होता है दूसरेका जडता पर। अय यदि कात्री पुस्पाय न करे और केवल कालक प्रवाहमें बहता रहकर क हें कालका अुपासक ह, कालके प्रति वफादार ह तो वह अनात्मवादी नास्तिक

है जन्तुओं का भ्रमण है मरण धर्म है। एतद्गीता का टुकड़ा पानीमें बहता जाता है वह प्रवाह धर्म है जीवधर्म नहीं। तभी प्रवाहमें ही पत्थर पड़ता है और अनुरोध ही वह टुकड़ा पग जायगा वह पड़ागा पड़ा पड़ा रहता है और गड़ा करता है। गडनेमें अग्रे कोई अग्रति नहीं होती एतद्गीता का भाग का प्रवाहमें आगे नहीं बढ़ सकता। किमीको अग्रे पर दया आ जाय और पानीमें तरा तरा अग्रे अग्रे पाम पाकर अग्रे एतद्गीता मार द या हाथपा धरता द ता प्रवाहमें आकर वह फिर आगे बढ़गा जोर यात्रा गर तो बगला रि दगा ताका भागम्प, म बसा प्रगति कर रहा है। बाभी एता आत्मो अग्रे प्रवाहमें तर रहा है जोर अग्रे अपनी गतिता गप्ट करना है ता यत्र एतद्गीता अग्रे टुकड़ा देखकर खुश हागा। वह अग्रे पर गवार हा जायगा और अपना गुविधाक अनुसार अग्रे प्रगतिके पथ पर ल जायगा। अग्रेमें प्रगति ता गसर हानपा जिन् आदमीकी हा मानी जायगी। लकडीका निर्जोष टुकड़ा तभी अद्गमन पाम पडा हो ता क्या नतीके बीचारीच पगा हो ता क्या और तभी अग्रे मुग पर ज्वार भाटके घका खाते खाते टुकड़ा भागता रह ता भी क्या ? मुक्ता प्रगति कसी ? अग्रेका जन्मत्र नमीष यही है रि या ता वह स्वय गड जाय और जहर बनकर दूसराको मारे अथवा गा बनकर दूसराका पापण कर।

पुरुषार्थ-हीन समाज मरा हुआ समाज परतत्र बना हुआ समाज अथवा वह लकडीके टुकडीके तरह बाल माहात्म्यकी रणा करता है। वह जड़धर्म हानका वजहस नास्ति है अथवा जीवन यथ है। अग्रे देखकर जीवकर भी रोयगा।

बाल माहात्म्यके विषयमें पुरुषार्थी आस्तिक व्यक्तिता विवाग अग्रे भिन्न होता है। वह अस्विकी पहचानता है। अस्विक गगन्मय है अस्विकी सृष्टि सप्रयोजन है अग्रे सृष्टिका जन्म चतयके बिनासके लिअे है — असा समझ कर वह बाल प्रवाहका अपयोग विचार-पूर्वक चतयके विनासके लिअ करता है।

जुस पारक मंदिर तक जानेके हेतुसे नदीक प्रवाहमें बहनेवाला कुण्डल तराक जानता है रि वह सीधा सामनेके किनारे पर नहा पहुंचगा। पानीका प्रवाह जुस नीचेकी ओर ही लाच ल जायगा। सामनेके किनारे पर पहुंचनेमें गायत जुसे अेक-दो मीठ प्रवाहक साथ लिचकर बहना भी पडे। परतु असाका यह दड सकल्प हाता है कि भले ही नीचेकी आर लिच जाऊ एकिन सामनेके किनारे तो म पहुंचने ही वाला है। वह कोजी लकडीका टुकडा या मुर्दा नहा है जो प्रवाह धममें पडकर अपने चतय धमको और प्राप्तय स्थानका भूल जाय। रास्तेमें पत्थर आये तो वह अग्रे बचकर निकल जायगा। भूलसे अग्रे किनारे पर पहुंच गया तो फिर पानीम बूगा और फिरस अग्रे किनारे जानेका प्रयत्न करेगा। नीचेकी आर लिचकर अधिक दूर न चला जाना पडे, अग्रे लिअे वह कुछ हद तक प्रवाहक विरुद्ध भी अपनी गतिता अपयोग

करेगा लेकिन अपनी अधिकांग गतिनका अपुपाग वह सामनेवाले किनारे पर पहुचनेके लिये ही करेगा और अतमें अुस किनारे पर पहुच कर ही आराम लेगा । वह सोचता है कि प्रवाहमें हू तब तक आराम लिया ही नहीं जा सकता थकान अुतारी ही नहीं जा सकती जागे बढते बढते ही जा आराम मिलता है, अुसका लाम उठाकर मुझे आगे ही बढना है । अेक बार सामनका किनारा हाथमें आया कि मनचाहा आराम लिया जा सकता हैं और अुपरकी ओर चलकर मोक्ष-मंदिर तक पहुचा जा सकता है । कुगल तराङकी कालोपासन अलग होनी है अुसका धीरज (धैर्य) भी अलग होता है, और गवकी कालोपासना या धीरज बिलकुल अलग होता है ।

प्राचीन कालमे ममी धम-मुधारक कालकं माहात्म्यका पहचानते आये हैं और प्रमका नये सस्कार देते रह ह । व कालसे लाम अुठाते हैं कालकी गरणमें नहीं जाते ।

पश्चिमा देगामें काल-गुरुपकी बडी मुदर कल्पना की गयी है । वह अेक युवा पुरुष है । अुसके सार गरीर पर चरबी या मक्खन लगा हुआ है । वह सतत दौडना ही रहता है । कोभी अुसे पकड नहीं सकता । अुसकी चाटी कोभी पकड ले जिस खयालसे अुसने अपने मिरका अच्छी तरह मडवा लिया है । अीश्वरकी आनासे अुसने कपालके अुपर बालाकी बबल जेक अच्छी लट रख छोडी है कालको पकडना हा तो वह हमारे पाम आये अिभके पहल ही हाथ लम्ब करक अुसकी अिम लटका पकग कि काल हमारे हाथमें आया । अेक धणक भा गफलत हुआ तो अुसे हाथसे छूटा ही समझिये । अुसके बाल कोभी पीछे की ओर नहीं अुडते कि हम अुह पकड ल । अिम खूबीका अंग्रेजीमें 'To catch Time by the forelock' कर्ते ह ।

जो मनुष्य कालके अिस स्वरूपका जानता है, वही कालके माहात्म्यक जानता है वही कालका अपना बनाता है और कालमे सारे वरदान प्राप्त करता है ।

अंग्रेज सरकारने रेलगाडी चलायी ता अुसमें ब्राह्मणके साथ भगीका भ वठनकी छूट दी । ब्राह्मणका रेलसे लाम अुठानेका लोभ छूटता नहीं, और भगी दूर वठनेके लिये कहा जाय तो वह मानता नही । अिसलिये लाचारीसे ब्राह्मण छुआछूतने विचारका कुछ हल तक छो ग दिया है । चिडना-बुडता भी वह भगी साथ वठ जाता है पर जाकर स्नान करनेका पुष्पाय भी अब अुसमे नहीं रह गया है । दूसरे लोग डाटेंगे, अिसका डर कम रहता है । ब्राह्मण रेलगाडीक लाम अुठानकी लालचमें पडा और कर्तने लगा कि कलिकाल आ गया है अिसअिअे अब धमका पालन कठिन हा गया है । ब्यास मुनिने कहा ही है कि कलिकाळमें म्लेच्छ लोग बलवान हो जायगे । यास जमे त्रिकालन मुनिका वचन

गलत कैसे हो सकता है? इस तरह काल माहात्म्यका समझ कर रुढ़िग चिन्त रहनेवाले ब्राह्मणन कुछ हूँ तक अस्पृश्यताका छाडा और वह अमना अभ्यस्त हो गया। वसी आज तक की हमारी प्रगति रही है। इसम हिंदू धर्मकी मित्रप कहा है यह समयमें नहा आता। जिसकी लाठी उसकी भंस बल्बानकी ही सता सब जगह चलगी — यही अगर सनातन हिंदू धर्म हो तब तो बान जग्य है। सब पूछा जाय तो अममें लज्जाजनक दूषणकी नास्तिकता ही बूट बूट कर भरी है। सरकारी अधिकारोके अमायक सामन चुकता पड तब यह गाल सामन रखता कि 'राजा विष्णुका अवतार है' कोओ धनी यकित या दानी राता स्वेच्छाचारसे समाजको विगाड तब समरथको नाह दोम गुमाआ वाला बचन बुद्धत करना और धर्माभिमाना रागाके दोपोको छिपानके लिअ यह कृता कि धर्मका विजयके लिअ अवम करनमें दोष नहा — य सब नास्तिकताक ही लक्षण ह। इस प्रकार लाचारीम जो परिवतन करन पडें स्वायक कारण भयक कारण या चूठे अभिमानके कारण जो परिवतन किय जाय अनुका श्रय धर्मका नही दिया जा सकता इस काल माहात्म्य भी नही कहा जा सकता। मनप्य समाज कोओ जड पचभूत नही है। वह कोआ वनस्पति-सष्टि नहा ह पशुयानि भी नही है कि कुदरतके जार पर लाचारीसे अपन जाय जो परिवतन हा अहीसे सतोष मान ल।

जीश्वरन मनुष्य जातिको स्वयं और काल दोनाम दूर तक दखनका दृष्टि प्रान की है। पशु पक्षियाको तियक यानिका कुतरतन दिगादृष्टि प्रदान का ह, किंतु अधिक कालदृष्टि प्रदान नहा की है। कालदृष्टि बवल मनुष्यका ही मिली है अस्तित्त्रे मनुष्यको कालके बग न रखतर जीश्वरन जुस कालका सहायापी कालका साथी बनाया है। मनुष्य कालकी अवगणना हरगिन नहा कर सकता, यह बात जितनी सच है अतनी ही यह भी सच है कि मनप्य गवकी तरह कालके अधीन भी नहा रह सकता। अत मनुष्यके भाग्यम यह लिखा गया है कि वह कालप्रस्त या कालनस्त न होतर कालन बने काल सहायक बने और अतम कालकृत् (कालका निर्माण करनवाला) बने। मनप्यकी महिमा काल महिमासे शस्त नही है। मनुष्य महिमाका अधिकार काल महिमाके अधिक है।

समस्त मनुष्य जातिके चतय रूप नारायणने — समस्त मनप्य जातिक परम आदग रूप भगवान् पुरुषोत्तमन — स्वयं कहा है कि म काल ह। परंतु वह काल अलग है और नामद शब्दको पशुकी तरह घसीट कर ल जानवाला बल्बान काल अलग है। अक काल पर विजय प्राप्त करती होती है जब कि हमरे कालकी अुपासना करना हाता है।

जीवन-व्यवस्था

चौथा खण्ड

मंदिर-भावना

हमारे मन्दिर

१

मन्दिराकी सस्या बहुत पुरानी है। वदिक कालमें गायद मूर्तिपूजा नहीं थी। महाभारत कालमें भी नहीं रही होगी। मन्दिरामें जाकर परमात्माका अनुपामना करनेकी प्रथा गायद हमने बौद्ध संप्रदायसे सीखी होगी। यह भी समभव है कि बाल्हीक देशस आकर भारतमें बसे हुए रामना अथवा यवनासे हमन मूर्तिपूजाकी प्रथा अपनाआ हा। अतिहासके अवपक अस प्रश्नका निणय कभी भी कर परनु अिनना ता निर्विवाद है कि हिंदुआके सामाजिक और धार्मिक जावनमें मन्दिराका दाघकालसे महत्त्वपूर्ण स्थान मिला हुआ है।

मनुष्यको मन्दिरकी कल्पना कैसे आओ होगी? किसी भक्त या साधकने हृदयको अुन्नत बनानेवाला काओ स्थान पसंद करके वहा अपने ध्यान और भक्तिके लिअे कामा आलवन पसद किया होगा अथवा रखा होगा? वहा भक्त को अपनी श्रद्धाके अनुमार अथवा औरवरके अनुग्रहके अनुमार धमका प्राप्ति हुआ होगा या अुसकी कामना मिद्ध हुआ होगी। फिर त्यागाका जिम वातका पता चला हागा। अब ता पूछना हा क्या? जिस तरह जिसा बरक हाधक गुणकी (निगानकी) स्थानि फैलत ही सारे रागी दौड कर अुमके पास पहुच जाने हैं अुसी तरह जिसा स्थानकी जाग्रत दबस्थान' के नामसे स्थानि पली कि सारे आनजन अुसी स्थान पर दौडे चले गये हागे और अपने भक्तिभावसे अुन्ताने अुस ओतप्रात कर दिया हागा।

अब मन्त्र हृदयका अेवाग्र समपण न हा सके तब मनुष्य क्या कर? तब ता हृदयके वदरमें अपनी सपत्तिना समपण करना ही अुसे सूचेगा। हम राजाक पास अरजी लेकर जाना हाता है तब हम खागे हाय अुसके समन नहा जा सकने। राजा तो राज भूखा ही रहता है। अुम तृप्त करनेक बाद ही वह हमारी प्रापना मुनता है। ससृत्तमें राजा और परमात्मा दानाको आन्वर ही कहते हैं। तब ता परमात्माका स्वभाव भी राजाक समान ही होना चाहिये। राजा जिन चीजासे मनुष्ट होता है व ही चीजे औरवरका भी अपण करनी चाहिये। राजा भव्य मन्दिरमें अयात महलमें रहता है। भाट चारण अुमका विरुद गाकर प्रात काल अुसे जगाने ह। भाग विलासकी सामग्री मग अुमक चारा आर तयार रहती है। पालकी जसे सुखदायी बाहनमें बठकर बट सर करता है। मिष्टान्न अुमका राजका भाजन है। पत्र-पुष्प-फूल धूप, पचामृत — ये

मर जुमकी दनिक जरूरतें ह। बिही चीजामे मदिरके दवकी भा सगुष्ट करना चाहिय। सचमुच मनुष्यकी कल्पना जिस हद तक पहुच सके उस हद तक दयालु परमात्माको नीचे अतरना ही चाहिय। हमारी जो कल्पना है उसस अधिक भुन्न कल्पना भावानने हमें नही दी जिसमें हमारा क्या दोष ?

जिस प्रकार शायद मूर्तिकी पोल्पोपचार पूजा करनके लिज ही मदि राकी रचना की गयी होगी। बुद्ध जोर महावीर जसी विरवन विभूतियाके मन्दिमें भोग विलासके लिज कोयी स्थान नही होना चाहिये। स्मसानवासी योगीराज महाद्वके मदिम भी बभवका कोयी स्थान नही हाना चाहिय। परन्तु भगवान तो बचारा भक्ताके अधीन होता है। जब महारमाआको भी लागाकी भक्तिस परेशान होना पडता है तब भगवानको यदि भक्ताका दिया जा रूप और स्थिति स्वीकार करनी पड तो जिसम आरच्य कसा ? गरमीच नामें लोग मन्दिनी मूर्ति पर पला झलने ह जाडम भगवानको रजाभी ओत्नी त्तो है चौमासेम जुकामसे बचनके लिज दूधके साथ साठ भी पीनी पडती है।

किन्तु जब मूल सस्थापकके अनुयायी बड जाते ह तब मदिम जाकर पूजा करने दान करन और प्रसाद लेनका अधिकार भुन सवका हो जाता है। जिन उगाको हम अपना मानते ह बुहे हम मन्दिम ले जाते ह और दान तथा प्रसादके भागी बनाते ह। साथ ही अने स्थान पर जिन प्रकार हम मूनिरा दान करके टूताय होते ह उसी प्रकार साधकाकी भक्तिपूण आख देखकर भा हम कृताय होते ह।

यह तो कमवाण्ड जोर जुपासना-वाणकी बात हुआ। साधु-मतान मन्दि की अपुयागिताको अमसे भी आग बनाया। बुहान मन्दिाको धर्मोपन्नेग और भक्ति प्रचारया धाम बना लिया और जिस प्रकार मन्दिाको सामाजिक जीवनके केन्द्रका रूप े दिया। अिनकी मीमासा भी आज हमें जाननी चाहिय।

२१-११-२९

२

कमवाण्डो लोग जब पूजा करते ह तो अने ही करते ह। अने आदमी अरुण होकर जब कमवाण्डो पूजा करते ह तो बडी असुविधा हाती है। पूजा विधिकी जन्मनाकी जब कठिनायी तो रटती ही है। फिर कमवाण्डो प्राय मराम पूजा करते ह। प्रयक्की कामना भिन्न हानके कारण सामुदायिक पूजा करनमें अने बडा कठिनायी होती है। वड बड हाम-यनामें अिष्टिया जोर मनारापनाआमें सामुदायिक विधिरा पावन जरूर होता है परन्तु अब अिन नि चन गय।

कांगी विश्वनाथके मन्दिरमें जाकर आप देखिये। अंक भक्त आता है विद्वत्तायकी पूजा करता है अभिषेक करके लिंग पर फूठ तथा विल्वपत्र चढाता है और चण जाता है। वह पूजा करके मन्दिरके बाहर निकल जिसके पहल ही दूमरा भक्त आता है, वह पहले भक्तकी सारी पूजाकी फेंक दता है और नया अभिषेक और नया पत्र-मुष्प भगवान् विश्वनाथका अपण करता है। फिर जिसकी पूजाकी भी वही दगा हानी है जो जिसने पहले भक्तकी पूजाकी की था। सवेरम सापहर तक यही क्रम चलता रहता है। आटा पीसनेकी चक्की पर अंक आत्मी आता है और अपना अनाज जिसका लेता है। फिर दूसरा आता है जो अपना अनाज पीसवा लेता है। प्रत्येक आत्मीका चक्कीके साथ सम्बन्ध हाना है किन्तु पिसवानेवाले लागामें परम्पर कात्री सम्बन्ध नहीं हाना। आदर-बुद्धिकी मदनाके दुभाग्यपूण क्षणमें मेरे मनमें यह विचार आया कि होटलमें जेक आदमी किमी टेबल पर चाय पीकर चला जाता है। फिर टेबल साफ कर दी जाती है और दूसरे लाग वही आकर चाय-काफी पाते ह। फिर टेबल साफ की जाती है और फिर चाय-काफी नये भक्त आते ह। क्या यही दगा हमारे मन्दिरकी नहीं है? किन्तु मनका धमका कर मने समझाया कि जिस तरह मोचना अनुचित है। भगवान् ता निरपक्ष है। वह भक्ताके सतोपके लिये सब तरहकी विडम्बनाकी भी पूजा मानकर ग्रहण कर सकता है। क्या भगवानने स्वयं यह नहीं कहा है

ये यथा मा प्रपद्यन्ते तास्तथैव भजाम्यहम् ।

पत्र पुष्प फल ताय या म भक्त्या प्रयच्छति ।

तद्दह भक्त्युपहृत अदनामि प्रयत्नात्मन ॥

भगवानका अपहारा करना ठीक नहीं कहा जायगा। गमक कारण मेरा मन दब तो गया किन्तु धीमी आवाजमें कहने लगा हम भगवानका अपहारा कहा करते ह? हम ता सकाम पूजाम हानेवाले भगवानके अपहाराको देखकर मनुष्य-बुद्धिका आदर करते ह।

भाषु-सन्ताने कमवाण्डका महत्त्व घटा कर भक्ति तथा अपासनाका महत्त्व बना लिया। भक्तामें अंकगत अपासना भी हानी है और सामुदायिक पूजा भी हाना है। जिस प्रकार भाषु-सन्ताने हम मन्दिरका नया अपयोग सिखाया। उनहाने कहा कि मन्दिरामें पूजाकी विधि भले ही हो राज-वभवकी गामा भण ही बने परन्तु बहा जन समुदायको जेकर करके भगवानका गुणगान करना चाहिये और नाति सन्ताने तथा भक्तिका अपदेग करना चाहिये। यही मन्दिरकी मुख्य प्रवृत्ति होनी चाहिये। सब लोग मन्दिरमें आओ हिल मिल कर रहा जेक-दूमरेकी मदद करा और साथे माम पर चला यही मताका सन्देश था। वम फिर तो कमवाण्ड और गामाकाण्ड मन्दिरामें गौण बन गये और भक्ति

द्वारा धम प्रचारका काण्ड बन्द लगा। परमात्मावे सभी बालक प्रमसे अन्त
हो और सब प्रमपूवक हिल मिलकर साथ साथ परम्पर भावयन शुभनिके
भाग पर चल। यही हो गयी प्रेरणा।

मच्चिता मदगतप्राणा बोधयत परस्परम्।
कथयन्तश्च मा नित्य तुष्यन्ति च रमन्ति च॥

यही सताका माग है।

निर्मान माह साधु सन्ताने मनमें अच नीच भावके लिज काजी स्थान हा
ही नही सकता। सब मनुष्य परमात्माके बालक ह सब समान ह और सब
भायी भायी ह। वश्य तुकारामन गाया है आम्ही जातीच ब्राह्मण जामच
सायरे मुसलमान — हम जातिसे ब्राह्मण ह और मुसलमान हमारे सग मन्त्रघा
ह। असे सताके घरमें प्रत्येक मनुष्यका प्रमसे स्वागत हो सकता है। जिह
सत्पुरुषाने अुपदेशकी जहरत नही है व मन्दिरम न जाय। जिन लागीकी
आस्था औरकरका नाम लनम है वे सब मन्दिरम अिकटठ हो। यही सताका
नियम — सताका वानून है।

मन्दिरक तीन विभाग होते ह (१) गभगृह जहा पूजाके लिज मूर्ति रहती
है। अिमके अूपर ही मन्दिरका गिखर होता है। (२) सभा मडप जहा पुराण
कीतन और अुपदेश प्रवचन हाता है। (अिस विभागकी नाटय मन्दिर भी वहुते
ह कयाकि किसी स्थान पर भगवानकी लीलाका अभिनय भी किया जाता है।)
(३) गभगृह तथा सभा मडपके बीच जो छाटोसी जगह होती है अुसे अलराल
कहा जाता है।

कमकाडियान मन्दिरके गभगृहका बीज बोया ध्यानमागियों अतरालको
पसद किया और भक्तिमार्गी तथा पुराण प्रिय लोगान अपन प्रमस सभा मडपक
भर लिया। अिस तरह हिदू धमका सपूण स्वरूप अक मन्दिरम समा जाता।
अिनम से नान और भक्तिक प्रतिनिधिक समान सभा मडप ही हिदू समाज
सावजनिक स्थान माना जाता है। सभा मडप तक सारे हिदू केव मूर्ति-
दानक लिज ही नही कि तु धमकया मुनन मुनानके लिज भी जा सकते ह।

कमकाडियान गभगृहमें चलनवाली पूजाविधिको अपन हायम रखा और
सब मायारणको कवल दशनका अधिकारी ठहराया और अुसम भी तर-तम
भाव (अूच नीच भाव) को जोडकर हिदू धमके टुकड-टुकड कर डाल। मुसल
मानान मन्दिरानी मूर्तिया ताडकर हिदू धमके किरसी प्रकारकी तान्त्रिक हानि
कलाका नाग किया परन्तु अिससे हिदू धमको किसी प्रकारकी तान्त्रिक हानि
नहा पट्टकी अिसके विपरीत हमारे अभिमानी कमकाडियान समाजको ताडकर
। छिन भिन्न कर लिया हिदू धमको बडी हानि पहुचायी और अिस प्रकार औरकरसे

अिनकार किया। अिन छिन भिन हिंदू समाजको पुन सगठिन और जेवजीव बनाकर धमको प्रतिष्ठित और शोभानित करना ही आज मन्दिराका युगकाय है।

१९-१२-२९

३

आजकल अम्पश्याक लिअे नये मन्दिर बनवानेकी सूचना की जाती है। अिस सूचना पर थोडा अधिक विचार करना जरूरी है।

दशमें पुराने मन्दिर अितने जधिक ह कि अुन सबकी व्यवस्था करना हिंदू समाजके लिअे अशक्य नहा तो कठिन जरूर है। विधवाआका प्रश्न अितना जटिल है अुतना ही मन्दिराका प्रश्न भी जटिल है। हमने असे अनेक अनाय मन्दिर देखे ह जा कहते ता विश्वनाथके मन्दिर ह परतु अिनमें वपोंसे किसीने झाडू भी नही लगाजी है। जो नियम मिट्टीकी मूर्तियाके लिअे ठीक है वहा मन्दिराके लिअे भी होना चाहिये। मिट्टीकी अिस मूर्तिका पूजा नही होती अथवा जो मूर्ति खडित हो गयी है, अुमका दान अगुभ होना है। अुसका किसी तीर्थ या जलाशयमें विसजन कर दना चाहिये। कुछ अतिहासिक मन्दिराको अितिहास रक्षाकी दृष्टिअ सडित अवस्थाम ही रखना हो ता वान अलग ह। परतु सामाय रूपमें प्रत्येक मन्दिरका अच्छे अखड रूपमें ही अुपयोग हाना चाहिये। और यदि असा न हा सके ता विधिवत् अुसका विसजन ही कर दिया जाना चाहिय। यदि हम पुराने मन्दिराकी अिस तरह व्यवस्था नही करना चाहते, तो नये मन्दिर बनवानेका हमें काअी अविनार नही है। अितने मन्दिर ह अुतनाकी रक्षा और सेवा करनेकी शक्ति हममें हानी चाहिये। अैसा न हा सके ता अिननाकी रक्षा और सेवाकी शक्ति हममें हो तथा अितनाकी अुपयोगिता हमें मालूम हा अुतन ही मन्दिर रखे जाय।

हम दखते ह कि समाजको नये नये मन्दिराकी जरूरत है। अिस तरह कम काडी साधकाके मन्दिरामें ही परिवधन करने भक्तिमार्गी अुपासका तथा माधु सताने अुनमें नये मन्दिर बना दिये अुसी तरह समाज अितपी सेवाके हाथा नये मन्दिराकी रचना हाना अुचित है। और समाजकी आवश्यकताअामें असा परिवतन हाना है वसा ही परिवतन मन्दिराकी रचना और व्यवस्थामें भी होना चाहिये।

१ मअसे पहले यह बात होनी चाहिये कि आज पूजास्थान और पूजा-मूर्ति जा गुहा प्रविष्ट'—अधेरेमें होते हैं अुसके वदले मूर्तिके लिअे 'विवत सप बनाया जाय। मूर्ति असे स्थानमें अूचाजी पर प्रतिष्ठित होनी चाहिये कि हजारों और लाखों लोग अेकसाथ अुसके दान कर सकें।

२ मूर्तिका मूल जुपयोग दानक लिखे है। मूर्तिका साफ करना उसका शृंगार करना किसी वतन पर काम करनेवाले पुजारीका काम है। प्रत्येक भक्त खड़ा हाकर मूर्तिको स्नान कराये भोजन कराये या अथ कोआ सवा अुमकी कर यह सावजनिक मन्दिराक लिख बाछनीम नहा है। नित्य-तप्त परमात्माके सामने भोग लगानेकी कोअी जरूरत नहा। अुसक समक्ष नवद्य रखनसे ध्यानमें काअी मुविधा नहा हाती। बेगव पन-पुष्प होम धूप-दीप हो सकते ह सगीत हा मक्ता है कला विधान भा हो मक्ता है। यह नव सात्विक रूपमें हाता है तत्र प्रसन्नताका बगता है और यान-दशनम सहायक होता है। भोग और नवद्यक कारण स्पगाम्यताका बगडा बहुत ज्यादा बढ आता है। यदि भोग लगाना ही हा तो अुमक लिखे अच्छ ताजे फल सूखा मवा जीर गायका ताजा दूध ही पसद किया जाना चाहिये। मूर्तिका सेवा तो निरथक है—अुसका मूल अुद्देश्य ता ध्यानक लिखे ही है। यदि हम अितना बात समथ लें जीर बच्चाकी तरह पूजाका सिलबाड करना छाड द तो मन्दिरामे सम्बन्धित अनेक बगड मिट जाय।

यदि मूर्तिपूजा हिंदू धमका आवश्यक अंग न हा तो फिर मन्दिरम मूर्तिकी प्रतिष्ठा करनका जाग्रह क्या रखना चाहिये? असे कितने ही हिंदू मन्दिर हो मक्त है जिनम भक्तिकी गभीरता हा पवित्र और शांत वातावरण हा, परन्तु मूर्ति या मूर्तिपूजाका नाम न हा। असे मन्दिर भी हो सकत ह जिनम किसी जेक मूर्तिकी स्थायी स्थापना न की जाय परन्तु त्योहारके अनुसार किसी भी अिष्ट मूर्तिकी स्थापना पूजाक स्थान पर की जा सके।

जिन लागाका जमी पूजाम विराय न हा व मव जिन मन्दिरामें प्रवेश कर सकत ह। जम मन्दिरामें धमबचा समाज बचा अितिहासका अध्ययन अध्यापन और मव धर्मोकी अययत बाति हा सकता है।

यदि हम ममम्ल ममात्र या धमका बेद्रस्थानमें रखकर अपने समग्र जीवनका समन्वित करना चां ता यह बाय मन्दिरा द्वारा अच्छी तरह हा सकता है। मन्दिराक माय समाज हिकका अनन्त प्रवर्तिया जोनी जा सकती ह जमे पाठ पाठ्य रगालय पग चिकित्सा सामजनिक स्नानागार वाचनालय पुस्तकालय नाट्यगृह वक प्रगाना आदि। जम मन्दिराकी यवम्या धमनिष्ठ चरित्र-वर्सा लान प्रनिर्दिमाक द्वारा हा हाता चाहिये। पुजाराका बाय किमा अेक जातिक समयमें नरा रत्न चाहिये और मन्दिरम आय हुअ दानका अुपयाग दूमरे किसा विममक बायमें नहा हाता चाहिये। मन्दिरका स्थान सर्वोच्च मदाचारका पापक हाता चाहिये। मन्दिरा मगत अुच्च काटिका तथा सम्बारी हाता चाहिये काला-रत्न मवानवाग नहा। अेक भी मन्दिर यवम्याहीन नहा होना चाहिये।

आज जम नय मन्दिराका बडा जरूरत है। मन्दिर और ममजिन्क बगडान-म अुर कर कितन हा गम मन्दिराक विराधा हा गय ह। किन्तु व समाजक

हृदयका नहीं पहचानते । मन्दिर सामाजिक और धार्मिक जीवनका केंद्र है ।
जुमने हिंदू समाजकी बहुत बड़ी सेवा की है और अपने नये रूपमें आगे भी
वह चर सेवा करेगा ।

०-१-३०

४

हमें दु लके साथ कहना पडना है कि दक्षिण भारतके कुछ विद्याल मदि
राका जार अनुके नमूने पर वने हुअे वदावनके दा-तीन भय मदिंराको छोड
दें ता हमार बाकीके सब मदिंर बहुत ही छटे होने ह । और किसी मदिंरक
थानानी भी लोकप्रियता प्राप्त करत ही जुमके आसपास पडाके मकान और
बाजारका दुकानें खडी हो जाती ह । हम ट्रेनम हा नावमें हा या गावमे हा
भीड उरर वठना और भीड करक बसना हमारा जाति-स्वभाव हा गया है ।
नि गन्त्र और अहिंसक हानेक कारण हमने आत्मरक्षाकी दृष्टिसे भीड पसद
की हा या गहरकी मन्त्रिपया असा अपना स्वभाव हानेके कारण हमने भीट
पसद का हा या किना अय कारणसे हमने यह रीति अपनायी हो परन्तु
जितना मच है कि हम लोग सग भीडम ही रहत ह । यह भीड व्यक्तिक
विकामके लिये अच्छी नहा है । अक काम करना हा ता दस आदमियाका
पूछना जार अितना पूछनेके बाद भी द नदिचयसे वह काम करनक लिये
कटिपद न हाना यह अच्छा स्वभाव नही है । और अितना पूछनेक बावजूद
हमने पूछनरी प्रथा या रीति अच्छी तरह निदिचत नही की है । अिसका कारण
भी हमारा यह भीड ही है । बडे बडे धार्मिक मेलामें जो यवस्था रहती है वह तो
सकल कपाक रिवाजसे श्रुत्पन्न हुआी स्वयभू व्यवस्था है । अपने अहिंसक सहिष्णु
और मित्रनार स्वभावके कारण हम लाग अितनी अन्यवस्थाको पचा सकते ह ।
अिना कारणसे हम अपने मदिंरामें दान भक्ति घम-ध्वण और अखड जागरणके
होन दुःख भी जुमका मच्छा जुपयोग नहा कर सकत । हमारे मदिंरामें खूब
भीट हाता है । परन्तु वह 'समाज नही हाता कवल जमाव ही हाता है ।
किनारा किसीके साथ कोअी सम्बध ही नहा हाता । कोअी किसीका पूछता
नही कारी किसीकी गुनना नहा । यह स्थिति असामाजिक कही जायगी ।
मदिंरम प्रमाद वाटने या बचनेकी प्रथा अत्यत अयवस्थित होती है । मुसगठिन
हिंदू समाज अिममें भी बहुत-कुछ सुधार कर सकता है । सिक्याने जसे गुरु
द्वारा प्रयत्नक मन्त्र बनाया है अुसी तरह हिंदू मदिंर प्रबधक मडल बनानेकी
जग्यत ह । अिस तरहक प्रबध हो जानसे थोड लचमें बडी समाज-सेवा हा
सकती ह । सबसे पहला काम हमें यह करना चाहिये कि मदिंरक आसपास
जिनना भी गुनी जमीन रखी जा सके अतनी रख । मदिंर अक सामाजिक सम्या

है। अक्सर हमारा लोभ जायग और जेकसाय बठकर कुछ विचार विमग भी करे। मन्दिरमें आनेके लिये चारा आर चोरे रास हान चाहिये। गान्धिया और घोडा जसी सवारियाका मन्दिरके निम्न आनसे रासना चाहिये। जीर मन्दिरके आसपास कहा अस्वच्छता या गदगीका नाम भी गहा हाना चाहिये।

मन्दिर हिन्दू धर्मकी रणार लिये हान है। अतः गये मन्दिरके द्वारा गोरक्षाका प्रवर्ध भी होना चाहिये। प्रत्येक मन्दिरके द्वारा आमगामर गमाजको चाहिये अतना गायका गुठ ताजा जीर सत्वपूर्ण घी-दूध मिलनका प्रवर्ध अवश्य किया जाना चाहिये। मन्दिर निती एक व्यक्तिका सस्या नहा हाना अिसलिये वहासे कवल स्वाय जीर अुमसे पग हानवाला घानवाजा दूर जानी चाहिये। दूधसे जो आय हो वह गोरक्षाने लिये ही तब की जाना चाहिये। गायके दूधसे होनेवाली आय गोवगका बचान और अुसे गुणारतक लिये ही खच की जानी चाहिये। यदि गो ब्राह्मण प्रतिपादन हिन्दू धर्मका अर विगिष्ट लक्षण हा तो फिर मन्दिरके द्वारा केवल ब्राह्मणाकी ही रक्षा क्या जानी चाहिये? गायकी भा रक्षा होनी चाहिये। जीर सार ब्राह्मणाकी रक्षा नी कहा हा पाता है? कवल अिने गिने पडाकी ही बन आती है। कभी कभी लगडी लूली गायकी रक्षा भी हो जाती है। लकिन अिमम हिन्दू समाजका धामा नही है। मन्दिरके द्वारा गायकी और ब्राह्मणाकी यानी धम-सेवकाका अल्प रूपमें रक्षा होनी चाहिये।

५

अच्छे जीर बडे मन्दिरके साथ छोटी या बडी अच्छी जयवा नामका एक ससृष्ट पाठशाला कभी कभी चलायी जाती है। अुसमे ससृष्ट भाषाकी आर धमकी गिना दी जाती है। हमारे समाजमें धमशास्त्रका अध बहुत सकुचित हा गया है। अित पाठशालामें मन्दिरके सेवक पुजारियाका (अथवा पुरोहिताका) कमकाण्ड और बर्णातिपाका तक और नानकाण्ड जयवा बदात ही मुख्यतः पढाया जाना है। किंतु धमशास्त्र तो जीवन-व्यापार सावभौम शास्त्र है। अुसम प्राचीन पुराणा के साथ आधुनिक अितिहास भी होना चाहिये और आचारशास्त्रके साथ आराम्य शास्त्र तथा सपत्तिशास्त्र भी हाना चाहिये। सामाजिक धमम जयशास्त्रका नी समावेग होना है। मन्दिरको दानकी जरूरत हमेशा रहती है। तत्र मन्दिर दाताकाकी आर्थिक सुम्भितिका विचार क्यों न कर? जैसे रेलके तीसरे दरजेके मुसाफिरके ही अच्छी आय होती है अुसी तरह मन्दिरके गरीब लापोके दानके ही अच्छी आय हाती है। और जिस प्रकार रेलके तीसरे दरजेके मुसाफिरके तिरस्कारकी दृष्टिके दखती है अुसी प्रकार हमारे मन्दिरमें गरीबाकी भक्तिकी कोयी बदर नही होती।

यह देखना प्रत्येक मन्दिरका कर्तव्य है कि उसके द्वारा गरीब लोगोंको राष्ट्रवापी बुधोगाकी अच्छी शिक्षा मिले। मन्दिरके घनमें से गरीब कारीगरको अपने धंधेके लिये जुधार पसा मिलना चाहिये। माने चादीके पाट लाकर या गहने बनवा कर जुह तालेमें बंद रखना सामाजिक द्रोह है। मन्दिरके घनको सत्रास वकामें रखना या प्रामिनरी नाटाके रूपमें रखना भी लोचहितका द्रोह करता है। मन्दिरका घन लोकनाथ परमेश्वरका है। गरीब लोगोंकी सहायतामें ही जुमका उपयोग होना चाहिये। गावके किमान सरकारी लगान या साहूकारके कजक हमारा देनदार बने रहते ह। यदि चरित्रवान किमानका जहरतके समय मन्दिरका आरस अवार पसा मिलता रहे ता वे सवनागसे बच सते है। कुछ प्राचीन मन्दिराके पाम कल्पनानोत धन है। यह सारा पसा लोचहितम ही गता चाहिये। स्वामी दत्ता और माधुआने कहा कहा यह प्रचार शुरू किया है कि मन्दिरका पसा समाज हितके कार्योंमें खच करना पाप है। यह गलतफहमी दूर की जानी चाहिये। जिस प्रकार मन्दिरके खेत और बाग लगान पर दमराको निये जाते ह जुसी प्रकार मन्दिरका पसा भी मन्दिरके भक्ताको मिलना चाहिये। नही तो मन्दिरको लूटनेका उमाना आनेवाला ही है।

१६-१-३०

५४

देव-मन्दिर सार्वजनिक जीवनका केन्द्र

१

प्यामाको पानी पिलाना भूखाको और खाम करके ब्राह्मणाको भोजन कराना, गायाको घाम खिलाना अनाथ ब्राह्मणाक पुत्राकी यनापवीत कराना अनुक ँडके ँवक्रियाकी गादी कराना, तीथगाना करना कुअें खुदवाना धम गागय जर मन्दिर बधवाना—ये सब पुराने जमानेके दानधमके मुख्य प्रकार ह। अनिधि मत्कार करता विद्याध्ययन करनेवाठ ब्राह्मण बटुकावो मधुक्री (भिभा) ँना और पगुआका गोप्राम अयका कानबलि जमा कुठ देना—ये क्रियायें नित्यकर्ममें मानी जाती था। अनिजिजे जिद दानधम असा बडा नाम नहा दिया जाता था।

आजके जमानमें अिन सब वाता पर लोगोंकी श्रद्धा कुठ घट गयी है। दानके ये प्रकार त्रिलकुट बन्त नो नहा हुआ ह परन्तु पुराने जमानेके विचारामें पण-पुगे लागामे ही अिन प्रकारका थोडा-बहुत प्रारमाहन मिलता है। समाजका

मागदान करनेवाले नेताधाने दानधमको समाज सेवाका रूप प्रदान किया है। गिण्ण-संस्थायें चालना, दवाखाने चलाना, आराम्य भवन बनवाना, वाचनालय खोलना, छात्रवृत्तियां दना पुस्तक लिखवाना प्रचार और आंदोलन लिये पत्र जेकर करता और जातिकी अनुतिक लिये बाइंग हाथुस चलाना — यह आजकी नयी रीति है। समाजकी अनुतिकी कल्पना जोर चर्चा ज्यादा ज्यादा जागे बरना त्या त्या नये क्षेत्र भी मिश्रण। अनुहरणके लिये अिम विचारका फलना आवश्यक है कि मद्य निषेध तथा सामाजिक स्वच्छताके लिये दानधम करनेसे आजकल जमानमें अधिकतम अधिक पुण्य प्राप्त होगा।

परन्तु यह विचार करना आवश्यक है कि हमारी पुरानी संस्थाओंको जिनकी अनुयायिताके धारमें शक्तिवाला समाजको जरा भी शक्ति नही है पुनर्जीवन प्रदान किया जा सकता है या नहीं। इस रूप में पण्डित सनातनी गणामें जगो अंक हवा चल पड़ी था कि नये मन्दिर बनवानकी अपेक्षा पुराना जगो जगो उधार करनेसे अधिक पुण्य है। काशीके प्रसिद्ध ताल स्वामीने काशीमें यही मध्य काय किया था। जिन पुराने मन्दिरोंका अच्छी आय होती है उन मन्दिरोंके प्रबंधका गुणार कर मन्दिरोंका पत्रा समाज मुबामें खर्च किया जाता चाहिए गुणारका यह एक महत्वका विचार था मारे दामें खूब फल था। सिक्के गणोंका गुणार प्रबंध आन्दोलन अिमना जेक नया रूप है। शक्ति कुछ मन्दिरोंकी आय छोटे-बड़े दोगोटा-पाती आय बराबर होती है। दक्षिण मन्दिरोंकी आयकी व्यवस्थासे सम्बंध रखनेवाला एक कानून भी पास हुआ है। मन्दिरोंके व्यवस्थापक अपने पत्र कारण (ex-officio) सत्पुष्पाके रूपमें पूजा पाते हैं। उन गणोंके चर्च कसा जाना है यह तो वही जान। प्रत्येक मन्दिरके व्यवस्थापक धारमें यात्रा न कीती किन्तुना जपवाह समाजमें चर्चा ही रानी है। मभा वानें निराधार नहीं हो सकता। और मभी वान मच ह यह विचार भा कम किया जाय? कुछ मन्दिरोंके व्यवस्थापक-ब्रह्मचारियोंके मन बाह्य-व्यव दसे हैं। गिण्णचारका एक भार रखकर अनुस पूछा जाय ना ये मन्दिर हार कहें हैं ब्रह्मचारियोंका आय हमारा अपना मममिय। जम गणोंका मया अधिक ता नहीं है जिन समाजमें अनुका निभ करना ही मुझी बात है।

यह मद्य है कि मन्दिरोंके अनेक व्यवस्थापक अपद्रु पिछड़े हुए डरपान और लानी पाते हैं और गणोंकी जगता अधिक सत्ता अथात पत्रा अपजग बनना गिण्ण हान कारण जिन भा गिण्णगणी मत्तापारा या दुजन अिनक मन्त्रमें अन्त है उन मन्त्रोंकी गणाम करना मुह प्रमन्न रखना अिन व्यवस्था पत्रा जगता बन जाता है। मन्त्रोंके अधिकारियोंका ता कुछ दिन रात मन्त्र करना पानी है। राजा किण्ण अवतार है और राजाके माय अनुक

छोटे-बड़े अधिकारी मा जा जाने हैं।' पत्थरके विष्णुकी अपेक्षा त्रिम जीने जाते विष्णुकी या त्रिम काल भरवाकी भुषामना भुषामकावे लित्रे प्रत्यक्ष फल देनेवाली सिद्ध हाती है। कुछ मन्दिराकी जारने पुजारी ब्राह्मणाक मिवा बाने बजानेवाला नृत्यनारिया आदि तरह तरहके गुपीजनाको भी वापिक वसति (सान्त्वियाना) मिलता है। वहा धमक नाम पर मर-कुछ चलता है। बेमै सस्याआका मुघार जखेजके राज्यमें असाध्य नहीं ता दुसाध्य अवय है। मन्दिराक मम्बधमें असे अनुभवके बाद कौन धमनिष्ठ या नीतिवान दगप्रेमी अमा हागा जो जुसी ढगवे नये मन्दिराकी स्थापनामे प्रमत्त होगा ?

त्रिम सबके वावनूद अस्पश्यता निवारणके मम्बधमें नये मन्दिर स्थापित करनेकी बात हमार गेगाका मूजी है। अपन भील आदि पिछने हुओ जाति याका धममान और धमके अनुकूल गिया दना जरूरी है। जुट गुन सस्काराका तालीम मिले यह भी जुतना ही जरूरा है। पिछडी हुओ जातियाको मन्दिरामें जुत्सवामें तथा पूजा अर्चा आदि बाह्य विधियामें बूचा जातियोमे जग भी कम रम नहीं हाता। जैमा नी कहा जा सकता है कि पिछे हुओ गगाका जुत्स वाणि बाह्य प्रकारका आवश्यकता जुओ जातिक लागामे अधिक हाती है। त्रिम मारी वस्तुस्थितिका विचार करने पर लगता है कि अनक लित्रे मन्दिर बनवाना जरूरी है। परंतु हमार नया आन्तान नूतन प्रेरणा गुद्ध हिन्दू धम विषयक हमार आत्मा और भविष्यक हमार म्बधन — त्रिम सबका दष्टिमें रख कर त्रिम नये मन्दिराकी रचना अबस्था पूजाविधि, अन्य प्रयायें त्योहार आदिका विचारपूर्वक तथा भुषकन रूपमें निणय किया जाना चाहिये। अक बार परम्परा बन गओ कि फिर अम बदरना मुश्किल हागा। आन्तिमस्थापकामें विचारका जो बीज हागा वहा आगे चल कर फलका रूप लगा।

किमी मन्दिरक आसपाम त्रिमनी मारी चीजें जुडी हुओ हाती हैं और हम चाह तो मन्दिराके द्वारा धमसेवाका बहन बडा काम कर सकन हैं। त्रिमलित्रे त्रिम नये मन्दिराक बारमें मूव सावजनिक चचा हाती चाहिये।

अनेक मन्दिरा तथा भुनमें प्रचलित पद्धतियाका आत्मिक बुद्धिमे निरीक्षण करनेके बाद त्रिम विषयमें जा विचार मुने मूझे हैं, अन्हीको मैं यहा प्रस्तुत करना चाहता हू।

२

पहल हम मन्दिराकी रचनाका विचार कर। हमार मन्दिराक मामायत तीन विभाग हात हैं (१) त्रिम विभागमें मूर्ति हाती है वह गभाह, (२) त्रिममें क्या-नीतन चलता है वह ममा-मडप और (३) त्रिम दोनाका जानने वाला बीचका भाग अतराल। मन्दिर यदि बडा हो तो भुमके आसपाम बडा

मागदशन करनेवाले नेताआने दानधमको समाज सेवाका रूप प्रदान किया ह । शिक्षण-संस्थायें खालना दवाखाने चलाना आरोग्य भवन बनवाना, वाचनालय खोलना, छात्रवृत्तिया देना, पुस्तक लिखवाना, प्रचार और आन्दोलनके लिये पसा जेकर करना और जातिकी अुन्नतिके लिये बोर्डिंग हाअुस चलाना — यह आजकी नयी रीति है । समाजकी अुन्नतिकी कल्पना जीर चचा ज्या ज्या आगे वढेगी त्या त्या नये क्षेत्र भी निरुगे । अुत्पाहरणके लिये असि विचारका फलाना आवश्यक है कि मद्य निषध तथा सामाजिक स्वच्छताके लिये दानधम करनेसे आजक जमानेमें अधिकसे अधिक पुण्य प्राप्त होगा ।

परन्तु यह विचार करना आवश्यक है कि हमारी पुरानी संस्थाआका जिनकी अुपयोगिताके बारेमें रुचिवाणी समाजका जरा भी गका नहा ह पुन जीवन प्रदान किया जा सकता है या नहीं । दस बप पहल सनातनी गामें अमी अेक हवा चल पडी थी कि नये मंदिर बनवानेकी अपेक्षा पुरानाका जीर्णोद्धार करनेमें अधिक पुण्य है । कागीब प्रसिद्ध तलग स्वामीने कागीमें यही मुरय काय किया था । जिन पुराने मन्दिरको अच्छी आय होती हो अुन मन्दिरके प्रबंधको गुधार कर मन्दिरका पसा समाज सबामें खच किया जाना चाहिय गुधारका यह जेक महत्वका विचार भी सारे दगमें खूब फल था । सिक्ख गामका गुधुदारा प्रबंधक आन्दोलन असका जेक नया रूप है । दक्षिणक कुछ मन्दिरकी आय छाटे-बडे दगीरायाकी आदके बराबर होता है । दक्षिणम मन्दिरकी जायकी व्यवस्थाम मन्वध रखनवाला जेक कानून भी पाम हुआ है । मन्दिरके ध्यसंस्थापक अपन पत्के कारण (*ex-officio*) सत्पुराक रूपम पूज जात ह । अुन लागका चरित्र कसा हाता है यह ता ब ही जान । प्रत्येक मंदिरके ध्यसंस्थापक बारेमें कोअी न कोअी किवन्ती अपवाह ममाजमें चरता ही रहती है । सभी बातें निराधार नहीं हा सकता । और सभी बात सच ह यह विश्वास भी कसा दिगया जाय ? कुछ मंदिरके व्यवस्थापक-ब्रह्मचारियाके भने वाल-बच्च दए ह । गिण्टाचारको अेक ओर रखकर अुनस पूछा जाय ता य निरुज्ज हातर कहते ह ब्रह्मचारीको आप हमारा अुपनाम समनिय । अम गामकी मय्या अधिक ता नहा है लकिन समाजमें अुनका निभ सकना ही दुसकी धान है ।

यह मच है कि मन्दिरके अनेक व्यवस्थापक अपठ पिछडे हुजे डरपाक और लामी हाते हैं और गायनताकी जपक्षा अधिक सता अयात पमका अुपयोग करनेकी गुविधा हानक कारण जिनत भी गतिगामी मत्ताधारी या दुजन अिनक मरामें आते हैं अुन मरकी संगाम करना अुह प्रमन रखना अिन व्यवस्था पकारा जाशन धम बन जाता है । मरकारा अधिकारियाका ता अुह निन रात संगाम करती पढती है । 'राजा विष्णुका अवतार है और राजाके साथ अुमक

छोटे-बड़े अधिकारी भी आ जाते ह।' पत्थरके विष्णुकी अपक्षा जिस जीत-नागते विष्णुकी या जिन काल भरवाकी अपामना अपामकारे जिसे प्रत्यक्ष फल देनेवाली सिद्ध होती है। कुछ मन्दिराकी जोरसे पुजारी ब्राह्मणाक मिवा वाने बजानेवाला नृत्यनारिया आदि तरह तरहके गुणीजनाको भा वापिक वक्ति (मालियाना) मिलती है। वहा धमक नाम पर सत्र-कुछ चलता है। अमी सस्थाआका मुधार अप्रेजाके राज्यमें असाय नहा ता दु गाध्य अवश्य है। मन्दिराके मन्व-धमें असे अनुभवक बाद कान धमनिष्ठ या नीतिवान णेप्रेमी अमा हागा जो असा ढगने नये मन्दिराकी स्थापनासे प्रमत्त हागा ?

जिम सबके वावजूद अन्वयता निवारणक मन्व-धमें नये मन्दिर स्थापित करनेकी बात हमारे लोगाका मूझी है। अयन भील आदि पिठनी हुअी जाति याका धमनान और धमके अनुकूल शिक्षा दना जरूरी है। अुह गुभ मस्काराका गालीम मिल, यह भी जुतना ही जरूरी है। पिछडो हुअी जातियाका मन्दिराम अुत्मवामें तथा पूजा अघा आदि बाह्य विधियामें अूची जातियोमे जरा भी कम रस नहा होता। अना भी कहा जा सकता है कि पिठडे हुअे णगाका अुत्स वादि बाह्य प्रकाराकी आवश्यकता अूची जातिके लागासे अधिक हानी ह। जिस मारी वस्तुस्थितिका विचार करने पर लगता है कि अुनके लिये मंदिर बनवाना जरूरी है। परन्तु हमारा नया आगान नूतन प्रेरणा गुद्ध हिंदू धम विषयत हमारा आदग और भविष्यक हमारे स्वप्न — जिन सबका दष्टिम रस कर जिन नये मंदिराकी रचना यवस्था पूजाविधि, अन्य प्रथायें, त्योहार आदिका विचारपूर्वक तथा अपुसुकन रूपमें निणय किया जाना चाहिये। अेक वार परम्परा बन गअी कि फिर अुमे वदगना मुक्किल हागा। आन्-सम्यापकामें विचारका जा बीज हागा वही आगे चल कर फरका रूप लेगा।

जिमो मंदिरके आसपास अितनी मारी चीजें जुडी हुअी होती ह और हम चाह तो मन्दिराके द्वारा धममेवाका वट्टन बडा वाय कर सकते ह। जिस लिये जिन नये मन्दिराके वारमें खूब सावजनिक चचा होनी चाहिये।

अनेक मंदिरा तथा अुनमें प्रचरित पढनियाका आम्निक बुद्धिसे निरीक्षण करनेके बाद जिस विषयमें जा विचार मुये मूझे ह अुन्हीको मैं यहा प्रम्नुत करना चाहता ह।

२

पहल हम मंदिराकी रचनाका विचार कर। हमार मन्दिराके सामान्यत तीन विभाग हाने है (१) जिम विभागमें मूर्ति हानी है वह गभाह (२) जिसमें क्या-कीतन चलता है वह सभा मरुप और (३) जिन दानाका जोटने वाला बीचका भाग अतराठ। मन्दिर यन्ि बडा हो तो अुमके आमपाम बडा

निहित गुहायाम्' कहनेका समय नहीं आयेगा। अधिकसे अधिक किया तो मूर्तिके पीछे श्रुमे एक सने अितनी बड़ी दावाळ बनाजी जा सकती है। भीडका राक-नेक लिजे चाह तो मूर्तिके जासपास चार फूट अूचा कठघरा बना दिया जाय। परन्तु जुपयुक्त यवस्थाम भीडकी गुजायिग ही नहीं रह जायगी। हर आदमीके आगे घुम कर अपने हाथसे मूर्तिकी पूजा करनेकी प्रयाका अत कर दिया जाय, ता भीड हानेका कोअी कारण ही न रह जाय।

मन्दिरक मामने यदि दीपस्तभ बनाना हो तो वह अितना अूचा होना चाहिये कि सारे गावके लिजे पहरेदारकी मीनारका काम द सक। रातमें माग भूठ हुजे लागका दिसाका मान करानेके लिजे दीपस्तभक निखर पर अेक बडा दीपक सारी रात जलाया जाय तो वही कही ता यह व्यवस्था अत्यन्त लाभकारी सिद्ध हागी। मन्दिरके आगतमें अेक आर अेक बडा थुआ अवस्थे हांना चाहिये। थुअेंक आसपास जैसी व्यवस्था हानी चाहिये जिससे गावरु अनेक राग और राहगीर वहा स्नान कर सक और कपड धा सक, और फिर भी वहा कीचड या गदगी न हो। अित प्रकार भोजन करनेके लिजे अनेक लाग एक स्थान पर जमा होते है, या गामको बहुतसे लाग अेकसाथ घूमनेके लिजे जात ह थुमा प्रकार स्नानके लिजे अनेक लागारे अेक स्थान पर जमा होनेका रिवाज भी डाग जा सकता है। नदा-स्तट पर अनेक लाग अिक्ठे ता हाते ह परन्तु वग कल्प जमा वातावरण नहा जमता। मन्दिरका यदि हमे अपने सावजनिक जीवनका केन्द्र बनाना हो तो नगरवामिया अथवा ग्रामवामियाक मन्दिग्म अनेक प्रकारसे और अनेक ंारपास अेकत्र होनेका रिवाज डालना चाहिये।

ठीम विचार करना जरूरी है। बाओ मनुष्य मूर्तिपूजाका समथन करता है या विराध करता है केवल अितना ही देखकर धवरा जाना या डर जाना आजक जमानेक िअे ओर हमार हितकी दष्टिस भी ठीक नहा है।

सब पूछा जाय तो हिंदू धममे न ता मूर्तिपूजाका आग्रह है ओर न जुमका विरोध है। अस प्रश्नता बहुत महत्व नही है कि महाप्रयत्न करने पर भी वदामें मूर्तिपूजाका जुल्लव खाजा जा सकता है या नही। महाभारतमें मन्दिरका चहा अुल्लख नही है यह सिद्ध करनेकी भी जरूरत नही है। हमार आचार धमका सारा आधार ग्रीनसूत्रा तथा गह्यसूत्रा पर है। अुहास स्मृतियाका विस्तार हुआ है। मनुष्य विाकुल जड बन जाय अस हद तक स्मति साहित्यमें आचार धमका व्योरेवार विस्तार किया गया है। लेकिन जुसम मूर्तिपूजा दव मंदिर आदिकी स्रष्ट बिल्कुल नही है। असलिये यद्यपि हिंदू धम मूर्तिपूजा का विराधी नहा है फिर भी जिस विषयमे दो मत नही हा सकत कि 'हिन्दू धमके मूलम मूर्तिपूजा रही है। तब फिर मूल हिंदू धमका प्रधान जग तो वह मानी ही कमे जा सखती है?' तो यह मूर्तिपूजा हिंदू धममें आआ कहामे?

मूर्तिपूजा ओर मूर्ति निमाणके बीच हमें भेद करता चाहिये। मूर्तिया ता हमारे देगमें परापूर्वसे अर्थात प्रागतिहासिक कालसे बनती रही हागी। माह जा दडोमें जो मिट्टीकी मूर्तिया मिली ह जुनमें से अेकके वारेम यह अनुमान किया गया है कि वह पुजारीकी हागी ओर दूसरी दो छोटी मूर्तियाः विचित्र गिरा चष्टनक आधार पर यह कल्पना की गयी है कि व कृपि देवताकी हागी। ये मूर्तिया भी मिट्टीकी ही है। पणु-पधियाकी मूर्तिया ता अनेक तरटका बहा मिली है। परन्तु यह कहना भुश्किल ह कि अिन सबका अपुयोग पूजाके साधनके रूपमें हाता था या नही। अिन मूर्तियाका कृपि-देवताकी मूर्तिया माना गया है व गायद नौकरानियाकी मूर्तिया भी हो सकती ह, कयाकि अुनका गिरीचष्टन जसा लगता है माना अुनके सिर पर दोना आर दा टोकरे कावरकी तरह रखे गये हा।

प्रश्न यह नहा है कि ये मूर्तिया कहास पदा हुजी ह, परन्तु यह है कि पूजाक साधनके रूपमें मूर्तिया हमारे देगम कहासे आओ अथवा जिस रूपमें अुनका अपुयाः कवसे होने लगा?

कुछ लोग तो मानते ह कि बौद्धा ओर जनाने अिस देगमें मूर्तिपूजाका आरम किया। पहल प्राचीन बौद्ध मूर्तिकलामें स्वय बुद्धका मूर्ति नहा बनाओ जानी था। अेक धोडा बनाया जाता था, जिस पर अीन ता कसी रहती थी लेकिन नवार नहा हाता था ओर जुसके आमपास भक्ताका मेला दिवाया जाता थी। अससे मान लिया जाता था कि धोडे पर बुद्ध भगवान विराजमान हैं। अस समय बुद्ध भगवानकी मूर्तिक द्वारा यकन न करनेकी भयादाका पालन किया जाता हागा।

मूर्तिपूजा

हरअंक समाजों अपनी सस्थाओं और सामाजिक प्रथाओं की ममम ममम पर जाच करनी चाहिये और प्राचीनक माय मममाय रख कर वनमान गति त्रिधिको जच्छा तरह समझ कर तथा भविष्य पर दृष्टि रख कर धुनमें आय शक परिवर्तन कर गन चाहिये । अब मूर्तिपूजाकी प्रथा अथवा सम्पादा ह्म पहलूसे जाच करनेका समय आ गया है । यहा जब अथ सामाय जनर मनमें पैदा होनेवाले कुछ विचार दिय जाल ह जा न मा मूर्तिपूजाका विराध दग्ता है और न मूर्तिपूजाक विषयमें आज अधिक् जुगाह रक्ता है ।

म मानता ह कि मूर्तिपूजा धम-साधनाका आवश्यक अंग नहा है । त्रिभक् साथ म यह भी मानता ह कि हमार देशमें जिम प्रकारस मूर्तिपूजा हाता है अुसम मूर्ति विरसकाके कथनानुसार अनतिकता भी नहा है । मूर्तिपूजाका आधय मनुष्याक चित्तक त्रिअ आवश्यक नहा है और फिर भी यत्ति वह मूर्तिपूजाका आधय ले तो जुसमें गरमाने जसी काओ बात नही है । मूर्तिपूजाक द्वारा भागक निकट आनकी बातमें विरवास नही हाता फिर भी अितना सच है कि मूर्ति पूजाके द्वारा और विरोधत मदिदराकी स्थापनाके द्वारा हमन अपनी ससृष्टिको बहुत बडा बग दिया है, अपन समाजका मगठन किया है अपने धार्मिक माहित्य साीत कला तथा जुत्सवाना विकास किया है और किसी ह्म तक सारी जनतामें सर्वोदयकी दिगाम न जानवाले सस्कार फलानकी मुविधा खडी की है । हमारी प्रजाका रसिकता सस्कारिता और धार्मिकताको प्रकट करनेके लिये मदिदराका बहुत बडा अुपयोग हुआ है । जत हमारे मत्िर जो हमारी भक्तिक भाजन बन गये ह वह सवथा अुचित ही है । किन्तु अिसका यह अय नहा कि मूर्तिपूजा और मदिदराकी सस्थामें कोओ मौलिक परिवर्तन किया ही नही जा सकता ।

जीवित समाज चाह ता आग पाछका पूरा विचार करके अपन धमम और धार्मिक सस्थाओंमें — समाजमें और प्रबलित सामाजिक रूत्थियाम — आवश्यक परिवर्तन करनका जुस सत्ता ही अदिकार है । जसा समझ कर ही यह ग्क अनेक वय पहलू त्रिखा गया था । आज भी मेरे अिस मतमें कोओ परिवर्तन नहा हुआ है । हमारे मदिदराके विषयम अिसस पहलू मने अनक लेख लिखे हैं । सौराष्ट्र क वरतेज गावमें हरिजनकाके लिये मत्िरकी स्थापना हुआ तब अुसम मूर्तियाकी प्रतिष्ठा मेरे हाया ही हुआ थी । जस समय मन जो भाषण दिया था जुसम मने मूर्तिपूजाकी सभी पहलूआसे मोभासा की थी । अिस विषयमें आदरक माय

ठाम विचार करना जरूरी है। कोभी मनुष्य मूर्तिपूजाका ममयन करता है या विरोध करता है केवल अितना ही देखकर घबरा जाना या डर जाना आजक जमानेक लिये और हमार हितको दृष्टिस भी ठीक नहीं है।

मच पूछा जाय तो हिंदू धर्ममें न तो मूर्तिपूजाका आप्रह है और न अुसका विराध है। अिस प्रश्नका बहुत महत्त्व नहीं है कि महाप्रयत्न करने पर भी वेदामें मूर्तिपूजाका जुल्ल्व खोजा जा सकता है या नहा। महाभारतमें मंदिरका वही अुल्लेख नहीं है यह मिद्ध करनेकी भी जरूरत नहा है। हमारे आचार धमका सारा आधार श्रौतसूत्रा तथा गृह्यसूत्रा पर है। अुहाने स्मृतियाका विस्तार हुआ ह। मनुष्य विलकुल जड बन जाय अिम हृद तक स्मृति साहित्यमें आचार धमका यारेवार विस्तार किया गया है। लेकिन जुसमें मूर्तिपूजा दव मन्दिर आदिकी चपट विलकुल नहीं है। अिसलिये यद्यपि हिंदू धम मूर्तिपूजा का विराधो नहा है फिर भी अिस विषयमें दा मत नहीं हा सकन कि हिंदू धमक मूलमें मूर्तिपूजा नहीं है। तब फिर मूठ हिंदू धमका प्रघान अग ता वह मानो हा कम ना सकती है? ता यह मूर्तिपूजा हिंदू धममें आभी कहास ?

मूर्तिपूजा और मूर्ति निमाणके बीच हमें भेद करना चाहिये। मूर्तिया ता हमारे ळामें परापूर्वसे अर्थान प्रागनिहासिक कालस बनती रही हागी। माट जा दामें तो मिट्टीकी मूर्तिया मिली हैं अुनमें स जेकक बारेम यह अनुमान किया गया है कि वह पुजारोकी हागी और दूसगे दा छाटी मूर्तियाक त्रिविन्न गिरा वष्टनक आधार पर यह कल्पना की गयी है कि व कृपि-देवताकी हागी। ये मूर्तिया भी मिट्टीकी ही ह। पशु-पक्षियाकी मूर्तिया ता अनेक तरहकी वहा मिनी हैं। परंतु यह कहना मुश्किल ह कि अिन सबका अुपयाग पूजाके साधनके रूपमें हाता था या नहा। अिन मूर्तियाका कृपि-देवताकी मूर्तिया माना गया है व गायद नौकरानियाकी मूर्तिया भी हो सकती हैं, क्याकि अुनका गिरोवष्टन असा लगता है माना अुनके मिर पर दोना ओर दा टोकरे वावरकी तरह रखे गये हा।

प्रश्न यह नहा है कि ये मूर्तिया कहासे पैदा हुयी ह परंतु यह है कि पूजाके साधनके रूपमें मूर्तिया हमार ळामें कहासे आआ अथवा अिम रूपमें अुनका अुपयाग कबसे हाते लगा ?

कुठ लोग ता मानते ह कि बौद्धा और जनाने अिम दाम मूर्तिपूजाका आरभ किया। पहले प्राचीन बौद्ध मूर्तिकलामें स्वय बुद्धकी मूर्ति नहा बनाभी जानी था। जेक घोडा बनाया जाता था अिस पर जीन ता बसी रहता था। लेकिन सवार नहीं होता था और अुसके आसपाम भक्ताका मला अियाया जाता था। अिसम मान लिया जाना था कि घाडे पर बुद्ध भगवान विराजमान हैं। अुम नमय बुद्ध भगवानको मूर्तिक द्वारा व्यक्त न करनेकी भयांदाका पालन किया जाना हागा।

मन्वा रहस्य जा लोग समझ सकते ह बवल जुहीके लिअे मूर्तिपूजा धार्मिकताका विवास करनेका जेक निर्दोष साधन हा सकती है । फिर भी मूर्तिपूजा अिमका सबश्रेष्ठ साधन ता मानी ही नही जा सकती । कहा जाना है कि मूर्तिपूजा जड बद्धिके लागाक लिअे ही है परतु जड समाज मूर्तिपूजाक रस्य का नहा समझ सकता । जड मनुष्यकी दृष्टिमें तो मूर्ति अेक बड भूतनी तरह है । मूर्तिक साथ अुसक मनम बवल भय ही अुत्पन्न हो मवता है और अुमकी पूजा बन्वानकी गरणम जाकर बच जानेका अेक अुपाय ही होनी है । अम लागाक लिअे मूर्तिपूजा निभयता तथा स्वनशताकी विनागक है । भीतरमें पाया लकडोकी बडी मूर्ति बनाकर अुसके हाथमें रखा हुआ भाग अुस हाथने पीठ गप्त रूपम बधी हुआ रस्मीको खीचकर मूर्तिक महमें गिरा लिया जाता है—अिम बातको क्या हम नही जानते ? भारतके बाहर मूर्तिपूजाने अवणनाय अत्याचारका प्रोमाहन लिया है और भारतमें मूर्तिपूजान पिछडी हुआ अतियाक लिअे जगणित जधविस्वासाने जम दिया है । जिन लोगको तत्त्वानकी शिक्षा प्राप्त हुआ है अुन्हाने बेगक मूर्तिपूजास बहुत लाभ अुठाया है । परतु अमे लागामें जो लोग गुड जात्मार्या अयात मोगार्या थ वे तुरत मूर्तिपूजासे अूपर अुठ कर आगे बड गये । मूर्तिपूजाका बचाव करते हुअे अेक बार स्वामी विवका नन्न कहा था मूर्तिपूजाके यदि रामकृष्ण परमहंस प्राप्त हात हा तो मूर्तिपूजा दीघायु हो । पुजारी रामकृष्ण परमहमका मूल धधा ही मूर्तिपूजाका था परतु अतमें थ भी अुससे बाहर निकल गय थे । फूल अपने डाट पर ही अीश्वरका अपिन ह जुह तोडकर मूर्तिके सिर पर क्या चढाया जाय—असा रामकृष्ण परमहंस करते थ और भावावेगमें आ जाने पर मूर्तिकी पूजा करनेक बल वे अपनी ही पूजा करने लग जाते थ । अुन्होन मूर्तिपूजाका अत तक छाग नहा था परतु आगे जाकर वे मूर्तिपूजाक सच्चे स्वरूपको समझ गये थे ।

अत ध्यानपूर्वक जाच करनस मालूम होगा कि मूर्तिपूजा बिल्कुल जड गगाके लिअे हितकर नहा है और अत्यत सस्कारी तथा गभीर लोगके लिअे वह आवश्यक नहा है । जिह मूर्तिपूजाकी आदत हो गयी है जुह मूर्तिपूजाको छागता हा ता अिमक लिअे धीषकी सीनी है मानस-पूजा । हमारे माधु-सनाम मूर्तिपूजाका प्राय माधा विरोध नहा किया परतु पूजाक बल अुन्हान भजाका हा प्रमानता दी ।

आगात्री घमने अनक दवाका जाग्रहपूर्वक छाटकर अेक दक्की स्थापना का लद मानस्य लाणल अनेक सताकी पूजा गुरु कर दी क्योंकि अनकता अुनक अुनम निरनी नहा थी । अिसा प्रकार जेकरा घमका जाग्रह रखनवाल अिसगमा अरदम्नानमें गौर टकीमें भी पवित्र म्यान पवित्र बवर कुरानके मन्त्रका अुच्चारण और अुमम हानेबाउ चमत्कौर अति पूजाक अनेक प्रकार अुत्पन्न हो गय ।

सब पूछा जाय ता धर्म असलमें शास्त्राके और धर्माहुआके आधार पर आधार नहा रखता। धर्म शुद्ध सात्त्विक भावनाओं पर शुद्ध बुद्धि पर, भक्त-वृत्ता विवक करनेवाली विवक शक्ति पर तथा पवित्र पुस्तक अनुभव पर आधार रखता है। धर्म एक जीवन वस्तु है। शास्त्र तथा ग्रन्थों के शाब्दिक प्रमाण मान कर पठ जाना ही जड़ पूजा या वस्तुपरस्ती है। हृदयके भीतरसे परमात्माका और जुमकी दी हुई जीवित धर्मवृत्तिका हटा कर अन्तर्गत स्थान पर शास्त्रा ग्रन्थों और पुराने रीति रिवाजोंको बठाना धर्मकी धार अवगणना करना है।

हमें यह ध्यानमें रखना चाहिये कि समाज जब अपने बल पर भीतरमें अथवा स्वच्छासे आन्तरिक प्रेरणास प्रगति नहा करना तब अन्तर्गत बाहरी श्रावक कारण लाचार हाकर परिवर्तन करने पडत ह। अतमें जो हाना है वह ता हा ही जाता है। लेकिन अनिच्छासे काशी काम करनेस जा विवृति अत्यन्त हाती ह जुमका अन्तर्गत लम्बे समय तक बना रहना है। आश्वरकी मूर्ति बनानेमें और जुमकी पाशोपचार पूजा करनेसे मानवका प्रौढ बुद्धिका श्राव्य अपमान हाता हागा परन्तु अन्तर्गत आश्वरका अपमान हानकी बात निमोके गल नहा अन्तर्गती। पहली बात ता यह है कि आश्वरका मान-अपमान मनुष्यने हायमें है हा नहा। मनुष्यने अपने स्वभावके आधार पर ही आश्वरका जेलम गाड अथवा अपमान देव बना लिया है। अपमान पति अपमान राजा अपमान गुरु आर अपमान देव—ये सब अन्तर्गत श्राव्य परिपाक ह। आश्वर एक ह शक्ति भा जुमके अनेक गुणा और विभूतियाँ सम्बन्धमें मानव अनेक देवाका कल्पना कर ली है। अन्तर्गत अन्तर्गत आश्वरके निवा बाकी सब देवी-देवता काल्पनिक ह। जितने देवाका देखकर परमात्माका चिह्न क्या आने लगी? आश्वर जानता है कि मूलमें ही क्या न हा लेकिन ये लोग पूजा ता अन्तर्गत मरी ही करत हैं। क्या आश्वर यह नहा जानता कि मनुष्य जाति कितना अपूण है जुमकी जरूरतें क्या ह और जुम मनाप कस मिलता है? हृदयमें बसकर हृदयने प्रेरित करनेवाला अन्तर्गती क्या मनुष्य हृदयक भावना नही जान सकता?

अन्तर्गत प्रकार मूर्तिपूजाक लगत ह जुमा प्रकार जुमके कुछ नुकसान भी हा सकता है। अन्तर्गत नुकसानोंमें एक बडा नुकसान है धर्म श्राव्यका समझनेमें मूर्तिपूजाके अन्तर्गत हानेवाली बाधा। जड़ पाशिव पदाधरा मूर्ति बनानेक श्राव्य हन्त यह माननेकी श्राव्य करत ह कि जय पशुओंकी अपन्ना जुममें अधिक शक्ति है यह श्राव्य हमारा हमारा मागमें बाधक बनता है। मनुष्यका भावना अन्तर्गत श्राव्य स्थिर हाती है और दूसरी जगत् स्थिर नहा हाता यह स्वभावक भेद है। परन्तु अन्तर्गत अन्तर्गत भेद मानना अथवा अन्तर्गत अन्तर्गत प्राणात्न दना वाचनाय नहा है।

प्रपत्नसे भोग ही अधिक दृढ़ हुआ है। अके ओर मूर्तिपूजा द्वारा यदि कल्पना-गक्ति — रसवति — को तालीम मिली, तो दूसरी ओर अिन्ही वाताकी प्रगति पर अकुस लग गया।

नदीके प्रवाहम काभी बास बाध रखनेमे जिस तरह कितना ही बूडा बचरा और काभी अुसके आसपास लिपट कर पडी रहती है, अुसी तरह मूर्तिपूजाके आसपास कितने ही अधविश्वास और सामाजिक बुराइया टिकी हुअी ह। हमारे मन्दिर सामाजिक ता हैं परन्तु सावजनिक नहा ह। अिम कारणसे बहुतसी सामाजिक सम्पत्ति व्यक्तिगत बन जाती है। नतीजा यह है कि मा ता अिस सम्पत्तिका दुरुपयोग हाता है या अुसका कोअी अुपयाग ही नहीं होता। नामधारी राजाके मन्त्रियामें जो दोष आ जात हैं व सब दोष देवस्यानामें भी आ जाते हैं।

परन्तु यह तो मने केवल हानिका ही पहचू बताया। अिमके लाभ भी अनेक ह। कुल मिलाकर लाभ अधिक है या हानि अधिक है, अिमकी जाच की जानी चाहिये।

१९३०

५६

नये मन्दिर

नये जमानेके हम लाग मन्दिराका अुपयोग पहलेके लीगाके जितना नहीं करते। मन्दिरामें जाना बहुताकी लगभग निकम्मा काम मालूम होता है। किमी विगेष अुसवके अवसर पर जाना पडे ता ज्ञात अलग है। बना हमारा भावना यह हो गअी है कि मन्दिर केवल अशिभित दृढिवादिवा बून्धिया विधवाआ और दानिगाके लोभी पडे-अुजारियाके लिअे ही ह। किसी मन्दिरकी मूर्ति विगप सुन्दर हो अयवा विगिष्ट श्रुगार धारण करती हा तो अुसकी माहवताकी देवनेके लिअे अरु हमारा मन लठचा सकता है। किन्तु दगनके लिअे अिवटठे हुअे असस्कारी लाग अपने बालाहलके कारण कही मोहवता और कायमयनाको टिकने दें तव न। मन्दिरमें पुरोहित पडे और भिखारी हमें अेक मिनटकी भी गाति नहीं लेने देने। मूर्तिका ध्यान धरनेके लिअे अेक क्षण हम खडे रहें अुतनेमें तो चरणामत लो और दक्षिणा दो का अुनका तकाजा गुरू हा जाता है।

कुछ मन्दिराके दव जमसे श्रीमत्त राजाआके नमान होते हैं। राजाआके जितने भी भोग बिलास और व्यसन होने ह वे सब अिन देवाको मिलने चाहिये। अेक मन्दिरमें तो मने वेदयाआको मन्दिरकी सीढियाकी पावचण्पी करते देखा है। अिन देवाके अत पुरमें अनेक देविया भी हाती हैं और राजाआकी तरह अिन

देवाके दवियासे मिलनेके दिन भी निश्चित किये हुअे होते ह । भक्त लोग जिस दिन जीश्वरके समान हामे वह गुभ दिन होगा । परन्तु तब तक तो जीश्वरको अपने भक्ताके समान ही बनना पड रहा है । जीर्णालु प्रजाके देव भी जीर्णालु ही होते ह । राजाआकी निरकुशताकी आदी बनी हुओ प्रजाके देव भी पलमें टूटालु बन जाते ह और पलमें क्रूर बन जाते हैं । हमारे कुछ देव गीघ्रकोपी हैं, ता कुछ रुधिर प्रिय ह । और अुनका यह स्वभाव अतमें हमारी पूजाविधियोंमें प्रकट होता है ।

हमारे धनिक लोग जिस प्रकार अजित सपत्तिको पीढी-दर पीढी बनाये रखनेके लिये अुसका स्थावर जमीनमें रूपांतर कर देते ह अुसी प्रकार जिसे भी पूजाकी कोजी नयी विधि सूझती है वह अुसे शास्त्रकी आगावा रूप देकर चिरतन बना देता है । हर मन्दिरकी पूजाकी प्रणाली अलग होती है परन्तु जेब बार वह चली कि फिर अुसमें कोयी परिवतन नही हो सकता । सरकारकी जबरदस्ती या गकराचायके समान महापुरपाकी जबरदस्तीके कारण कोयी परिवतन हो जाय तो भले हो जाय ।

हमारे मन्दिराकी सम्पत्ति और अुसका होनेवाला अुपयोग किसी भी सज्जनको बेचन बना सकते ह । फिर भी यह आशा लगभग व्यथ मालूम होती है कि अुस सपत्तिकी व्यवस्थाकी गहरी जाच करने अुसका कोयी सदुपयोग किया जा सकता है । सिक्ख लागाने अपने मन्दिरामें सुधार करनेका प्रयत्न किया तब बात खून खञ्जर तक पहुच गयी थी । दक्षिण भारतमें मन्दिराकी आय पर समाज अथवा सरकारका अधिकार जमानेके लिये कानून बनानेका आदोलन चल रहा है । विदेगी सरकारको महायुद्धके जसे अवसर पर मन्दिराकी सम्पत्ति स बार-बाडके लिये पसा मिलता है अुम समय तक सरकार भी मन्दिराकी व्यवस्थामें हस्तभेप क्या करे ?

मन्दिराकी सस्था जडतासे धिरी हुयी है । अुसमें कोयी सुधार नही हो सकता । किसी दिन जीण हाकर वह अपने आप नष्ट हो जाय तो बात अलग है । असा माननेवाल अनेक लोग हामे । लेकिन अभी अभी अमरेली और दाहोद जसे स्थाना पर समाज मेवकाने स्वय ही नये मन्दिराकी स्थापना की है यह जाननेक बाद ता हमें यही कहना पडता है कि मन्दिराकी सस्था अभी भी पूरी निरथक अथवा कालग्रस्त नहा हुयी है ।

आज हम अपनी नयी भावनाआका नयी आध्यात्मिक भूख और नये सामाजिक प्रदर्शा तथा आगाका विचार करके ही नये मन्दिर बनवायें और अुनके लिये नये नियम रचें । आजके नये मन्दिर भले ही खिलीना जसे हा । अिन मन्दिराकी स्थापनामें मत्त करनेवाले मध्यमवगके लोगामें मन्दिर सम्बधी थडा और आस्था भठ ही गिधिल हो । भले ही अिन मन्दिराकी स्थापना

अनानी लोकाको आश्वासन देनेके लिये 'वेवल 'लाक-सग्रह' की नीयतसे ही की जाती हो। लेकिन अगर अिन मन्दिरोंके आसपास धार्मिक बुद्धिसे की जानेवाली समाज सेवाका तप बढ़े, तो भविष्यमे ये जाग्रत स्थान माने जायगे और हजार-लाखा लोग अिनसे लाभ अुठावेंगे। अत आजसे ही हमें अिन मन्दिराकी स्थापना, अिनकी रचना और पूजा-अर्चाकी विधिने बारेमें, भविष्यकी दृष्टि रख कर, निणय कर लेना चाहिये।

हमारे प्राचीन मन्दिर छोटे हा या बड़े मुख्य देवकी मूर्ति तो वहा अघेरेमें ही रहती है। क्या अपियाने ही यह गाया नही था कि पुराण-पुरष 'गुहाया प्रविष्ट है? अघेरेकी मददमे मूर्तिके बारेमें भय और गूडताका भाव अुत्पन्न होता है, और द्वार पर बठे हुअे व्यवस्थापक अथवा पुजारी महाराजकी आय निश्चित हो जाती है। अितिहासकी दृष्टिवाला मनुष्य कहगा कि मूर्तिको अघेरेमें अिसलिये छिपाकर सुरक्षित रखा जाता है कि कोअी अुसे आसानीसे तोड न डाले, कोअी अुसे चुराकर न ले जाय। सस्कृतिकी स्वाभाविकताका विचार करनेवाले लोग यह भी कहते हैं कि प्रचड गर्मीवाले अिस देशमें मोटे-मोटे पत्थरासे बने ठडे मन्दिराके भीतर खूब गहराअीमें बनी आघे अघेरेवाली शीतल कोठरियामें दोपहरका समय बिताना भगवानके लिये और भक्ताके लिये सुखद और शांति प्रद होता है। अिस कारणमे पूजाके स्थान असे ही बनवाये जाते ह।

जो भी हो लेकिन अिस वानका ध्यान रखना जरूरी है कि भविष्यके मन्दिर देवाको अघेरेमें न बठावें। निरकुण बादगाह (और गणजय डिकटेटर) का दगन भले ही कठिन और दुष्प्राप्य हा किन्तु प्रजा-नायकका तो सबके बीच होना ही शोभा देता है। भविष्यके हमारे मन्दिर चारा ओरमे खुले हाने चाहिये। मजबूत स्तभा पर यदि मन्दिरका गिखर बनाया जाय, तो शोभामें और सुरक्षितनामें जरा भी कमी नहा आवेगी। असे मन्दिरामें मूर्तिको यदि अूचे चबूतरे पर स्थापित किया जाय और चबूतरेके आसपास काफी जगह छाडकर अेक कठघरा बना दिया जाय, तो मूर्ति भी सुरक्षित रहेगी और अुसका दगन भी सरल हो जायेगा। मन्दिरकी रचना असी होनी चाहिये कि हजार लोग दूरमे भी अेकनाथ मूर्तिका दगन कर सवें। दगनके लिये आनेवाले लोगाकी सख्या अमयान्ति हो तो कुछ जन और बौद्ध मन्दिराकी तरह मन्दिरके मध्यमें चार दिगाआमें देखनेवाली चार मूर्तिया बठा देनी चाहिये। और मूर्ति यदि अेक ही मुखवाली हो ता अुमकी रखाके लिये पीछेकी ओर अेक छोटीसी गिला खडी कर देना काफी होगा।

मन्दिर भले ही छाटा हो, किन्तु अुसके आमपास पर्याप्त खुला स्थान ता हाना ही चाहिये। हमने अपने कितने ही मन्दिराको अुनके चारा ओर धनी बस्ती बसाकर बिगाड दिया है। सारी जनताको यदि मन्दिरके चारा ओर खुली

जगह रखना जरूरी लगे, तो बसी जगह पाना कठिन नहीं है, कठिन बात ता यात्रियाकी सुविधाके लिये मंदिरके चारा ओर छोट बड़े छप्पर खड़े करने का मोह छाडना है। पहल मंदिरके आसपास मडप बाधे जाते ह, फिर धम शालायें बाधी जाती ह और अउसके बाद किरायेके लोभसे वहा दुकान खडी कर दी जाती ह — जिससे मंदिरका पवित्र वातावरण ही नष्ट हो जाता है। मंदिरम या मंदिरके आसपास जो भी कोअी दीवाल बगरा बनवाता है वह अउस दिशामें दशनकी सुविधाको रोकनेका पाप करता है।

मंदिरके बारेमें बनाने जसा मुख्य नियम तो नवेद्य और भोगसे सम्बध रखना है। हिंदू धमका विदेशी लोग चूल्हा धम या 'रमाओ धम' कहते है। जहा पकाये हुअे भोजनका सवाल आता है वहा जान पातके और छुआछूतके सभी सवाल खडे हो जाते ह। जिसमें कोअी गका नही कि हमारे अपि मुनिया ने कद मूल और फलको ही पवित्र माननेमें बहुत बडी बुद्धिमानी बताओ थी। मंदिरामें सूखे या ताजे, कच्चे या पक्क फल ही भोगके रूपमें ले जाये जाय, असा नियम बनाना अत्यंत आवश्यक है। अधिकसे अधिक शक्कर दध, मक्खन और दूधसे तयार होनेवाली ताजी मिठाअिया — अितनी ही वस्तुअें नवेद्यके लिये अुचित मानी जाय। हमारा पट और हमारा स्वाद वृद्धिम हा गया है जिसलिये हम अनाजको पका कर और तरह तरहके मसालासे बिगाड कर खाने ह। नित्य-तृप्त ओश्वरको असा भाजन खिलानेकी क्या जरूरत ? या मीत्रिने कहा है यन्न पुष्यो भवति तन्नास्तस्य देवता । मनुष्य जसा अन्न खाता है वैसा ही अन्न वह अपने देवाकी अर्पण करता है। जिस प्रकार अनाय लोगाके देव और देविया भेड-बदरो और भसाका भोग भागने लगे। यत्र हम परिपुद्ध हिंदू धमके देवाकी अुपामना करना चाहते हो ता हमें परम पावन अुपिया द्वारा हविष्य माने गये कद मूल और फल तथा गरीका नवेद्य ही देवाके सामने रखना चाहिये। अपि-पचमीके दिन बलकी मवासे अुत्पन्न त्रिया हुआ कुछ भी न खानेका नियम हाता है। स्वाथके कारण हम पनुआ पर तो अत्याचार करने ह अुसीका भान यह नियम हमें कराता है। मनुष्य-जाति मन्त्रके लिये यह निष्पाप आहार खानेवाली बन जाय यह सय युगम लिये हमारा जेक भ्वन है। हमारी पूजाविधि द्वारा जिस आगाको पोषण मित्रे तो यह काओी छोटा लाभ नही है।

अिन प्रकार पूजाविधिमें से चन्हा धम को हटा देनेक बाद पुराणकारकी यह गन्हा स्वोकार करनेमें हमारे लोगाका बहुत आपत्ति नही होगी

इति तन्मन्त्रमन्त्रान् इत्यनेनैवायमागतान् ।

आशाशापनिनाद्रायान स्पष्टवा न स्नानमाचरेत् ॥

भगवानकी सेवाके लिये आये हुअे तथा मन्दिरके समीप अेकत्र हुअे चाङाग पतिता या भ्रष्ट लागाकी हम छुअे, तो भी स्नान करनेकी जरूरत नहीं है।

हमने अपनी पूजाविधिमें कमकाड और तत्रकी आवश्यकतासे अधिक स्नान दे लिया है। पूजामें तो हृदय धमकी बुलकटता और सादगी होती चाहिये। मनुष्यके जसी सारी जरूरतें श्रीस्वरकी भी हाती हैं यह कल्पना करके पाङा अनुचाराका आडवर बडानेकी अपेक्षा यदि हम जपियाका यह वचन याद रखें कि निय-नृप्त श्रीस्वरकी किसी वस्तुकी जरूरत नहीं है और अपनी भक्ति तथा पूजाकी हम हृदयकी मनोप देनेवाली बनायें ता बहुतसी बचटासे बच जायगे। श्रीस्वरकी पूजा ता कवल भाव प्रधान ही होती चाहिये। रसायनशास्त्रके प्रयोगाकी तरह अयवा बैद्याकी दवा बनानेकी विधिमाकी तरह श्रीस्वर-पूजाको कमकाडो बनानेकी कोनी जरूरत नहीं। औषधकी भस्म तयार करनेमें यदि कोश्री गलती हो जाय, ता वह जहर बन जाती है अुमी प्रकार पूजाकी विधिमें जरासी भी गलती होने पर महादेव या माता हमें भस्म कर दगी—जिम तरहका डर बनानेसे सकाम भक्तिमें बुलकटना मले ही आये लकिन यह नहा कहा जा सकता कि अुमये धार्मिकता निश्चित हासे दू होती है। पूजाकी विधि सरल और जुलकट भक्तिवाणी होनी चाहिये।

असी पूजा करनेके लिये किसी बिगेप पडे पुजारी ब्राह्मण या तपायन, माधु या मुन्धियाकी रखना जरूरी नहीं है। पेगेवर पुजारीकी पूजाके लिये रखते ही अुमर पाडे असम्य दुराजिया आयेंगी। यहां हम पुराने मन्दिराकी बात नहीं करते। जुहें अुनके सारे अटपटे रिवाज जब तक चू तब तक मुबारक हा। किन्तु नये मन्दिरामें तो हम पूणतया गुड रहें। असे सभी लोग जो मूर्ति पूजाके विराधी नहीं ह मन्दिरमें दगातके लिये आ सकते हैं—फिर व किसी भी धनके अनुयायी क्या न हा। अुनके लिये जितना नियम काफी होगा कि वे मन्िरमें आकर मन्दिरकी मत्रादाका पालन कर। जहा तक पूजाका सवाङ है अुम मन्दिरमें विश्वास रखनेवाले हर हिन्दूकी मान्य की हुश्री विधिके अनुमार पूजा करनेका छूट होनी चाहिये। पुरुष हो या स्त्री दाना स्नान करके और घुले हुअे स्वच्छ कपडे पहन कर (और भूसे पेट) मन्दिरमें पूजा करने जायें। जिसमें जात-पातका कोश्री भेद नहीं होना चाहिये। स्त्री-पुरुषका भी कोश्री भेद नहीं होना चाहिये। जिन लोगाने मिलकर मन्दिरका बनवानेका अुद्योग किया हो वे सब पूजाकी अपी वारी बाध र। जवसे लागाकी पसक बल पर मन्दिर बनवाने और चगानेकी मुबिधा सूधी तबसे हिन्दू ममाजमें आवश्यकतासे अधिक मन्दिर बनने लगे ह। और ये मन्दिर भक्तिका पापण करनेके लिये नहीं परन्तु अमुक लोगका अुमगकी या प्रतिष्ठाकी लालभाकी तृप्त करनेके लिये ही बनवाये जात

हं। जो लाग मन्दिर बनवायें अुहें ही मन्दिरका नित्य-नभित्तिक खच जुठाना चाहिये।

दगन करानेके लिये भक्तासे दक्षिणा लनेका तो प्रश्न ही नहीं अुठना चाहिये। दगन कर लनेक बाद किसीकी कुछ देनेकी अिच्छा हो, तो वह लिया जा सकता है, परन्तु इस तरह अिक्कठा हुआ धन मन्दिरके मालिका, सचालका, पुजारिया (यदि दुभाग्यमे पुजारी हा ता) अथवा मन्दिरके देवो-देवताआका नहीं माना जा सकता। जिस समाजसे यह धन प्राप्त होता है अुसकी भावनाके अनुगार समाज नकार किसी भी योग्य कारणमें अिस धनका अुपयोग होना चाहिये। लकिन यह अेक स्वतन्त्र विषय हुआ। अिसकी चचा अलगसे की जानी चाहिये।

हिन्दुआम मन्दिरमें हजारों या लाखों लोग अेकत्र भले ही हान हा, परन्तु पूजा ता प्राय अकितगत ही हानी है। सामुदायिक अुपासना गायत्र ही कहा दगनमें आता है। जिस कारणमे सगीतके बदले मन्दिरमें वागहल गुनाभी दना है और वागका विसाह होनेक वजाय कलाकी विवृति ही अिलाभी पडती है। मन्दिर मुख्यत अेक सामाजिक संस्था है। अिन मन्दिरमें धमके सामाजिक स्वरूप विनामरी अुत्पत्ता नहा हानी चाहिये। गुड, सान्त्विक पवित्र जीर वाग रगिअ अग्रणियाका मन्दिरकी संस्थाका सारा तन्त्र रचना चाहिये। पूजाकी रिधि भी अिसका अनुगरण करनेवाणी ही हानी चाहिये।

जिस तरह हमन मन्दिरमें अुपयाग किये जानवाल या रते जानवाल आहार (नक्ष) के विषयमें अुपर स्पष्टता की अुसी प्रकार पूजामें अथवा मन्दिरमें अन्त्याग रिय जावेका वस्त्राने वारमें भी कांभी निरिचित और स्पष्ट नियम हाना चाहिये। परमात्मा दानन दुगहरत है पतित-ग्रावन है। अुग राज विनाम या धमपत्ता गुणार गामा नहा दना। गुड सानीके कपड ही अुम गामा देंग। गिहागत गर यड हूअे रामकी अरुणा अरुयाका अुद्धार करनेवाक गुहन का लल लगानका तथा गवराक अेर चमनका तपस्वी या बनवाणी रामकी मूर्ति हा मुअ पूजा अथवा भक्ति अिअे अधिक अुपयुक्त गती है।

जिस प्रकार समाजक नवित्य अिवाता पावना करे अना मन्दिरकी रचनाका विचार कराने वा अुत्पत्ता समाजक अहित और पारलौकिक करमाणन अिअे का लल अुत्पत्ता जाव अिन अन्त्र पर विचार किया जाना चाहिये।

प्राण-प्रतिष्ठा*

श्री मूलचन्द्रभाजीका आमरण स्वीकार किये सिवा कोजी चारा नहीं था, जिसलिये मैं आपके बीच आ गया हूँ। किन्तु राम मन्दिरम मूर्तिकी प्राण प्रतिष्ठा करनेके पवित्र कायमें भाग लेते समय मुझे अनेक प्रकारसे सकोच होता है, घबराहट मालूम होती है। पुण्य प्राप्त करनेके लिये या भक्ति-अुपासनाका प्रचार करनेके लिये मन्दिर बनवानेका अुत्साह रखनेवाली दुनियासे हम बहुत दूर हैं। हिन्दू सामाजिक जीवनमें अेक समय मन्दिरका जो स्थान था वह आज नहीं रहा है। नये ढंगसे शिक्षा पाये हुअे लगामें जो पक्के सनातनी हैं वे मन्दिरा मूर्तिपूजा आदिका चाह जितना सद्भातिक बचाव कर परन्तु अिनके विकासका प्रयत्न कोजी करता हो असा मालूम नहीं होता। समाजकी अग्रगण्य जातियामें सामाजिक प्रयत्नसे मन्दिर बनवानेका विशेष प्रयास दिखायी नहीं देना। मन्दिराक द्वारा धार्मिक जीवन समृद्ध होता है या नहीं, अिस विषयमें लागाकी शका दिनादिन बढ़ता जा रही है। कुछ मन्दिराकी व्यवस्था अितनी बुरी है कि वे व्यक्तिगत सम्पत्ति जैसे ही बन गये हैं। जितना ही नहीं वे मुफ्तकी जायके साधन भी बन गये ह। और आलाचक ता यहा तक कहते हैं कि कुछ मन्दिराके अनीतिक धाम बन जानेकी आवाज भी सुनायी देने लगी है। असे समय यह अेक बडा सवाक है कि जो जातिया अभा तक पिछडी हुअी ह, अिनकी सरक्षणाका काय हमने अहकारसे या जिम्मेदारीके भानसे अपने हाथमें ले रखा है, अुन जातियोको हमें सदहास्पद दिगामें ल जाना चाहिये या नहीं? असे जने मूर्तिपूजा और देव मन्दिराकी आलाचना होती है वसे वसे अिन दोनोके पीछे रह भय जादशकी चित्रित करके हम अिनका बचाव करते हैं। अिस अुच्च और भय चित्रका दष्टिके समक्ष रखते हुअे भी हम दूसरी तरहसे परेशानी महसूस करत ह। अिस अुच्च आदगक चल पर हम अिन दोनाका औचित्य सिद्ध करते हैं अुस आदगका हमने अपने जीवनम कुछ अग तक भी सिद्ध किया है? अथवा, और कुछ नहीं तो क्या अुस आदगकी दिगा में प्रमाण करनेकी वृत्ति भी हमारे जीवनमें दिखायी देती है? अिस तरहकी अतर्मुखी शका हमें जरूर व्याकुल बना देती है। व्यवहारमें भी हम देखते

* सौराष्ट्रके धरतेज नामक गावमें हरिजनाके लिये बनाये हुअे राम मन्दिरमें मूर्तिकी प्राण प्रतिष्ठा करनेके अवसर पर ता० १०-८-२९को दिया गया प्रवचन।

ह जि बीज बोनेका काम तो सरल है, परन्तु अुस बीजसे जो अकुर फूटता है उसका पालन पापण करनेके लिये अुसकी रक्षा करनेके लिये सारा जीवन निचाड कर रख देना पडता है। हमें मकान बनवानेमें और मन्दिर बनवानेमें भेद करना चाहिये। आज लशमें जब मन्दिरा और मन्दिराकी व्यवस्थाक बारेमें जितनी आलोचना हानी है जुम समय नये मन्दिर बनवानेसे पहले हमें अिस बातकी जाच अवश्य करनी चाहिये कि पुराने मन्दिराके दोषाको दूर करनेकी कोजी व्यवस्था हमने यहा की है या नहीं। जसा हम नहा करेगे तो समाजके जुपालभ या जुलाहनेने पान बतगे।

फिर यह तो हमारे समाजक सबसे छोटे भाजियाके लिये बनाया हुआ मन्दिर है। अिसके सम्बन्धमें तो हमारी जिम्मेदारी हजार गुनी बढ जाती है। जिस सस्याको सस्कारी मानी जानेवाली जातिधा भी शुद्ध नहीं रख सका, अुसे चलानेकी जिम्मेदारी अपने छोटे भाजियाके सिर पर डालनसे पहले हमें जरूर सोचना चाहिये। दो दिनके अुत्साहके बाद मन्दिरको चलानेके बारेमें लोग अपरवाह या निरुत्साही नहीं बन जायगे अिसका विश्वास यदि हमने कर लिया हो समयके प्रभावम चारा जर फल रही नास्तिकता तथा पर जीवनके विषयमें कन्ती जा रही अथद्धाने सामने यह मन्दिर टिकेगा जिमका विश्वास यदि हमने कर लिया हा सामाजिक प्रतिष्ठाके अभावम आसानीसे फलनेवाल अनाचारमे यह मन्दिर भष्ट नहा होगा जसा यदि हमारा विश्वास हो गया हो मन्दिरकी पूजा अवा जुमरा मरम्मत और अुमके जासपासकी स्थूल तथा नतिक स्पष्टनाक प्रस्तका ह हमने माच निकाला हा तथा कौमी अयवा राजनीतिक विचित्रम अिम नये मन्दिरकी रक्षा करनेकी अपनी जिम्मेदारीका हमें पूरा भान हो चुका हा ता ही हम मन्दिर जमी धार्मिक सस्या खटी कर सकते ह। अेक बार मन्दिर बनवानक बाद वह जगड रूपमें चन्ता रहना चाहिये। समाजका अुगम गैतिक तथा धार्मिक लाभ मिलना चाहिय कयाकि वह अेक स्थायी सनातन सन्धा है।

अिन सव बातारा विचार करते हुए अिम समाराहमें भाग लते समय मनका अस्वम्य हाना स्वाभाविक ही है।

सबस पठक हम मूर्तिपूजारा ही विचार कर। मूर्तिपूजा हमारे धमका अाजका अग नहा है।

अनमा सज्जावम्या, मध्यमा ध्यानधारणा।

अथमा तापयात्रा च मूर्तिपूजाऽऽरमाधमा ॥

मूर्तिपूजा मवाद निरुत्तर है जसा प्राचान वचन भी हमारे यहा है। अिम हन अरोगा मनापही वचन कहकर अुग सक्न ह और चाहें ता तक चलाकर दर मिड कर मक्न हैं कि न तम्य प्रतिमा अस्ति यम्य नाम महद् यम।

शुनि-वचन भी मूर्तिपूजाका निषेध नहीं करना । किन्तु मन्त्रीय उपनिषद जैसे प्रधान उपनिषदमें कहा गया है पत्थर, लोह, स्फटिक या मिट्टी जसी पाथिव वस्तुकी मूर्ति बनाकर पूजा करनेसे भाग भागनेके लिये बार-बार जन्म लेना पड़ता है । इसलिये सयमी मुमुक्षु पुष्पको अपने हृदयके भीतर ही अर्थात्मीकी अचना करनी चाहिये । जन्म मरणके चक्रस बचना हो तो बाहरी पूजा-अर्चाका त्याग करना ही चाहिये ।”* बेशक, यह सीख मुख्यत मुमुक्षु समासियाके लिये है । परन्तु मोक्ष किसे नहा चाहिये ? हमारे देशमें अधिकारवाद पर खूब साचा-विचारा गया है । नानी सयासा या जैस अय अधिकारी पुरुष भले ही मूर्ति पूजाका त्याग करे ध्यान-कुशल लोग भले मानस-पूजा द्वारा ही मूर्तिपूजा कर ल, परन्तु सामान्य लोगोंके लिये तो मूर्तिपूजा ही अकेला आश्रय है । ध्यान, पूजा अथवा सेवाके लिये कोणी न कासी आलस्य तो अह चाहिये ही । इस प्रकारकी दलील हम हमेशा सुनते ह ।

लेकिन मेरे गले यह दगैल कभी अतरती नहीं । म यह मानता हू कि हर कोसी आदमी मूर्तिपूजा नहा कर सकता । मूर्तिपूजाके लिये विशेष अधिकार प्राप्त करना होता है । मनुष्यक धार्मिक विचार अके खास अूचाजी सन पहुँचे हा तो ही असे मूर्तिपूजासे लाभ होता है । बना मूर्तिपूजा अज्ञान, अविद्वान तथा अनाचारकी जननी बन जाती है । बादमें धार्मिक पुरुषाको जिनका कडा विरोध करना पड़ता है । अरबस्तान, सीरिया खालिडया मिस्र आदि देशमें अनधिकारी लोगोंके बीच चलनेवाली मूर्तिपूजाने कहुर डा दिया था । अिमसे अूब कर हजरत अित्राहीम मुसा महम्मद वगरा खुदापरस्त पगबराको अुमरा कडा विरोध करना पडा । जो लाग यह नहा जानते कि अीवर सब व्यापी है, अतपामी है, वे मूर्तिपूजासे सच्चा लाभ नहीं अुठा सकते । अिमके विपरीत, भय अथवा लोभसे अयाय पाथिव वस्तुआका ध्यान करके वे अधिक भयभाज और लोभी बनेंगे और अपने भीतर दासवृत्तिका बढाकर गुलाम बनेंगे । जिस समाजमें अीद्वरका विभूत्व दृढतासे स्वीकार किया गया है जिन समाजकी परम्परा अीद्वरको हृदयके भीतर ही खोजनेकी है अुम समाजमें मूर्तिपूजाका स्वरूप बदल जाता है मूर्ति कवल ‘पूजा तक मर्यादित रहनेवाला प्रतीक’ बन जाती है अिद्विय द्वारा अमृत तत्वका ध्यान करनेका केवल अके साधन बन जाता है ।

हमारे सामनेका गडा हुआ पत्थर है तो पत्थर ही परन्तु अीद्वरके प्रति अपना भक्ति प्रकट करनेके लिये हम अुसमें अीद्वरत्वका आरोपण करत ह — अिम बातको समझनेके लिये विशेष आध्यात्मिक तयारा, दानिक विवास

* पापाण-लोह-मणि-मूष्मय विग्रहपु पूजा पुनजनन भागकरी मुमुक्षा ।
तस्माद् यति स्वहृदपाचनमेव बुयाद्, बाह्याचन परिहरेन् अपुनभवाय ॥

आवश्यक होता है। श्रीश्वर जब सबत्र विद्यमान है तो हम यह क्या मानें कि वह अिस पत्थरमें नहीं है? हमारा हृदय जहा माने वहा श्रीश्वर है ही, अिस प्रकारका विश्वास या सतोप मनुष्य दूसरी किसी तरह नहीं बढा सक्ता।

मेरी यह दृष्टि यदि गलत न हो तो अिससे यह दाका जरूर बुठती है कि 'यदि जसा ही हो तो अग्रगण्य जातिया भले मूर्तिपूजा कर वेदात गास्त्र जाननेवाले पडित भले ही पत्थरको स्नान करायें और भोजन खिलायें परन्तु पिछडी हुअी जातियाको तो हमें अिस कदमें डालना ही नहीं चाहिये।' मेरे विचारसे यह तक ठीक नहीं है। हमारे साधु-सताने सक्डा कपों तत्र दया बुद्धिसे जो काय किया है अुसका प्रभाव सारे समाज पर पडा है। हमारे ये छोटे भात्री गास्त्रीय चर्चामें अथवा दुनियवी समलदारीमें भले ही हमसे पिछडे हुअे हा, परन्तु यह अनुभव कभी नहीं हुआ कि श्रीश्वर निष्ठा, भक्ति और आराम समपणके बारेमे वे हमसे पिछडे हुअे ह। जैसे प्रेमशक्तिको बाहरी शिक्षा की जरूरत नहीं होती वसे श्रद्धाको भी ताक्कि कसरतकी जरूरत नहीं होती। अनुभवी सतोने श्रद्धा दी और हमारे देशकी मुग्ध हृदय जनताने अुसे आत्म-बुद्धिसे ग्रहण किया।

ये भोलेभाले लग सर्वोच्च जाध्यात्मिक ज्ञानके अधिकारी हो सक्ते ह या नहीं असी गका सतोके मनमें कभी नहीं जुठी।

तब हमारे देशमें मूर्तिपूजाका क्या स्थान है?

हम यह न मानें कि मूर्तिपूजा हर मनुष्यके लिये जरूरी है। फिर भी सब मनुष्य जाने-अनजाने किसी न किसी ढंगसे मूर्तिपूजा करते ही ह। बहुतरें लोग कला रसिक तो होते ही ह। अिद्रिया द्वारा अिद्रियातात वस्तुका आस्वाद भागना और अिस प्रकार अिद्रियाकी विषय लोलुपताको कम करना अथवा अुच्च दिगामें मोडना—यह माग अनेक लोगके लिये बडा अनुकूल होता है। काय अथवा सगीतके द्वारा मनुष्य दुनियवी दु खको जो भूल जाता है अुसका कारण यही है। यह कलावृत्ति अनेक लोगमें अितनी प्रबल होती है कि मूर्तिपूजाके द्वारा वे अनायास अपने हृत्पका विकास कर सक्ते ह। चक्रको घुमानेके लिये जैसे बीचमें अेक स्थिर धुरीका होना जरूरी है रायतत्रको सुस्थिर रखनेके लिये जैसे कुछ प्रजाआकी नामके राजाकी जरूरत होती है सेनाको जैसे अपनी प्रतिष्ठाके प्रतीकके रूपमें बडकी जरूरत रहती है वसे ही मनुष्य मात्रको अपना आध्यात्मिक प्रेम अुडेलनक लिये तथा ध्यानमें अेकाग्र होनेके लिये मूर्तिकी जरूरत रहती है। कुछ लोग मूर्तिकी छोडकर केवल मन्दिरको ही आवश्यक मानत ह। परन्तु यह ता तन्मीलकी बात हुअी। आदरका भाव किसी न किसी आलवनकी खोजमें रहना ही है फिर वह मूर्ति हो या ग्रथ तालाव हो या नदी प्रकाश हो या अधकार पूव लिंगा हा या परिचम लिंगा, पूवज हा या पूवग्रह।

यह आलवन विघ्नरूप न बने, बचनकारक न हो, कल्पना और विचारका अवरोधक न बने, शाश्वत गलत रास्ते न ल जाय और अनुभवको बलुपित न करे, इसके लिये समाजको पहलेसे ही हृदयकी गुद शिक्षा-दीक्षा मिलनी चाहिये। यह शिक्षा-दीक्षा हर दगके सत और फकीर जनताको दते आये है और आज भी देते ह। हृदय द्वारा धार्मिक शिक्षण देनेकी व्यवस्था यदि न हो और खाला मन्दिर ही हा, ता अिममें कोओ सका नही कि व शापरूप ही सिद्ध हागे। जिस प्रकार किसी गुपोम्य अनुभवी और समय मनुष्यके बिना कोओ सस्या नहा खोला जा सकतो, जुसी प्रकार गुद हृदय और ओस्वर निष्ठासे कसी भी परिस्थितियामें समाजका मागदशन करनेकी थाडा-बहुत शक्ति रखनेवाला समाज सेवक न मिले तब तब मन्दिर बनवानेसे हमें क्या लाभ होगा ?

मन्दिर सामाजिक शिक्षाका केन्द्र है, धार्मिक संगठनका एक बडा साधन है तथा जनताके विविध आदर्शोंको जीवित रखनेका एक माध्यम है। व्यक्तिगत जीवन तथा पारिवारिक जीवनसे परे जितना भी मानव-जीवन है उस सार जीवनका हम चाह तो अपने मन्दिरा द्वारा विकास कर सकते ह।

तब प्रश्न अुठता है कि क्या अिन सारी थाताका विचार करनेके बाद हम मन्दिर बनवानेमें प्रवृत्त हुये हैं ? असा ही होता तो हमने सभी वर्णोंके लिये समान मन्दिराकी स्थापना की होता। जैसे अछूताके लिये अलग गालायें खालना और अलग कुअें खुदवाना हमारी लाचारीका प्रकट करता है अुसी प्रकार अुनके लिये अग मन्दिर बनवाना भी अच्छी स्थितिका दानक नही है। जिस प्रकार मैं चाह ता रममें अछूताके डिबेमें बैठ सकता हू चाह तो अछूताकी शालामें अपने बालकाको पढने भेज सकता हू या अछूताका कुआ साफ हो ता अुसका पानी पा सकता हू अुनी प्रकार मन्दिरामें श्रद्धा रखनेवाले सब लागाको अछूताके मन्दिरमें जानेकी स्वतंत्रता है। और अिस स्वतंत्रताका लाभ हम सबको लेना चाहिये। यदि हमारा द्वािवादी समाज समयको पहचान कर यह बात स्वीकार न करे तो कुठ लागाका यह नियम बनाना पडेगा कि हम पूजा करगे तो अछूताके मन्दिरमें ही करगे, दान देंगे तो अछूताके मन्दिरका ही देंगे और अुत्सव मनायेंगे ता अछूताके मन्दिरके छत्रके नीचे ही मनायेंगे।

लकिन मन्दिराक बारेमें किनी भी तरहका अुत्साह अूची जातियामें है ? आज हम मन्दिराक द्वारा अपने सामाजिक धार्मिक जीवनकी शोध बहुत कम करते ह। आधुनिक दगमें सोचने विचारनेवाले लोग अिसक लिये दूसरे ही केन्द्र खोज रहे ह। हम लोगको अतमुक्त हाकर अपनी वक्तियकी जाच करके देखना चाहिये कि लोक-सग्रहके नाम पर हम वहा अिन बाल जातियामें अध-विदवासाको तो नही बडा रहे ह ? वे लोग हमारा अनुसरण कर अिस खयालसे हम अनी चीज तो गभीर भावसे अुन लोगके हायमें नही सोंप रहे ह जो

नारायणको जिस आत्मारामको मूर्तिमें सचरित हुआ मान कर हम मूर्तिमें उसकी पूजा करे और पूजा समाप्त होनेके पश्चात् वहासे अलगवा बिसजन करके पुन अपने हृदयमें उसका दशन कर, यह हमारे पूजकाकी पद्धति है। मंदिरामें तो सामाजिक प्राणकी और हमारे सर्वोच्च आध्यात्मिक जीवनकी प्रतिष्ठा करनी होती है। जिस जीवनकी मूर्तिचित् शाकी तो हमारे पास प्रत्यक्ष होनी ही चाहिये। विधि ता अेक बाह्य चिह्न है। प्राचीन अपिया द्वारा बतायी हुयी पद्धतिसे हम यह विधि पूरी कर सकते ह। जसी विधि यदि हमें न मिले तो जो भी विधि सूझे उसीसे हम अपना काम चला सकत ह। परन्तु सच्ची प्राण प्रतिष्ठा तो तभी होगी जब समाजका आध्यात्मिक आदर्श निश्चित करके मंदिरके द्वारा हम उस आदर्श तक पहुंचनेका सकल्प करके। हमारे भीतर सच्ची जीवन-व्यापी धमनिष्ठा हो अनय भक्ति और श्रीश्वर शरणकी भावना हो, 'स्वकमणा तमभ्यच्य की साधना हो और शुद्ध धार्मिक ब्रतिसे समाज सेवा करनेकी बात हमें सूझे, तभी असी प्राण प्रतिष्ठा सपन हो सकती है।

जिस प्राण प्रतिष्ठाका अय यह होता है कि हम समाजके प्राणकी स्थापना यहा मंदिरमें और मूर्तिमें करते ह। प्रत्येक ब्यक्तिको यह प्रण करना चाहिये कि प्राण भले ही चले जाय परन्तु हमारा मंदिर अप्रतिष्ठित नहीं होगा। सोमनाथके मंदिरके खडहर जिस भूमि पर बिलरे हुअे पडे ह उस भूमि पर नया मंदिर बनवानेका प्रारंभ करनेसे पहले हमें गभीरतासे सोचना चाहिये कि क्या हमारा सकल्प धार्मिक बर-द्वेषको शांत करनेका है? बाहुबलसे धमस्थानाकी रक्षा करनी पडे तो अवश्य को जा सकती है परन्तु असी रक्षासे धम तो अपमानित होता ही है। धम विजयको बाहु विजयकी आशा नहीं रखनी चाहिये। जब तक हमारा प्रेमभाव मनुष्य मात्रके हृदय पर विजय प्राप्त नहीं करता तब तक धमकी विजय हुयी असा नहीं कहा जा सकता।

परन्तु यदि हम असा मानें कि द्वेष शोध आदि ात्रु हमारे समाजसे बाहर ह तो वह हमारी बहुत बडी भूल होगी। दूरके धर्मोंने हमारे जितने मंदिरोंको तोडा या अष्ट किया उनमे अधिक मंदिरोंको हमारे समाजके लोभ अनास्था अध्या अनाचार आदि महादोषाने जजरित किया है। जिस भीतरी आक्रमणसे समाजको बचानेकी हमारी प्रतिगा हो तो ही हम सच्ची प्राण प्रतिष्ठा कर सकेगे।

जिम पुण्य-पुरुषके हाया जिस मंदिरकी शिलारोपण विधि सपन्न हुयी है उसका अत्यज-मेवाका असाह धमने लिअे मर मिटनेकी उसकी तयारी प्राणी-मात्रके प्रति उसके हृदयमें रही दया और मानव मात्रके प्रति उसके चित्तमें बसी हुयी अबर-बुद्धि यदि हमें आदर्श मालूम होती हो तो ही हम यह प्राण प्रतिष्ठा कर।

यह मन्दिर मुख्यतः अत्यजाके लिये है। अत्यज ही अिष्ठे चलायेंगे और निभायेंगे। अुन्हीकी जिच्छाका तुष्ट करनेके लिये हमने यह मन्दिर बनवाया है। परन्तु अैसा नया मन्दिर खोल कर हमने अपनी सामाजिक जिम्मेदारीका क्याया है, अिनना याद रखनेकी नतिक जिम्मेदारी तो हम सबणोंकी है ही। यही कारण है कि अत्यजाको लम्ब करके न बांटे हुअे मैं अत्यजाका हाथ पकडनेके लिये तैयार हुअे लागाका लक्ष्य करके आज यहां खोला हू। अत्यज तो लम्बे समयके अत्याय-अत्याचारके अकुलाये हुअे बालक ह। अुनके सारे दोषाके लिये हम लाग ही जिम्मेदार हैं। हम लोग ही अुनके लिये अीस्वरके दरवारमें अुत्तर-दायी ह। आज तक हमने अुनके स्वाभाविक जीवन विकासको रोक़ा है, अिसीमें से यह जिम्मेदारी पदा हुअी है। अिम जिम्मेदारीका स्मरण करके हम प्रभु रामचद्रसे प्रार्थना कर 'ह अनायासे नाय, हम सभी तेरे सामने बालक हैं। हम प्रमादी हैं। तुम पहचाननेके अपने अेवमात्र कतव्यको भूलकर हम क्षुद्र वामनाअाके पीछे दौडते हैं और आपनमें लडते षगडते ह। दीन, हीन, पतित होकर भी हम अेक-दूसरेके प्रति अूच-नीचकी भावना रखकर हमीके पात्र बनते हैं। अेक-दूसरेसे द्वेष करके हम नष्ट भष्ट हा रहे ह। तू हम सबको अेक कर दे। हमार बीच अेकताकी स्थापना कर। हमें प्रेमका दान दे। हमारे हृदयमें हमारे समाजमें हमारी अिम दुनियामें तेरा अय-जयकार हो। भारतमें स्वराज्यकी—धमराज्यकी स्थापना हो।'

५८

मूर्तिका जन्म

अेक मूर्तिकार था। वह अपने ध्यानकी मस्तीमें धूमता था। अुमने जगलमें अेक पत्थर देखा। वह था तो दूमरे पत्थराके जमा ही, परन्तु जसे हमें अगूरके भीतरके बीज अुमे प्रकाशके सामने रखते ही दिखाअी देते हैं अथवा जैसे अेकस रे द्वारा हमें अपने शरीरके भीतरकी हड्डिया साफ दिखाअी देती ह वैसे ही अुम मूर्तिकारका पत्थरके भीतर अेक मूर्ति दिखाअी दी। फक अितना ही है कि सुन्दर और आकषक अगूरके भीतर हमें खुरदरे बीज जसे-ससे दिखाअी देते ह तथा लावण्य और प्रसन्नतासे गिरे हुअे मानव-शरीरके भीतर अेकमे रेकी सहायतासे आखाको डरावना लगनेवाला अस्तिय पजर लिखाअी देता है, क्याकि दोना जगह हमारी पार्थिव दृष्टि काम करती है जब कि मूर्तिकारकी पार्थिव आँसे तो ब्रह्मण्डके बनाये हुअे पत्थरको ही देखती थी, परन्तु रक्षेश्वर द्वारा प्रदान की हुअी कल्पनाकी गुप्त दृष्टिमे अुमने अुम खुरदरे पत्थरके भीतर अेक सुन्दर मुडौल

और जीनी जागती मूर्तिकी देखा — घम अुसी प्रकार जैसे भगवान रामचंद्रके चरणाने शिलाम अहल्याकी देखा था। फिर तो पूछना ही क्या? सोनेकी खदान में, दुघटनाके कारण, जब जेकाध मनुष्य दब जाता है तब अुसे बाहर निकालनेके लिये — अुसका दम घुटनेके पहले ही अुसे जीवित बाहर निकालनेके लिये — जिस प्रकार बाहरके लोग प्रयत्न और अुतावलीकी पराकाष्ठा कर देने ह अुसी प्रकार वह मूर्तिकार मनुष्या जीर दलगाडीकी मददसे तुरत अुस पत्थरका अाने घर ले गया। फिर अुसने हाथमें हथौडी और छनी रखर अुस मूर्ति पर चडी हुअी पत्थरकी परतको तोड कर हटानेका प्रयत्न आरभ किया। हथौडीका अेक अेक प्रहार वह जल्दी जल्दी लेकिन दृढता जीर निश्चित गतिसे पत्थर पर करने लगा। कसा अुसका बल था! और फिर भी कसी अुसकी कुशलता और कोमलता थी! भीतरकी मूर्तिको जरासी भी चाट कही लगती, तो मूर्तिकारके प्राण सूख जाते थ। वह काम करता गया। पसानसे अुसका गरीर तरतर होता गया। पत्थरकी परत अेकके बाद अेक टूट कर गिरती गयी — पहले मोटी मोटी परतें, फिर पतली और बारीक। धीरे धीरे मूर्तिका स्वरूप प्रकट होने लगा। डूबते मनुष्यको पानीसे बाहर निकालनेके बाद या सोते मनुष्यका नींदसे जगानेके बाद पहले पहले जस अुसके अंग प्रत्यंग आलस्यसे भरे दिखायी देते ह और चेहरा व आखें अुधते आलसीके स लगते ह अुसी प्रकार मूर्तिका दगन होने लगा। कोअी सजन जिस प्रकार अपने प्राणको जीर अपनी विद्याको अपनी निष्ठा जीर अपने ध्यानको, अपनी अंगुलियामे जेकाग्र करके योगयुक्त स्थितिमें रोगीका आपरेगन करता है अुसी प्रकार हमारा वह मूर्तिकार स्वयं बनाये हुअे सूक्ष्म औजारोसे मूर्तिको जगाने लगा। मूर्तिकारके अिस कोमल और मुप्त स्पर्शका अनुभव हाते ही मूर्ति पहले हसी फिर अुसने धीरे धीरे अपनी आल खोली। मूर्तिकारको देखकर अुसा पूण परिधयका धातक मद सा स्मित किया। फिर अपने घटनाको ठीक करके वह बोली क्या मूर्तिकार बंधु मुने तुमने किमलिये बुलाया है? युगाकी भेरी नीलसे तुमने मुझे क्या जगाया है? तुम मुयने कसे कायकी जागा रखते हा?

अपनी ही बनायी हुअी मूर्तिके समक्ष मूर्तिकार हाथ जोडकर खडा हो गया। अुसन अपना सिर झुकाया जीर अत्यत नम्रतासे भक्तिपूण स्वरमे बोला

दामा करना दबी। यह दुनिया अब अधिक दुख नहीं महन कर सकती। दुखकी दीक्षासे दिप बनतके वजाय यह दुनिया दुखमे घायल होकर नास्तिक बन रही है। मनुष्यके प्रति मनुष्यका व्यवहार विपरीत हो गया है। मनुष्यको अब प्रमत्तता बधूता प्रेम और अुन्नत बननेकी दीक्षा दनी है। परन्तु भुयसे यह काय नहा हो सकता। अिससे मरा दम घुटता था म भीतरी ही भीतर बुटना था। परन्तु जगलमें अुम पत्थरके भीतर मुझे तेरा दगन हुआ और मुने

भाग मिल गया। मुझे लगा कि यही दीन जनाक जुद्धारका मुहूर्त है जिस लिये मने तुझे बुलाया है। म यहा तेरी स्थापना करुगा। यहा म तेरे योग्य जेक मन्दिर बनाभूगा। सारी दुनियाके लोगाको आमत्रण दूगा। वे आकर तेरा दशन करगे जिसस जुनके हृदयमें भक्तिका आम्तिक भाव अुदय होगा अुनक सामने जीवनका रहस्य प्रकट होगा, और अुसक वाद वे मनुष्यको मनुष्यके रूपम, भाजीक रूपमें तेर भक्तके रूपमें पहचानना सीखेंगे। मेरी प्राथना है कि जिस कायको अखड रूपमें करनके लिये, ह भुवनेवरी त् यहा सदा विराजमान रह।'

दवीने प्रसन्न होकर कहा ' तथास्तु। परन्तु तुने अपने लिये काओ वरदान मुझसे नही चाहिय ? '

' क्या नही, माता ? मुचे जेक वरदान अवश्य चाहिये। तेरा दगन करनेके लिये यहा आनेवाले लोग, तरा आविष्कार करनेवाल मुस मूर्तिकारको भूल जाय, मरा नाम खोजने न बठें। म यही वरदान मागता हू कि मर कारण तेर दगनमें, तेरे साक्षात्कारमें कोओ विक्षेप न पडे।

दवी परेगानीमें पड गयी। अुसके हाठ बढ हो गये। मानो ' वर ब्रूहि ' कहनेका अुसे पश्चात्ताप हो रहा हा। परन्तु तुरत पुन प्रसन्न होकर अुमने कहा ' तथास्तु। ' अितना कहनेके वाद दवीने मूर्तिकारका अुठाकर अपने हृदयमें समा लिया। वह बाली ' अब त् मुझसे भिन्न रह ही नहा सकता। मेरे साथका यह अभेद ही तुझे मरा वरदान है। म अिस पत्थरमें जावत्त थी, लुप्त थी सुप्त थी। तूने मेरा आविष्कार किया। अब म तुझे अपने हृदयके साथ जेक रूपता प्रदान करती हू। तूने मुझे देह दी म तुचे विन्ह बनानी हू। लाग मेरे द्वारा तुझे हा देखेंगे। अब मुझमें और तुझमें कोओ भेद रहा ही नही है।''

मूर्तिकारका शरीर वही लुडक गया।

३०-९-३९

प्रेमके अधिकारी

हम लाग छहू भाभी थ। म सजस छाटा थ। मेरा जन्म अतमें हुआ था, जिससे म अत्यज थ। जिस कारणसे बचपनमें सभा भाभी मुझ पर पम बरसाते थ। कोभी तानकी चीज जुने ह्यापम आती, ता सबस पहल व मुझे खिलाते थे। चित्राकी पुस्तक पर मेरा हा अधिकार होता था। म कितना ही गदा क्या न होखू मने माता पिता और बड भाभी मुझ गादम लनेमें हिच क़िचाते नही थ। मुय नहलानेरा काम कभी नीकरानो नही सोपा जाता थ। यह काम पिताजी स्वय करत थ। प्रेमक अस मीठ वातावरणमें पनपुम कर म बडा हुआ। मुने स्मरण नहा है कि बचपनमें मरी गन्गी और मेरा अनान घरमें किसीके लिअ हानिकारक सिद्ध हुआ हा।

जो स्थिति बचपनमें मेरी थी वही हर बालककी होनी है। जा पवित्र नियम परिवारको लागू होला है वही नियम कम या अधिक मात्रामें समाजका भी लागू होना चाहिये। चारा वर्णाका विता रखनवाले हमारे पूज्याने षड भगी, चमार, महार आदि जातियाको जो 'अत्यज' नाम दिया था वह निरन्वारकी भावनासे तो नही ही दिया होगा। 'अत्यज' प्रमका शब्द है (जिस प्रकार अत्यज — ब्राह्मण — गन्धर्वका सूचक है)।

हमें साचना चाहिये कि आज हम जन्मजाके साथ समाजमें क्या व्यवहार करते ह; परिवारमें जमे अच्छीसे अच्छी वस्तु हम अपने छान भाभीका दत्त है जुमी प्रकार क्या हम अत्यजाका सामाजिक लाभ दत्त ह? राजा-महाराजाआने दरवारमें जस जस मुन्तर चित्र सजाये हुजे रहत है जो गरीबाको देखनके लिअ नो नही मिलते। राजा महाराजा मिष्टान खाते ह गरीबाका मिष्टान कहा मिलत ह 'अमीर लाग हमारा गधराका गान सुनकर अपना चित्त प्रसन्न कर सक्ते ह परन्तु गरीब लोग जुसस सदा ही बचित रहते ह। राजाओक दावान खानाम गुलस्तामें रमणाय पुण रचना की जाती है लेकिन गरावानो खुसकी कपना भा नहा आती। अिम तरह जमीरी हमारा बलिष्कार प्रेमी स्वार्थी होनी है जिसो लिअ जुम घमद्राही माना गया है। घम सबके लिअ होता है। विरतादक बन्ध — वन् सबके लिअ रतल ह। बदाके द्वार किसाके लिअ बन्ध नहा ह। जा घम सामाजिक सङ्कलिक समाज जीवनके सारे लाभ समाजक ममी अगाका न ले सक वह घम कसा? जिसो लिअे ना घम-मदिराम — देव मन्त्रिामें जमीर गरीबका नेद किये बिना सभीका घमका प्रसाद लिया जाना

है। चित्रकार लाख रुपये लेकर भी जसा चित्र राजाके लिये नहा बना देता वसा चित्र वह भक्तिभावसे देव मंदिरको और देवभक्ताको, बिना कुछ लिये ही, अर्पण कर देता है। पंडित विष्णु दिगम्बर, जो जुत्तम कोटिके गायक थे, हजार रुपये लिये बिना रात दरवारम गात नहीं थे, परन्तु वे ही जब हरद्वार जान थे ता गगाके तट पर बठकर अपना अुत्तम सगीत गगा मयाको सुनात थे जोर देश देगातरक अमर्य भक्त अुसे मुफतमें सुन सत्रते थे।

दुनियाका सर्वोत्तम कला-कौशल भारतमें ता अुसके मंदिरामें ही देखनेमे आता है। धमका अुपदेग करनेके लिये हजारों रुपयेका वेतन लेनेवाला आचरिण रखनेकी प्रथा हमारे देशमें नहीं है। धमका अुपदेग पुराणाका श्रवण और नाम-सकीतन सभी लोगाके लिये ह। जान-पातके सगडे समाजम चल सन्न है परन्तु अीश्वरके घर तो सभी मनुष्य समान ह। पडरपुरके विठठल मंदिरमें सब जातियाके लाग जा सकते ह। जगन्नाथपुरीमें जातिभेद रखना महा पाप माना जाता है। बदरीनारायणके प्रमादका भात काशी अत्यज लेकर आये ता भी ब्राह्मण अुम पर टूट पडता है। यही बताता है कि धमगृहमें किसीका निषेध नहीं है, किसीका बहिष्कार नहा है। काशी विद्वनाथके मंदिरके द्वार भी सग सत्र लोगाके लिये खुल रहते हैं।

तब हमारे असर्य मंदिरामें अत्यजाके लिये मनाही क्या हाती है? मंदिर वनवानमें जितना पुष्य है अुतना ही पाप अत्यजाको मंदिरसे बाहर रखनेमें है। दक्षिणमें जेक पुरानी क्या है कि अेक अत्यज भक्त कनकदासको अुडपी क्षेत्रके अेर प्रसिद्ध मन्दिरमें प्रवेग करनेस रोक दिया गया। अुस सच्च भक्तने पुजारीसे नम प्रायना की रि मुये चाह जितनी दूर सडा रसिये, लेक्किन देवताक दशन करने दीजिये। मंदिरके पुजारी सग अीश्वरके पुजारी नहा हात। अुमने अत्यज भक्तको बिन्नार कर वहासे निकार लिया। जिस पर वह बेचारा मन्दिरक पीछे जाकर रोने लगा। कहा जाता है कि अुसकी आतवाणी मुनकर मंदिरकी मूर्ति घूम गयी और जिस ओर कनकदाम खडा था अुम आर अुमका मह हा गया। यह देखकर सत्र लाग चबिन हा गये।

जुस अवसर पर अत्यज भक्तने ब्राह्मण पुजारीमे गिडगिडा कर जा प्रायना की आर दादम मंदिरकी मिन्की भगवानका स्नान होने पर अुमने जा धयता अनुभव की आता भक्तने अेक कन्नड कविनामें बडा मुत्तर चित्रण किया है। म अुमना अथ ता नहीं समप पाया, परन्तु अुम कविताका वरुण स्वर और भक्तिवी अुत्वटता आज भी मरे हृदयमें ताजी है।

कनकदारा

१

कुत्तों में तिर निर्याक तथा भोजि विद्याक बाण मय । हाहा हा
 पाहिय जसा धडा मनुष्यक हृदयक है । यक उडा मय गगा हाहा १ लेक
 मय काताम हाहा है । प्रगाह जभावमें मनुष्य अिन दासका मय १ विविद मय
 जाडवा पाहता है और अगत अिन मयक जपतिमय मय हाहा १ । मयम
 यति गठ बाण और कुछ हा मयक जग टावर मय ता गुणक अमरा मय कटा
 वा मय हा जाता है । दगा पावरा परिपार १ अभी दुःखिम मय जाविद १ ।
 पत्रावरा त्रिभुवट मयार यति मयक पात्रावरावरा १ विहा को मयक मय
 ब्रह्मममें भज द और यति पाठ ही विहा बाण वृ मयार मय जाय म । म
 जहर कहा जायया कय ? माध आमीर । परगाव कयना काभी भागत बाण
 है क्या ? पुराणाम भा विगत हा पात्र हायमें जक मय कटा १ वि वि
 आज मय म कभी अमय १ बाण होअ जयसा आज मय म पूग ब्रह्मपावरा मय
 हाभू ता आकागमें मूय दन जाय अथवा मृत ब्राह्मण जाविद हा जाय ।

हम अिनना ही कह्य वि अिनन पीछका धडा ता सखी है परतु प्रगावे
 साय अुमवा माग नहा है ।

पश्चिम समुद्रके किनारे माल्य नामक वनगाहक पाग अण्य नामका जक
 वण्यक-पत्र है । अकित-याग धुग्धर थी मयवाचायक वारण यक मया विप
 प्रसिद्ध हा गया है । काभी व्यापारी द्वारकाम नौकाम बीमला माल अरर मयिण
 की आर जा रहा था । माल्य वनगाहक पास अगबी नौरा आयी और मागरन
 रौद्र रूप धारण किया । मल्लहाने जी-नाक प्रयन किया अकित यचनका काभी
 राम्ना मित नहा रहा था । समुद्री अर अक अत्ताल तरग माना मौतका नूरी
 जीम बन रही थी । किनारे पर खड अर महापुरपन यक अमरर दुश्य दगा ।
 अुकक हृदयक कारणका सतिता वर निरली । अुहान आररम प्रापना की
 "प्रभो जिन अनाथाकी सहायता कर । अिह चता ल । अर दणमें समुद्र
 शात हो गया, मानो किमी बीनराग यामीना हा मुत्तमुडा जगने धारण कर ली
 हा । नौका सही सगमत किनार पर आ गयी । लागावी यह तमजनम दर नहीं
 लगी वि यह अिन महापुरपनी ही कृपारा फल है । नौकापतिन मरापुरपके
 चरणामें प्रणाम करक कहा महाराज, अिस नौकाम भरा जा कुछ भी है यह
 सब आपका ही है । आपके आसीपास म फिर व्यापार करगा और पाहे जितना

धन क्या लूगा। लेकिन जिस वार आपने मुझे जीवन-दान दिया है इसलिये मेरा यह धन स्वीकार करके आप मुझ पर अनुग्रह कर। नित्य-तप्त सयासीको धनका ठोस कस हो सकता है? परन्तु बेचारे सेठका सतुष्ट करना आवश्यक था। जिसलिये महापुरषने कहा तुम्हारी नौकामे यह जो अितना गोपीचन्दन पडा है वह हमें द द तो हमें सताप होगा। बाकीका तुम्हारा धन तुम्ही ले जाओ। हम तुम्हारा धन लेकर क्या कर?

मुझ गोपीचन्दनकी पीला मिट्टीक डेरमें देवयागसे दो मूर्तिया निकली। स्वामान जेक मूर्तिकी तो मालपेके किनार हा स्थापना कर दी और दूसरीकी स्थापना व्हामे दा तीन मील दूर अउपी नामक म्थानमें की। अउपीके श्रीकृष्णकी यही मूर्ति देखने हम लोम गये थे। मन्दिर वसे ता काफी छोटा है, परन्तु प्रमाण-वद्ध आर सुन्दर है। वना हमने अेक विचित्र बात देखी। मन्दिरका महाद्वार हमेगा बन्द रहता है क्वाकि महाद्वारकी आर भीतरकी मूर्तिकी पीठ है। पाछेकी आर दीवान्म पत्थरकी अेक जाली गी हुआ है जुस जालीमें से ही मूर्तिक दगन हान ह। मन्दिरके भीतर जाना हो ता जुमकी बायी आर जा दरवाजा है जमाने जाया जा सकता है। हर कोअी मन्दिरके भीतर नही जा सकता। हम गग भीतर गये थे। लेकिन वहा असा घोर अघेरा था और वहाकी हवा जिननी रधी हुआ थी कि हम पसीनभ तरबतर हा गये और हमारा दम घुटने गगा माता गभवासका दूसरा अनुभव कर रह हा! घबराते ही घबराते हमने प्रायता का 'ह वकुठ नायक हमें दूसरी वार गभवामका अनुभव न हो।' हमारी समझमें यह बात नहा आओ कि मूर्तिकी नाक पर सोनेका टुकडा क्या जडा गया है। काठियावाडकी यह मूर्ति यहा दक्षिणमें कसे आ गओ यह प्रश्न हमार मनमें अठा। परन्तु मुख्य कुतूहल तो यह था कि मूर्ति महाद्वारसे विमुख क्या है। जान करने पर अत्यज साधु कनकदासकी कहानी सुननेमें आओ।

२

मन कवि कनकदास असरमें धारवाड प्रदेशके वाड गावके निवासी थे। उनका मूल नाम था वीरनायक। व गिहारीका धंधा करते थे। अचूक बाण मारकर उष्यका बाघनेमें जुनकी बराबरी कर सकनेवाला कोजी दूसरा आदमी उनका समयमें नही था। (अस समय किसन सोचा होगा कि अस्पश्याका यह सरदार अपनिपदमें बताओ हुजी

प्रणवो धनु गरो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लयमुच्यते।

अप्रमत्तेन वेदव्य, गरवत् तमया भवेत्॥

जमा रवी बाणविद्याम भी प्रवीण हा जायगा?)

वीरनायक चित्रकलदुग (आजका चितल्लुग) के राजाकी सेनामें सेनापतिके पद पर पहुचे थे। वे सपति और प्रतिष्ठाके स्वामी बन गये थे। किन्तु अेक

कोश्री न देय सके।' कनकदासको भी अेक बेला दिया गया था। शामका सब लोग अिन्टठे हुंजे। वादिराजने यह जाननेके लिये सबसे पूछा कि बुनकी आनाका पालन किसने कैसे किया। (हर ब्राह्मणने कहा कहा अकाल खाजा, यह हम जानने तो बडा मजा आता)। अकले कनकदासके हाथमें ही बेला जैसवा तसा था। अुहाने कहा "जहा जाऊ वहा वामुदेव है। अेवात कहा मिल सकता है? अिसलिये म बेलेको हाथमें रखकर ही बडा हू।

अेक दिन कनकदासकी अिच्छा हुआ कि मंदिरके तालाबमें स्नान करके भगवानके दशन किये जाय। वादिराज अुस दिन जुडपीमें नही थे। कनकदास की अिच्छा पूरी करे असा दूसरा काशी व्यक्ति अुडपीमें नही था। जितनी बार वे दान करने गये अुतनी ही बार ब्राह्मणने अुह बाहर निकाल दिया। अतमें निराग हाकर कनकदास मन्दिरके पीछे गये और वहा गीत गाने लगे। अुहाने हृदयका सारा दुख अपने अिम गीतमें अुडेल दिया। परमात्मासे भक्तका यह दुख सहा नही गया। मूर्तिने अेनाअेक अुन कमकाडी ब्राह्मणासे विमुख होकर अपना मुख पीछेकी ओर घुमा लिया।

यह क्या हा गया? अब क्या किया जाय? किमीका कुछ सूयता ही नही था। वादिराज आये। अुहाने अिस घटनाके बारेमें जानते ही ब्राह्मणासे कहा

अरे, तुमने कनकदासका काशी अपराध किया है अिसीलिये भगवान वामु देवने हमारे आचार धमकी ओर पीठ फेर ली है। अतमें अुहाने पीछेकी दीवालमें पत्थरकी अेक जाली बनवाअी और कनकदासके लिये वामुदेवके दशनकी सुविधा कर दी। आज भी वह खिडकी 'कनकदासकी खिडकी' कही जाती ह। अुस खिडकीके पाम ही कनकदासकी कुटिया है। आज वहा सस्कृतका अेक वग चलता है।

अेक बार रथयात्राके अवसर पर जाने क्या भगवानका रथ आगे बढता ही नही था। अतमें वादिराजने कहा मालूम हाता है कि कनकके स्पणके बिना रथ चलने देनेकी भगवानकी अिच्छा नहा है।'

धय है वादिराज स्वामी जिन्हाने अिम धानको समय लिया कि अत्यजाके स्पशके बिना हिंदू समाजकी गाडी चल नही सकती। आज कनाटकमें कट्टरमे कट्टर पुष्टिमार्गी वण्णव ब्राह्मण भी कनकदासके रथ हुंजे भजन गाकर अपना भक्तिरस बडाते ह और अुह सतने रूपमें स्वीकार करके अुनका चरिता मत गाकर अपनेकी पावन हुआ मानते ह। परंतु कनकदासके जातिवधुषाको तो वे तिरस्कार और धिक्कारके पात्र ही मानते ह।। हिंदू धमकी रक्षा करनेवाले वादिराज स्वामी प्रत्येक हिंदूके हृदयमें यदि अवतरित नही होंगे तो हिंदू धम का रथ चलेगा नही। और परमात्मा हिंदू समाजमे विमुख ही रहेंगे।

भारत-शक्ति

कहा जाता है कि महाभारत युद्धने आरम्भमें धर्मराज युधिष्ठिरन प्रतिभा की थी कि यदि मरे चार भाजियाम से जब भी मारा जायगा तो जुही क्षण म भी अपन प्राण छोड़ दूगा। उस दृढ प्रमक कारण ही युद्धमें पाइवाकी रसा जीर विजय हुआ था।

हिंदू समाजन जसा प्रतिभा ता नही की है फिर भी जुसकी भक्ति-यता ही कुछ अस प्रकारकी है कि जनक जातियाम बट हुअे जुसक चार वर्णोंमें च किमी जब वर्ण अथवा जातिकी अवनति होन पर समस्त हिंदू जातिका अथ पतन हुअ बिना नही रहता। न जान किनने वर्णसे हम अपन छोट भाजियानी — हरिजनको — जवहेलना करते आय ह। मानो हमारा प्रमका चरना ही सूख गया है। बसे देखें ता भारत कोओ निमल राष्ट्र नहा है। परतु वह जिस बातको भूल गया है कि जुसकी शक्तिका सचय कहा है। जिह भारत पतित कहता है जुही लोणाके हाया जुसना अद्वार होनवाला है। जिन जातियाना हम जगली करते ह व ही जातिया हमारे राष्ट्रका रक्षण करनवाली ह। जिन स्त्रियाको हम अबला कहकर अपान और असहाय दगामें रखते ह उनकी जाग तसे ही भारतम जागृतिका सचार होगा। अब भारतको अपनी आखें खोलनी चाहिय और अपनी अकमण्यताको त्याग कर अविलम्ब राष्ट्रीय हितके कायमें बुत्साहूप्रवक जुट जाना चाहिय।

१९३१

धर्म-विकास

हिंदू समाजमें सामाजिक दाय दूर करनेकी जिम्मेदारी अपि-मुनियान्की और मानु-मताकी रही है। धमनिष्ठ धम-मुधारका द्वारा ही यह काय हाता आया है, जिमलिअे हिंदू समाज गलन रास्ते नही गया और जडतासे वह सडा भी नहा। जब जब सुधारका यह काय गिधिउ पडा है तब तब समाज क्षीणप्राण बना है और बान्में धम मुधारकाका कगार तपस्या करक गमानको जाग्रत करना पडा है।

विवाहने नियम जस आज ह बने पडू नही थे। महाभारतमें लिखा है कि जेक समय जैसा था जव समाजमें विवाह सम्बन्ध बहुत गिधिल थे। धिमने दुष्परिणामाको रूखकर अेक जपिन आत्म निकाला कि आज तक जो हुआ ना हुआ लकिन अब आगेसे यह गिधिलना बढ होनी है। वेदकालमें विधवायें नियाग विधिमे अमुक समयक लिअे जपन दवरम सम्बन्ध करती था। बढिक कान्ने चत्री जायी जिम प्रथाकी सीधे गानाम निन्ना करनेकी हिम्मत तो बादके लोगाने नहा की परन्तु कलियुगमें यह प्रथा बढ हानी ही चाहिये जसा आग्रह पूवक कृत्कर अनु लागाने अिस प्रथाका बढ कर दिया। प्राचान लोग स्वतन्त्रतासे मन्त्रि पीत थे। लौकिक रुत्के अनुसार धार्मिक विधियामें भी मदिराका अपुयाग किया जाता था। परन्तु मदिराक दुष्परिणामाका दखनेके बाद अपि-मुनियाने मदिराका सपूण निपध करनेमें सकोच नही किया। जुन्हाने सुरापानकी गिनती पच महापातकामें करके सुरापान बढ करा दिया और समाजको सबनागने बचा लिया। सयाम धमका दुरुपयाग होते देखकर अेक समयके धार्मिक नेताआने यह आलेग निकाला था कि कलियुगमें कोअी सयाम न ले। परन्तु बादम आद्य गकराचायन देखा कि धम पर ही अचल रहनेवाल तथा धमकी ही भेवा करनेवाले त्यागी बरागियाका परम्परा टूटनेमें समाजका बडा नुकसान है। अग कलिवज्यके प्राचीन आदेगको अक और रखकर शककराचायने सयाम-धमकी मस्याको फिरने जाग्रत किया और अुसक दम विभाग करक अुसमें आवश्यक विविधता अुत्पन्न की।

ज्ञान-पातके कडे नियम हमारे कायमें विघ्नरूप ह, यह देखकर सौम्य प्रकृतिवाल मताने चौन्हवी मदीसे यह छूट दे दी कि भक्तिमागमें जात पातका कोअी म्यान नही है।

वण यवस्या जमवे अनुसार मानी जाय अथवा केवल सस्कारा आज्ञी विका आदि गुणाक आधार पर मानी जाय जिस बारेमें पहलेस ही मतभेद चला आया है। जाति जमवे अनुसार और वण गुण-जमवे अनुसार — असा मत रुढ़ बना हुआ मालूम होता है। हम यह भी देखते हैं कि जब धमवे सस्कार प्रवल होते हैं तब जातिका प्रामाण्य अतना महत्त्व नहीं रखता।

चार आश्रमाम सबसे अूचा आश्रम कौनसा है जिसका झगडा भी लम्ब समय तक चला। अतमें धमवुद्धिन यह निणय दिया कि प्रत्यक आश्रम अपन अपन स्वान पर योग्य और श्रेष्ठ है। आहारके विषयमें भी लम्बे समय तक मतभेद बना रहा। महाभारतम कदम कदम पर जिसकी चर्चा सामन आती है। यमें पगुहिंसा की जाय या नहीं की जाय जिसका झगडा अितना जधिव चला कि महाभारत कालीन अक अपिने तो वेदाको धिक्कारनकी ह्द तक अपना प्राथ यक्त किया है।

जिसी प्रकार स्मृतियामें भी समय समय पर परिवतन होता आया है। लागान रीति रिवाज तय करनका काम पडिताका और गाल्त्रियाका नहीं रहा, क्पाणि व ता कवल धमप्रथाका अध्ययन ही करते हैं बुद्धिकी कसरत करक अनुमान ही निकालते हैं। परतु जित् धमका अनुभव है धमको हृदयसे समझ कर अुसक पालनमें ही जिन्हाने जीवनकी सफलता मानी है अुन सदाचारी धम परायण सवभूत हितकारी महात्माअाके वचनानुसार स्मृतिया निरिचित की जाय असी प्राचीन परम्परा है। हमारे पास जितनी भी स्मृतिया हैं अुनके आरभमें ही स्मृतिकारक गुणाका वणन किया गया है। वसे गुणाका अपने भीतर विनाम कलनेके वा ही जपिगण जमानेका पहचान कर और धमके रहस्यको जीवनमें अनुभव करके धमकी यवस्था करते हैं और अुस कलते भी हैं।

अछातकी अम्पश्यता सामाजिक झगडारा परिणाम है। अुसकी जडका मजभूत यनानक जिअ किमी दुभाग्यपूण धाणमें लागान अुस धार्मिक अस्पश्यताक माय नाड किया। अुसी जिनस हम नीच गिरन लग। जब समाजका अय पतन बढ़ जाना है तब धमाना लोताना पुण्य प्रनाय प्रवलित हो अुठता है। गत १०० बरोंमें अजक धम चितनका तथा समाज सवकान अस्पश्यताकी निन्ता की, परतु गनाजन अानी जडनाक वारण अमकी जार ध्यान नहीं किया। हिंदू धममें कग गया है कि कात्री भा काय कठिन माअूम हा ता तुरत तपस्या आरभ करा। मनु भगवानन कहा है

यान्तर दुरुराप यदुग यच्च दुप्परम।
तमव ततना साध्य तपा हि दुरतिप्रमम् ॥

आज अनी परल्लराका अनुतरा करक धमप्राण धम-मेवक और धमनिष्ठ मत्ाना गणान अुप तय आरभ किया है। जिस तपक पस्वस्वतप अस्पयनाका

नाश होगा, अतना ही नहीं, समाजमें घुसी हुई तथा धमका नाश करनेवाली भूब नीचकी भावना भी मिट जायगी। तपसा क्लिबप हन्ति।' राष्ट्र-पुरुषके तपम सामाजिक सडाध तथा धमकी ग्लानि दूर होनी ही चाहिये।

१४-५-३३

६३

सर्वोदयकी तयारी

गाधीजीके अपवासम लागाका चौक झुठना स्वाभाविक है रा पडना भी आमान है किन्तु दोनामें से अेक भी बात गाधीजीका अथवा देगका मदद पहुचानेवाली नहीं है। यह धम-सत्यापक अपवास क्या शुरू किया गया ह अपुकी गहराभीमे क्या क्या है और अब प्रत्येक हिंदूका प्रत्येक भारतवासीका और मानव जातिके कल्याणका अभिलाषा रखनेवाल प्रत्येक मानवका क्या कतव्य है—अिन सब प्रश्नाका विचार करनेके लिअे हृदयकी गहराभीमें जुतरनेकी आज खास जरूरत है। गाधीजीके प्राण धमक अिअे है। अुन प्राणाका अपयोग करना अुह निचाड डालना या अुनका बलिदान कर देना—ये तीना दियायें गाधीजाके लिअे अेरसी ह। कितने ही लाग साफ साफ कह दते ह कि सामाय मनुष्यका अब धममें रस नहीं रह गया है। 'धमक नाम पर अीसाजियाने जा जुलम किये हैं धमके नाम पर हिंदू मुसलमान जिस तरह लडे ह, धमके नाम पर जहा-तहा जा दम और पाखण्ड आज चलता है, अुमे देख मुनकर और अपुके जुदाहरण देकर लाग खुलेआम पूठने ह असे धमका टिकाये रखनेका प्रयत्न कौ करे? धमकी जिस बलमे ता समाजमें सडाध पठनी है। समाजकी हवाका गुड्ड करना ही तो धमक पाखण्डका दूर करना ही होया। जिसके प्रजाय गाधीजी धमको टिकानेके लिअे सारे विश्वका मूरय रखनेवाले अपने प्राणाका क्या खतरमे डाल रह ह?

और हमारे नौजवान? हसकी जाति पर मोहित हुअे ये नौजवान तो अेक ही बात कहते ह धमको कुचल डालो धमका जडमूलसे नाग कर डाला तभी सामाय जनता अपना सिर अूचा कर सकेगी। धमका अथ है गुलामी। धमका अथ है अतान। धमका अथ है अविश्वास, धूर्ताकी पूजा जालिमाकी गल प्रगतिके मागम खडी की हुअी दीवाल और पीडित लोगको जाग्रत न हाने देनेके लिअे अुहें विछाअी जानेवाली अफीम। असे असे वाक्यामे देगने नौजवान धमका सम्मानित करते ह।

लेकिन ये लोग जानते नहीं कि जिस बातसे नौजवानाको घणा है अुसास गाधीजीको भी घृणा है। नौजवान कहते ह 'डाअुन विथ रिलीजत

जब कि गांधीजी ज़िमी बातको 'यवहारकी भाषाम रखकर जिस प्रकार कहते हैं जस्पश्यताका दफना दो। अूच-नीचका भावनाको नष्ट कर दो। पाखण्डको अपन पास खड होनकी भी जगह न दो। नौजवान जब डाजुन विय रिलीजन कटत ह तब यह जादेश व हवाम छोडते ह व देखते भी नहा कि जिन जाणको पालनवाला बोओ है या नही। गांधीजी कहते ह पाखण्डका नाग करनकी बात हम दूसरास कह जिसक पहल हम स्वय ही जुसका नाश कर। हमारे भीतर जो पाखण्ड हो जुसीको हम पहल दूर कर क्पाकि वह हमारी गात्रीकी पहुचक भीतर हागा। जमक बाट जासपासके पाखण्डका नाश करना भी हमारा ही काम होगा।

बवल गणक जालम फमवर नौजवान लाग यदि जमा मान लें कि गांधीजी जीर अनन वीच गटरा समद्र फला हुआ है ता यह दुर्भाग्यकी बात हागा। हम जिसे समाज हित कहते ह उसीको गांधीजी धम कहते ह। हम जिसे चरियरा तेज कहत ह उसीका गांधीजी जात्मवच कहते ह। फक जितना ही है कि हम गग जिम बातकी वनठ चचा करते ह अुसे गांधीजी जाचरणम अतार कर लिया त्त ह और स्वय जाचरणमें अुतारनके बाद हम भा जस पर जाचरण फमका निमत्रण दते ह।

गांधीजीन अपने जमानक विचार अक महान सपप छड लिया है। आजका जमाना वरिन प्रयुनितते काम निरलवाना चाण्ता है। आजके दाव पच जानन बाट चतुर गग दुनियाका हमगा यह आगा लिया ह कि हम काओ जसी हिसमन मात्र निरालेग जियम हमारा अपना स्नाय भी वतती हुआ मात्राम मिड हाता जाय और जन-समाजका भी निनातिन अविक् भला हाता जाय। जियाग घारे पीरे समाजमें वट्ट मडाग वडनी जाता है। निजा जीवनम क्या और गावजनिज जीवनमें क्या जावनका आण ही नीच गिरता जाता है। जसी यिनिमें भी गग और अनन गुण पाप वट्टे ता आसचयकी बोओ बात नहा। गांधीजी अिम यिनिम गग ररर वीरयगका स्थापनारा प्रयास कर रह ह। व सागात मन पर यह बात जमाना चाण्ते ह कि किनी न किसीका तो वरिणान ना हा पणगा अिमक बिना गग अूच नहा अठ सर्वेग जनका चारिय तिक एरा गरण। आत्र भठ ही गांधीजीन हरिजनका वचठ जक मय वारण है। सारी हा पण्नु हरिजनारा प्रान ता अपवागना वचठ जक मय वारण है। सारी दुनियाक राजनानिषान धम पर जमी हुआ मनप्य जातिकी थ्रदाका ताउनका जा पण गरु किया है अगह गिलास गांधीजीन अक प्रचण्ड विरुह कर लिया है। एा रिया किनी ररक या रिया रायक गिराप नहा है परन्तु मनुप्य ररिज हूचमें ता गमान बठा हुआ है और धमक नाम पर सबत्र अधम फगा एरा है अगह गिलास है। सागतकी या किमा भी ररकी राजनानिस अिमका

काजा सम्बन्ध नहीं है। यह तो गुद्ध हृदय-नीति है समाज-नीति है घमनीति है। इस बातका यदि हम समय रहते समय लगे, तो बहुतसा काय आसानासे और तुरन्त कर सकेंगे।

यह बात हमें याद रखनी चाहिये कि गाधीजीक साथ रहकर प्रयत्न करगे तो कम मेहनतसे और बगैर परगानीके हम सकटको पार कर लेंगे। लेकिन यदि आज हम गाधीजीका साथ नहा देंगे तो हम हाथ मलने पड़ेंगे और अनेक पात्रिया तक बलिदान पर बलिदान देनेक बाद ही हम किनारे पर पहुंच सकेंगे। भारतवर्षमें रहनेवाले हर आदमामे गाधीजी यह बतल ह कि वह गुद्धिक अिम यन्में अपना हिस्सा द, जा जहा बठा हा वही खडा हाकर सफाभी और गुद्धि करने लगे अपने हृदयमें धूप जलाये और सर्वोदयकी तयारी कर।

७-५-३३

६४

भावनाका खतरा

गाधीजीके अपवासके दैनिक समाचार जानतेके लिये लोग अितने अत्युक्त ह कि निस दु खक कारण गाधीजीने अपवास किया है उस ता माना लाग भूल ही गय है। मिनवर मात्के अपवासके समय गगाने जो अत्युक्तना जार अत्माह बताया था वह आन नहा दिखायी दता। यह सच है कि उस समय गाधीजीके अपवासका छोटा बनाना अधिकतर लागक हाथमें था और अिमलिये हर भारतवासामें यह परिणाम लानेके लिये यथाशक्ति सबकुछ कर गुजरनका अत्माह था। इस वार केवल आध्यात्मिक बतिस गाधीजीके अपवासका आरभ हुआ है। नतीजा यह है कि लोग गाधीजीकी तबीयतक समाचारामें हा डूबे रहत ह।

आध्यात्मिक वातावरणमें लागका अधिक मात्रामें जतमुख हाना स्वाभाविक है बल्कि अचित्त भी है। अतमुख बतिसमें बाहरी दीन्धूप बहुत नहीं हा सकती और अुगकी आवश्यकता भी नहीं है। परन्तु सच्चा अध्यात्म सच्ची धार्मिक बतिस ठास मेवाक रूपमें प्रकट हुअे बिना रह ही नहा सकती। जा वगत मनुष्यकी क्रियाशक्तिको नष्ट करे वह सच्चा बनान नहीं है। अतमुख होकर अपने दोष दूर करनेके समय दूसराके काजी बननेकी बतिका छाटकर अंक-दूसरके भाभी बननेकी बतिस बडानी चाहिये। २१ अिनक अपवासक बाद जब गाधीजी दानकी स्थितिका निरीक्षण करें ता अुम समय अुह यह लिखाजी पन्ना चाहिय कि वर-द्वेषका वातावरण गगत हो गया है जो लाग पापके माहमें फम हुअे थे

जीवन-व्यवस्था

अनुमं न केवल पापक प्रति अरुचि बढी है किंतु पापका विरोध करनकी शक्ति भी आ गयी है जो लोग केवल जिम पर चढकर अक दूसरेके विरुद्ध बातें करते थे उनकी वह पुत्तेजना अब गायत हो गयी है जो लोग हरिजनाकी बुनी हुअी मालीके प्रति बुदासीन य य लोग अब खादी खरीद कर हरिजनाके लिअ स्थायी जीविकाका प्रबन्ध कर रहे ह और सक्षम कहा जाय तो हरिजन लोगको हिन्दू समाज रूपी घरम स्वतन्त्रतासे चलते फिरते देखकर निसीको आश्चय अथवा द्वय नहीं हो रहा है।

भावनाआके पुत्रकक समय अक-दो बात विगय रूपसे समझ लेना आव-
श्यक है। आज दगमें चारा तरफ लोगानी भावनायें अुत्तेजित हो अुठी ह।
अैसी भावनाआके फलस्वरूप यदि काय तुरत न हो तो य भावनाय मादक
मिद्ध होती ह और फिर तो मनुष्य अपनी भावनाआका ही प्रगसक बन जाता
है। भावनाआका अुत्तेजित होना ही मानो कोअी बहुत बडा काम हो यह मान
कर भावनाआकी बोमलताका आनद लूनमें ही मनुष्य लीन रहता है। यह
काम विपय भाग करन जसा ही विपम हो जाता है। अिसक परिणाम स्वरूप
मनुष्यकी सन्ध गक्ति क्षीण हाती है कायशक्ति नष्ट होती है और हर प्रकारके
नाक नियमने अनुसार मनुष्यका मन भावनाके अविवाधिक नाकी भाग करता
है। अमगर जीर लक्षक भी अिस भोजनको बगते ही जाते ह मानो वे यह
भाजन सुैया करतके लिअे वचन-बद्ध हा। अिसके फलस्वरूप वातावरण विजलीख
भरा हुना अुत्तेजनापूर्ण और अलौकिक मानूम हाते हुअ भी जितना काम या
सका हाानी चाहिय अतनी होनी नहीं। और अिमने वाट समाज स्तथ भल न
हा परन्तु निराग और निरस्तान तो हो ही जाता है।

वड बने जन-नायक और समाज-नना जिग स्थितिका जानते ह। अिसीलिअ
य अमी भावनाआको छह्रत अथवा गगाने नहा जिनस त्तिनकर कायको जन्म न
शिया जा सन लोगका काममें न लगाया जा सन जीर लाक जीवनम परिवतन न
किया जा सक। भावनाआका जगाना वन्त आगान है परन्तु प्रयक भावना
लाकरकाक भूतन समान है। यदि हम अुमगे काम न उ ता बट हमें निश्चित
ही ला जाता है।

अिनाजि मनुष्य भावनाका बग भउ ही हो परन्तु असीक अुमात्रम न फन।
भावनाका प्रभाव नीन अरमन्ध वनरर मनुष्य म्ध गमय तक पडा न रह।
भावनाका गानर कायमें गवाने मरन्ध मिद्धिमें हाता ही चाहिय।

भक्तिका प्रसाद

नम्रता धार्मिकताका लक्षण है। हममें सच्ची नम्रता हो ता हमें दूसरासे पान प्राप्त हो सकता है, हम बोध ग्रहण कर सकते हैं और अपने जीवनमें सुधार भी कर सकते हैं। जिस मनुष्यस हम घमनात प्राप्त करना चाहते हैं, जुमके प्रति हमारे मनमें विश्वास, निष्ठा और श्रद्धा होनी ही चाहिये, क्याकि घम केवल बुद्धिका विषय नहीं है परन्तु निष्ठाका विषय है।

जिस नम्रताको व्यक्त करनेके लिये ही जिनासुमे गुयूपाकी अर्थात् 'वही हुनी बातको सुनने और माननेकी तयारीकी अपेक्षा रखी गयी है। मैं आपका वही मानूंगा। जीवनम आवश्यक परिवर्तन करनेके लिये मैं तयार हू। आपके महवाममें रहकर आपके जीवनमें ओतप्रोत हाकर ही जीवन रहस्य समझा जा सकता है, अतः मैं आपसे कार्योंमें भी भाग लूंगा' — ये सब सवल्प प्रकट करनेके लिये अपुनिपद-कालके जिनासु प्रताव-रूप हवनकी सामग्री और समिधा रकर गुहक पास जाते थे।

असके बाद भक्ताने अिस नम्रतामें और वद्धि की। तानी मनुष्यके चरण जहा ह वहा हमारा सिर पहुच ता भी हम अुन्नत ही हाने — जसी भावना यस्त करनेके लिये पर पढनेका परा पर सिर रखनेका रिवाज गुरू हुआ। अुसके बाद तो नम्रताकी स्पर्धा होने लगा। मैं आपके दासके दासका दास हूँ आपके गुलामका गुलाम हूँ आप गुहक गुरु ह, जादि शिष्याचार बाने लंगा। अिसके बाद चरणाको छोटकर लाग चरणाकी रजसे चिपट गये। औश्वरमें और औश्वरके नाममें जा चमत्कारी शक्ति ह वसी शक्तिका आरापण नानिया, भक्ता और पडिताके चरण-स्पाके वारेमें भी हाने लगा। जेक शिष्यने तो अपने माने हुजे गुरुके पावा पर लगी घूल रोज रोज अिक्कठी करके अक बेली भर ली और अुम पर रेगमी तथा जरीके कपड सीकर राज अुस शरीका अपने सिर पर चाने लगा। लेकिन अितनेसे अुसे सतोप नहा हुआ। घरम पूजाके लिये रखी हुयी भगवानकी मूर्तिया भी अुम गुम्का चरण रजकी घलीके सामन तुच्छ मालूम हाने लगा। जिसलिये अुसने वे मूर्तिया थाडी दानिणाके साथ अपने पुराहितका सौंप दा और फिर वह केवल अुम शरीकी ही पूजा करने लगा।

भक्ति अच्छी चीज है, परन्तु मनुष्यका जीवन यदि प्राकृत हो तो भक्तिमें निरी विह्वलता जा जाती है। चरण-स्पाकी योजना पहले पहल नम्रता

जीवन-व्यवस्था

प्रकृत करना फिर भी गभीर था। अंगुष्ठा पर जाग जागता यह अपवित्रता पता हुआ कि चरण स्पर्शमें काफ़ी समयसारा प्रभाव है अंगुष्ठा धार्मिकताका विजय बिना महत्त्व हमारे चरोंमें प्रकृत कर जाता है। और फिर ता मुष्ठा लामो वृत्ति जसा मानता तब पाकर फिर जग तहाँ शीघ्र लगा। अब आर भजनजन शिनाति चरण स्पर्शा महत्त्व बढ़ता लग। दूसरा जाग फिर तब और मत्ता धार्मिकताका शिना जाता जाग बढ़ता लग। और त्रिगन प्रति मनमें पूज्य भाव हा अंगुष्ठा परतान करत भी जाग अंगुष्ठा चरण स्पर्शा रूपधा करत लग।

पत्थर या धातुकी मूर्तिका हम पूजाकर फिर बिताता हा बार करा स्नान कराये किन्ना ही बार करा न भजन कराये और शिना ही पूजाकर अंगुष्ठा पर क्या न लगे फिर भी अंगुष्ठा मूर्तिका जुगम अंगुष्ठा या पचराकर नहा हागी। जिसलिये भक्तिकी प्रीति मूर्ति पर अदृष्टमें काफ़ी बडिताभा नहा हाती। मन्त्रिक मुष्ठा जसा चाह उसी पूजा मूर्तिका ही मकरता है। किन्ना ही ध्यान रखना हाता है कि मन्त्रिक भवन जब-दूसरका परेगा न कर। परन्तु किसी लक्ष्मीका हम ओचरना अवतार मानत ग और अंगुष्ठा पतनें उसके तुल्य दुष्का या अंगुष्ठा भावनाआता विचार न कर ता यह अविद्वक्की परावाष्ठा कही जायगी। स्पर्शमें और स्पर्शाकी विजयीमें मानवका जा विद्वाम है वह धार्मिक रिवाजमें पमा हुआ जब जडवाक है। जब बटून जाग एक जगह जिकठ हाते ह तो जब दूसरकी देगात्या उनका पागपन बड़ नी जाता है। फिर ता पामर मनुष्य मनुष्यक अन्त जीवनका विचार करना बल जुतर प्रति रही अपनी भक्तिकी हा कर करत गता है जो अन्त औश्वरक नाम पर वह अन्तो निरत किन्तु अन्तजित वनी हुआ भावनाका हा अुपासना करत गता है।

गाधीजीकी हरिजन यात्राम जिस बातका अनभव—अत्यन्त कर्वा अनभव

—कर्म कर्म पर होना है। लाग गाधी रातम भी स्टान पर गाधीजानी देखन आते ह। व रातके दो-तीन बज भी अुह नहा छाडत। यह कहा जाय कि गाधीजी साथ ह तो अुह जगानक फिर व जितनी अुची आवाजमें गाधी जीकी जय बोलते ह कि सुनवानाके काल कर जायें। गाधीजानी तबीयत नाजुर है असा कहा जाय तो दानत फिर किन्नी दूसर स्वय आप ह अिगनी कर कराना चाहत ह। यदि यह कह कि अिम तरह गाधीजीका दिन रात परेशान करोग तो तुम अुह खा बठोग तब तो आवाज कम करतक और गाधीजीको आराम करत दनक बदले यह वक्ति बतानवाक लोग भी हमारे देगम मौजू ह कि जसा हा ता हम किसी समय गाधीजीक दुल्म दान कर तन दीजिये। असे धार्मिक लोभमें धार्मिकताका नाम भी नही है यह बात ये

लोग कब समझगे ? समाजी भीडमें से निकलते समय कितने ही लाग गांधीजीक चरणाका स्पर्श करनेके लिजे दौड पडत ह । गांधीजी ठोकर खा कर गिर पडगे अिस तरह सोचने जितनी भक्ति-श्रुयता धुनमें नही होती । जुनक भीतर केवल यही वक्ति सर्वोपरि होता है कि पुण्य प्राप्त करनेका जो माका मिला है अुसे हायस जाने देंगे तो हम बेवकफ कहे जायगे ।

हजार बार चरण स्पर्श करने पर भी मनका मूल नहा मिटा, हृदय धुनत नहा बना असा अनुभव होनेके बाद भा मनुष्य अितना स्पष्ट नही समझता कि जब तक हृदयका परिवर्तन नहा होगा तब तक स्पर्शकी यह विजली अुझे शायद ही बोझी लाभ पहुचा सकेगी ।

भक्ताके सामने बोझी मनुष्य जसी बात कर तो अुसे नास्तिक कह देनेमें अुह जरा भी देर नहा लगती । कविगण अतिशयोक्तिपूण वणन लिखते ह । मिदानवादी लाग ठेठ अतिम छोर पर पहुच कर अिन वचनाका वचाव करत ह । और सामान्य लाग अिन सब वचनाके अक्षरायसे चिपटे रहनेमें ही धार्मिकता समझत ह । योग अपने मत महता और धार्मिक सेवकास भी कुछ न कुछ लाभ अुठा लना चाहत ह । अिस वक्तिमें सच्ची धार्मिकता नही है परन्तु हीनता अथवा जन्ता है । अिसमे धमकी विजय नही होगी ।

कुछ ही समय पहल सिचमें चरण स्पर्श करनेके प्रयत्नमें लगाने गांधीजीक परामें खराबे पदा कर दी थी । अुनका अिलाज अभी भी चल रहा है । (मच बात तो यह लगती है कि भक्तिसे पागल बने हुअे लागाक हायाको हटानेक लिजे दौडनेवाल किन्तु धुनके जितने ही भक्ति-दीवाने स्वयसेवका द्वारा ये खगक पैदा हुअी थी । लकिन अिम सुधारसे भी मूल बात बदलती तो नही ।) लागाकी अभी दीवाने भक्तिका प्रसाद गांधीजीका अनेक बार खबना पडता ह । जन् मिट्टीके रास्ता पर धुन पर चलनेका रिवाज है वहा तो पराकी खराब अकमर गमीर रूप उ लेती ह । मिट्टीका जहर जादमीके खूनमें प्रवेश कर जाता है । अिमने भारी बीमारी भी हा जाती है जिसके मिटनेमें बड़ी देर लगती है ।

अेक बार आधी रातम गांधीजीको न सतानेकी बात समझानेका प्रयत्न करने पर कुछ लगाने कहा 'गांधीजी तो अीश्वरके अवतार ह । जुनको थकान कमा ?' मने कहा 'वे स्वय ही कहते ह कि म थक गया हू । यदि वे मच नहा कहत, तो व महात्मा नही ह । और यदि अुनका कहना सच है जसा आप उग स्वीकार कर तो अिम तरहकी थकानसे आप अुहे जरूर बचायें ।' मने मान लिया था कि अिम दलीलसे वे लाग समझ जायगे और यदि ममये नहा ता निरुत्तर उत्तर हो जायगे । परन्तु पुराणवारा और भाष्यवाराकी तालीम पाये हुअे हमारे अिन लोगारे पास अिसका जवाब भी तैयार था । वे बोले

'गाधीजी ता लोग करते ह । व अवतारी पुष्प ह मह बात अह छिपाना है अिसालिअ व धकनेकी बात कहते हैं । श्री रामचन्द्रजा सीताजीन विरहमें अिधर अ्धर भटकत थ तब क्या वे जानते नहा थ कि सीता ता अनुकी चित् शक्ति है और गुप्त रूपम अनुन पास ही है ?

असी दलीलना भंग क्या जवाब दिया जाता ? भगवानने स्वय बुद्धका रूप धारण करके जगाका धोखा दिया अिस प्रकार कहकर नके अवतारना रहस्य समझानेवाल धम वाचस्पतिक सामने बद्धिक तिअ बाअी खान ही नहा रू जाता । जहा किसीका यह लगता ही नहीं कि बद्धिकी रक्षा करके धमका रहस्य समझा गा सक्ता है वहा बेचारी दलान क्या कर ?

दशमकी अमिलिया होना स्वाभाविक ह । जुलता माभाआ सभाआ जोर सम्मलनाम केवल त्रिचाराका आदान प्रदान ही नहीं हाता थ सब विचारान प्रचारके अुत्तम प्रतिबिम्ब भी ह । य सत्र लागाका भावनाआका विकसित करने तथा लोक-मानसका निरीनय करनके शक्तिगाणी गाधन ह । हजाराका सगामें योग अिक्ठे हा यह दुरा नही है । अमे जन समदायाम हा विराट जनताका जागतिका दान होना ह । वरू समुगायाम मागे मात्स्यिक जदात भाव फून लग तो यह जितना स्वाभाविक है अनुन ही वाछनीय भी है । अकिन अिसके माध ही लागाम कुठ अनुगासन अवश्य आना चाहिये । दूमराके सुन दु लके बारम दूमराकी भावनाआके बारेमें अस समय अधिक कोमलता प्रकट हानी चाहिय । और मामाजिक जीवनका गिण्टाचार से असे अत्रसर पर सवरा प्रधान बनम होना चाहिये ।

इम पाठ बन कर भक्तिना प्रसाद महात्माको चर्याय यह ता अत्याचार ही कहा जायगा ।

जीवन-व्यवस्था

पाचवा खण्ड

हृदय-धर्म

मस्कृतियोंका जीवन-क्रम

मस्कृति बोझी तालाब नहीं है, जिसका पानी चारा तरफमें बंद हो। मस्कृति तो अंक बड़ी नदी है जिसे दोनों ओरके किनार अंक सीमित पाटमें ही बाध रखत ह आर जिममें अूपरमें चाट्ट जिनता नया पानी आ भक्ता है तथा जिसका पानी आगे स्वेच्छापूवक अनुकूल और आवश्यक दिगामें जा भी सकता है। जैसे जैसे नदिया आगे बढ़ती ह उनमें छोटे मोटे अनेक स्रोत जावर गिरते ह और कभी कभी जेक ही नली अनेक स्रोतामें विभक्त हाकर महासागरमें जा मिश्रती ह। कधी नशिया असी भी होती ह, जिनक अंक स्रोतके दा-तीन या अधिक स्रोत बन जाते ह और आगे जाकर वे फिरसे अंक हो जाते हैं। -

नदियाका यह प्रवाह क्रम या जीवन क्रम पूरी तरह मानवक हाथमें नहीं हाता। प्रकृतिकी अगम्य लीगासे ही यह जीवन क्रम निश्चित हाता है। मनुष्य अपने दृष्ट मकल्प और तपस्याके बलमें अिममें थोडा-सा परिवर्तन कर सकता है। जैसा और जो कुछ थाडा-बहुत परिवर्तन वह कर सकता है अुससे काफी लाभ भी बूठाता है।

हिन्दुस्तानमें दुनियाकी सभी मानवीय मस्कृतियाका महामम्मलन हुआ है। जिममें कुछ भाग हमारे साधु-मता, साहित्यकारा नेताआ और तत्त्वनाका है और अिमसे अधिक भाग अितिहास विघाताकी लीलाका फल है।

- मस्कृतिकी रक्षा करनेके लिअे हम अमी कागिग न कर जिममें नदीका तालाब बन जाय। जिस जलकी हमें ज्यादा जरूरत हो अुसके स्रोतका वेग बढा-कर ही हमें सतोप करना चाहिये।

निसम्बर १०४०

प्राणवायी हवा

अक गावके लोग बहुत ही भाल और भल थ। व अपने बढाव वचनका आदर करते थे और बड वह वसा ही चलते थ।

अस गावमें पुरान जमानका अक बूडा रहता था। वह हमगा कहा करता था 'हमत अतुकी हवा बडी स्वास्थ्यवधक होनी है। वह जितनी शरीरमें जाती है अतना ही मनुष्य अधिक् स्वस्थ और बलवान बनता है। हेमतनी हवा क्या है 'गुढ प्राण है प्राण'।

कुछ समय बाद अस बूडेका स्वगवास हो गया। अब लोग असका ज्यादा याद करने और आदर देने लगे। असके श्राद्धके दिन सब लोग एकत्र हाने तब अह असके वचन याद आते थे।

अक बार अक आदमी वाला भाबियो हमारे वढ पुरुष जा कहते थे असके अनुसार हम चलेग तमी सुखी हागे। हम असा कर कि हेमत अतु पूरी होनेके पहल असकी हवाको घरमें भर ल और घरक सिडकी-दरवाजे बंद करके अस प्राणदायी हवाको बाहर न जाने द। दूसरी हेमत अतुके आन तक वह हवा हमारे काममें आयेगी। परस बाहर हम मयासमेव कम जाय जाय भी तो अक छोटासा छेद करके असीस बाहर जाय। मौका आन पर अस जरा मोल और फिर तुरत बंद कर द।

यह सलाह सबके गल अतर गयी और सब लोग जैसा हा करत लग। अस प्रकार रकी टुथ्री हवामें रहनका परिणाम लोगके लिये क्या आया, यह कहना जरूरी नहीं।

रुडियाना अुपासक पुराण प्रिय कट्टर सनातनी हिंदू समाज अस परिणाम का अनुभव हमगा ही करता रहता है।

धर्म बनाम धार्मिकता

केरु जमाना था जब बड़े बड़े समाज भी अपने राज मुकुट हाथमें लेकर धमाकाधारी अदालतमें खड़े रहते थे। साहित्य, कला, विज्ञान—सबका धमकी अदालत अपनी निर्दोषता और निष्ठा सिद्ध करनी पड़ती थी।

जब वह दिन चले गये ह, क्योंकि धर्मोंमें मानो धार्मिकता ही रुठ गयी है। अब तो जाय धम, ओमाओ धम जिस्लाम बौद्ध धम यहूदी धम अित्यादि सबके मात्र धम मानवताकी अदालतमें अभियुक्त बनकर खड़े ह। धमके नाम पर अिनना सकीशता फगओ जा रहा है अिनना मनुष्य ब्राह किया जा रहा है कि अब सबके सब धम यायाधान न रहेकर अभियुक्त बन गये ह।

सबके पहले मत्व जाना है वामें प्रतिष्ठा जाना है। फिर स्थानभ्रष्ट होना या तर लगनी है? धर्मोंमें धार्मिकता छोड़ दी और अपना नाश किया। अब धार्मिकताको ही धमाक गिज्जेम बचानेके दिन आ गये ह।

अब, १९४०

हृदयकी शक्ति

प्रश्न—मन बुद्धि चित्त मस्तिष्क और हृदय—ये सब क्या है और जिनके धम (functions) क्या ह?

अन्तर—मस्तिष्क तो सिरकी सापडामें रहनेवाली मृद्याशक्तिकी कहत ह। जुमका महायतासे ही मृष्ट अथवा व्यक्त सवदनायें अपना व्यापार करती हैं। जुम जा विचार-शक्ति है जुम चित्त कहते ह। अुसीकी विशिष्ट तरगकी मन कहते ह। तरगके सभी गुण धर्म मनमें दिखाओ देन ह। जिन तरगीक हनुकी म्थिर बनानेवाला जो निश्चयात्मक व्यापार है वही बुद्धि है। ये सब म्थूल यायाय सभी मूजा बँसी मने यही लिख दी ह।

हृदयकी व्याख्या करना बहुत कठिन है। लोग मानते ह कि हृदयका अर ह भावनायें। यह माना जाता है कि अिन भावनाओका सम्बन्ध आताके साथ है अथवा रक्तके भंडार रूप कलेजेके साथ है। लेकिन यन् बात सिद्ध नहीं हुआ है। भावनायें भी शरीर-व्यापी होती हैं और वे चित्तका अंक व्यापार

ह। कहा जाता है कि गुम अगुम एषि भर्षि, प्रम, द्वेष अथवा अगुग — यह भ्रम हृदयका ही व्यापार है।

म ता मानता हूँ कि प्रत्येक पानवम आमोस्य अथवा आमकरत अनुभव करनेकी जो भूय होती है वही हृदय है। भूय हावक कारण यह त्रिदशविधा है प्रवाह रूप है। अथ आत्माका दूररी आमास प्रति जा आरण्य म प्रवण (attraction, response and flow) होता है वहा हृदय है। य प्रवण विलकुल तभी है अगुगिजे गायर आप अगुग स्वाकार महा कर मग। तिन मुक्त अिसीमें सताय है। अपनिपकाराल हृदयका निर्गमि अगुग प्रवार दा है हृदि अपम्। व यह भी कहते ह कि मयका जाननरा मारन यदि नहा कि नु हृदय है। वे जोन महा तर भी कहते ह कि हृदय हा आमा है।

जिस चीजका हम बुद्धिसे जान लत हैं अमीका जर हम हृदयक स्वाकार करते ह तब नुस पानानुभवको साक्षाकार करने ह। अग्रही भाषान म ता-त्कारकी realisation कहा जाता है। यह अक मुत्तर गत है। ग, कुछ उद्धिका सत्य लगता है अुस हृदयक द्वारा जीवनम सत्य (real) बनानेर। यिवाको realise कहते हैं। यह गति हृदयकी हा ह।

१९३१

७०

हृदय-धर्मकी दीक्षा

सब धमाम थोठ धम है—हृदय धम। सभारमे जितने धम मज्जतन पध फिरक और मम्प्रदाय ह वे आज चाह त्रिपता तगुगिणी पैण करले ता सिन्नु अनउमें व किता न किती मानव प्रमी सफुक्ति परायण हृदय धमम हा निकल हुजे ह। धमगाम्त्र महर्षीणा अन करण-अभूतम। जिस अुदार हृदयका प्ररणम वे निकल ह नुस हृदयका जा यापक प्रेमधम है वही हृदय धम है। सिन्नुमानमें दुनिया भरके करीब सभी धम अिकटठ हुअ ह क्यकि जनको पता च गया है कि महा हृदय धमका साम्राज्य है। यहा जितन धम जाय व सब अपना अपना अभियान कर आय। अुन्तान जितना भी अनुन हा सना भला और वरा किया। लकिन धीरे धीरे वे हृदय धमकी प्रम उडाम वध गये। सबका प्रमदमका भान हुआ। पर किसीको अुसकी दीक्षा नहीं मिली। अिसानिअ वे आपसन लांच तान करते हैं और अिस देवभूमिको भूतलका स्वग बनानेके बजाय नरक बना रहे ह। जिसके हृदयम जितनी ही सकीणता और सुदना हीगा अुतना हा वह दुख

धुठायेगा और दूसराका भी अधिकाधिक दुःख दगा। किन्तु अतमें (या अनतम) विजय हृदय धमकी ही होगी।

हृ हृदयान्तर्धामिन! हमें जुम हृदय धमकी टीका दा और हमारी श्रद्धाको अनत बनाआ जिससे हम भारतके हृदय धमकी मन्त्री सेवा कर जीर अपने जीवन द्वारा और मरण द्वारा असीका साम्राज्य स्थापित हुआ दें।

दिमम्बर, १९३९

७१

हृदय-शुद्धि की याचना

अपना हित अनहित तो पंगु भी साचन ह। व अितना ता जानने ही ह वि सखटने गमय हमें जापसमें मिलकर और सगठिन हाकर अपनी सामूहिक मध्याग्निस्त आनेवा सखटना सामना करना चाहिये। यहा मुक्तिका रास्ता है। किन्तु जिस जानिमें गग मुक्तिको ही सखट मानन हैं अुमकी नीति कुछ जीर ही हाती ह। हमारे लिये जब अेक हानेकी ज्यादास ज्यादा जरूरत ह अुम समय हमारा देग अनक मना अनेक मार्ग जीर अनेक दुःखान पानिन ह।

ता क्या यह विनागकी निगानी है या मूर्खोंदयके पहल अुपनालके पहल और ब्राह्म-मुहनक भी पट्ट जा धार अधकार होना है वही यह है? तब मनुष्य बडीसे बडा भूल कर बठना है तमा वह चौक कर जाग पडता ह और अपना व्यवहार सुधारता है।

भगवन्! हमने बहुत महन किया ह जीर नी सहन करा। किन्तु अब हमें बुद्धिभंग का मजा या पीडा और ज्यादा महन न करनी पडे यही अेक मात्र हमारी प्रार्थना है। अगर हमारी बुद्धि गुड र हृदय अुदार र दष्टि निमल आर दूरदर्शी रह तो हमें और कुछ नहा चाहिये। बाकीके सब साधन हम अपने हा पुरुषार्थस अिखटके कर लगे। तहा हमारी नही चन्ती वहा हम नुमने प्रार्थना करने हैं। हृ हृदयस्य परमात्मन! हमार हृदयको गुड करा, अुनार बनाआ तेजस्वा और क्षमाशील बनाआ जिससे हमारा अुदार हा जाय।

जनवरी १९४०

पवित्र सकल्प

पुरानी बाबियाँमें अबल आर वन नामर दा भाजियारी जन कया है। भा ति हाने हूजे ना वनमें दुस्मती जागी और अगने अक्का गून कर शिभा। दुनियाकी यह पहरी बधुहत्या थी। आि दा भाजियाता अुनहण मामा रागर दूसरे दुजन भी अपन भाजियाकी हत्या करने लगे। जिससभमे वहा गया है कि 'वन ही बधुहत्याना आि प्रचारन था जिससभे जब बाभी मनुष्य अपने भाजीकी हत्या करता है तब अुमन पापता पापा भाग रायल्टी क रूपमें वनर नाम पर जमा हाता है।

जिसी प्रकार जन बोधी मनुष्य विनी भी तरहकी भगजा करता है और अुमक जिम सरहयका अनुकरण होन ल्यता है तब जिस प्रकार बड़नेवागी अत भलाजीकी कुछ न कुछ रायल्टी सदाचारक अुम प्रवतनका अवय भित्ता है।

जितना जानतके बाद भारतवप निर्वर बधताना पुण्य जेकन करनेका सकल्प क्या न करे ?

सितम्बर, १९४१

कौनसा मार्ग स्वीकार करेंगे ?

संस्कृतमें शत्रुको सपन कहा जाता है। अक ही विताक पुत्र माताक जलग हानन एक-दूसरेक साथ लडत मगडत ह और अक दूसरेके शत्रु बा जाते हैं। जनकी अिस मृतताका प्रकट करतक लिअ हमारा सस्कारी भाषान शत्रुके लिजे सपन गान ल्य शिभा। अिसका जय है सौतल्य भाजी।

परन्तु अेक ही माताक पुत्र भी गनु बनकर आपसमें लड सकते ह। अक ही नदीका पाना पानवाल लोग आमन सामनक विनारा पर रहने लगते ह तब अपन अपन खोआम नदीका पानी खाउनक लिअ आपसमें लडते मगटते ह। नदीक तारका विनारेको कूल कहा जाता है। जो लोग सामनने विनारे पर रहने ह व हमारे प्रति-कूल ह और जो लोग हमारी आर रहते ह व अनु-कूल ह। अनकूल लाग अकसाथ मिलकर प्रतिकूल स हमगा लडा करते ह।

(नदीके पानीके लिये) जिस प्रतिस्पर्धीके साथ बगडा होता है उसे अप्रेनीमें राबिबल कहा जाता है । राबिबल का सम्बन्ध 'रिवर' यानी नदीके साथ है ।

बुद्ध भगवानके समयमें एक बार अनुकूल और प्रतिकूल नदी-पुत्र आपसमें लड़ने लगे । दानोंमें धार युद्ध होनेवाला था जितनेमें बुद्ध भगवानको पता चला ता व युद्धस्वल्प पर पहुच गये । दोना पक्षान्क नताआको मुलाकर जुन्होने जेक सीधा-सासा प्रश्न अनुस पूछा पानीकी कामत ज्यादा है या मनुष्यके खूनकी ? दोनाक महम जेक ही उत्तर निकला वशक मनुष्यके खूनकी कीमत पानाकी कामतमे कही ज्यादा है ।

ता फिर पानीके लिये मनुष्यका खून बहानमें कायी बुद्धिमानी है ?

बुद्ध भगवानके अिम प्रश्नसे दोनाकी आलें खुल गयी और लडायी टल गयी ।

कितने भाले थे भगवान बुद्ध और कितने भाले थे उस जमानेके लोग ? सीधी बातका व तुरत समझ गये और उस जुहाने मान भी लिया । आज राजनीतिशास्त्र बहुत आगे बढ गया है । आज यूरोप और अमेरिकाके लोगासे काजा महात्मा पूछे कि पेटोलकी कामत ज्यादा है या मनुष्यके खूनकी ? तो व आग कहगे कि धाया साचना पडेगा । जाजकल मनुष्यका खून बहुत ही मस्ता हो गया है । व लोग जनसंख्याका शास्त्र खोन निकालग और तब रगगे कि युद्धके सिवा मानवता विकास ही नही हा सकता । अिस प्रकार व जधमको घमका रूप देंग और जारामे बहुहत्या करत रहेगे ।

आज राजनीतिका दिवाला निकल चुका है । बडे बड घम अधार्मिक आगाके हाथामें पडकर निस्तेज बन गये ह । केवल एक हृदय घम ही आज बचा है जो हमें माताकी गोल्में मिलता है । वसे सपतिशास्त्र आज जथाशास्त्रका नाम धारण करने जनथ कर रहा है । अब तो जगतका अुद्धार तभी होगा जब हम हृदय वमको दडतान पकटे रहगे और अपनी बुद्धिको विचलित नही हान देंगे ।

‘समाना हृदयानि य’

परमात्मा यह आत्मा अर्थात् अनिम मरुतन प्रथमं भावा है। मत्र तरुना आध्यात्मिकता प्राप्त वात् यद् जगत्वात्त मगठनरा मत्र यत्पदा है। जा लाग धमको गहा जानत भगवतारी ह भगवता ह म्पार्थो ह डागी ह भुनरा मगठा जगतव त्रिभ विनागर हा हागा है। त्रिगतिभ धम गायरा पूरा पान दनेक वात् ही भगवानने मगठनरा भुनरा गिया है।

यह धर्मि जुस्य मनुष्य जीवित त्रिभ अर्थात् त्रिगारी है।

ह धामिका जीवित पर भ्रष्टा रणपर तुम मत्र अर्क ही त्रिगत प्रगति करा। तुम्हारा वागामे परस्पर गामजस्य हा। तुम अर्के मारा अर्क हा जस्य व त्रिभ म्पारा वनाभा, जीर त्रिभने जगा आन-अनन त्रिभारा गायन वरनका जाग्रह रहता है अगो तरुत तुम नी जपन अर्क हिमम आय त्रिभ वन याका पालन करा।

तुम लागारा वागगीति (मत्र) अर्क हा प्रकारकी हा। अर्थात् त्रि गायन वात्री तुम्हारी सभा भी अर्क ही हा। तुम्हारे मन जीर चित्त वभी भी परस्पर विरोधी न हा। जिस सगठनको जगर दड करता है ता तुम्ह अर्क ही विचारमे बचना हागा जीर सब प्रकारर अपभ्रामामें भी तुम्हारा बीच अगमानता नहा ह नी चाहिये। जुपभ्रामाम अममानता आनम वमनस्य पत्र हाता है और अर्क भी नहा बना रह सनता। जिसभ सगठन टूट जाता है। जिसलिभ मरा आत्मा है कि अपना ध्यय तुम अर्क रखा और रहन-रहाना दजा भी अर्कगा रखा।

‘तुम लागारा हनु जीर धर्म सब अर्कगा ही रहना चाहिय। तुम्हारे हृदय भा अर्क हा जस्ये। तुम्हारे मन भी अर्क हो जाय। अिसा माग पर चलनेसे तुम्हारा सगठन अच्छी तरह टिक सकगा और तुम्हारा बल्याण हागा।’

अदन जिन जतिम जपत्तका हात् क्या है? जीवन अर्कगा हा। अपत्तज अर्क ही मत्र अर्क ही प्रगतिकी दिगा अर्क हा। यह सब तभी सिद्ध हा सकता ह जज सकक हृदय अर्कगा हागा जब सब लोग अर्क-दूसरेका मित्रकी नजरम नाजी भाओकी नजरम देखन लगे। विचाराम चाटे जितनी भिगता हा। लकिन यत्ति हृदय अर्क ह ता अर्क दूसरकी बात समझनेमें कोओ बण्ट नही होग।

सबसे बडा गणित ता सत्यकी ही है। यह सत्य हृदयसे ही जाना जाता है। याज्ञवल्क्य कृत ह

हृदपन हि सत्य जानाति। हृदय हि अर्क आत्मा।

जिनलिङ्गे यदि हृदय गुड्ड हा और हृदयाका परस्पर मेल हो तो वाकी सब कुड्ड आन ही आप मिड्ड हो जायगा। भगवानके आदेशका हाद यह है कि तुम्हारे हृदय अमे गुड्ड हा, जस जुदार हा, कि अनुमें आपसी मेल जाप ही जाप स्थापित हा जाय। तुम्हार हृदय अक्षरूप हाकर मिल जाय, ता वही सगठन है वहा नामधर है वही सिद्धि है।

जगन्ना १०४१

७५

तत्त्व और व्यवहार

जान तो आदम 'नेकर' वामी ह। 'यवहारमें अस जान्ना नहा चर सकत। मनप्य परिस्थितियाको स्वीकार करे और 'यवहारकी रक्षा कर ता ही जिन दुनियामें वह टिक सकना है। जिन तरह कहनेवाल लाग कर्म बंदम पर निरन ह। यह 'यवहार ये परिस्थितिया क्या चीज ह जिस हमें 'रर दगना चाहिये।

'यवहार अक मत्य बन्दु है किन्तु वह हमारा अच्छी वस्तु ही नहा हाना। बीमारीमें नरसान करनेवाली चाज भी खानेका मन होता है। यह बगना मय ता है परन्तु जिसन बग हानेमें न ता मनुष्यका शय है और न पुरपाथ है।

बहुत बार तत्त्व रूपर अडानेवाला हाता ह जब कि 'यवहार बीच गिगन वाला मिड्ड हाता है। जिन दोनाक बीच सनातन सप्राम चलता आया है। जिन दोक बीच समाधान या समझौता करनेक अनेक प्रयत्न दुनियाम हागे आप ह। परन्तु 'यवहार अत्यन्त दुराग्रही है। तत्त्व पक्ष नमझौतकी गतोंका स्वीकार करना है अकिन व्यवहार पक्ष जस जस मुविधायें मिलती जानी हैं वस वन अधिक मुविधायें भागता ही जाना है और अतमें तत्त्वका हया करने हा गान हाता है। अन तत्त्व पक्ष हा मेगा सतक और जाग्रत रहना चाहिये और व्यवहार पक्ष साथ जभा स्थायी समझौता नही करना चाहिये।

तत्त्व जोर व्यवहारक बीच चलनेवाला जिन सनातन युटमें हनें बीनना पना स्वाकार करना चाहिये? किस पक्षके प्रति हमें महानुभूति रखना चाहिये? किस पक्षक नाच हमें भरती हाता चाहिये? — यह जीवनता बडेमे दडा सवाल है। जीवनमें व्यवहार पक्षका अस्तिव तो स्वीकार करना ही पडता है। किन्तु व्यवहार पक्षक अस्तिवको स्वीकार करना अक बात है और जुसक हिमायती बनना दूसरी बात है। 'यवहार-पक्ष आरभमें सदा मीम्य समझार और मुन्तर स्वभाववाला सिंखानी देता है और यहा कारण है कि हम अुमके बगमें हा

जात है। परन्तु अब बार-बार 'यवहार पक्षकी ओर हृगन अपना मत दिया है' जना किया कि 'जुसना साम्नाय हमारे सिर पर लगा हा गर्माय। जीर अब नार भुसना साम्नाय स्थापित हुआ फिर तो 'यवहारना अयाचार हम पर जारसे बन्ता ही जायगा।

'जनहार जितना बनुर है कि तत्त्वकी हया बनने बा भी वह अगने गवका मुरक्षित रखता है तानि तत्त्व पक्षक लोग अिस भ्रमम पड रह कि तत्त्व अमा भी जीवित है। 'यवहार हमगा बहता है नामका राजा काजी भी हा, मुग अिसकी परमाह नही। सत्ता मरी अपनी च तो मुस मताप है।

जा हमारे समाजमें तत्त्ववादी कितन ह और व्यवहारवादी कितन ह ? तत्त्वनिष्ठ लागाकी सरया राष्ट्रम बन्तो है तव देग पूर भुठता है। 'यवहार बापियाम कभी किसी ममाज या राष्ट्रना अढार नही हुआ है।

३-९-२२

७६

यथार्थवाद बनाम ध्येयवाद

यथाथवा और ध्येयवादका जगडा केवल साहित्यमें ही नहीं परन्तु राज नीतिक क्षत्रमें भी बन गया है। जहा दो भिन्न वस्तुज जिवठठी हाती ह वह। दानाम परस्पर विरोध होना ही चाहिय यट मान लेना अब भारी भ्रम है। परिवारम सत्ता किसकी चले पिताकी या माताकी ? जिस तरहका प्रश्न भुठारर परिवारका नाश करना असभव नहीं है।

यथाथवा और ध्येयवादके बीच विरोध कहा है ? जिन लोगको काजी पुरगाय या प्रयत्न ही नहा करना है वे यथाथवादके आधार पर ध्येयवादका विगान करत रहत ह। त्याग बलियान आत्म-सयम निभयता आदि चारिग्यक जुगन पहलुआका नष्ट करनर लिअे ध्येयवादका विराध करना आमान है।

जिन लागाको कव-कगन नाम पर केवल विगान ही करना है और अपन जीवनम तरा भी परिवतन किय बिना आणाकी बडी बडी वात करनी ह अुनका ध्येयना नामका ही हाता है। परन्तु जिन लोगोन 'यायगानम भाग लिया है गिभणने क्षत्रमें वपों तक अपन जीवनका अत्तम समय बिताया है जा लाग यापार-अयागमें मन् रह ह और जिन लोगान राजनीति द्वारा देशको जाग्रत करक स्वतन्त्रतास भाग लिखाया है अुन लोगका ध्येयवा आपक यथाथवाको नहा पहचान मक्ता यह आप कसे कह सकत ह ?

मच वात ता यह है कि यथाथवादक कीचडमे ही जीवनका कमल अुत्पन्न जाता है। किन्तु ध्येयरूपी सूय प्रकाशकी मददसे ही अुसक आकपणस ही वह

कमल गायनकी मतहस जूबर अठकर अपनी कल्याणमय प्रसन्नताको विकसित कर सकना है। यदि गद लकिन पोषण देनेवाले कीचडसे कमलको अलग कर दिया जाय तो पानीम तरते हुअे भी वह सह जायगा। परन्तु यदि मूय प्रकाशसे अुमे हर तरह बचिन रस्ता जाय तो कमलका अस्तित्व ही असभव हो जायगा। फिर तो अुसक रग, रूप, भुगष ताजगी और कामल प्रसन्नताका प्रश्न ही खडा नहीं हागा। यथायवादकी स्वीकृति आवश्यक है परन्तु अुसके साथ ध्येय-वादकी प्रेरणा भी प्राणरूप है। जिहें कीडे बन कर कीचडमें ही रहना हो वे भले वहा रहें। परन्तु वहा पडे पडे ध्येयवादकी निन्दा करवे वे देशकी स्वतंत्रता तथा भाषाके चतयका द्रोह कभी न कर।

माच, १९३९

७७

बुद्धि और अुसका विकास

[प्रश्नोत्तर]

प्रश्न — बुद्धि क्या है? वह मनुष्यमें जमसे हा कम ज्यादा होता है या प्रयत्नम बडाओ जा सकती है? यदि प्रयत्नस बडाओ जा सकती हा, तो बुद्धि-को बानेक लिअे क्या क्या अुपाय करने चाहिये?

अुत्तर — बुद्धि क्या है, अिसका अुत्तर देना कठिन है। परन्तु बुद्धिका अनुभव और परिचय ता सबको हाता ही है।

सभव है, बुद्धि अमलमें विद्व-व्यवस्थाकी, मनुष्यके अतरमें अुठनेवाली प्रतिध्वनि हा। जीश्वरका स्वभाव और सृष्टिकी रचना, दानाके साथ मनुष्यका सम्बध है। यह सम्बध गायद बुद्धिके द्वारा यकन हाता हागा।

मनुष्यका जम अुमकी जीवन-परपराका आरभ नहीं है। वह ता जीवन-परम्पराकी अेक बीचकी अवधि या दगा है, दो भुकामाक बीचकी अेक मजिल है। जब मनुष्य अपने पूवकर्मोंके अनुसार नया जम लेता है तब वह अपने पूव-जमानुभवका सार-सबन्ध अुत्तम अा, अपने साथ लाता है। अिसलिअे जमके समय हा बुद्धिधममें भेद हाता है। दा मनुष्यामें बुद्धिधमका जो भेद मालूम होता है अुसमें कवल मात्रा अथवा परिमाणका ही भेद नहीं होता, परन्तु प्रकारका भेद भी होता है। केवल 'degree (मात्रा)' का ही नहीं, परन्तु 'kind' (प्रकार) का भी भेद दिसाओ देता है। शरीर, आहार, स्वभाव, बासना, सगति वगरा असन्ध बाताका बुद्धि पर असर होता है।

गीताने बुद्धिके सात्त्विक, राजसिक और तामसी तीन प्रकारक भेद ता बताये ही ह।

जात है। परन्तु अब बार-बार 'यवहार पदाकी' आर हमें अपना मत दिया है।
अब किया कि जुसका सामान्य हमारे सिर पर लगे ही समगिय। जोर अब
बार अमुका सामाज्य स्थापित हुआ फिर ता 'यवहारका' जत्याचार हम पर
जारासे बन्ता ही जायगा।

'यवहार' अतना चतुर है कि तत्त्वकी हत्या करनेसे घात भी वह जुगल
'यवका' सुरक्षित रखता है ताकि तत्त्व पक्षक लोग जिन भ्रममें पड़ रहें कि तत्त्व
जभा भी जावित है। यवहार हमें कहता है नामका राजा वाभी भी हो
मुझ अिसकी परवाह नहीं। सत्ता मरी अपनी चर ता मुझ सताप है।
आर हमारे समाजमें तत्त्वगानी कितन ह और 'यवहार'वाणी कितन ह ?
तत्त्वनिष्ठ लोगकी सत्या राष्ट्रमें बन्ती है तब देग ऊपर जुठता है। 'यवहार'
वाणियासे कभी किसी नमाज या राष्ट्रका जुठार नहीं हुआ है।

३-९-२२

७६

यथायवाद बनाम ध्येयवाद

यथायवाद जोर ध्येयवादका झगडा केवल साहित्यमें ही नहीं परन्तु राज
नातिक क्षेत्रमें भी बन् गया है। जहा लो भिन्न वस्तुओं जिकटठी होती ह कहा
दानाम परस्पर विरोध होना ही चाहिय यह मान लेना अब भारी भ्रम है।
परिवारमें सत्ता किसकी चले पिताकी या माताकी ? अिस तरहका प्रश्न अुठार
परिवारना नाश करता असभव नहीं है।

यथायवाद जोर ध्येयवादके बीच विरोध कहा है ? जिन लोगको कोजी
पुराय या प्रयत्न ही नहीं करना है वे यथायवादके आधार पर ध्येयवादका
विरोध करते रहते ह। त्याग बलिदान आत्म सपम निभयता जादि चारिण्यके
दुःख पट्टुआना नष्ट करनेके तिअ ध्येयवादका विरोध करना आसान है।

जिन लोगका केवल-कलाक नाम पर केवल विलास ही करना है और अपन
जीवनमें जरा भी परिवर्तन किय बिना आत्मकी बडी बडी बात करनी ह अनका
'यथायवाद' नामका ही होना है। परन्तु जिन लोगोंने 'यथायदान' भाग लिया है
गिहणने क्षत्रमें क्यों तरु अपन जीवनका अुत्तम समय बिताया है जो लोग
यापार-जयोगमें मग्न रहे ह और जिन लोगोंने राजनीति द्वारा देगको जाग्रत
करके स्वतंत्रताका माग दिया है उन लोगका ध्येयवाद आपके यथायवादको
नहा पन्धान सकता यह आप कैसे कह सकते ह ?
मच वान तो यह है कि यथायवादक नीचतासे ही जीवनका कमल अुत्पन्न
होना है। किन्तु ध्येयवादी सूप प्रकाशकी मददसे ही अुसके आकषणसे ही वह

कमल जीवनकी सतहस ऊपर अुठकर अपनी बल्यागमय प्रसन्नताको विकसित कर सकता है। यदि गंदे लकड़िन पोषण देनेवाले कीचडसे कमलको अलग कर दिया जाय तो पानीमें तरते हुअे भी वह सड जायगा। परन्तु यदि सूय प्रकाशसे अुसे हर तरह बचिन रखा जाय तो कमलका अस्तित्व ही असमथ हो जायगा। फिर ती अुसके रग रूप गुणध, ताजगी और कोमल प्रसन्नताका प्रश्न ही खडा नहा हागा। यथायवादकी स्वीकृति आवश्यक है, परन्तु अुसके साथ ध्येय-वादकी प्रेरणा भी प्राणरूप है। जिहें कीडे बन कर कीचडमें ही रहना हो वे भले बहा रहें। परन्तु बहा पडे पडे ध्येयवादकी निंदा करके वे देशकी स्वतंत्रता तथा भाषाक चतयका द्रोह कभी न कर।

माव, १९३९

७७

बुद्धि और अुसका विकास

[प्रनोत्तर]

प्रश्न—बुद्धि क्या है? वह मनुष्यमें जमस ही कम ज्यादा होती है या प्रयत्नस बढाओ जा सकती है? यदि प्रयत्नस बढाओ जा सकती हा, तो बुद्धि-को बढानेक लिअे क्या क्या अुपाय करने चाहिये?

अुत्तर—बुद्धि क्या है अिसका अुत्तर देना कठिन है। परन्तु बुद्धिका अनु-भव और परिचय ता सबको होता ही है।

सभव है बुद्धि असलमें विश्व-व्यवस्थाकी मनुष्यके अतरमें अुठनेवाली प्रतिध्वनि हा। अीश्वरका स्वभाव और सष्टिकी रचना, दाताके साथ मनुष्यका सम्बध है। यह सम्बध गायद बुद्धिके द्वारा व्यक्त होता हागा।

मनुष्यका जम अुमकी जीवन-परपराका आरभ नही है। वह तो जीवन-परम्पराकी अेक बीचकी अवधि या दगा है दा मुकामाके बीचकी अेक मजिल है। जब मनुष्य अपने पूवकर्मोंके अनुसार नया जम लेता है तब वह अपने पूव जमानामवका सार-सवस्व अुत्तम अस, अपने साथ लाता है। अिमलिअे जमके समय ही बुद्धिधममें भेद हाता है। दो मनुष्यामें बुद्धिधमका जो भेद मालूम होता है, अुममें केवल माया अथवा परिमाणका ही भेद नही होता, परन्तु प्रकारका भेद भी हाता है। कवल 'degree' (माया) का ही नही, परन्तु 'kind' (प्रकार) का भी भेद दिखताओ देता है। गरीर आहार, स्वभाव, वासना सगति वगरा अमन्य बाताका बुद्धि पर असर होता है।

गीताने बुद्धिके सात्त्विक, राजसिक और तामसी तीन प्रकारके भेद ता बताये ही है।

शरीरका नीरोग और शुद्ध रखनेसे, अपच और कफ जयतका टालनेसे, आलस्यक बिना बुद्धिका अुपयोग करनेसे तथा आत्म परीक्षण द्वारा बुद्धिको शुद्ध और तेज बनानेसे अवश्य ही बुद्धिशक्तिका विकास होता है।

बुद्धिका जितना विकास ज्ञानेन्द्रियोसे होता है उसकी अपेक्षा कर्मद्रियासे अधिक होता है अितना ही नहीं कर्मद्रियाकी तालीमसे बुद्धिका अनिदचय दूर होता है और वह निश्चयात्मिका बनती है। बुद्धि कर्मनुसारिणी।

शुद्ध हनुस निस्पृह और निर्विकारी जीवन जीनसे बुद्धि तेज और दृढ़ होती है। हृदय-शुद्धि होनेसे बुद्धिम अेकाग्रता भी आती है और उसकी विकिरण शक्ति radiating शक्ति भी विकसित होती है।

असक सिवा अीश्वर-वृपासे भी बुद्धि बढ सकती है। गीताम भक्तकी जो याख्या है वही स्थितप्रज्ञकी भी है। भगवान कहत ह सच्चे भक्ताको म बुद्धियोग देता ह जिससे वे परम रहस्यको भी पा सकते ह।

यहा मुझे अितना स्पष्ट कर देना चाहिय कि म कबल तब चातुयको बुद्धि मानता ही नहा। कभी कभी तो वह बुद्धिका अेक विकार ही होता है।

अक्टूबर १९३९

७८

मित्रता क्या है ?

[प्रश्नवर्चा]

अेक बडे आत्मीक नौकरन अपन मालिकसे अेक दिनकी छुट्टी मागी।
 उसने मालिकसे कहा मेरा अेक मित्र मुझसे मिलनके लिअ आनवाला है।
 असलिअे मेरा घरमें रहना जरूरी है। मालिकने पूछा क्या तेरा मित्र
 सच्चा मित्र है ? ' नौकरने अुत्साहसे कहा जी हा, वह मेरा बिल्कुल सच्चा
 मित्र है। यह सुनकर मालिकने तुरन्त अपने कपड पहन लिय। फिर वह
 बोला "चल म भी तेरे साथ आता ह। अपनी जिन्गीमें मुझे पहली ही
 बार सच्चा मित्र देखनेका सौभाग्य मिलेगा।'
 बहुतेरे लोग यह मानते हैं कि सच्ची मित्रता जसी बोअी चीज दुनियामें
 है हा नहीं। अंपजीके अेक कविने मित्रताक बारेमें बहुत ही कच्ची पकितया
 लिखी ह

"And what is friendship but a name,
 A charm that lulls to sleep
 A shade that follows wealth and fame
 And leaves the wretch to weep"

“मित्रता कवल अेक गद हा है । मित्रता अेक समोहन मत्र है जा भाले भाल लागाका भुलावमें डालकर सुला दता है । सच पूछा जाय ता मत्री धनवान और कीर्तितवान लागाकी खुगामद करता है जोर दीन-दुखियाकी अेक कोनेमें बठकर रानेकी छाड देती है ।’

जा लाग स्वार्थी ह जोर स्वार्थी न भी हा ता जा अहप्रेमा ह, स्वाथ-याग करते समय भी अपना अिच्छाका खयाल रखत ह वे तो यही मानत ह कि मित्रताम कोआ सार नहा है ।

परनु महात्मा गांधी जमे लोग जिन्हाने सच्ची मित्रताका अनुभव किया है, जि हाने स्वयं अपनेका सच्चा मित्र सिद्ध कर दिखाया है कहत ह जा लाग मोमकी अिच्छा रखत है जा लाग कवल जीश्वर प्राप्तिके लिये अपने जीशनका वलिगन दना चाहत ह जुनका कानो मित्र नहा हाता । दूसरे प्रकारस कहा जाय तो व सारी दुनियाका अपना मित्र मानते ह । जुनका कोआ वास मित्र नहा हो सकता ।

मद्रासम मुख अेक अंग्रेज भक्त मिले थे । जुनम मेरा अच्छा परिचय हो गया था । जुनके पास गरीर पर पहने हुअे कपडावे सिवा अेक कमीज और अेक पायजामा हा था । (नही अेक शाल भी था) । अक हाथ वलीमें अिन चीजाका रखकर व वही भी चर दने थे । रातको समुद्र-नट पर रेतमें ही सा जात थे । जुनमे वान करते करते मने मित्रताकी बात छपी । अुहाने आवगमें आकर मुअ भकटेगाटका यह वचन कह गुनाया *Friends ! there are no friends, there are only accomplices*’

अप मित्रकी बात करले ह ? अिस दुनियामें काओ किसीका मित्र नही है । जा होने ह वे सिफ अपराधमें अेक-दूसरेकी मदद करनेवाले साथी, गागिद या यार होने ह ।

सस्रुत साहित्यमें मित्रका स्थान घालेवाजामें नहा आता । हमारे सुभाषिता में मित्रकी परिभाषा अिस प्रकार दा गओ है ‘अच्छी या बुरी दगामें जा मनुष्य समान भावमे हमारे साथ रहता है वही मित्र है ।’

मित्रताका स्थान माता पिता, भाओ-बहन गुरु गिष्य पति-पत्नी आदिक पवित्र और अुत्कट मन्त्र-धकी पवित्रमें माना जाता है । गुरु गिष्यका तथा मित्र मित्रता मन्त्र-ध स्वेच्छामे उधता है । बाकी सब मन्त्र-धामें नरावना हाथ हाता है । अिमतिने अिन दो मन्त्र-धकी कोओ निराओ विरोपता मानी जाता है । यही कारण है कि मित्रने मन्त्र-धका बनाये रखनेके लिये बडा सावधानीसे काम लेना पडता है ।

अुपरकी भूमिकाका ध्यानमें रखकर हम नाचने प्रगनाकी चचा करे

मित्र द्वारा हमारा अपमान हा तो अमा स्थितिमें हम क्या कर ?

अस प्रश्नका जय यह जाना है कि अपमान हुआ पर भी प्रश्न पूछन या भाभी अपन मित्रका मित्र ही मान ह। असा स्थितिम मित्रका व्यवहार अपमानजनक लगना ही नहीं चाहिय अथवा जुस चुपचाप महार मनना बग राना चाहिय। जिस प्रकार बचारी पत्नी पतिर हाया हानिया अपमानका चुपचाप बरदास्त कर लती है उसी प्रकार मित्रर हाया हानिया अपमानका भी चुपचाप बरदास्त कर लना चाहिय। मथी जाना रक्षा भविनी अपेक्षा ररता है। प्रत्येक मित्र अपन मित्रका भक्त जाना चाहिय। जब अब अपिन स्वय ब्राह्मण हानक कारण भगवान श्रीकृष्णकी छातीम लत मारी तब श्रीकृष्णन आ गतका वदुमूल्य अलकार मानकर बड गनस जगता जात्र किया और कहा हम भक्तनने भक्त हमारे। अुमी समयम भगवानका नाम श्रीरगलाछन पढ गया। जिन मित्रामें परस्पर जात्रका भाव नहीं होना अनकी मित्रता लम्ब मय त्र टिकती नहीं। जीर जहा गोताके बीच जात्रका भाव होना है त्र जमाना जाना मयथा असभव है।

जैव यह प्रश्न पूछा गया है * काया यमिन अवन अधिन गतिमन साथ मित्रताका सम्बन्ध बाक ता अुन सब मित्रास साथ समानता बग रती चाय ?

जो लोग मित्राके सम्बन्धना भागिन जीर मागूकरना सम्बन्ध मानत ह ज हाका जिस कठिनाओका मामला करना पडता है। सच बात तो य है कि किहा भी दो मनुष्याक बीचका सम्बन्ध किहा दूसरे दा मनप्याक बीचक सम्बन्ध जसा जाना ही नहीं। प्रत्येक सम्बन्ध अद्वितीय अथवा जनय (unique) जाना है। बात जिनकी ही है कि जम अनेक सम्बन्धानो मित्रता या दोस्ती जसा मय सामाय नाम दिया जाता है।

* मित्रता समान क राके योगाम ही सभव है अिम कयनका क्या रहस्य ह ?

दुनियाका यह सामाय अनुभव है कि दो मित्राके बीच जायकी सामाजिक प्रतिष्ठाकी तथा बौद्धिक विवामकी स्थूल समानताय भी न हा ता सा मित्रता घनिष्ठ नहीं हा सत्रता। लकिन जात्र किमीका जीवन घन गैलन सामाजिक प्रतिष्ठा जायु जायुकी बातासे अरिष्ठ रूप मय तो अिन बाताम अधिनते अधिक जयमानता होन पर भी मित्रताम बाधा नहीं जानी। परतु अिस स्थितिम भी जाना हा मित्रास मनमें अरिष्ठता होनी चाहिय। वना जकका मन अधिकस अधिन पढ या अुत्तर हान पर भी दूसर। दोषक कारण मित्रता टूटनकी सभावना रती है।

मानव-जीवन दो प्रकारका होता है आन्तरिक और बाह्य । जो लोग बाह्य जीवनका विचार छोड़ देते हैं वह बाह्य असमानताके हाते हुआ भी मित्रके रूपमें रह सकते हैं । किन्तु यदि आन्तरिक जावनमें मपूर्ण मेल न हो, तो गैनाकी मित्रता टिक नहीं सकती ।

कवियाने श्रीकृष्ण और सुगमामात्री मित्रताका वणन चाह तितने स्वाभाविक और राचक ढंगसे किया हो परन्तु मेरी दृष्टिसे वह आत्म मित्रताका वणन नहीं है ।

*

जेठ और प्रदन जिस प्रकार है मनुष्य अपने सम्बन्धके वारेमें तब निगाह हा जाय तब वह आश्वामन कम प्राप्त कर ।

जावनना और जीवन-व्यवहारका स्वरूप ही असा है कि अुममें अनेक लगाक साथ अनेक प्रकारके सम्बन्ध स्थापित हाते रहते हैं । हर व्यक्तिके साथ हमारा सम्बन्ध अलग प्रकारका होता है । जमे सम्बन्धके कारण मनुष्यम जा विश्वास अुत्पन्न होता है जा प्रेम बटना है और जा आधार अुसे मिलता है, अुनकी मधुरता अुसके लिये अुच्च प्रकारका भाजन सिद्ध हाती है ।

प्रत्येक सम्बन्धक साथ कोजी न काजी जागा, अपेक्षा और अधिशार जुडा हाता है । जब यह अपेक्षा टूट जाती है जागा निगाहमें बदल जाती है और अतिकार मजूर करनेस जिनकार किया जाता है तब मनुष्य अस्वस्थ और गान हा जाता है । अुस प्राणातक अुस हाता है और चाग आर अघेरा हा अघेरा दिमागी दता है । जसी स्थितिम अुमे आश्वामन या समाधान कमे मिल सजता है ? मनुष्य अपनी मनाकी स्वाभाविक स्थितिको पुा कस प्राप्त कर सजता है ? वह कसे स्वस्थ और गान रह सजता है ? यही हमारा प्रदन है ।

अितना बात हम स्वीकार करनी चाहिये कि मित्रताक सम्बन्ध बढने पर हमार कायका विस्तार बढता है हमारी शक्ति भी बढती है और कभी कभी तो हमारा कनय भी अधिन बठिन हा जाता है । अिमक साथ यदि हमारा पराअुत्पन्न भी बढे तब तो भारी खतरा पदा हा जाता है । हमारा आन्तरिक जावन मग स्वावन्वा स्वयपूण और स्वतन्त्र हागा चाहिये । प्रेमकी वजहम हमार हृदयमें असहायता पगबन्धन मार अपूणताकी भावना नहीं बढनी चाहिये । जो प्रेम दूमरमे बदलनी जागा रखता है वह गुद्ध प्रेम नहीं होता । प्रेमम प्रतिक्रिया यानी पनुपकारका भावना नहीं हाता चाहिये । जहा आगा ही नहीं रखी जागा वहा निगाह कम पदा हा सजती है ? जहा दनेक साथ मनम अेनेकी बात ही नहीं जुठना वहा अुत्पन्नताकी आगा अभी पदा ही नहीं हाता, तब फिर मिमाका अुत्पन्नताम अुना ता हा हा कसे सजती है ?

